पेट्रोलियम

श्री फूलदेव सहाय वर्मा, एम्० एस-सी० ; ए० आई० आई० एस-सी०

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्
पटना

प्रकाशक
बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्
पटना-३

प्रथम संस्करण
विक्रमाब्द २०१४ ; शकाब्द १८७९ ; खृष्टाब्द १९५८ ई०

मूल्य ५ रु० ५० नये पैसे

मुद्रक
हिन्दुस्तानी प्रेस
पटना-४

वक्तव्य

वर्त्तमान वैज्ञानिक युग में विज्ञान-विषयक साहित्य की आवश्यकता दिन-दिन बढ़ रही है। हिन्दी-संसार भी उस आवश्यकता का अनुभव करने लगा है। फलस्वरूप आज हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य के प्रकाशन की प्रगति आशाजनक रीति से हो रही है। विश्वविद्यालय की उच्च शिक्षा के योग्य पाठ्यग्रन्थ और अधिकारी विद्वानों के गवेषणापूर्ण ग्रन्थ प्रतिवर्ष प्रकट हो रहे हैं। केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारें भी इस दिशा में प्रयत्नशील हैं। कितने ही विद्वानों के पास उत्तम वैज्ञानिक ग्रन्थ तैयार हैं; पर उनके लिए समर्थ प्रकाशक नहीं मिलते। आवश्यकतानुसार वैज्ञानिक ग्रन्थ तैयार कराने की प्रेरणा देनेवाले उत्साही प्रकाशकों की भी कमी है। तब भी ऐसा प्रतीत होता है कि निकट भविष्य में ही हिन्दी का वैज्ञानिक साहित्य बहुलांश में परिपुष्ट हो जायगा।

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् ने आरम्भ से ही इस विषय पर ध्यान दिया है। विज्ञान की विभिन्न शाखाओं की पुस्तकों पर परिषद् की ओर से पुरस्कार भी दिये जाते हैं। ज्योतिर्विज्ञान, रसायन-विज्ञान, खगोल-विज्ञान आदि विषयों की कई प्रामाणिक पुस्तकें परिषद् से प्रकाशित हो चुकी हैं। इस पुस्तक के लेखक की भी दो सचित्र पुस्तकें—'रबर' तथा 'ईख और चीनी'—पहले ही निकली थीं, जिनका हिन्दी-जगत् में बड़ा आदर हुआ है। आज उनकी यह तीसरी सचित्र पुस्तक हिन्दी-पाठकों की सेवा में उपस्थित है। विश्वास है कि उनकी उपर्युक्त पुस्तकों के समान इसको भी लोकप्रियता प्राप्त होगी।

लेखक महोदय ने अपने वक्तव्य में पुस्तक-गत विषय का संकेत कर दिया है। पुस्तक के अन्त में उन्होंने 'परिशिष्ट' और 'शब्दानुक्रमणी' देकर जिज्ञासु पाठकों के लिए बड़ी सुविधा कर दी है। यथास्थान आवश्यक चित्रों के समावेश से उन्होंने वर्णित विषय को बोधगम्य भी बना दिया है।

हिन्दी में इस विषय की कोई ऐसी खोज से लिखी और जानकारियों से भरी पुस्तक अभी तक देखने में नहीं आई है। पेट्रोलियम की महत्ता और उपयोगिता समझने के लिए जितने प्रकार के विषयों, विवरणों तथा आँकड़ों का ज्ञान आवश्यक है, सबका उल्लेख इस पुस्तक के विभिन्न प्रकरणों में मिलेगा। आशा है कि पुस्तक-पाठ से हिन्दी-प्रेमियों का ज्ञानवर्द्धन के साथ-साथ मनोरंजन भी होगा।

हमारे विद्वान् लेखक हिन्दी के पुराने साहित्यसेवी और यशस्वी विज्ञान-शास्त्री हैं। हिन्दी के वैज्ञानिक साहित्य की वृद्धि में उनका सहयोग सादर स्मरणीय है। अनेक वर्षों तक वे काशी-विश्वविद्यालय में विज्ञान-विभाग के प्राध्यापक और प्राचार्य थे। इस समय वे बिहार-विश्वविद्यालय में कालेजों के निरीक्षक तथा केन्द्रीय और उत्तरप्रदेशीय सरकार की विज्ञान-सम्बन्धिनी विद्वत्समितियों के संयोजक सदस्य भी हैं। ईश्वर करे उनके श्रमस्वेद से सिक्त होकर हमारे साहित्य की विज्ञान-शाखा सदा फूलती-फलती रहे।

वसंतोत्सव, शकाब्द १८७१
मार्च, १९४८ ई०

शिवपूजन सहाय
(संचालक)

भूमिका

ईन्धन मनुष्य मात्र के लिए आवश्यक है। विना ईन्धन एक दिन भी हमारा काम नहीं चल सकता। पहले केवल ठोस-ईन्धन हीं हमें प्राप्य थे। पीछे द्रव-ईन्धन का पता लगा और वे उपयोग में आने लगे। आज गैस-ईन्धन का उपयोग भी पर्याप्त मात्रा में विस्तृत रूप से हो रहा है। द्रव-ईन्धनों में 'पेट्रोलियम' का स्थान सर्वोपरि है। पेट्रोलियम केवल ईन्धन के रूप में ही उपयुक्त नहीं होता, वरन् प्रकाश उत्पन्न करने में भी इसका बहुत व्यापक उपयोग है।

पेट्रोलियम का महत्त्व बतलाने की आज आवश्यकता नहीं प्रतीत होती। दिन-दिन इसका महत्त्व बढ़ रहा है। आज वे ही देश प्रमुख समझे जाते हैं, जिनके पास पेट्रोलियम का भाण्डार है। कुछ पिछड़े देशों में भी पेट्रोलियम पाया गया है। उन देशों से सम्पर्क बढ़ाने और मित्रता स्थापित करने की पाश्चात्य देशों और अमेरिका में, होड़ लगी हुई है ताकि पेट्रोलियम उन्हें अबाध गति से प्राप्त होता रहे।

जिन देशों के पास पेट्रोलियम के स्रोत नहीं हैं, वे भी आज कृत्रिम रीति से पेट्रोलियम तैयार करने का प्रयत्न कर रहे हैं। वे ही देश ऐसा कर सकते हैं जिनके पास कोयले की खानें हैं; क्योंकि कृत्रिम रीति से कोयले से ही अथवा कुछ सीमा तक प्राकृत गैस से भी पेट्रोलियम तैयार होता है।

कृत्रिम पेट्रोलियम तैयार करने के कारखाने में पूँजी अधिक लगती है। प्राविधिक विशेषज्ञों की भी पर्याप्त संख्या में आवश्यकता पड़ती है। मशीनें भी कुछ पेचीली होती हैं। अतः छोटे-छोटे अनुन्नत देश कृत्रिम पेट्रोलियम तैयार करने की हिम्मत नहीं कर सकते। भारत में कृत्रिम पेट्रोलियम तैयार करने की योजना कई वर्षों से चल रही है; पर आजतक इसमें विशेष प्रगति नहीं हुई है। धनबाद (दक्षिण बिहार) के निकट 'जियालगोड़ा' की राष्ट्रीय ईन्धन-अनुसन्धान-शाला में भारतीय कोयले से पेट्रोलियम तैयार करने के अनेक प्रयोग हुए हैं और हो रहे हैं। अबतक जो परिणाम हुए हैं, वे आशाप्रद हैं। आशा है कि भारत में भी कृत्रिम पेट्रोलियम बनाने की मशीनें शीघ्र ही बैठाई जायँगी।

पेट्रोलियम क्या है, कैसे प्राप्त होता है, इसके विभिन्न अंग—पेट्रोल, किरासन, मोम आदि—कैसे पृथक् किये जाते हैं, उनकी सफ़ाई कैसे होती है, उनके उपयोग क्या हैं, कृत्रिम पेट्रोलियम तैयार करने के सिद्धान्त क्या हैं—

इत्यादि अनेक प्रश्न हैं, जिनके उत्तर देने की इस पुस्तक में चेष्टा की गई है। कहाँ तक इसमें सफलता मिली है, यह पाठक ही बता सकते हैं।

पेट्रोलियम पर वास्तव में यह प्रारम्भिक पुस्तक है। इस विषय के विशेषज्ञ भविष्य में उच्च कोटि की पुस्तक लिखेंगे और हिन्दी-पाठकों के सामने ऐसी पुस्तकें समय पाकर आवेंगी।

इस पुस्तक को अधिक उपयोगी बनाने के लिए जो सुझाव दिये जायँगे, उनके लिए मैं बहुत आभारी होऊँगा। बिहार-राज्य की राष्ट्रभाषा-परिषद् के संचालकों का भी मैं बहुत आभारी हूँ, जिन्होंने इस पुस्तक के प्रकाशन में पूरा सहयोग प्रदान किया है।

'शक्ति-निवास'
बोरिङ्ग रोड, पटना–१
माघी पूर्णिमा, १८७६ शकाब्द

फूलदेव सहाय वर्मा

विषय-सूची

पहला	अध्याय	पेट्रोलियम और पेट्रोलियम के उपयोग	१
दूसरा	,,	पेट्रोलियम का इतिहास और उपस्थिति	८
तीसरा	,,	पेट्रोलियम की उत्पत्ति	१६
चौथा	,,	कच्चा पेट्रोलियम	२०
पाँचवाँ	,,	पेट्रोलियम का निकास	३३
छठा	,,	रासायनिक रीति से पेट्रोलियम का परिष्कार	४२
छठा (क)	,,	भौतिक रीति से पेट्रोलियम का परिष्कार	४३अ
सातवाँ	,,	भारत में पेट्रोलियम का परिष्कार	५१
आठवाँ	,,	पेट्रोलियम के भौतिक गुण	५४
नवाँ	,,	पेट्रोलियम का रसायन	६६
दसवाँ	,,	पेट्रोलियम की सामूहिक प्रतिक्रियाएँ	६३
ग्यारहवाँ	,,	पेट्रोलियम का आसवन	१०७
बारहवाँ	,,	पेट्रोलियम तेल का भंजन	११४
तेरहवाँ	,,	पेट्रोलियम का परीक्षण	१३७
चौदहवाँ	,,	किरासन	१७५
पन्द्रहवाँ	,,	पेट्रोल या गैसोलिन	१८०
सोलहवाँ	,,	स्नेहन	१६७
सतरहवाँ	,,	पेट्रोलियम स्नेहक	२०१
अठारहवाँ	,,	पैराफिन मोम	२०६
उन्नीसवाँ	,,	ईंधन-तेल	२१७
बीसवाँ	,,	अस्फाल्ट और पेट्रोलियम के अन्य उपयोग	२२०
इक्कीसवाँ	,,	संश्लिष्ट पेट्रोल (संश्लिट्रोल)	२२६
बाईसवाँ	,,	प्रतिक्रिया प्रतिवर्त्ती	२३६
तेईसवाँ	,,	उत्प्रेरक	२४१
चौबीसवाँ	,,	प्रतिक्रिया-फल	२४६
पच्चीसवाँ	,,	संश्लिष्ट पेट्रोलियम का आर्थिक पहलू	२५५
परिशिष्ट (क)			२६०
परिशिष्ट (ख)			२६६
अनुक्रमणिका और वैज्ञानिक शब्दावली			२७७
अँगरेजी-हिन्दी शब्दावली			२८६
शुद्धि-पत्र			२६५

पेट्रोलियम

पहला अध्याय

पेट्रोलियम और पेट्रोलियम के उपयोग

पेट्रोलियम

पेट्रोलियम एक अद्भुत पदार्थ है। कुछ लोग इसे आश्चर्य की दृष्टि से देखते हैं और कुछ लोग भय की दृष्टि से। आश्चर्य की दृष्टि से देखने का कारण यह है कि अपेक्षाकृत थोड़े समय में ही इसके उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई है और इसके उपयोग बहुत अधिक बढ़ गये हैं। १८७० ई० में जितना पेट्रोलियम उत्पन्न हुआ, उसका प्राय: २५ गुना (लगभग २१० लाख टन पेट्रोलियम का) उत्पादन १६०० ई० में हुआ। १६३६ ई० में इसके उत्पादन की मात्रा प्रायः १४ गुनी से बढ़कर ३००० लाख टन हो गई थी।

हम आश्चर्य-चकित उस समय होते हैं, जब इसके उत्पादन की तुलना इसके समान ही अन्य दो बड़े उपयोगी पदार्थों—कोयले और इस्पात—के उत्पादन से करते हैं। मनुष्य और राष्ट्र के जीवन में कोयले और इस्पात कितने महत्त्व के पदार्थ हैं, इसके बतलाने की आवश्यकता नहीं। १७८० ई० में कोयले का जितना उत्पादन हुआ था, उसकी केवल दुगुनी मात्रा में उत्पादन १६०० ई० में हुआ था, और फिर १६०० ई०के उत्पादन का दुगुना उत्पादन १८३० ई० में हुआ था।

पेट्रोलियम के उत्पादन की वृद्धि के साथ-साथ पेट्रोलियम के व्यवसाय की भी इसी अनुपात में वृद्धि हुई है। इधर पेट्रोलियम की अनेक कम्पनियाँ खुली हैं और अनेक नये-नये देशों में पेट्रोलियम की उपस्थिति का पता लगा है और वहाँ से पेट्रोलियम निकाला जाने लगा है।

पेट्रोलियम को भय की दृष्टि से देखने का कारण यह है कि इसका उपयोग युद्ध में, इस कारण मनुष्य और धन के विनाश में, अधिकाधिक मात्रा में हो रहा है। आज युद्ध के अनेक साधनों, टैंकों, युद्ध-विमानों और यंत्र-संचालित सेनाओं में पेट्रोलियम का उपयोग अधिकाधिक बढ़ रहा है।

पृथ्वी के अन्दर से कुआँ खोदकर पेट्रोलियम का प्राप्त करना, आज जुए का खेल समझा जाता है। सैकड़ों स्थलों पर पेट्रोलियम के लिए बड़ी-बड़ी मशीनों से खुदाई या छेदाई होती है। ऐसी छेदाई के सैकड़ों स्थलों में कहीं एक स्थल पर पेट्रोलियम पाया जाता

है। जहाँ पेट्रोलियम निकल आता है, वहाँ छेदाई में जितना धन लगता है, उसका हजारगुना-लाखगुना धन सरलता से प्राप्त हो जाता है; पर जहाँ की छेदाई से पेट्रोलियम नहीं निकलता और (स्मरण रहे कि छेदाई के १०० स्थलों में ६६ स्थलों में से पेट्रोलियम नहीं निकलता) वहाँ छेदाई में लगा सारा धन—और यह धन कम नहीं होता, कई लाख रुपये तक पहुँच जाता है—व्यर्थ चला जाता है।

खुदाई का काम भी सरल नहीं है। उसमें बड़े कठोर परिश्रम और बड़ी दक्षता की आवश्यकता पड़ती है। खुदाई में लगे मनुष्यों की दशा ठीक उस किसान-सी है जो खेतों के जोतने और बोने में तो सारा परिश्रम करता है; पर उपज बहुत कुछ उस मौसम पर निर्भर करती है जो उसके नियंत्रण अथवा अधिकार के बाहर है।

राष्ट्र-हित की दृष्टि से पेट्रोलियम का महत्त्व और भी अधिक है। राजनीतिक क्षेत्र में पेट्रोलियम का प्रमुख स्थान है। प्रथम विश्व-युद्ध के अवसर पर क्लीमैंसो ने कहा था—'राष्ट्र के लिए पेट्रोलियम उतना ही आवश्यक है, जितना मनुष्य के लिए रक्त।' प्रेसिडेण्ट कूलिज ने १६२४ ई० में लिखा था कि किसी राष्ट्र का सर्वाधिपत्य उसके पेट्रोलियम और पेट्रोलियम-उत्पादन की मात्रा पर निर्भर करता है। कुछ वर्ष हुए ब्रायण्ड ने कहा था कि अन्तरराष्ट्रीय राजनीति वस्तुतः पेट्रोलियम की राजनीति है।

बड़े-बड़े राष्ट्रों में रूस और अमेरिका ही ऐसे राष्ट्र हैं, जो अपनी आवश्यकता से अधिक पेट्रोलियम अपने देशों में ही निकालते हैं। अन्य बड़े-बड़े राष्ट्रों में ग्रेटब्रिटेन, फ्रांस, इटली, चीन और जापान ऐसे देश हैं, जिन्हें पेट्रोलियम के लिए देश से बाहर के तेल-आयात पर ही निर्भर रहना पड़ता है। चूँकि पेट्रोलियम प्रत्येक देश के लिए शान्ति-काल में जीवन और युद्ध-काल में मरण है, अतः इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं, यदि प्रत्येक देश पेट्रोलियम-तेल-प्राप्ति के लिए सभी संभव उपायों—धन लगाने से लेकर युद्ध करने तक—को काम में लाये तो।

इधर कुछ देशों में जो पेट्रोलियम पाये गये हैं, उनके लिए वहाँ के निवासी अपने प्रयत्न से पेट्रोलियम-सम्बन्धी उद्योग-धन्धे का संचालन नहीं कर सकते। ऐसे देशों में ईरान, ईराक, अरब, मेक्सिको, बेनेजुएला हैं। इस कारण अनेक प्रबल राष्ट्रों का इन देशों पर आधिपत्य स्थापित करने का होड़ लगा हुआ है।

मनुष्य की आवश्यकताओं में ईंधन का स्थान ऊँचा है। ईंधन से ही हमें भिन्न-भिन्न शक्तियाँ प्राप्त होती हैं। ईंधन से ही हमें ऊष्मा मिलती और प्रकाश भी मिलता है। ईंधन से ही हम अपना भोजन पकाते हैं।

ईंधन को वैज्ञानिकों ने तीन वर्गों में विभक्त किया है; ठोस, द्रव और गैसीय। ठोस ईंधन का उपयोग सबसे प्राचीन है। सबसे पहले सूखे पत्ते और सूखी लकड़ियाँ उपयुक्त होती थीं। फिर पीट (सड़ी हुई सूखी लकड़ी) का पता लगा और उसका जलावन के लिए उपयोग होने लगा, फिर कोयले का आविष्कार हुआ और उसका उपयोग आज भी बहुत अधिकता से हो रहा है।

अनेक कामों के लिए लकड़ी अथवा कोयला जलाकर उससे काम चला सकते हैं।

अनेक कामों के लिए वह पर्याप्त होता है, पर सब कामों के लिए ठोस ईंधन से काम नहीं चल सकता। ठोस ईंधन जलाकर उससे भाप बनाकर वाष्प-इंजन अथवा वाष्प-चक्की चला सकते हैं। वाष्प-इंजन का उपयोग अनेक कामों के लिए ठीक है, पर ठोस ईंधन से अभ्यन्तर इंजन नहीं चलाया जा सकता। ठोस ईंधन के जलाने से धुआँ भी पर्याप्त मात्रा में बनता है। धुआँ वायु को कुछ सीमा तक दूषित भी कर देता है और इससे और भी नुकसान होते हैं। ठोस ईंधन के जलने से राख भी बनती है। राख का बनना अनेक स्थलों पर हितकर नहीं होता।

ठोस ईंधनों में दोषों के साथ-साथ कुछ गुण भी हैं। यह सस्ता होता है। इसके रखने के लिए विशेष पात्रों की आवश्यकता नहीं पड़ती। कहीं भी खुली वायु में रखा जा सकता है। इसे एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाने में कोई कठिनता नहीं होती। कोयले को खानों से निकालने में न अधिक खर्च पड़ता है और न अधिक कष्ट उठाना पड़ता है।

ठोस ईंधन के स्थान में द्रव ईंधन का उपयोग आज बहुत बढ़ रहा है। द्रव ईंधन सरलता से गैसों में परिणत किया जा सकता है। वस्तुतः गैसों के रूप में ही सब प्रकार के ईंधन जलते हैं। अभ्यन्तर इंजन में भी द्रव ईंधन का उपयोग हो सकता है। इंजनों के शीघ्र चालू करने के लिए द्रव ईंधन ही उपयुक्त होता है। जहाँ चंचलता अर्थात् सरल बहाव, त्वरण और तेज चाल की आवश्यकता होती है, वहाँ द्रव ईंधन ही उपयुक्त और श्रेष्ठ समझा जाता है। पर द्रव ईंधन के रखने के लिए विशेष पात्रों की आवश्यकता होती है। इसका एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाने में विशेष प्रबन्ध की आवश्यकता होती है। समुद्र पार इसका ले जाना तो और भी कठिन होता है। इसके लिए अब विशेष प्रकार के टैंकर जहाज बने हैं। द्रव ईंधन आज विशेष रूप से पेट्रोलियम से प्राप्त होता है। पेट्रोलियम के सिवा कुछ अन्य पदार्थों से भी द्रव ईंधन प्राप्त करने की सफल चेष्टाएँ हुई हैं। कोयले से भी द्रव ईंधन प्राप्त करने की सफल चेष्टाएँ हुई हैं और आज कोयले से कृत्रिम पेट्रोलियम बनता है।

गैसीय ईंधन का भी आज उपयोग हो रहा है। कुछ गैसीय ईंधन तो आज प्राकृतिक स्रोतों, पेट्रोलियम-कूपों से, प्राप्त होते हैं। जहाँ यह प्राकृतिक गैस प्राप्य है, वहाँ उसका उपयोग सरल और सुविधाजनक होता है, पर गैसीय ईंधन का एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाना और भी कठिन होता है। गैस नलों द्वारा कुछ मीलों तक तो ले जाई जा सकती है; पर समुद्र पार इसका ले जाना बड़ा कठिन होता है। गैस को इकट्ठा कर रखना भी सरल नहीं है। इसके लिए बहुत बड़ी-बड़ी टंकियों की आवश्यकता होती है। ये टंकियाँ मजबूत लोहे की बनी होनी चाहिए। मजबूत लोहे के बेलनों में भी गैस को दाब में रखकर भेज सकते हैं, पर इससे गैस-उत्पादकों और गैस-उपभोक्ताओं—दोनों को कठिनाइयाँ होती हैं।

कृत्रिम रीति से भी आज गैसीय ईंधन तैयार होते हैं। इसके लिए या तो पत्थर-कोयला अथवा पेट्रोलियम का उपयोग होता है। अब तो बड़े-बड़े नगरों के पनालों के कार्बनिक पदार्थों से भी गैसीय ईंधन तैयार होकर घरेलू कामों में उपयुक्त हो रहा है।

अब तक जितने ईंधन हमें मालूम हैं, उनमें कोयला और पेट्रोलियम ही सर्वश्रेष्ठ समझे जाते हैं।

पेट्रोलियम के उपयोग

आधुनिक वैज्ञानिक युग के निर्माण में पेट्रोलियम का बहुत बड़ा हाथ है। पेट्रोलियम से ही पेट्रोल प्राप्त होता है जो अभ्यन्तर दहन-इंजन में जलकर शक्ति उत्पन्न करता है। पेट्रोल को अमेरिका में गैसोलिन कहते हैं। इस शक्ति से ही वायुयान, मोटरकार, मोटर बस, मोटर ट्रक, खेत जोतने के ट्रैक्टर, कहीं-कहीं रेलगाड़ियाँ, नाना प्रकार की मशीनें आदि चलते हैं। आज यदि पेट्रोल नहीं होता तो वायुयानों का चलना सम्भव नहीं था। पेट्रोल से गैस भी सरलता से बनती है, जो प्रयोगशालाओं में बर्नरों में जलकर गरमी और रोशनी उत्पन्न करती है।

पेट्रोलियम-कूपों से एक प्रकार की गैस प्राप्त होती है। इस गैस को प्राकृतिक गैस कहते हैं। यह गैस भी जलकर गरमी और रोशनी उत्पन्न करती है, पर इसका अधिक उपयोग इसके कार्बनकाल के निर्माण में होता है। इस गैस को सीमित वायु में जलाने से जो कजली बनती है, वही कार्बनकाल है। कार्बनकाल बहुत महीन होता है। इससे छापे की स्याही अच्छी बनती है। अधिक कार्बनकाल छापे की स्याही बनाने में उपयुक्त होता है। कार्बनकाल पुताई के काम में, काले रंग के लिए इस्तेमाल होता है। रबर में कार्बनकाल को डालकर जो टायर बनता है, वह जल्दी घिसता नहीं और अधिक मजबूत और अधिक टिकाऊ होता है। टेनिस के गेंद में भी कार्बनकाल लगता है। कार्बनकाल के और भी अनेक छोटे-मोटे उपयोग हैं।

पेट्रोलियम से पेट्रोलियम ईथर प्राप्त होता है। रसायनशाला में अनेक कार्बनिक पदार्थों के निकालने में, प्राकृतिक पदार्थों से निष्कर्ष निकालने में विलायक के रूप में पेट्रोलियम ईथर का उपयोग होता है। पेट्रोलियम ईथर रसायनशाला का एक महत्त्व का प्रतिकारक है।

पेट्रोलियम से बेंजाइन प्राप्त होता है। तेल और चर्बी को घुलाकर अन्य पदार्थों से अलग करने और सूखी धुलाई में बेंजाइन का उपयोग होता है। रेशम और ऊन के वस्त्र पानी से धोने से कमजोर हो जाते हैं। इस कारण इन्हें ऐसे द्रव से धोना अच्छा होता है जिसमें जल न हो। ऐसी धुलाई को शुष्क-धावन या सूखी धुलाई कहते हैं और इसके लिए बेंजाइन उपयुक्त होता है। बेंजाइन से तेल के धब्बे छूट जाते और धूलकण निकल जाते हैं। बेंजाइन से कपड़ों पर कोई बुरा असर नहीं पड़ता। इस काम के लिए पर्याप्त मात्रा में बेंजाइन लगता है।

पेट्रोलियम से किरासन प्राप्त होता है। रोशनी के लिए लम्पों और लालटेनों में किरासन का उपयोग होता है। किरासन के आविष्कार के पूर्व जलाने के लिए वानस्पतिक तेल और चर्बी उपयुक्त होती थी। आज भी जहाँ किरासन तेल प्राप्य नहीं है, वहाँ बीजों से प्राप्त तेल और पशुओं की चर्बी उपयुक्त होती है।

पेट्रोलियम से डीज़ेल-तेल प्राप्त होता है। यह तेल, जैसे नाम से प्रकट है, डीज़ेल-इंजन में जलाया जाता है। आटा पीसने की चक्कियाँ इत्यादि डीज़ेल इंजन से चलते हैं।

मशीनों के चलाने में घर्षण होता है। घर्षण से मशीनों के पुर्जे घिस जाते हैं। कुछ सीमा तक मशीनों का यह घिसना रोका जा सकता है। इसके लिए मशीनों के पुर्जों को चिकनाने की आवश्यकता पड़ती है, जिससे कम-से-कम मात्रा में घिसाई हो। मशीनों के पुर्जों के चिकनाने के लिए अनेक पदार्थों का उपयोग होता है। ऐसे पदार्थों को 'स्नेहक' (Lubricant) कहते हैं। स्नेहकों में अधिकता से उपयुक्त होनेवाला पदार्थ पेट्रोलियम से प्राप्त एक तेल है, जिसे 'स्नेहन तेल' कहते हैं। मोटरकार के मोबिल तेल में स्नेहन तेल ही प्रधानतया रहता है।

पेट्रोलियम से 'वेसलीन' प्राप्त होता है। वेसलीन के अनेक उपयोग हैं। ओषधियों के मलहम बनाने में काफी तायदाद में वेसलीन लगता है। इससे अनेक शृंगार के पदार्थ बनते हैं। वेसलीन पोमेड में वेसलीन के साथ कुछ सुगंधित द्रव्य मिला रहता है। बालों के सँवारने में इसका उपयोग होता है। मशीनों के चिकनाने में 'ग्रीज' के नाम से वेसलीन ही इस्तेमाल होता है। वेसलीन के लेप से धातुओं पर मोरचा नहीं लगता अथवा मोरचा लगना बहुत कम हो जाता है।

पेट्रोलियम से मोम प्राप्त होता है। इसे खनिज मोम अथवा 'पैराफीन मोम' कहते हैं। ऐसा अनुमान है कि लगभग ६ अरब पाउण्ड मोम प्रतिवर्ष निकलता और विभिन्न कामों में उपयुक्त होता है। इसकी उपयोगिता इस कारण है कि यह जलता है, पानी के सोखने को रोकता है और रासायनिक प्रतिकारकों के प्रति निष्क्रिय या प्रतिरोधक होता है।

मोम का सबसे प्राचीन उपयोग मोमबत्ती बनाने में है। मोमबत्ती का निर्माण बहुत प्राचीन काल से होता आ रहा है। आजकल मोमबत्ती बनाने में मोम के साथ-साथ स्टियरीन का उपयोग बढ़ रहा है। केवल स्टियरीन की भी मोमबत्तियाँ बनती हैं। मोमबत्ती में जलने का गुण अच्छा होता है। इसमें प्रदीप्ति-शक्ति (Illuminating power) ऊँची होती है और मोम जलकर राख नहीं बनता और वह सरलता से मोमबत्ती के आकार में ढाला जा सकता है। इस मोमबत्ती में दोष केवल यह है कि गरम स्थलों में मोमबत्ती टेढ़ी हो जाती है और उबड़-खाबड़। पर यह दोष ऐसा है कि इसका निवारण हो सकता है और हुआ है।

मोम के सहयोग से कागज भी बनते हैं। ऐसे कागज को 'मोमजामा' कहते हैं। यह जल का प्रतिरोधक होता है। इस कागज के अनेक उपयोग हैं। खाद्य-सामग्रियों के लपेटने में इसका अधिकाधिक उपयोग आज हो रहा है।

लकड़ी पर भी मोम चढ़ाया जाता है। इससे लकड़ी में अम्लों और क्षारों के प्रति प्रतिरोधकता आ जाती है। पत्थरों और सीमेंट पर भी मोम से वायु-प्रतिरोधक गुण आ जाता है। मोम वार्निश में भी उपयुक्त होता है।

दियासलाई की लकड़ियाँ मोम में डुबाई जाती हैं, ताकि दियासलाई की आग लकड़ी में सरलता से फैल सके।

अल्पमात्रा में औषधों और शृंगार के सामानों में भी मोम का व्यवहार होता है।

फलों और तरकारियों के संरक्षण में भी मोम का आज व्यवहार होता है। मोम

से चुकन्दर सुरक्षित रखा जा सकता है। कपड़े और चमड़े पर मोम चढ़ाने से उनमें जल प्रविष्ट नहीं कर सकता, वैद्युत-यंत्रों में पृथगन्यासन (Insulation) के लिए मोम का उपयोग होता है।

पेट्रोलियम से पिच प्राप्त होता है। एस्फाल्ट के स्थान में सड़क बनाने में, काले वार्निश बनाने में, विद्युत् के पृथगन्यासक के निर्माण में, अम्ल रखने की टंकियों और क्लोरीन के भभके के भीतरी भाग को पेंट करने में पिच का व्यवहार होता है।

पेट्रोलियम का उपयोग औषधों में भी होता है। पेट्रोलियम रेचक होता है। लिक्विड पैराफीन के नाम से शुद्ध रूप में अथवा अन्य पदार्थों के साथ मिलाकर रुचिकर बनाकर मल के निष्कासन के लिए इसका व्यवहार होता है।

पेट्रोलियम से आज अनेक रासायनिक द्रव्य तैयार होते हैं। इनमें बेंज़ीन, टोल्वीन, ज़ाइलीन, एथिलीन, प्रोपिलीन, ब्युटिलीन प्रमुख हैं। इनमें कुछ पदार्थ असंतृप्त हाइड्रोकार्बन वर्ग के हैं। इनको सरलता से अल्कोहलों में परिणत कर सकते हैं। इस प्रकार, इनसे एथिल अल्कोहल, प्रोपिल अल्कोहल और ब्युटिल अलकोहल प्राप्त होते हैं। इन हाइड्रोकार्बनों को अन्य प्रतिक्रियाओं से कृत्रिम रबर और प्लास्टिक में परिणत कर सकते हैं। इनसे अनेक उपयोगी विलायक भी प्राप्त होते हैं। बेंजीन और टोल्वीन से अनेक विस्फोटक पदार्थ और औषध बनते हैं।

पेट्रोलियम से ग्लीसरिन भी प्राप्त हो सकता है। ग्लीसरिन एक महत्त्व का औद्योगिक द्रव्य है। इसके अनेक महत्त्व के उपयोग हैं। इससे नाइट्रो-ग्लीसरिन बनता है जो एक प्रबल विस्फोटक पदार्थ है। इसके डाइनेमाइट और कॉर्डाइट नामक सुप्रसिद्ध विस्फोटक बनते हैं।

अमेरिका में पेट्रोलियम-उद्योग-धन्धों का बहुत अधिक विकास हुआ है। वहाँ रासायनिक उद्योग-धन्धों में आधे से अधिक उद्योग-धन्धे पेट्रोलियम से संबंध रखते हैं। इसका कारण पेट्रोलियम की प्रचुरता और सस्तापन है। अमेरिका के अनेक विश्वविद्यालयों में पेट्रोलियम की विशेष शिक्षा दी जाती है और अनेक वैज्ञानिक और इंजीनियर पेट्रोलियम की शिक्षा प्राप्तकर विश्वविद्यालयों से निकलते और पेट्रोलियम-संबंधी उद्योग-धन्धों में लगते हैं। अमेरिका में आज सैकड़ों कारखाने पेट्रोलियम से भिन्न-भिन्न पदार्थों का निर्माण कर उनका उपयोग दिन-दिन बढ़ा रहे हैं।

भारत के लिए पेट्रोलियम के उद्योग-धन्धे उपयुक्त नहीं हैं। न यहाँ पर्याप्त मात्रा में पेट्रोलियम ही पाया जाता है और न यह काफी सस्ता ही होता है। भारत में कोयले की प्रचुरता है। यह सस्ता भी होता है। कोयले से संबंध रखनेवाले उद्योग-धन्धे यहाँ सरलता से पनप सकते हैं। पर, ऐसा नहीं हो रहा है। भारत की कोयले की अच्छी खानें विदेशियों के हाथ में हैं। भारत के उद्योग-धन्धों के विकास में अब उनकी दिलचस्पी नहीं रही है। इस कारण आवश्यक है कि भारत-सरकार का ध्यान इस उद्योग-धन्धे की ओर आकृष्ट हो।

सबसे पहले कोयले का संरक्षण होना चाहिए। प्रत्येक आउंस कोयले का उपयोग होना चाहिए। भारत में कोयला सीमित है। वैज्ञानिकों का अनुमान है अधिक-से-अधिक

सौ वर्षों तक भारत का कोयला टिक सकता है। कोयले से आज अनेक ऐसे आवश्यक पदार्थ प्राप्त होते हैं जो अन्य साधनों से नहीं प्राप्त हो सकते। राष्ट्रहित की दृष्टि से कोयले का संरक्षण बहुत आवश्यक है। इसके संरक्षण का भरपूर प्रयत्न होना चाहिए। ऐसा कोयले की खानों और कोयले के उद्योग-धन्धों के राष्ट्रीयकरण से ही हो सकता है। भारत-सरकार का ध्यान इस महत्त्व के विषय की ओर शीघ्र-से-शीघ्र आकृष्ट होना चाहिए।

आज कोयले से पेट्रोलियम भी तैयार होता है। कोयले से पेट्रोलियम प्राप्त करने की दो विधियाँ हैं, जिनका वर्णन विस्तार से आगे के प्रकरणों में होगा। इन दोनों विधियों से पेट्रोलियम प्राप्त करने के कारखाने भारत में खुलने चाहिए। राष्ट्रहित की दृष्टि से ऐसे कारखानों का भारत में जल्दी-से-जल्दी स्थापित होना बड़ा आवश्यक है। साधारण व्यवसायी इस उद्योग-धन्धे में धन नहीं लगा सकता। ऐसे कारखाने के संचालन के लिए अनुभवी व्यक्तियों और विशेषज्ञों की आवश्यकता पड़ती है, जिसका इस समय इस देश में सर्वथा अभाव है। भारत-सरकार के सहयोग से ही ऐसा कारखाना खोला और चलाया जा सकता है।

दूसरा अध्याय

पेट्रोलियम का इतिहास और उपस्थिति

पेट्रोलियम शब्द लैटिन 'पेट्रा' और 'ओलियम' शब्दों से बना है। पेट्रा का अर्थ है चट्टान और ओलियम का अर्थ है तेल। पेट्रोलियम का हिन्दी पर्यायवाची शब्द मृत्तैल अर्थात् मृत् (मिट्टी) और तैल (तेल) है। पेट्रोलियम को मिट्टी-तेल, खनिज तेल, चट्टान-तेल इत्यादि नामों से भी पुकारते हैं। भारत में किरासन तेल को ही साधारणतया मिट्टी का तेल कहते हैं।

पेट्रोलियम एक प्रकार का तेल है। वैज्ञानिकों ने तेलों को तीन श्रेणियों में विभक्त किया है। उन्हें वे (१) स्थायी तेल, (२) अस्थायी तेल अथवा वाष्पशील तेल और (३) खनिज तेल कहते हैं।

जो तेल बीजों और जन्तुओं से प्राप्त होते हैं, वे स्थायी श्रेणी के तेल हैं। तिल, नारियल, तीसी, महुआ, सरसों, मछली और काडलीवर आयल, बकरी, भेड़ और सूअर की चर्बी, गाय, भैंस और भेड़ी के घी—ये सब ही स्थायी तेल हैं। प्राकृतिक तेलों में कोई भी दो नमूने के तेल पूर्णतया एक-से नहीं होते। वानस्पतिक तेल जान्तव तेलों से पूर्णतया एक-से नहीं होते। भिन्न-भिन्न बीजों के तेल भी एक से नहीं होते। उनमें अल्पमात्रा में अन्तर अवश्य रहता है। यह अन्तर रहते हुए भी वे प्रकृतितः एक-से हैं, क्योंकि रासायनिक दृष्टि से उनके संघटन बिल्कुल एक न होते हुए भी एक-से होते हैं। विभिन्न तेलों में विभिन्न अवयवों की मात्रा विभिन्न रहती है। इन तेलों को स्थायी तेल इस कारण कहते हैं कि ये तेल उड़कर लुप्त नहीं हो जाते। कागज पर गिरने से ये दाग बनाते हैं, जो साधारणतया मिटते नहीं हैं।

दूसरी श्रेणी के तेल अस्थायी तेल हैं। ये तेल वाष्प बनकर उड़ जाते हैं। ये तेल जल-वाष्प में वाष्पशील भी होते हैं। कागज पर गिरने से ये दाग अवश्य बनाते हैं, पर ये दाग स्थायी नहीं होते। वायु में खुला रखने से दाग मिट जाते हैं। ऐसे तेल फूलों, पत्तों, जड़ों और पेड़ों से प्राप्त होते हैं। कपूर, तारपीन, चन्दन तेल, खस तेल, निम्बू-घास तेल वाष्पशील तेलों के उदाहरण हैं। रसायनतः वाष्पशील तेल स्थायी तेलों से बिल्कुल भिन्न होते हैं।

वाष्पशील तेलों की प्रकृति एक-सी नहीं होती। उनके रासायनिक संघटन विभिन्न होते हैं। वे विभिन्न वर्गों के कार्बनिक यौगिक हैं। उनमें कुछ हाइड्रोकार्बन होते हैं, कुछ अल्कोहल, कुछ एल्डीहाइड, कुछ कीटोन और कुछ एस्टर होते हैं। फूलों, पत्तों, जड़ों और फलों की गंध रुचिकर अथवा अरुचिकर इन्हीं तेलों के कारण होती है। इन विभिन्न तेलों के मिश्रण से एक-से-एक मधुर और मनोमोहक सुगन्धित द्रव्य तैयार होकर आज बाजारों

में बिकते और शर्बत, अन्य पेयों, खाद्यों, मिठाइयों और शृंगार की अन्य वस्तुओं के निर्माण में उपयुक्त होते हैं। कृत्रिम रीति से भी अनेक सुगन्धित वाष्पशील तेलों का निर्माण आज हुआ है। एथिल एसीटेट की गंध केला-सी होती है। एथिल ब्युटिरेट की गंध अनानास-सी और एमिल एसीटेट की गंध नासपाती-सी होती है।

तीसरी श्रेणी के तेलों को खनिज तेल कहते हैं। खनिज तेल नाम इस कारण पड़ा कि यह खानों से निकलता था। पेट्रोलियम खनिज श्रेणी का तेल है। तेल-क्षेत्रों में तेल-कूपों से खनिज तेल निकाला जाता है। अन्य रीतियों से भी खनिज तेल प्राप्त हो सकता है। कोयले से आज खनिज तेल तैयार हो रहा है। कोयले से खनिज तेल तैयार करने के अनेक कारखाने आज खुल गये हैं।

खनिज तेलों की प्रकृति स्थायी और अस्थायी तेलों की प्रकृति से बिल्कुल भिन्न होती है। इसके भौतिक और रासायनिक गुण भी अन्य तेलों से बहुत पृथक् होते हैं। इन गुणों का विस्तृत वर्णन आगे के प्रकरणों में होगा।

पेट्रोलियम का ज्ञान मनुष्य को कब से हुआ, इसका ठीक-ठीक पता हमें नहीं है। अनेक प्राचीन ग्रन्थों में पेट्रोलियम का उल्लेख मिलता है; पर स्पष्ट वर्णन नहीं मिलता। रूस के बेकू नामक स्थान में बराबर जलनेवाली एक लौ है, जिसकी अग्नि-उपासक पारसी लोग पूजा करते हैं। यह लौ पेट्रोलियम के जलने से बनती है। तेल-क्षेत्रों के आस-पास, जहाँ-तहाँ जमीन से निकलकर थोड़ी मात्रा में बहता हुआ, पेट्रोलियम बहुत पाचीन काल से पाया जाता है। लोग उसे इकट्ठा कर किसी-न-किसी काम में इस्तेमाल करते थे। अमेरिका के आदिवासी भी इसी प्रकार थोड़ी-थोड़ी मात्रा में इकट्ठा कर उसे काम में लाते थे। उस समय पेट्रोलियम-तेल का उपयोग भी बड़ा सीमित था।

लार्ड प्लेफेयर (Lord Playfair) पहला व्यक्ति थे, जिन्होंने १९वीं शताब्दी के मध्य में पेट्रोलियम के परिष्कार की विधि निकाली और उससे प्राप्त विभिन्न अंशों की उपयोगिता बतलाई; पर उस समय पेट्रोलियम पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं था। इसके कुछ समय बाद ही, आज से केवल ९८ साल पहले, सन् १८५९ ई० में कर्नल ड्रेक नामक व्यक्ति ने जमीन से तेल निकालने के लिए पहला तेल-कूप पेनसिल्वेनिया में खोदा। दो महीने में यह कुआँ तैयार हुआ। यह कुआँ प्रायः ७० फुट गहरा था। पेट्रोलियम-उद्योग का आरंभ यहीं से होता है। कर्नल ड्रेक के इस कुएँ से एक साल तक तेल निकलता रहा। प्रति दिन ८४० गैलन तेल निकलता था। एक साल के बाद यह कुआँ सूख गया। अब दूसरे कुओं की खोज की होड़ मची। हजारों स्थानों में तेल के कुएँ खोदे जाने लगे। जैसे-जैसे पेट्रोलियम-तेल की उपयोगिता और माँग बढ़ने लगी, पेट्रोलियम-कम्पनियाँ धड़ाधड़ खुलने लगीं। पहले पेट्रोलियम का अधिक उपयोग केवल लालटेन में जलाने में होता था, फिर अन्य कामों के लिए इसका उपयोग बढ़ा। आज इंजन में जलाने में इसका सबसे अधिक उपयोग होता है।

तब से अबतक हजारों पेट्रोल-कम्पनियाँ सैकड़ों-हजारों कुओं से प्रायः ८० लाख घनमीटर तेल भूमि से निकाल चुकी हैं। इतने तेल से ४० लाख कीलोमीटर लम्बा, २० कीलोमीटर चौड़ा और १० कीलोमीटर गहरा तालाब भर जायगा। जहाँ कुआँ खोदा जाता है, वहाँ इस्पात की लम्बी-लम्बी मीनारें खड़ी की जाती हैं। ये मीनारें १३५ फुट तक ऊँची हो सकती हैं। एक ऐसी मीनार का चित्र यहाँ दिया हुआ है। धरती-तल से कभी-कभी

तीन-तीन मील अन्दर तक छेद करना पड़ता है, तब तेल का सोता मिलता है। कभी-कभी तेल के सोते मिलने पर भी तेल कुएँ से ऊपर नहीं उठता। इस हालत में नीचे के पत्थर को काटने के लिए बारूद का इस्तेमाल करना पड़ता है। जमीन के अन्दर से पम्प की मदद से
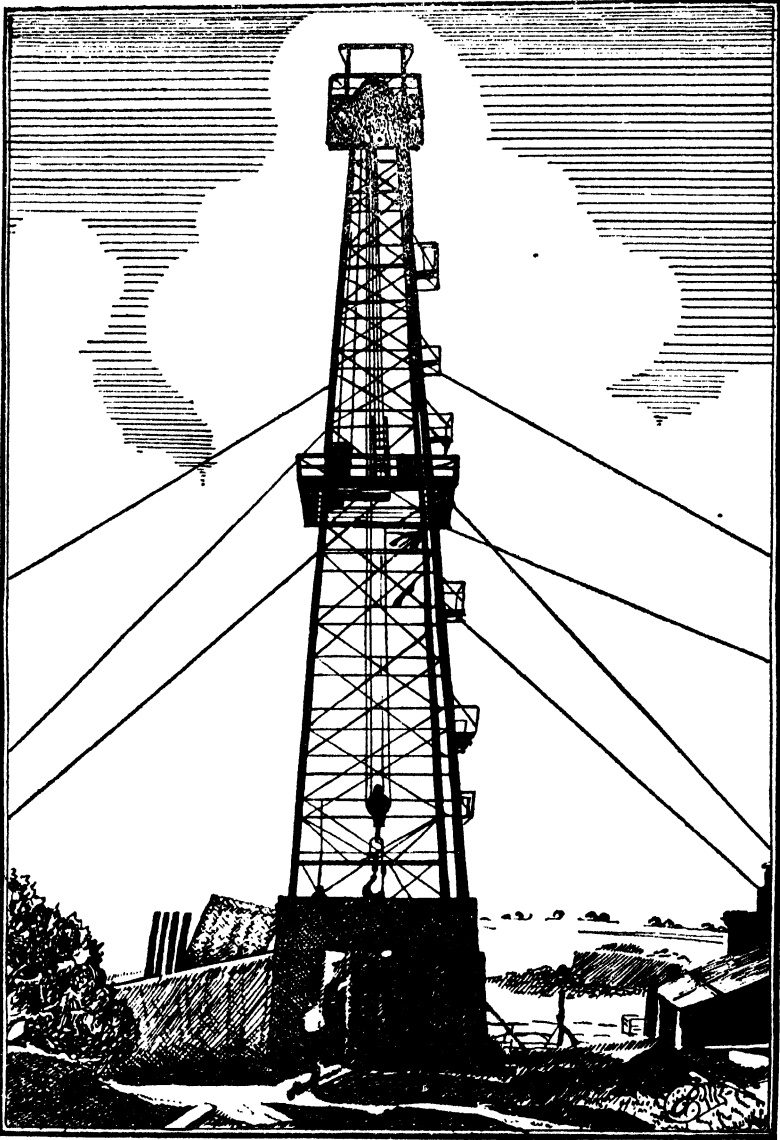
चित्र १—पेट्रोलियम-कुएँ पर स्थित एक मीनार

तेल निकालकर शोधक संयन्त्रों को भेजा जाता है। ये संयन्त्र तेल-कूपों से कभी-कभी सैकड़ों मील की दूरी पर स्थित होते हैं। वहाँ पर पेट्रोलियम के विभिन्न अंशों को पेट्रोल-ईथर, पेट्रोल, किरासन इत्यादि में अलग-अलग किया जाता है।

आज अनेक देशों में तेल के कुएँ खोदे गये हैं। ऐसे देशों में मैक्सिको, टेक्सास्, कैलिफोर्निया, पेनसिल्वेनिया, रूमानिया, रूस, पोलैण्ड, ईराक, ईरान, बर्मा, डच-ईस्ट इण्डीज, जापान, आसाम, मिस्र, मोरक्को और अलजीरिया हैं।

अमेरिका

उत्तर-अमेरिका में पेनसिल्वेनिया, वेस्ट वर्जिनिया, न्यूयार्क, ओहियो, इण्डियाना, केण्टुकी, मिचिगान में पेट्रोलियम निकलता है। ऐसे पेट्रोलियम का घनत्व प्रायः ०·८१० होता है। इसमें गन्धक और नाइट्रोजन की मात्रा बड़ी अल्प होती है। नाइट्रोजन ०·१ से ०·२ प्रतिशत से अधिक नहीं होता। पेट्रोलियम का प्रायः ६० प्रतिशत पेट्रोल और किरासन होता है। इसका रंग हलका और बहाव सरल होता है। निम्नताप पर उबलनेवाले अंश में पैराफीन हाइड्रोकार्बन प्रायः सारा का सारा होता है और ठोस अंश में नैफ्थीन और मोम होता है। मध्य के अंश में नैफ्थीन की मात्रा अधिक होती है। कच्चे पेट्रोलियम में एस्फाल्ट की मात्रा बहुत कम होती है।

अमेरिका के कानसास्, ओक्लाहोमा, टेक्सास्, लुयिसियाना, आरकानस में भी पेट्रोलियम निकलता है। इधर कोलोरैडो, न्यू मैक्सिको, ऐरिजोना में पेट्रोलियम पाया गया है। टेक्सास्, लुयिसियाना और दक्खिन एराकान का तेल प्रायः एक-सा है और ओक्लाहोमा और कान्सास् से कुछ भिन्न है। टेक्सास् में पर्याप्त मात्रा में तेल निकलता है। यह तेल औसत कोटि का होता है। इससे प्राप्त पेट्रोल भी औसत कोटि का होता है।

ओक्लाहोमा-कानसास् का तेल उच्च कोटि का होता है। इसमें पेट्रोल २७ से ४० प्रतिशत तक रहता है। गन्धक की मात्रा बड़ी अल्प, ०·२ से ०·४ प्रतिशत, रहती है। इसका घनत्व ०·८१५ होता है।

दक्खिन-अमेरिका के तेल-क्षेत्रों में सबसे बड़ा क्षेत्र वेनेजुएला का है। यहाँ से जो पेट्रोलियम निकलता है वह काला होता है और उसका घनत्व ०·६१ से ०·६५ प्रतिशत होता है। इसमें गन्धक की मात्रा २·० से २·५ प्रतिशत तक होती है और मोम बहुत अल्प होता है।

कोलिवया दूसरा स्थान है, जहाँ से पेट्रोलियम निकलता है, इसका रंग काला होता है और एस्फाल्ट अधिक मात्रा में होता है। इसका घनत्व ०·६३ और गंधक प्रायः एक प्रतिशत रहता है। इसमें मोम प्रायः नहीं होता। १२ से १३ प्रतिशत पेट्रोल और इसका प्रायः दुगुना किरासन होता है।

पेरू में भी पेट्रोलियम निकलता है। इसमें पेट्रोल अधिक होता है और गन्धक कम।

अर्जेण्टिना के चार स्थानों से पेट्रोलियम निकलता है। इसमें पेट्रोल ७ से १२ प्रतिशत तक रहता है तथा गन्धक की मात्रा कम रहती है। इससे उच्च कोटि का स्नेहन तेल प्राप्त होता है।

ट्रिनिडाड में भी पेट्रोलियम निकलता है। इसका तेल बहुत कुछ कैलिफोर्निया के तेल से मिलता-जुलता है।

यूरोप

रूस और रूमानिया में पर्याप्त मात्रा में तेल निकलता है। उसके बाद पोलैण्ड का स्थान आता है। जर्मनी, फ्रांस, ऑस्ट्रिया और जेकोस्लोवाकिया में भी अल्प मात्रा में तेल निकलता है। इन पिछले सब देशों के तेल का उत्पादन पोलैण्ड के तेल

उत्पादन के बराबर है। पोलैंड के तेल का उत्पादन-भाग रूस और रूमानिया के तेल-उत्पादन का प्रायः १ प्रतिशत होता है।

रूस में पेट्रोलियम की सबसे अधिक मात्रा काकेसस-क्षेत्र से निकलती है। बेकू जिले में अजरबैजन कूप-क्षेत्र है। वहाँ रूस का प्रायः ८० प्रतिशत पेट्रोलियम निकलता है। इस पेट्रोलियम में गन्धक की मात्रा अल्प (०·१ से ०·२ प्रतिशत) रहती है और पेट्रोल की मात्रा भी साधारण रहती है। वहाँ के सुरखानी-क्षेत्र के पेट्रोलियम से स्नेहन तेल प्रधान रूप से प्राप्त होता है।

बलकनी और बिबियात-क्षेत्रों से प्राप्त तेल से जो पेट्रोल प्राप्त होता है, उसमें नैफ्थीन कुछ अधिक मात्रा में रहता है और इससे उसकी औक्टेन संख्या प्रायः ७० होती है।

रूस के ग्रोजनी जिले के तेल में मोम का अंश अधिक रहता है। इसमें गन्धक की मात्रा भी कम रहती है। इसके पेट्रोल में पैराफीन ज्यादा रहता है। इसकी औक्टेन-संख्या ६० होती है।

क्यूबन के तेल-क्षेत्र के पेट्रोलियम का घनत्व ०·९० से ०·९७ रहता है। इसमें एस्फाल्ट और नैफ्थीन अधिक मात्रा में रहते हैं।

यूराल पहाड़ों में भी तेल-क्षेत्र हैं। वहाँ भारी और हल्का दोनों किस्म का पेट्रोलियम निकलता है। उनका घनत्व ०·७७ से तक ०·९३ रहता है। गन्धक की मात्रा २·५ प्रतिशत तक पाई गई है। सारे रूस का उत्पादन सन् १९३१ ई० में २०१५ लाख बैरेल था।

रूमानिया के तेल-क्षेत्रों से मोम रहनेवाले और मोम न रहनेवाले दोनों किस्म के पेट्रोलियम निकलते हैं। इन दोनों में एरोमैटिक हाइड्रोकार्बन अधिक मात्रा में रहते हैं। इनमें गन्धक की मात्रा ०·३ प्रतिशत और पेट्रोल की मात्रा ३० प्रतिशत तथा किरासन की मात्रा ३० प्रतिशत रहती है। पेट्रोल की औक्टेन संख्या प्रायः ५० से कम ही रहती है। स्नेहन तेल की मात्रा १५ प्रतिशत तक रहती है। १९३८ ई० में रूमानिया के क्षेत्रों से ४८६ लाख बैरेल पेट्रोलियम निकला था।

पौलैंड के पेट्रोलियम में गन्धक की मात्रा अल्प रहती है, ०·५ प्रतिशत से अधिक नहीं रहती। इसका घनत्व ०·८० से ०·८८ रहता है। पेट्रोल और नैफ्था की मात्रा ५० प्रतिशत तक रहती है।

जर्मनी के हैनोवर प्रान्त में तेल के दो क्षेत्र वीट्से और नायनहेगन हैं। दोनों से भारी और हल्का तेल निकलता है। पेट्रोल की मात्रा १० प्रतिशत से अधिक नहीं रहती। १९३६ ई० में ३१ लाख बैरेल पेट्रोलियम निकला था।

फ्रांस के केवल आलसाक के पेचेलब्रौन में तेल निकलता है। यहाँ का तेल मध्यम श्रेणी का होता है। इसमें निम्नलिखित मात्रा में विभिन्न अंश विद्यमान रहते हैं—

पेट्रोल	९ प्रतिशत
किरासन	२० ,,
गैस-तेल	११ ,,
स्नेहन तेल	६६ ,,
मोम	४ ,,

१९३८ ई० में केवल ५ लाख बैरेल का उत्पादन था।

ऑस्ट्रिया में बड़ी अल्प मात्रा में पेट्रोलियम निकलता है। १६३८ ई० में केवल १ लाख बैरेल निकला था।

एशिया

रूस को छोड़कर एशिया के अन्य भागों में—ईराक, ईरान, अरब, सुमात्रा, जावा और बोर्नियो के टापुओं, बर्मा और आसाम में—पेट्रोलियम पाया जाता है।

ईरान में मस्जिदी सुलमान और हाफ्तकेल तेल के दो प्रधान क्षेत्र हैं। इस तेल का घनत्व ०'८६७ और उसमें गन्धक की मात्रा १'० प्रतिशत रहती है। इससे जो गैसें निकलती है, उनमें हाइड्रोजन-सल्फाइड की मात्रा प्रायः १० प्रतिशत तक रहती है। पेट्रोल की मात्रा २० प्रतिशत तक रहती है। इससे किरासन, स्नेहन तेल और मोम प्राप्त होते हैं। यहाँ से १६३६ में ७७२ लाख बैरेल पेट्रोलियम निकला था।

ईराक के तेल का पता १६३४ ई० से ही लगा है। इसकी प्रकृति ईरान के तेल से बहुत-कुछ मिलती-जुलती है। इसका घनत्व ०'८५, गन्धक की मात्रा १'८ प्रतिशत और मोम की मात्रा २ प्रतिशत रहती है। इसके पेट्रोल की ओक्टेन-संख्या प्रायः ५० रहती है। १६३८ ई० में यहाँ से ११३ लाख बैरेल पेट्रोलियम निकला था।

फारस की खाड़ी के टापुओं, बहरैन टापू और कुवैत, में अपेक्षाकृत थोड़े दिनों से पेट्रोलियम पाया गया है। यहाँ से १६३८ ई० में ८२ लाख बैरेल पेट्रोलियम निकला था।

ईस्ट इण्डीज के तेल-कूप कुछ तो अँगरेजों के हाथ में हैं और कुछ डचों के हाथ में। सरावाक के मिरी-क्षेत्र का पेट्रोलियम अँगरेजों के हाथ में है। इसमें मोमवाले और मोम न रहनेवाले दोनों किस्म के तेल निकलते हैं। इनमें पेट्रोल की मात्रा लगभग १५ प्रतिशत और गन्धक की मात्रा ३'५ प्रतिशत रहती है। इसका घनत्व ०'७८ से ०'६० तक होता है।

दक्खिन-सुमात्रा और पूर्वी बोर्नियो के तेल-क्षेत्र डचों के अधिकार में हैं। इनके पलेम्बांग क्षेत्र से प्राप्त पेट्रोलियम का घनत्व ०'८० से ०'६० होता है। इनमें दोनों, मोमवाला और विना मोमवाला, तेल पाया जाता है। पेट्रोल की मात्रा ७ से ५५ प्रतिशत और किरासन की मात्रा ७ से १५ प्रतिशत रहती है। पूर्वी बोर्नियो के पेट्रोलियम में ऐरोमैटिक की मात्रा अधिक रहती है। इनमें ३६ प्रतिशत तक एरोमैटिक पाया गया है। इनमें टोल्विन भी पाया गया है। जावा के तेल में भी इसी प्रकार के द्रव्य पाये गये हैं। ईस्ट इण्डीज़ में १६३८ में ६२२ लाख बैरेल पेट्रोलियम निकला था।

बर्मा के अधिकांश तेल-क्षेत्र आराकान-योमा और इरावदी की घाटी के पूर्व में स्थित हैं। यह क्षेत्र मागवे जिला तक फैला हुआ है। इसी क्षेत्र में एनाङ्ग-याङ्ग का सुप्रसिद्ध तेल-क्षेत्र है। तेल इसके और आगे भी थायेटमिओ, प्रोम और उत्तर चिन्दवीन-घाटी में पाया जाता है। तेल प्रधानतया एनाङ्ग-याङ्ग, एनाङ्गयात और सिंगु के तेल-क्षेत्र के सिंगुलान्यवा क्षेत्रों में पाया जाता है।

सबसे अधिक तेल येनाङ्ग-याङ्ग तेल कूपों से निकलता है। प्रायः सवा सौ वर्षों से भी अधिक समय से वहाँ के निवासियों द्वारा तेल निकाला जाता था। १० लाख गैलन से अधिक तेल १८८६ ई० में निकला था। १८८७ ई० में नियमित रूप से कूप खोदकर तेल निकालने का काम शुरू हुआ। १८६४ ई० में १०० लाख गैलन से अधिक तेल निकला। १६०५ ई० में ८५,६४८, ७४६ गैलन तेल निकला था। १८६१ से पूर्व में एनाङ्गयात

के तेल-कूपों से अल्पमात्रा में तेल निकला था। बर्मा आयल कम्पनी ने इसी वर्ष मशीन से खोद कर तेल निकालने का काम शुरू किया और तब से तेल के निकलने की मात्रा बहुत बढ़ गई। १९०३ ई० के बाद से लगभग १८७ लाख गैलन-पेट्रोलियम प्रतिवर्ष निकलता है।

बर्मा-आयल-कम्पनी ने १९०१ ई० में पहले-पहल सिंगु में तेल का पता लगाया और शीघ्र ही अधिकाधिक मात्रा में तेल निकालने का काम शुरू किया। १९०५ ई० में ३७,३४१,१७७ गैलन तेल इस क्षेत्र के तेल-कूपों से निकला।

आराकान-तट पर तेल-क्षेत्र पाये गये हैं। अकयाब के निकट कुछ टापुओं में तेल पाये गये हैं और उनसे तेल निकलता है। बर्मा के तेल में पेट्रोल २८ प्रतिशत होता है। इसमें गन्धक बहुत अल्प होता है, प्रायः ०·१ प्रतिशत। इसका मोम कड़ा होता और उच्च ताप पर पिघलता है। इसी कारण रंगून का मोम संसार-प्रसिद्ध है।

आसाम में झरने के रूप में बहता हुआ पेट्रोलियम पाया गया था। १८९५ ई० में मेडलिकोट साहब इन झरनों को देखने के लिए गये। उन्होंने कहा कि यद्यपि पेट्रोल की मात्रा कम निकल रही है, पर आशा है कि वहाँ पर्याप्त मात्रा में पेट्रोलियम निकल सकता है। १८६७ ई० में कलकत्ता की एक कम्पनी ने कुआँ खोद कर तेल निकालने की आज्ञा सरकार से ली और माकुम के निकट ११८ फुट की गहराई पर तेल का एक झरना खोद निकाला; पर उसके बाद १८८८ ई० तक इस संबंध में कुछ और काम नहीं हुआ। इस तेल-क्षेत्र का नियमित रूप से विवरण १८७६ ई० के जियोलॉजी-सर्वे-विभाग के मेमोयार में निकला था। उस विवरण के निकालनेवाले मैलेट साहब थे। इन तेल-क्षेत्रों की पुनः जाँच बेलूचिस्तान के पेट्रोलियम-कारखाने के सुपरिण्टेण्डेण्ट टाउनशेंड साहब द्वारा हुई थी।

मैलेट के विवरण के अनुसार तेल के इन क्षेत्रों का निम्नलिखित जिलों में वर्गीकरण कर सकते हैं—

१. डिहिंग के उत्तर में टिपम पहाड़ी के जिले
२. डिहिंग और डिसाङ्ग के बीच के जिले
३. डिहिंग के दक्खिन डिराक और टिराप नदियों के बीच माकुम तेल-क्षेत्रों के जिले
४. टिराप के पूर्व के जिले

माकुम तेल-क्षेत्र का प्रमुख स्थान 'डिगबोई' है। प्रायः ४२ लाख रुपये की पूँजी से आसाम-आयल-कम्पनी १८९९ ई० में खुली और उसने तेल निकालने का काम शुरू किया। निकाले गये तेल की मात्रा का विवरण इस प्रकार है—

१८९९ ई० में	६२३,१७२	गैलन पेट्रोलियम
१९०२ ,,	१,७५६,७५९	,,
१९०४ ,,	२,५८५,९२०	,,
१९०५ ,,	२,७१३,११०	,,

होलैण्ड का मत है कि आसाम के उत्तर-पूर्व किनारे से प्रायः १८० मील तक दक्खिन और पच्छिम में फैली हुई तृतीयक चट्टानों की श्रेणियाँ हैं जहाँ तेल दीख पड़ता है। यह तेल कोयले और कभी-कभी खारे पानी के झरने के साथ मिला हुआ रहता है। यह चट्टान-श्रेणी बर्मा के आराकान-तट और इरावदी घाटी तक फैली हुई है, जहाँ पर्याप्त मात्रा में पेट्रोलियम पाया जाता है। इधर आसाम में कुछ और तेल-कूप पाये गये हैं।

आसाम का पेट्रोलियम भारी और हल्का दोनों प्रकार का होता है, पेट्रोल जिसमें १२ से १५ प्रतिशत, और घनत्व ०.८५ से ०.६७ रहता है। १६३७ ई० में १०० लाख बैरेल पेट्रोलियम निकला था। सारे संसार के उत्पादन से यह आधा प्रतिशत उत्पादन था।

पाकिस्तान-पंजाब में भी तेल पाया गया है। पंजाब के शाहपुर, झेलम, बिन्नु, कोहात, रावलपिण्डी, और हजारा में अल्प मात्रा में पेट्रोलियम निकलता है।

बेलूचिस्तान में अल्प मात्रा में पेट्रोलियम पाया गया है। पर, अधिक पेट्रोलियम पाने की चेष्टाएँ हो रही हैं।

जापान में भी पेट्रोलियम पाया जाता है। भारी और हल्का दोनों प्रकार का तेल पाया जाता है। इसका घनत्व ०.८२३ से ०.६११ तक होता है। इनमें नैफ्थीन अधिक मात्रा में रहता है, पेट्रोल इसमें बहुत कम रहता है। किरासन भी इसमें कम मिलता है। इञ्जन-तेल की मात्रा इसमें सबसे अधिक होती है। १६३६ ई० में २४ लाख बैरेल तेल निकला था।

जापान के उत्तर सखालिन टापू में कुछ पेट्रोलियम निकलता है। फिलिपाइन टापुओं और न्यूजीलैण्ड में भी कुछ पेट्रोलियम पाया गया है।

अफ्रिका

अफ्रिका में, मिस्र में भी पेट्रोलियम पाया गया है। यहाँ का पेट्रोलियम भारी होता है। घनत्व ०.६० से ०.६३ प्रतिशत और मोम की मात्रा सात-आठ प्रतिशत होती है। १६१६ ई० में ५१ लाख बैरेल तेल निकला था।

मोरोक्को में भी तेल मिलने की सूचना मिली है। एलजीरिया में भी कुछ पेट्रोलियम पाया गया है।

तीसरा अध्याय

पेट्रोलियम की उत्पत्ति

धरती के अन्दर पृथ्वी के गर्भ में ५० फुट से ५००० फुट तक की गहराई में पेट्रोलियम पाया जाता है। पेट्रोलियम वहाँ कैसे बना अथवा बनता है, इस सम्बन्ध में कोई सर्वसम्मत सिद्धान्त नहीं है। भिन्न-भिन्न समय में लोगों ने भिन्न-भिन्न सिद्धान्त प्रतिपादित किये हैं। रसायनज्ञ, भौतिकी वेत्ता और भूगर्भवेत्ता सबने अपने-अपने सिद्धान्त समय-समय पर प्रतिपादित किये हैं। भिन्न-भिन्न स्थानों के पेट्रोलियम की उत्पत्ति के कारण भी एक-से नहीं हो सकते, ऐसा मत भी व्यक्त किया गया है।

सबसे पहले लोगों ने पत्थर-कोयला और पेट्रोलियम के बीच सम्बन्ध स्थापित होने की बात पर अनेक कल्पनाएँ की थीं; पर वैज्ञानिक अनुसन्धान से उन कल्पनाओं में कोई तथ्य नहीं पाया गया। समय समय पर फिर पेट्रोलियम की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेक सिद्धान्त प्रतिपादित हुए। इन सिद्धान्तों को हम दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं। एक अकार्बनिक उत्पत्ति का सिद्धान्त और दूसरा कार्बनिक उत्पत्ति का सिद्धान्त प्रत्येक सिद्धान्त के सम्बन्ध में कुछ अनुकूल बातें और कुछ प्रतिकूल बातें हैं। एक सिद्धान्त से कुछ बातों का प्रतिपादन होता है, तो दूसरे सिद्धान्त से कुछ दूसरी बातों का।

अकार्बनिक उत्पत्ति का सिद्धान्त सबसे प्राचीन है। इसका प्रतिपादन १९वीं शताब्दी में हुआ था। बर्थेलो पहले व्यक्ति थे जिन्होंने १८६६ ई० में इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया था। उनका सिद्धान्त था कि धरती के जल में कार्बोनिक अम्ल अथवा कार्बोनेट घुलने से अलकली धातुओं पर जो प्रतिक्रिया होती है, उससे ऐसिटिलीन और अन्य हाइड्रोकार्बन बनते हैं। पृथ्वी के अन्दर अधिक गहराई में उच्च ताप और दाब से ऐसे हाइड्रोकार्बन का बनना सम्भव हो सकता है, इसे उन्होंने प्रमाणित किया था।

इस सिद्धान्त की पुष्टि १८७७ ई० में मेण्डेलिएफ़ द्वारा हुई। मेण्डेलिएफ़ का सिद्धान्त उनके और उनके सहकार्यकर्त्ता ब्लोएज़ (Bloez) के प्रयोगों पर अवलंबित था। उन्होंने प्रयोग द्वारा दिखलाया था कि लोहे और मैंगनीज के मिश्रित कारबाइडों पर उष्ण जल की अथवा तनु अम्लों की प्रति क्रिया से पेट्रोलियम-सदृश हाइड्रोकार्बन प्राप्त होता है। उल्कापात में लोहे का कारबाइड रहता है। सम्भवतः, पृथ्वी के गर्भ में भी लोहे का कारबाइड रहता है। पीछे म्योयासन ने देखा कि यूरेनियम, लैंथेनम और सीरियम के कारबाइडों पर भी जल की प्रतिक्रिया से द्रव और ठोस हाइड्रोकार्बन बनता है।

इस सिद्धान्त की पुष्टि सेवेतिए और सेन्देरेसन के प्रयोगों से भी हुई है। इनलोगों ने अनेक भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में, उत्प्रेरकों की उपस्थिति और अनुपस्थिति दोनों ही दशाओं में, ऐसिटिलीन के हाइड्रोजनीकरण से पेट्रोलियम-सा उत्पाद प्राप्त किया था। पीछे चरित्शकॉफ (Charitochkoff) ने यह दिखलाया कि इन प्रयोगों में नाइट्रोजन की उपस्थिति से नाइट्रोजन के कुछ यौगिक भी बनते हैं। नाइट्रोजन के कुछ यौगिक पेट्रोलियम में सदा पाये जाते हैं। सेवेतिए और सेन्देरेसन के प्रयोगों की पुष्टि एर्डमैन और कोथनर (Erdmann and Kothner) और पाइहाला (Pyhala) के प्रयोगों से भी हुई है।

अकार्बनिक उत्पत्ति का सिद्धान्त भूगर्भवेत्ताओं को मान्य नहीं है। रासायनिक दृष्टिकोण से भी इसमें कुछ त्रुटियाँ हैं। पेट्रोलियम में कुछ-न-कुछ काशितावान् पदार्थ अवश्य पाया जाता है। काशितावान् पदार्थ केवल सजीव पदार्थों से ही बनता है। अकार्बनिक तत्त्वों से काशितावान् पदार्थों का बनना अभी तकसम्भव नहीं हुआ है। पेट्रोलियम में कुछ नाइट्रोजन यौगिक भी पाये जाते हैं। वे कैसे बने, इसकी सन्तोषजनक व्याख्या अकार्बनिक सिद्धान्त से नहीं होती। आग्नेय चट्टानों में भी कहीं-कहीं पेट्रोलियम अवश्य पाया गया है, पर साधारणतया आग्नेय चट्टानों में पेट्रोलियम नहीं पाया जाता। जहाँ कहीं पाया भी जाता है, वहाँ स्पष्ट प्रमाण है कि अवसाद-चट्टानों से बहकर वह आया है।

पेट्रोलियम में कुछ गन्धक के कार्बनिक यौगिक भी पाये जाते हैं। कार्बनिक पदार्थों में गन्धक के यौगिक कुछ-न-कुछ अवश्य रहते हैं, पर अकार्बनिक पदार्थों में गन्धक के कार्बनिक यौगिकों का रहना साधारणतया सम्भव नहीं होता। इस कारण पेट्रोलियम में गंधक के कार्बनिक यौगिकों के रहने की सन्तोषजनक व्याख्या अकार्बनिक सिद्धान्त से नहीं होती है।

पेट्रोलियम की उत्पत्ति का दूसरा सिद्धान्त कार्बनिक उत्पत्ति का सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त के परिपोषक भूगर्भवेत्ता भी हैं। इसके पक्ष में अनेक दलीलें उपस्थित की जाती हैं और अनेक प्रयोगों से भी इसकी पुष्टि होती है।

इस सिद्धान्त के अनुसार कार्बनिक पदार्थों से पेट्रोलियम की उत्पत्ति हुई है। कौन-कौन कार्बनिक पदार्थों से पेट्रोलियम उत्पन्न हो सकता है, इस पर बहुत विस्तार से विचार और अनुसन्धान हुए हैं। पेट्रोलियम उत्पन्न करनेवाले पदार्थों में पीट (सड़ी हुआ सूखी लकड़ी), लिगनाइट, कोयला, हरिरोम प्रजाति, तेल-रेजिन, मछली तेल, कोलेस्टेरोल, फीटोस्टेरोल, अलगी से प्राप्त तेलों, सेल्युलोज इत्यादि का वर्णन हुआ है। इन पदार्थों के द्वारा किस रीति के रासायनिक परिवर्त्तन से पेट्रोलियम बन सकता है, इसपर भी विवेचन हुआ है।

भूगर्भ-वेत्ताओं का विश्वास है कि ऐसे शिलापट्टों अथवा चूना-पत्थरों से, जिनमें कार्बनिक पदार्थ उपस्थित है, पेट्रोलियम बनता है। कार्बनिक उत्पत्ति-सिद्धान्त के प्रवर्त्तक एङ्गलर महाशय थे। अन्य दूसरे वैज्ञानिकों ने भी इसमें सहयोग दिया है। ऐसे वैज्ञानिकों में क्रेमर और स्पिलकर (Kramer and Spilker) प्रमुख हैं। इनलोगों का मत था कि युकाप्य से तेल और मोम-सी वस्तुएँ एक स्थान पर पर्याप्त मात्रा में इकट्ठी हो सकती हैं।

एंगलर का सिद्धान्त इस प्रकार का है। जान्तव और वानस्पतिक अवशेषों के धरती के अन्दर छिप जाने से उनका बैक्टीरिया द्वारा विच्छेदन होता है। ऐसे विच्छेदन से उनके कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन तो गैस बनकर और जल में घुलकर निकल जाते हैं; पर मोम, चर्बी और चर्बी में विलेय अन्य पदार्थ जैसे कोलेस्टेरीन और पौधे-रेजिन इत्यादि रह जाते हैं। ऐसे पदार्थों के विच्छेदन से वसा की मात्रा १० से २० प्रतिशत बढ़ जाती है। फिर वहाँ अनेक समय तक रखे-रखे वसा और मोम का जलांशन होकर कार्बन डायक्साइड और जल का अंश निकल जाता है। इन क्रियाओं के फलस्वरूप एक ठोस बिटुमिन प्राप्त होता है। इस बिटुमिन का फिर ताप और दाब के द्वारा मंद भंजन होकर ऐसा तरल पदार्थ प्राप्त होता है जिसको एंगलर प्रोटो-पेट्रोलियम कहते हैं। १८८८ ई० में एंगलर ने दिखलाया था कि केवल दाब में आसवन से ऐसा पदार्थ प्राप्त होता है। अनेक काल तक रखे रहने के कारण और विशेषत: संस्पर्श-उत्प्रेरकों के प्रभाव से, प्रोटो-पेट्रोलियम के असंतृप्त अंशों की, पुरुभाजन होने से, ओलिफीन फिर पोली-ओलिफीन में परिणति हो जाती है और तब इससे फिर पैरेफीन, नैफ्थीन और न्यून हाइड्रोजनवाले अनेक हाइड्रोकार्बन बनते हैं। प्रोटीन पदार्थों के विच्छेदन से सौरभिक हाइड्रोकार्बन बनता है। उच्च दाब और लंबे समय के कारण क्रियाएँ निम्न ताप पर ही होती हैं।

पेट्रोलियम बड़ी मात्रा में वहाँ ही इकट्ठा होता है जहाँ वानस्पतिक अवशेष इकट्ठे रहते हैं अथवा जहाँ वानस्पतिक पदार्थ पानीके बहाव से आकर इकट्ठे होते हैं अथवा छिछली झील में, जहाँ पेड़-पौधे और जन्तुएँ अधिकता से पाये जाते हैं। अनेक स्थलों में जान्तव और वानस्पतिक दोनों प्रकार के पदार्थ इकट्ठे रहते हैं। इन पदार्थों पर, पहले ऑक्सिजन की उपस्थिति में, और पीछे गर्भ में बन्द हो जाने के कारण आक्सिजन के अभाव में, बैक्टीरिया की क्रिया होकर इसका विच्छेदन होता है, बैक्टीरिया की क्रिया कब बन्द होती है, इसका पता नहीं लगता।

कार्बनिक पदार्थों में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, तेल, सेल्युलोज और लिगनिन रहते हैं।

सेल्युलोज और कार्बोहाइड्रेट के बैक्टीरिया-विच्छेदन से साधारणतया जल-विलेय पदार्थ प्राप्त होते हैं, जो निकल जाते हैं। यह सम्भव है कि इन पदार्थों के जलांशन से कोयले और बिटुमिन बने और उनके हाइड्रोजनीकरण से पेट्रोलियम की उत्पत्ति हो।

सब से अधिक सम्भव यह प्रतीत होता है कि वसा और वसा में विलेय पदार्थों से पेट्रोलियम बने। ये सब कार्बनिक पदार्थों में पाये जाते हैं। ये जल में अविलेय होते और बैक्टीरिया के शीघ्र आक्रमण को रोकते भी हैं। किसी एक स्थान में मछलियों अथवा जल-जन्तुओं का इतना इकट्ठा होना कि उनसे बड़ी मात्रा में पेट्रोलियम बन सके, सम्भव नहीं प्रतीत होता। पर, यह सम्भव है कि किसी एक स्थान में पेड़-पौधे इतनी अधिक मात्रा में इकट्ठे रहें या उत्पन्न हों, जिनसे पेट्रोलियम पर्याप्त मात्रा में बन सके।

अनेक पौधों से स्टेरोल, तारपीन और अन्य हाइड्रो-कार्बन पाये गये हैं। अनेक वसा-अम्लों से पेट्रोलियम-सा हाइड्रोकार्बन पाया गया है। जिस परिस्थिति में पेट्रोलियम बनता है, उसमें २००° फ० से ऊपर का ताप सम्भव नहीं है। इस कारण तापीय-विच्छेदन से पेट्रोलियम का बनना सम्भव नहीं प्रतीत होता। यह सम्भव है, रेडियमधर्मी पदार्थों

के प्रभाव से निम्न ताप पर भी इस प्रकार का परिवर्त्तन हो सके, जिससे पेट्रोलियम प्राप्त हो।

पेट्रोलियम की राख से भी पेट्रोलियम की उत्पत्ति का कुछ अनुमान लगाया गया है। रामजे का मत है कि पेट्रोलियम की राख में निकेल पाये जाने के कारण, यह सम्भव प्रतीत होता है कि कार्बन अथवा कार्बन डायक्साइड के निकेल की उपस्थिति में हाइड्रोजनी-करण से पेट्रोलियम बने। पेट्रोलियम में वेनेडियम भी पाया गया है। वेनेडियम भी अच्छा उत्प्रेरक है। यदि पेट्रोलियम की राख में कैलसियम और मैगनीशियम हो, तो समुद्र द्वारा पेट्रोलियम की उत्पत्ति सम्भव हो सकती है।

दलदल भूमि से मिथेन-गैस निकलती है। तेल-कूपों से निकली गैस में भी मिथेन रहता है। कुछ लोगों का मत है कि मिथेन के विच्छेदन से पेट्रोलियम बनता है।

भिन्न-भिन्न स्थानों से निकले पेट्रोलियम एक-से नहीं होते उनमें कुछ-न-कुछ विभिन्नता अवश्य रहती है। कहीं के पेट्रोलियम में मोम की मात्रा अधिक रहती और कहीं-के पेट्रोलियम में कम। कहीं के पेट्रोलियम में पैरेफीन की मात्रा अधिक रहती है और कहीं के पेट्रोलियम में कम। कहीं के पेट्रोलियम में नैफ्थीन अधिक रहता है और कहीं के पेट्रो-लियम में बिल्कुल नहीं होता अथवा बहुत अल्प होता है। इन कारणों से यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है कि भिन्न-भिन्न पेट्रोलियम की उत्पत्ति के कारण एक नहीं हैं। इस कारण, कोई एक सिद्धान्त से पेट्रोलियम की उत्पत्ति की व्याख्या नहीं की जा सकती। साइमोन्सन का स्पष्ट मत है कि बरमा और आसाम का पेट्रोलियम ओलियो-रेजिन वृक्षों के सड़ने से बना है। चूँकि इन स्थानों में पेट्रोलियम पहाड़ की तराई में पाया जाता है, इससे इस सिद्धान्त की पुष्टि होती है। पहाड़ों पर उगनेवाले वृक्ष तराई में आकर दब गये और उनके मन्द विच्छेदन से अनेक समय के बाद पेट्रोलियम बना।

चौथा अध्याय

कच्चा पेट्रोलियम

वर्गीकरण

कच्चे पेट्रोलियम के वर्गीकरण की कोई सन्तोषजनक रीति अभी तक नहीं निकली है। कुछ लोगों ने पैट्रोलियम के, भौतिक गुणों के आधार पर, वर्गीकरण की चेष्टाएँ की हैं। ऐसे भौतिक गुणों में एक महत्त्व का गुण, पेट्रोलियम का विशिष्ट घनत्व अथवा बौमे घनत्व हैं। एक ही स्थल से निकले पेट्रोलियम के लिए तो कुछ सीमा तक यह सन्तोषप्रद कहा जा सकता है। उदाहरणस्वरूप यदि पेट्रोलियम का घनत्व ३५° बौमे अथवा ०'८५ है तो ऐसे तेल में पेट्रोल की मात्रा अधिक रहती है, बनिस्बत ऐसे तेल के, जिसका घनत्व ३०° बौमे अथवा ०'८७६ बौमे है। ३०° बौमेवाले पेट्रोलियम में पेट्रोलियम की मात्रा कम और एस्फाल्ट की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक रहती है।

पेट्रोलियम के वर्गीकरण का अधिक वैज्ञानिक आधार उसका संघटन है। अमेरिका में कच्चे पेट्रोलियम को तीन वर्गों में विभाजित करते हैं। एक को पैरेफिन आधारवाले, दूसरे को एस्फाल्ट आधारवाले और तीसरे को मिश्रित आधारवाले पेट्रोलियम कहते हैं। यह विभाजन तेल के आसवन के अवशेष की प्रकृति पर निर्भर करता है। यदि अवशेष मोमवाला है तो वह पैरेफीन आधारवाला, यदि एस्फाल्टवाला है तो एस्फाल्ट आधारवाला और यदि मिश्रित है तो मिश्रित आधारवाला पेट्रोलियम कहलाता है। वर्गीकरण की यह प्रणाली परिष्कर्त्ता के लिए बड़े महत्त्व की है ; क्योंकि इससे उन्हें पता लग जाता है कि पेट्रोलियम से कैसे उत्पाद प्राप्त होंगे ; उनके परिष्कार में कौन प्रणाली उपयुक्त होगी और परिष्कार में कौन-कौन-सी कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। इस वर्गीकरण का गणित रूप भी दिया गया है। मैलिसन (Mallison) के अनुसार यदि आसवन के अवशेष में २ प्रतिशत से कम पैरेफीन हो, तो उसे एस्फाल्ट आधारवाला, २ से ५ प्रतिशत पैरेफीन हो, तो पैराफीन-एस्फाल्ट आधारवाला और ५ प्रतिशत से अधिक पैरेफीन हो तो पैरेफीन आधारवाला पेट्रोलियम कहते हैं।

स्मिथ ने एक चौथी श्रेणी के पेट्रोलियम का भी वर्णन किया है। जिस तेल में नैफ्थीन तेल हो, उसे वे 'प्रसंकरण आधारवाला पेट्रोलियम' कहते हैं। लेन और गार्टन (Lane और Garton) ने तेल के वर्गीकरण का एक दूसरा सुझाव रखा है। इस सुझाव के अनुसार पेट्रोलियम का प्रामाणिक स्थिति में आसवन किया जाता है। यह आसवन वायुमण्डल के दबाव और शून्यक दोनों में होता है। २५° श० के क्वथनांक के अन्तर पर

भिन्न-भिन्न प्रभाग एकत्र होते हैं। वायुमण्डल के दबाव के आसवन पर २५०°-२७५° के बीच के प्रभाग को अलग रखकर इसे नमूना १ कहते हैं और ४० मीलीमीटर के दबाव पर २७५°-३००° के बीच के प्रभाग को अलग रखकर इसे नमूना २ कहते हैं।

यदि नमूना १ का विशिष्टघनत्व ०'८२५ या ४०° बौमे है या इससे हल्का है तो कच्चे तेल के निम्न क्वथनांकवाले अंश को पैराफीनीय कहते हैं। यदि इसका विशिष्ट घनत्व ०'८६० या ३०° बौमे है तो इसे नैफ्थीनीय कहते हैं और यदि घनत्व ३३° से ४०° के बीच का है तो इसे मध्यम श्रेणीय कहते हैं।

यदि नमूना २ का घनत्व ३०° या इससे हल्का है तो उसे पैराफीनीय, यदि २४° या ०'६३४ या इससे भारी है तो उसे नैफ्थीनीय और यदि २०° और ३०° के बीच का है, तो उसे मध्यम श्रेणीय कहते हैं।

दूसरी रीति से कच्चे पेट्रोलियम को निम्नलिखित वर्गों में विभाजित कर सकते हैं।

सारणी

	नमूना—१	नमूना—२
पैरेफीन	४०° या हल्का	३०° या हल्का
पैरेफीन-मध्यम	४०° या हल्का	२०° से ३०°
मध्यम	३३° से ४०°	२०° से ३०°
मध्यम-नैफ्थीन	३३° से ४०°	२०° या भारी
नैफ्थीन-मध्यम	३३° या भारी	२०° से ३०°
नैफ्थीन	३३° या भारी	२०° या भारी
पैरेफीन या नैफ्थीन	४०° या भारी	२०° या भारी
नैफ्थीन-पैरेफीन	३३° या भारी	३०° या हल्का

ब्युरो ऑफ सायंस ने एक दूसरी रीति से पेट्रोलियम का वर्गीकरण किया है। एक किस्म के पेट्रोलियम को वे मोम-वाहक पेट्रोलियम और दूसरे किस्म को मोम-रहित पेट्रोलियम कहते हैं। इससे यह धारणा फैलती है कि मोम-रहित पेट्रोलियम में मोम नहीं होता है, पर यह धारणा ठीक नहीं है। मोमरहित पेट्रोलियम में भी मोम पाया जाता है।

भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के कूपों से निकले तेल में विभिन्नता रहती ही है। पर, एक ही क्षेत्र के विभिन्न-कूपों से निकले तेल में भी बहुत-कुछ विभिन्नता देखी गई है। एक ही कूप से निकले तेल में भी विभिन्नता देखी जाती है। किसी तेल के नमूने में वाष्पशील अंश अधिक होते हैं और किसी में कम।

इधर रासायनिक संघटन पर आधारित पेट्रोलियम के वर्गीकरण का महत्त्व बहुत बढ़ गया है, क्योंकि इससे सरलता से पता लग जाता है कि कौन तेल मोटरकार के लिए अधिक उपयोगी है और कौन डीज़ल इंजन के लिए।

संसार के विभिन्न तेल-क्षेत्रों के तुलनात्मक अध्ययन के लिए ऐसे वर्गीकरण की आवश्यकता है, जिससे उनकी प्रकृति का एक चित्र सरलता से आँखों के सामने आ जाय। इस दृष्टि से पेट्रोलियम को पैराफीनीय, नैफ्थीनीय, सौरभीय और एस्फाल्टीय वर्गों में विभक्त करना अधिक सुविधाजनक होगा। नैफ्थीनीय वर्ग में केवल एक-चक्रीय यौगिक ही नहीं आते, वरन् वे जटिल बहु-चक्रीय यौगिक भी आ जाते हैं, जिनके क्वथनांक बड़े ऊँचे होते हैं और जो प्रायः समस्त पेट्रोलियम के नमूनों में पाये जाते हैं। अतः नैफ्थीनीय वर्ग बड़े महत्त्व का है; इस दृष्टि से पेट्रोलियम का वर्गीकरण निम्नलिखित ६ श्रेणियों में हुआ है।

(१) पैराफीनीय—इस श्रेणी में मोमवाला पेट्रोलियम आ जाता है। इसी श्रेणी के पेट्रोलियम मैक्सिको, टोकावा, टेक्साज और ओकला में पाये जाते हैं।

(२) नैफ्थीनीय—इस श्रेणी का पेट्रोलियम बहुत कम पाया जाता है। डोसोर (Dosor) का पेट्रोलियम इसी वर्ग का है।

(३) पैराफीनीय-नैफ्थीनीय—बेकू का पेट्रोलियम ऐसा होता है।

(४) पैराफीनी-नैफ्थीनीय-सौरभीय—यह बेकू, कैलिफोर्निया में पाया जाता है।

(५) नैफ्थीनीय-सौरभीय—यह मैकोप, हल्ल और टेक्साज़ में पाया जाता है।

(६) सौरभीय—यह बहुत कम पाया जाता है। यह बर्मा में पाया जाता है।

कच्चा पेट्रोलियम हरे रंग से लेकर गाढ़ा काले रंग तक का होता है। इसका विशिष्ट घनत्व ०·८१० से लेकर ०·९८५ तक का होता है। यह २५° फ० से लेकर ३५५° फ० तक उबलता है। ३५५° फ० ताप पर इसका विच्छेदन तीव्रता से होता है। इसमें पेट्रोल का अंश शून्य से लेकर ३५ प्रतिशत तक या इससे अधिक रह सकता है। इसमें किरासन का अंश विभिन्न मात्राओं में रहता है। किरासन के क्वथनांक के ऊपर उबलनेवाले अंश की मात्रा भी विभिन्न रहती है। कच्चा पेट्रोलियम बहुत श्यान होता है।

पेट्रोलियम में हाइड्रोकार्बन रहते हैं। कुछ हाइड्रोकार्बन संतृप्त होते हैं और कुछ असंतृप्त। कुछ हाइड्रोकार्बन चक्रीय होते हैं और कुछ अचक्रीय। कच्चे पेट्रोलियम में कुछ हाइड्रोजन सल्फाइड और गंधक के कार्बनिक यौगिक भी रहते हैं। गंधक के यौगिकों के कारण इसमें विशिष्ट गंध होती है।

पेट्रोलियम में कुछ लवण का पानी भी रहता है। बड़ी अल्प मात्रा में खनिज लवण भी रहते हैं। कुछ अकार्बनिक यौगिक भी इसमें रहते हैं।

उत्तर-अमेरिका

पेनसिल्वेनिया—यहाँ का पेट्रोलियम हल्के रंग का होता है। इसका विशिष्ट घनत्व प्रायः ०·८१० होता है। यह चंचल होता है। गन्धक और नाइट्रोजन का यौगिक बहुत अल्प (०·१ से ०·२ प्रतिशत से अधिक नहीं) रहता है। एस्फाल्ट की मात्रा भी

बड़ी अल्प (३ प्रतिशत से कम ही) रहती है। मध्य के भाग में नैफ्थीन की मात्रा अधिक रहती है। इससे ६० प्रतिशत तक पेट्रोल और किरासन प्राप्त होता है। इससे जो स्नेहन तेल प्राप्त होता है उसकी वाष्पशीलता अपेक्षाकृत कम रहती है। १९१८ ई० में पेनसिल्वेनिया में १७५ लाख बैरेल तेल निकला था।

ओहियो—ओहियो के पेट्रोलियम में पेट्रोल और किरासन की मात्रा अल्पतर होती है। इसके प्रभागों का विशिष्ट घनत्व उच्चतर होता है। इससे पता लगता है कि इसमें चक्रीय हाइड्रोकार्बन का अनुपात उच्चतर होता है। इसमें गन्धक की मात्रा ०·५ प्रतिशत तक रहती है। इन गन्धक यौगिकों की गंध बड़ी तीव्र और अरुचिकर होती है और उसका दूर करना कुछ कठिन होता है। १९३८ में ओहियो में ३३ लाख बैरेल तेल निकला था।

केण्टुकी—केण्टुकी का पेट्रोलियम पेनसिल्वेनिया के पेट्रोलियम से बहुत-कुछ मिलता-जुलता है। इस तेल का विशिष्ट घनत्व गुरुतर होता है और पेट्रोल की मात्रा कम रहती है। इसमें एस्फाल्ट की मात्रा अधिक रहती है। १९३८ में केण्टुकी में ५५ लाख बैरेल तेल निकला था।

मिचिगान—मिचिगान का तेल अपेक्षाकृत थोड़े समय से निकला है। यह मध्यम श्रेणी का होता है। इसके पेट्रोल में पैराफीनोय भाग अधिक स्पष्ट रूप में रहता है, जिसके कारण इसकी ओक्टेन-संख्या बड़ी अल्प होती है। इसमें २० से २५ प्रतिशत पेट्रोल रहता है। गंधक की मात्रा बड़ी अल्प, ०·२ से ०·३ प्रतिशत से अधिक नहीं, रहती है। इसमें मोम अधिक नहीं रहता। इसके विश्लेषण से निम्नलिखित आँकड़े प्राप्त हुए हैं।

विशिष्ट भार, डिगरी, A. P. I.	४२°
गंधक	०·१८ प्रतिशत
पेट्रोल ४००° फ० तक	३६ प्रतिशत
किरासन	२७ प्रतिशत

१९३८ ई० में १८६ लाख बैरेल तेल निकला था।

टेक्साज़—टेक्साज़ में उत्तरी टेक्साज़, मध्य टेक्साज़ और पूर्वी टेक्साज़ है। १९३८ ई० में उत्तरी टेक्साज़ से ५२० लाख बैरेल, मध्य टेक्साज़ से १०० लाख बैरेल और पूर्वी टेक्साज़ से १४८० लाख बैरेल तेल निकला था।

यहाँ का तेल पैराफीनोय होता है। इसमें पेट्रोल और नैफ्थीन ३४ से ४१ प्रतिशत तक रहते हैं। गधंक की मात्रा कम (प्रायः ०·२५ प्रतिशत) रहती है। यहाँ का तेल 'मीठा' होता है। इसका आशय यह है कि इसमें गंधक का जो यौगिक रहता है, उसमें तीव्र अरुचिकर गंध नहीं होती और यह अ-संक्षारक भी होता है। इसके पेट्रोल की औक्टेन-संख्या ५० रहती है। इसके स्नेहक तेल की श्यानता असाधारण ऊँची रहती है।

पश्चिम टेक्साज़ का तेल इससे कुछ भिन्न होता है। उसमें गन्धक की मात्रा बड़ी ऊँची १·५ प्रतिशत तक होती है। इसमें २५ प्रतिशत पेट्रोल और १७ से २० प्रतिशत किरासन और डीजे़ल तेल रहता है। इसके पेट्रोल की औक्टेन-संख्या बहुत ऊँची होती है। इसमें एस्फाल्ट की मात्रा भी पर्याप्त रहती है। वस्तुतः, यहाँ का तेल मध्यम श्रेणी का समझा जाता है। १९३८ ई० में ७१२ लाख बैरेल तेल निकला था।

ओक्लाहोमा-कान्साज—ओक्लाहोमा तेल में पेट्रोल और नैफ्था की मात्रा अधिक रहती है, २७ से ४० प्रतिशत तक। गन्धक की मात्रा अल्प ०·२ से ०·४ प्रतिशत रहती है। आसवन अवशेष में कार्बन ३ से ६ प्रतिशत और किसी-किसी नमूने में ११ प्रतिशत रहता है। इसका विशिष्ट घनत्व ०·८१५ या ३८° बौमे रहता है।

कान्साज़ के तेल इससे निकृष्ट कोटि का होता है। पेट्रोल और नैफ्था की मात्रा १० से ३० प्रतिशत रहती है। गन्धक की मात्रा ०·१२ से ०·६६ प्रतिशत और मोम अधिक मात्रा में रहता है। कार्बन अवशेष ६ प्रतिशत से अधिक रहता है।

कोलोरैडो से भी अब पेट्रोलियम निकलने लगा है। यह मध्यम श्रेणी का होता है और मोम की मात्रा अधिक रहती है। गन्धक की मात्रा ०·१ प्रतिशत रहती है, कार्बन अवशेष की मात्रा प्रायः ३·३ प्रतिशत रहती है।

कैलिफोर्निया—कैलिफोर्निया से बड़ी मात्रा में तेल निकलता है। १९३८ ई० में २४९० लाख बैरेल तेल निकला था। कैलिफोर्निया के अनेक स्थलों से कई सौ तेल-कूपों से तेल निकलता है। यहाँ का तेल नैफ्थीन आधार का और भारी होता है। पेट्रोल की मात्रा विभिन्न होती है। गंधक की मात्रा ०·१० से ४·१३ प्रतिशत रहती है। एस्फाल्ट की मात्रा अधिक होती है। कार्बन अवशेष की मात्रा ८ से १३ प्रतिशत रहती है। इसमें मोम नहीं होता। एस्फाल्ट की मात्रा विभिन्न रहती है। ऐसा समझा जाता है कि यहाँ का तेल सब से नया बना हुआ तेल है।

मैक्सिको—मैक्सिको के कुछ क्षेत्रों का तेल भारी होता है और कुछ क्षेत्रों का तेल हल्का होता है। उत्तर स्थलों के तेल का विशिष्ट घनत्व प्रायः ०·९७५ या १३·७° बौमे होता है और दक्खिन स्थलों के तेल का विशिष्ट घनत्व ०·९०५ से ०·९२१ या २४·७° से २०·८° बौमे होता है। यह इतना भारी होता है और इसमें एस्फाल्ट की मात्रा इतनी अधिक होती है और ये इतने गाढ़े होते हैं कि पम्प करने के लिए उन्हें गरम करना पड़ता है। उत्तरी स्थलों के तेल में ५ प्रतिशत तक गंधक रहता है। पेट्रोल और नैफ्था की मात्रा ५ से ७ प्रतिशत रहती है। यह तेल सस्ते किस्म का होता है। ईंधन के लिए प्रधानतया इस्तेमाल होता है। इससे एस्फाल्ट भी बनता है। केवल आसवन और प्रभंजन के उपचार से ही इसका परिष्कार होता है।

दक्खिन के तेल में गन्धक की औसत मात्रा ३·५ प्रतिशत रहती है। यह कम गाढ़ा होता है और ऐस्फाल्ट की मात्रा भी कम रहती है। इससे १५ से १७ प्रतिशत पेट्रोल और नैफ्था प्राप्त होता है। इसमें कुछ मोम भी रहता है।

१९३७ ई० में ४६७ लाख बैरेल पेट्रोलियम मैक्सिको में निकला था।

कनाडा—कनाडा के एलबर्टा में अधिकांश तेल निकलता है। यहाँ के तेल का विशिष्ट घनत्व ०·७६ से ०·८४ या ५४°-३७° बौ० बहुत हल्का होता है। पेट्रोल की मात्रा ६४·२ प्रतिशत तक पाई गई है। गंधक की मात्रा ०·१० से ०·१७ प्रतिशत रहती है। १९३६ ई० में १५ लाख बैरेल तेल निकला था।

दक्खिन-अमेरिका

वेनेजुएला—वेनेजुएला के अनेक स्थलों में तेल-कूप हैं। इनसे काले रंग का तेल प्राप्त होता है जिसका विशिष्ट घनत्व ०·९१ से ०·९५ या २३° से १७° होता है। पेट्रोल और

किरासन की मात्रा क्रमशः १० और १५ प्रतिशत रहती है। गन्धक की मात्रा २ से २·५ प्रतिशत रहती है। मोम की मात्रा बड़ी अल्प रहती है। हल्के तेल की मात्रा भी कम रहती है। पेट्रोलियम पैराफ़ीनीय श्रेणी का होता है। १९३८ ई० में १४०२ लाख बैरेल तेल निकला था।

कोलंबिया—दक्खिन अमेरिका में वेनेजुएला के बाद उत्पादन में कोलंबिया का स्थान है। १९३८ ई० में १५८ लाख बैरेल तेल निकला था। इसका तेल साधारणतया काला और एस्फाल्टीय होता है। इसमें विशिष्ट घनत्व की मात्रा ०·९३२ या २०·३° और गंधक की मात्रा १ प्रतिशत होती है। श्यानता कम होती है। इसमें मोम बिल्कुल नहीं होता। इस कारण मोम-मुक्त स्नेहक इससे तैयार हो सकता है। पेट्रोल की मात्रा १२ से १३ प्रतिशत रहती है और किरासन की मात्रा प्रायः २५ प्रतिशत। यातायात की कठिनाई से उत्पादन में वृद्धि नहीं हुई है।

पेरू—पेरू में जो पेट्रोलियम निकलता है, उसमें विशिष्ट घनत्व ०·८३ या ३९° रहता है। गंधक की मात्रा बड़ी अल्प रहती है। पेट्रोल की मात्रा ३० से ४० प्रतिशत रहती है।

अर्जेंटिना—यहाँ के पट्रोलियम में पेट्रोल ७ से १२ प्रतिशत रहता है। इसमें विशिष्ट घनत्व ०·८८७ से ०·९६ या २८° से २३° तक रहता है। गन्धक की मात्रा बड़ी अल्प (०·१२ से ०·२० प्रतिशत) रहती है। यह मध्यम श्रेणी का पेट्रोलियम होता है। इससे स्नेहक तेल उच्चकोटि का बनता है।

अर्जेण्टिना के साल्टा में जो पेट्रोलियम निकलता है, वह ऊपर के पेट्रोलियम से कुछ भिन्न होता है। उसमें विशिष्ट घनत्व ०·८१७ या ४२° रहता है। गंधक की मात्रा कम रहती है, पर पेट्रोल ३० प्रतिशत रहता है। इससे भी स्नेहक तेल अच्छी मात्रा में प्राप्त होता है।

प्लाजा हुईकुल और मेंडोजा में भी पेट्रोलियम निकलता है। उनमें विशिष्ट घनत्व क्रमशः ०·८७१ या ३१°, ०·८८० या २९·३°; गंधक-मात्रा क्रमशः ०·२ प्रतिशत और ०·५ प्रतिशत एवं पेट्रोल की मात्रा क्रमशः १५ प्रतिशत और १२ प्रतिशत रहती है।

अर्जेण्टिना का सारा उत्पादन १९३८ ई० में १७५ लाख बैरेल हुआ था।

ट्रिनिडाड—१९३८ ई० में यहाँ १७७ लाख बैरेल तेल निकला था। यहाँ का तेल कैलिफोर्निया के तेल-सा होता है। यह मिश्रित आधार का होता है। इसका विशिष्ट घनत्व १६° से २४°; गंधक की मात्रा ०·२४ से २·६३ प्रतिशत और पेट्रोल की मात्रा १०·५ से २१·६ प्रतिशत तक रहती है।

रूस—रूस का पेट्रोलियम अधिकांश काकेसस से आता है। रूस के अजरबैजन प्रदेश में सुप्रसिद्ध बेकू जिला है। यहीं के तेल-कूपों से ८० प्रतिशत पेट्रोलियम निकलता है। यहाँ का पेट्रोलियम मिश्रित आधार का होता है। इसमें गन्धक की मात्रा बड़ी अल्प (०·१ से ०·२ प्रतिशत) रहती है। पेट्रोल की मात्रा सामान्य रहती है। सुराखानी के कच्चे पेट्रोलियम से स्नेहक तेल बनता है।

बिनिगैडी, बालाकानी और बिबि-ऐबत क्षेत्रों से प्राप्त पेट्रोलियम मिश्रित श्रेणी का होता है। इसके पेट्रोल में नैफ्थीन रहता है। इसकी ऑक्टेन-संख्या ९० होती है। इसमें

स्नेहक तेल का श्यानांक ६०° का रहता है। ईंधन, तेल और एस्फाल्ट के लिए यहाँ का पेट्रोलियम अधिक उपयुक्त है।

ग्रोज़नी जिले के क्षेत्रों से निकले पेट्रोलियम में मोम रहता है। गंधक की मात्रा कम रहती है। पेट्रोल पैराफीनीय होता है। औक्टेन-संख्या ६० होती है और आसवन-अवशेष में मोम या एस्फाल्ट या दोनों रहते हैं।

यूराल-पर्वतों से निकले पेट्रोलियम में नैफ्थीनिक अम्ल अधिक होता है। विशिष्ट घनत्व ०·९४ और गन्धक की मात्रा ३ से ५ प्रतिशत रहती है। इसमें कुछ मोम भी रहता है। एम्बा के क्षेत्रों से हल्का और भारी दोनों किस्म के तेल प्राप्त होते हैं। उनमें ऊँचे औक्टेन का पेट्रोल और पैराफीनीय श्रेणी का स्नेहन तेल प्राप्त होता है। १९३६ ई० में २०१५ लाख बैरेल तेल रूस के तल-कूपों से निकला था।

रूमानिया—रूमानिया का तेल-क्षेत्र बहुत बड़ा है। यह तेल-क्षेत्र दो वर्गों का है। एक वर्ग के तेल-क्षेत्र से प्राप्त पेट्रोलियम में मोम नहीं होता, पर एस्फाल्ट रहता है। दूसरे वर्ग के तेल-क्षेत्र के तेलों में मोम होता है। दोनों वर्गों के पेट्रोलियम में सौरभिक अधिक मात्रा में रहता है। इस कारण यहाँ से निकले तेलों के शोधन में सल्फर-डायक्साइड-निष्कर्ष-विधि का उपयोग पहले-पहल शुरू हुआ जो आज सब आधुनिक विलायक शोधन-रीतियों में उपयुक्त प्रमाणित हुई है।

यहाँ के कुछ क्षेत्रों से जो तेल निकलता है, वह पैराफीनीय और अर्ध-पैराफीनीय किस्म का होता है। इसका विशिष्ट घनत्व ०·८५८ से ०·८५० या ३३·४° से ३४·६° तक का होता है। गन्धक की मात्रा अल्प (०·१६ प्रतिशत) रहती है। इससे लगभग ४० प्रतिशत पेट्रोल प्राप्त होता है, जिसकी औक्टेन-संख्या ५५ से ६० के बीच होती है। इसमें प्रायः ३० प्रतिशत किरासन रहता है और १० प्रतिशत स्नेहक अंश। रूमानिया से १९३८ ई० में ४८६ लाख बैरेल तेल निकला था।

पोलैण्ड—पोलैण्ड में जो पेट्रोलियम पाया गया है, वह दो किस्म का होता है। एक में पैराफीन-एस्फाल्ट रहता है और दूसरे में मोम। पोलैण्ड के पेट्रोलियम में गंधक की मात्रा बहुत अल्प, ०·५ प्रतिशत से अधिक नहीं, होती है। इसका विशिष्ट घनत्व ०·८० से ०·८८ होता है। इसमें ५० प्रतिशत मात्रा तक पेट्रोल और नैफ्था प्राप्त होते हैं। १९३८ ई० में ३५ लाख बैरेल तेल निकला था।

जर्मनी—जर्मनी के हैनोवर प्रान्त के दो स्थानों, विट्ज़े और नायनहेगेन (Weitze, Nieuhagen), में तेल निकलता है। पहले तेल-क्षेत्र में तेल की मात्रा अब कम हो रही है, दूसरे क्षेत्र में तेल की मात्रा बढ़ रही है। इनमें भारी और हल्का दोनों किस्म के पेट्रोलियम रहते हैं। हल्के पेट्रोलियम में भी पेट्रोल की मात्रा अल्प रहती है। एस्फाल्ट की मात्रा भी अल्प (१० प्रतिशत से कम) रहती है। १९३९ ई० में ३१ लाख बैरेल तेल निकला था।

फ्रांस—फ्रांस में, केवल आलसाक क्षेत्र में पेट्रोलियम निकलता है। तेल मध्यम श्रेणी का होता है। गन्धक की मात्रा अधिक रहती है। इसका विशिष्ट घनत्व ०·८८ प्रतिशत होता है। इसमें मोम ४ प्रतिशत रहता है। इससे पेट्रोल ९ प्रतिशत, किरासन २० प्रतिशत, डीज़ल तेल ११ प्रतिशत और स्नेहक तेल ३६ प्रतिशत रहता है। १९३८ ई० में ५ लाख बैरेल तेल निकला था।

आस्ट्रिया—थोड़े दिनों से आस्ट्रिया में पेट्रोलियम निकला है। १९३८ ई० में केवल ३ लाख बैरेल तेल निकला था। इसमें विशिष्ट घनत्व ०'९४ प्रतिशत रहता है। यह तेल भारी होता है और इसमें डीज़ेल तेल, स्नेहन तेल और एस्फाल्ट सम मात्रा में रहते हैं।

जेकोस्लोवाकिया—यहाँ का तेल भारी होता है और श्यानता ऊँची होती है। इनमें प्रधानतया नैफ़्थीन रहता है। पैराफीन नहीं होता और गन्धक की मात्रा भी बहुत अल्प होती है।

अफ्रिका—अफ्रिका में, पहले केवल मिस्र में तेल निकलता था। यह तेल भारी मिश्रित आधार का होता था। इसका विशिष्ट घनत्व ०'९० से ०'९३ तक होता था। इसमें १० प्रतिशत एस्फाल्ट और ७ से ८ प्रतिशत मोम रहता था।

१९३८ ई० में रासशरेब में एक दूसरे तेल-क्षेत्र का पता लगा। यहाँ के तेल में पेट्रोल ५ से ७ प्रतिशत रहता है और गन्धक की मात्रा २४ प्रतिशत तक पहुँच जाती है। १९३९ ई० में मिस्र में ५१ लाख बैरेल तेल निकला था।

मोरोक्को—मोरोक्को में भी तेल-क्षेत्र का पता लगा है। यहाँ के तेल का विशिष्ट घनत्व ०'८४९ प्रतिशत का होता है। और पेट्रोल की मात्रा २१ प्रतिशत रहती है।

एलजीरिया—एलजीरिया में भी अल्प मात्रा में पेट्रोलियम का उत्पादन होता है। इसमें गन्धक की मात्रा अल्प और वाष्पशील अंश की मात्रा अधिक रहती है। यहाँ का तेल मध्यम श्रेणी का होता है।

एशिया

ईरान—ईरान में प्रधानतया दो तेल-क्षेत्र हैं। एक मसजिदी-सुलेमान क्षेत्र और दूसरा हफ्तकेल क्षेत्र। यहाँ का तेल मिश्रित-आधार का है। पैराफीनीय किस्म की कुछ अधिकता रहती है। इसका विशिष्ट घनत्व ०'८३७ प्रतिशत और गन्धक-मात्रा एक प्रतिशत के लगभग है। इससे जो गैसें निकलती हैं, उसमें हाइड्रोजन सल्फाइड की मात्रा १० प्रतिशत तक पाई गई है। इससे २० प्रतिशत पेट्रोल प्राप्त होता है। इसमें सौरभिक सामान्य मात्रा में रहता है। इससे किरासन, स्नेहन तेल, और पैराफीन मोम भी प्राप्त होते हैं।

१९३८ ई० में ७१२ लाख बैरेल पेट्रोलियम यहाँ के कूपों से निकला था।

ईराक—ईराक के कूपों से तेल का उत्पादन १९३४ ई० से ही शुरू हुआ है। केरकुक क्षेत्रों से निकला हुआ तेल कुछ तो पैराफीन आधार का और कुछ एस्फाल्ट आधार का होता है। यहाँ का तेल ईरान के तेल से बहुत-कुछ मिलता-जुलता है। इसमें गन्धक और मोम की मात्रा प्रायः ईरान के तेल-सी ही होती है। बाबा गुरगुर से निकले पेट्रोलियम का विशिष्ट घनत्व ०'८५, प्रतिशत, गन्धकमात्रा १'८ प्रतिशत और पैराफीन मोम की मात्रा २ प्रतिशत पाई गई है। इसके पेट्रोल की ऑक्टेन-संख्या ५० है। १९३८ ई० में यहाँ के कूपों से ३१३ लाख बैरेल तेल निकला था।

फारस की खाड़ी के बहराइन टापू और कुवैत में भी तेल निकला है। १९३८ ई० में इन कूपों से ८२ लाख बैरेल तेल निकला था।

ईस्ट इण्डीज—ईस्ट इण्डीज के तेल-क्षेत्र सराबक, पूर्व बोर्नियो, उत्तर एवं दक्खिन सुमात्रा और जावा में हैं।

सरावक का मिरि क्षेत्र अँगरेजों के अधिकार में है। यहाँ के पेट्रोलियम में विशिष्ट घनत्व ०·९० प्रतिशत रहता और गन्धक की मात्रा ०·३५ प्रतिशत रहती है। मोम और एस्फाल्ट लेश मात्र रहते हैं। नीचे तल के तेल में हल्का प्रभाग अधिक मात्रा में पाया गया है। सब से निचले तल के पेट्रोलियम में मोम भी पाया गया है। पेट्रोल की औसत मात्रा १५ प्रतिशत रहती है इसका विशिष्ट घनत्व ऊँचा ०·७८ प्रतिशत पाया गया है। नैफ्थीन की मात्रा ७० प्रतिशत और सौरभिक की केवल ५ प्रतिशत पाई गई है। इससे प्राप्त पेट्रोल का प्रत्याघात ऊँचा होता है, पर किरासन से अच्छी रोशनी नहीं होती है।

मोम-आधारवाले तेल का विशिष्ट घनत्व ०·८२ रहता है। गन्धक की मात्रा ०·१ प्रतिशत, और पेट्रोल की मात्रा ५० प्रतिशत पाई गई है।

यहाँ के अन्य कूप डचों के अधिकार में हैं। ऐसे कूपों में सुमात्रा और जावा के तेल-कूप हैं। पालेमबाङ्ग-कूपों से प्राप्त तेल का विशिष्ट घनत्व ०·८० से ०·९० तक होता है। इसमें पेट्रोल की मात्रा ५२ से ८ प्रतिशत और किरासन की मात्रा १६ से ८ प्रतिशत रहती है। इसमें मोम-युक्त और मोम-मुक्त दोनों प्रकार का तेल रहता है। इनके सब उत्पाद भारी होते हैं और एस्फाल्ट की मात्रा बड़ी अल्प होती है। इसमें कार्बन-अवशेष केवल २ प्रतिशत रहता है। ईस्ट बोर्नियो के बालिक-पापान से जो तेल निकलता है, वह कुछ दूसरे किस्म का होता है। इसमें पेट्रोल की मात्रा २० से १५ प्रतिशत और किरासन की मात्रा १० से ४० प्रतिशत रहती है। मोम-मुक्त और मोम-युक्त दोनों प्रकार का तेल निकलता है।

पूर्वी बोर्नियो के तेल में सौरभिक अधिक मात्रा में रहता है। बेंजीन प्रभाग में २६ प्रतिशत पैराफीन, ३५ प्रतिशत नैफ्थीन और ३९ प्रतिशत सौरभिक पाये गये हैं। इससे टोलवोन निकालकर, उससे एक प्रबल विस्फोटक टी. एन्. टी. के निर्माण की चेष्टाएँ प्रथम विश्व-युद्ध में हुई थीं।

बोर्नियो के पूर्वी तट के टाराकान द्वीप में पेट्रोलियम निकला है। यह पेट्रोलियम भारी होता है। इसका विशिष्ट घनत्व ०·९४० प्रतिशत होता है और गन्धक की मात्रा अल्प होती है। इसमें मोम नहीं रहता है।

जावा के तेल का विशिष्ट घनत्व ०·९२ प्रतिशत होता है, पर इसमें पेट्रोल की मात्रा केवल ७ प्रतिशत रहती है। किरासन बिल्कुल रहता ही नहीं है। गैस-तेल प्रायः ५० प्रतिशत रहता है।

ईस्ट इण्डीज में १९३८ ई० में ६२१ लाख बैरेल तेल निकला था।

जापान—जापान का पेट्रोलियम हल्का और भारी दोनों किस्म का होता है। वाष्पशील अंश की मात्रा अधिक रहती है। यह मिश्रित-आधार का होता है। इशिकारी (Ishikari) के पेट्रोलियम का विशिष्ट घनत्व ०·८२३ से ०·८४५ प्रतिशत होता है, जब कि नित्सु (Niitsu) का विशिष्ट घनत्व ०·९३३ प्रतिशत होता है। यहाँ का अधिकांश तेल नैफ्थीनीय किस्म का होता है। इसमें वाष्पशील अंश बहुत ही अल्प होता है। इससे केवल ईंधन-तेल प्राप्त होता है। १९३६ ई० में जापान में २४ लाख बैरेल तेल निकला था।

जापान के उत्तर में साखालिन द्वीप में थोड़ा तेल निकलता है। यह तेल भारी होता है। वाष्पशील अंश अल्प रहता है। यह नैफ्थीनीय किस्म का होता है। मोम-युक्त और मोम-मुक्त

दोनों किस्म का होता है। इसका विशिष्ट घनत्व ०'६१ प्रतिशत होता है। नीचे के तल से प्राप्त तेल हल्का होता है और इसमें वाष्पशील अंश अधिक होता है। मोम का अंश भी अधिक रहता है। साखालिन क्षेत्र से १६१६ ई० में २८ लाख बैरेल तेल निकला था।

फिलिपिन द्वीपों और न्यूज़ीलैंड से भी तेल निकलने का पता लगा है। इन तेलों में मोम की मात्रा अधिक रहती है और वाष्पशील अंशों में सौरभिक की मात्रा अधिक रहती है। यहाँ से व्यापार के लायक मात्रा में तेल निकलने का पता नहीं लगा है।

चीन—चीन में भी कुछ तेल पाया गया है, पर उसके संबंध में हमें जानकारी बहुत अल्प है।

बर्मा—बर्मा के यनाङ्ग-याङ्ग, सिंगु-लंगया और एनाफायात क्षेत्रो में तेलकूप हैं। तेल हल्का होता है। विशिष्ट घनत्व ०'८३ प्रतिशत होता है। गन्धक की मात्रा बड़ी अल्प और पेट्रोल की मात्रा प्रायः १८ प्रतिशत रहती है। यहाँ के तेल में उच्च क्थनांक का मोम रहता है, जिससे अच्छी मोमबत्ती बनती है। मोमबत्ती के लिए रंगून का मोम जगत्-प्रसिद्ध है।

आसाम—आसाम के पेट्रोलियम में पेट्रोल ११ से १५ प्रतिशत रहता है। इसका घनत्व ०'८५ से ०'६७ प्रतिशत होता है। यहाँ का तेल हलका और भारी दोनों किस्म का होता है।

कच्चे पेट्रोलियम का संसार में उत्पादन (१६४० ई०)

देश	मात्रा लाख बैरेल में (एक बैरेल ४२ पाउण्ड का होता है।)	प्रतिशत
अमेरिका	१३३८०	६३'३
रूस	२२५०	१०'६
वेनेजुएला	१८६०	८'८
ईरान और ईराक	१०१०	४'८
ईस्ट इण्डीज (ब्रिटिश और डच)	७८०	३'७
रूमानिया	४२०	२'०
मेक्सिको	४३०	२'०
कोलम्बिया, पेरू, अर्जेंटिना, ट्रिनिडाड	७८०	३'७
जर्मनी और पोलैण्ड	८०	०'३
अन्य देश	१७०	०'८
	२,११६०	१००'०

पेट्रोलियम में खनिज पदार्थ

पेट्रोलियम में राख की मात्रा ०·०१ से ०·०५ प्रतिशत रहती है। प्रश्न यह उठता है कि यह खनिज पदार्थ किस रूप में पेट्रोलियम में रहता है। ऐसा समझा जाता है कि कुछ खनिज पदार्थ साबुन के रूप में रहता है जो तेल में विलेय होता है। पेट्रोलियम में कुछ अम्ल रहते हैं और उन्हीं अम्लों से मिलकर साबुन बनता है और यह साबुन तेल में घुल जाता है। पर, अधिकांश खनिज पदार्थ तेल में प्रक्षिप्त लवण के विलयन के रूप में रहता है। लवण जल में घुलकर जलीय विलयन बनता है और यह विलयन तेल में प्रक्षिप्त रहता है।

राख के विश्लेषण से पता लगता है कि इसमें सिलिकेट और सल्फेट, अनेक धातुओं—जैसे कैलसियम, सोडियम, मैगनीशियम और लोहा, के साथ संयुक्त रहते हैं। राख में अल्प मात्रा में निकेल और वेनेडियम भी पाये जाते हैं। राख में क्या-क्या रहता है, इसका पता निम्नस्थ सारणी से लगता है। इस सारणी के तैयार करनेवाले शिरे महोदय हैं।

सारणी–पेट्रोलियम की राखों का विश्लेषण

नमूना	१	२	३	४	५	६
सिलिका	१८·७९	४०·३१	३·६८	१·५५	०·७५	९·९९
संयुक्त आक्साइड	२२·३८	५१·४८	३१·८०	१०·३२	९७·५१	१९·५५
लोहेका आक्साइड (Fe_2O_3)	(५·७१)	(४४·५९)	(१५·८)	(७·७४)	(९७·३७)	(१४·६९)
मैगनीशिया (MgO)	१·८१	१·१९	४·१८	२·४९	०·२४	१·२७
चूना (CaO)	८·६८	३·४५	१२·६२	५·२६	०·६८	४·७९
सोडियम आक्साइड (Na_2O)	९·५१	२·५८	६·९०	३०·८०	०·१२९	२३·६०
पोटाश (K_2O)	—	—	—	१·०३	—	०·९२२
फास्फरस आक्साइड (P_2O_5)	—	(०·०६)	—	—	—	—
मैंगनीज आक्साइड (MnO)	०·३०२	०·१९८	०·४३७	०·३३	०·२१३	०·०३८
वेनेडियम आक्साइड (V_2O_5)	(५·०७)	लेश	लेश	(१·४३)	—	(०·४३)
सल्फर ट्रायक्साइड (SO_3)	—	—	—	(४२·०६)	—	(३४·३६)
निकेल आक्साइड (NiO)	४·३५	०·३३	०·५३३	१·५२	—	०·५७१)
लिथियम आक्साइड (Li_2O)	०·१४४	०·१६३	—	—	—	—
क्लोराइड (जल विलेय)	—	—	—	४·६४	—	०·१०
जोड़	१००·९९	१०१·१४	९८·९६	१००·०७	१००·४०	९७·२४

ऐसा मालूम होता है कि तेल की बूँदों में अल्यूमिनियम और मैगनीशियम का सिलिकेट समाया रहता है। तेल के नलों से सम्भवतः तेल में लोहा आ जाता है। एस्फाल्ट की वृद्धि से राख की मात्रा बढ़ती है। कुछ नमूनों में वेनेडियम की मात्रा पर्याप्त पाई गई है।

पेट्रोलियम में जल प्रायः घुलता नहीं है, पर पेट्रोलियम में पर्याप्त मात्रा में जल रहता है। यह पायस के रूप में रहता है। इस पायस के कारण शोधन में कठिनाईयाँ होती हैं। ऐसा अनुमान है कि जल की तरह का पायस तेल में विद्यमान है। पायस के कण ऋण-विद्युत् के आवेश से आविष्ट हैं। ऐसा सुझाव रखा गया है कि एस्फाल्ट के कारण पायस बनने में सहायता मिलती है और साधारणतया एस्फाल्ट के हटा लेने से पायस का नष्ट हो जाना देखा गया है।

इस पायस की छोटी-छोटी बूँदों का व्यास ०·०००१ से ०·२ मिमी० तक का पाया गया है, साथ ही उनमें सोडियम क्लोराइड भी पाया गया है। पर, सब ही कण विद्युदाविष्ट थे। उनपर धन-विद्युत् के आवेश थे, पर उनका आवेश सरलता से बदला जा सकता था।

पायस के तोड़ने का प्रयत्न यूरेन (Uren) ने किया है। निम्नलिखित रीतियों से पायस तोड़ा जा सकता है—

१. गुरुत्व निथार से
२. तपाने से
३. विद्युत्-पृथक्करण से
४. रासायनिक उपचार से
५. केन्द्रापसारण से
६. छानने से

गुरुत्व निथार बड़ी मन्द चाल से होता है। यदि इसकी केन्द्रापसारण से सहायता की जाय, तो चाल बहुत कुछ बढ़ाई जा सकती है। व्यापार की दृष्टि से तपाने तथा विद्युत् के सहयोग अथवा रासायनिक उपचार से ही पायस को दूर किया जाता है।

तपाने का काम नल-भभके में होता है, जहाँ से पेट्रोलियम निकलकर उद्वाष्पक में आता है। यहाँ कठिनाई यह होती है कि नल-भभके में शुष्क लवण का निक्षेप बन जाता है। शून्यक में उद्वाष्पन से यह कठिनाई बहुत-कुछ दूर की जा सकती है। ३००° फ० तक गरम करके वायुमण्डल के दबाव पर छोड़ देने से यह कठिनाई होती थी, पर यदि केवल २४०° फ० तक गरम करके ७५ से १५० मिमी० तक के न्यून दबाव में छोड़ दिया जाय, तो यह कठिनाई नहीं होती। पायस में ४ से ८ प्रतिशत पानी रहता है।

रासायनिक उपचार में कोई ऐसा पदार्थ डाला जाता है जो जल से प्रतिकूल किस्म का पायस बन जाता है। इस काम के लिए सोडियम के साबुन या इसी प्रकार के अन्य पदार्थ उपयुक्त होते हैं। यह समस्या इतनी सरल नहीं है, जैसी मालूम होती है। वास्तव में यह बहुत पेचीली है। इस समस्या के समाधान के लिए विभिन्न किस्म के पेट्रोलियम से विभिन्न पदार्थों के उपयोग की आवश्यकता पड़ती है। इसमें पायसकारक

की प्रकृति का चुनाव भी एक महत्त्व का प्रश्न है। पायसकारक ऐसा होना चाहिए, जो तेल-पायस तक पहुँचकर उसके अति सन्निकट संसर्ग में आ सके। इसके लिए कभी-कभी वाहक डालने की आवश्यकता पड़ती है जो तेल में प्रतिकारक के फैलने में सहायता करता है। एक ऐसे वाहक के परीक्षण से पता लगा कि उसमें सोडियम ओलिएट ८३ प्रतिशत, सोडियम रेजिनेट ५·५ प्रतिशत, सोडियम सिलिकेट २ प्रतिशत, फीनोल ४ प्रतिशत और जल १ प्रतिशत था। सल्फोनित ओलिथिक अम्ल का भी व्यवहार होता है। अन्य सल्फोनित कार्बनिक पदार्थ भी प्रयुक्त होते हैं। इन पदार्थों को नरम कर, घुला-मिलाकर बड़े तनु विलयन के रूप में इस्तेमाल करते हैं। यह कार्य तेल-कूपों के निकट में ही होता है; क्योंकि नल में तेल ले जाने के समय जल की मात्रा २ प्रतिशत से अधिक नहीं रहनी चाहिए।

पाँचवाँ अध्याय

पेट्रोलियम का निकास

कुआँ खोदकर आजकल पेट्रोलियम निकाला जाता है। किस स्थान से पेट्रोलियम निकल सकता है, इसका ठीक-ठीक पता हमें विज्ञान से नहीं लगता। भूगर्भ-वेत्ताओं ने इस प्रश्न का बहुत गहरा अध्ययन किया है। जिन-जिन स्थानों के कूपों से पेट्रोलियम निकला है, उन सब स्थानों के भूगर्भ का अध्ययन बड़ी सूक्ष्मता से किया है। फलस्वरूप वे कुछ अनुमानों पर पहुँचे हैं; पर वे अनुमान ही हैं और उनके शत-प्रतिशत ठीक होने की गारण्टी नहीं मिल सकती है।

पहले ३०० कूपों की खुदाई में किसी एक कूप से तेल निकल आता था। पर, अब इसमें सुधार हुआ है। भूगर्भवेत्ताओं ने, जिन चट्टानों से पेट्रोलियम निकल सकता है, उनका गहरा अध्ययन किया है। इस विज्ञान का जियोफिजिक्स में अध्ययन होता है। अब कुछ सूक्ष्म यंत्र भी बने हैं, जिनकी सहायता से पृथ्वी के अन्दर की भूगर्भिक परिस्थिति का अधिक यथार्थता से ज्ञान हो सकता है। इस कारण तेल के कूपों की खुदाई अब बहुत-कुछ वैज्ञानिक हो गई है। १०० कूपों की खुदाई में अब ७८ कूपों से पेट्रोलियम प्राप्त हो सकता है।

अनेक देशों में तेल-कूपों को खोज निकालने की चेष्टाएँ पहले हुई हैं और अब भी हो रही हैं।

ग्रेट-ब्रिटेन में भी तेल-कूपों की बड़ी खोज हुई है। पर, अभी तक कोई महत्त्व का तेल-कूप नहीं पाया गया है। ऐसे कूपों की खोज आज भी हो रही है। गत विश्व-युद्ध के समय में तो देश के अनेक भागों में कुएँ खोदे गये थे, पर किसी से तेल नहीं निकला। कुछ विशेषज्ञों का मत है कि कुछ ऐसे चट्टान पाये गये हैं, जिनसे तेल निकलने की आशा की जा सकती है। १९३७ ई० में एक कम्पनी बनी और उसने ४९० वर्गमील क्षेत्र में कुएँ खोदने की आज्ञा सरकार से ली।

भारत में भी तेल-कूपों की खोज हुई और हो रही है। अभी बाहर की एक कम्पनी को तेल-कूपों के खोदने की आज्ञा दी गयी है। आसाम में डिगबोई के आस-पास खोजें हो रही हैं और ऐसी आशा है कि कोई-न-कोई तेल-कूप वहाँ अवश्य निकल आवेगा। नये समाचारों से पता लगा है कि कुछ नये तेल-कूप आसाम में मिले भी हैं।

अनेक मरुस्थलों में तेल-कूप पाये गये हैं। अनेक द्वीपों में भी तेल-कूप निकले हैं। कुछ वैज्ञानिकों का मत है कि समुद्र-तल से भी तेल-कूप प्राप्त हो सकते हैं और ऐसे तेल-कूपों के प्राप्त करने की चेष्टाएँ हो रही हैं। प्रत्येक देश में तेल-कूपों के लिए चेष्टाएँ हुई

ओर हो रही हैं। इन खोजों के फलस्वरूप तेल-कूपों का क्षेत्र बहुत विस्तृत हो गया है।
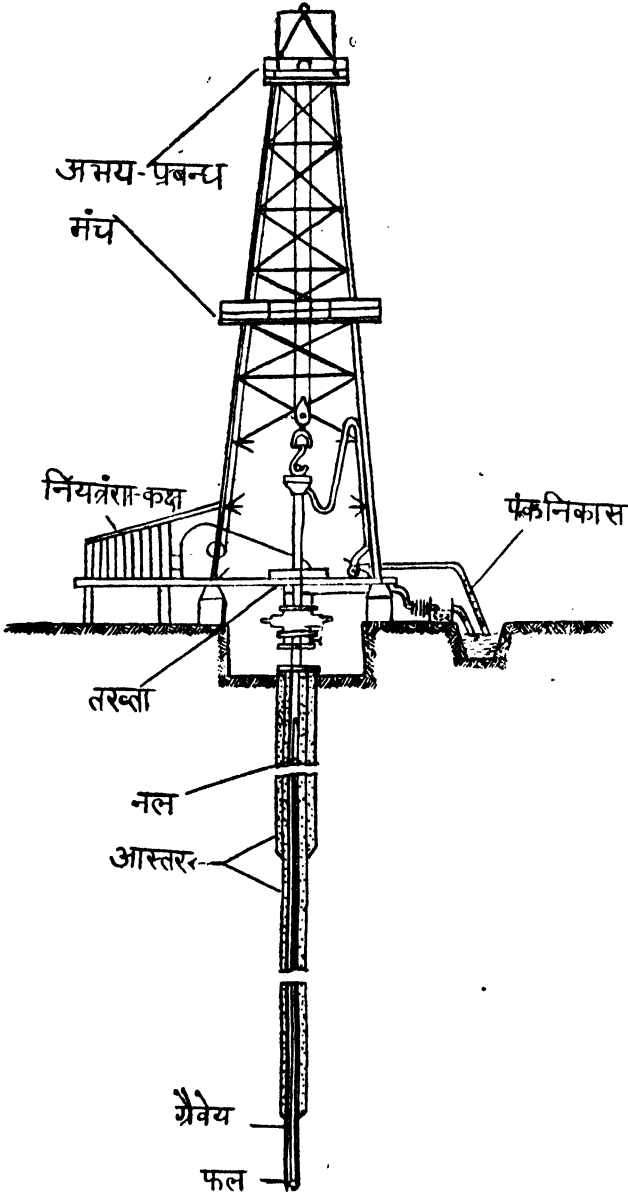
चित्र २—कूप की खुदाई का यन्त्र। खुदाई भाप और टरबाइन से होता है। सबसे नीचे खोदनेवाला औजार होता है। मिट्टी खोदकर ऊपर नल द्वारा लाई जाती है। यन्त्र के भिन्न-भिन्न अंगों के स्थान चित्र में दिये हैं।

कुछ स्थलों में सतह से प्रायः सौ फुट की गहराई में ही तेल निकल आता है और कुछ स्थलों में १०७० से ४००० फुट की गहराई में तेल मिलता है। इस खुदाई के काम

में पर्याप्त समय लगता और पर्याप्त खर्च भी पड़ता है। सैकड़ों ऐसे कूप हैं, जिनकी ५ हजार से १० हजार फुट गहराई में तेल पाया गया है। सबसे गहरा तेल-कूप दक्खिन-कैलिफोर्निया में है, जिसकी गहराई दो मील से ऊपर है।

तेल के लिए कूपों के खोदने में लकड़ी का एक कंकाल आवश्यक होता है। यह कंकाल चौपहला होता है। इसकी ऊँचाई १३० से १५० फुट तक की होती है। इस कंकाल के बीच में खोदनेवाला एक नल होता है जिसमें मिट्टी खोदने का यंत्र लगा रहता है। यह खोदनेवाला नल बहुत भारी इस्पात का बना होता है। इसका व्यास ४ से ६ इंच का होता है। नल की लम्बाई ३० फुट की होती है। इन्हें पेचों से बाँध या जोड़ सकते हैं। नल के पेंदे में मिट्टी काटने का यंत्र लगा रहता है। इस यंत्र को धरती के संसर्ग में लाकर घुमाते हैं, जिसके भार से मिट्टी कटती जाती है।

मिट्टी और पानी मिलाकर नल में दो सूराखों से डालते हैं। कटी हुई मिट्टी उसमें घुलकर तलपर चली आती है और गड्ढों में इकट्ठी होती है। मछली के पुच्छ के आकार का यंत्र कोमल मिट्टी काटने में उपयुक्त होता है। कठोर चट्टानों के काटने के लिए विशेष प्रकार का कठोर-पत्थर उपयुक्त होता है।

यंत्र से चट्टान कैसे कटती है, इसकी समय-समय पर जाँच होती है। कटी चट्टानों के नमूने निकालने का प्रबन्ध रहता है। इसके लिए पार्श्व में एक नली लगी रहती है, जिससे
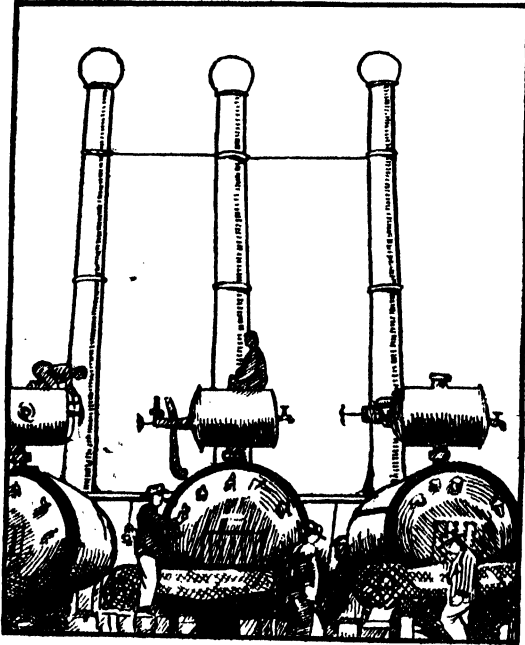
चित्र ३--प्रयोग के लिए तेल-खुदाई की एक दूसरी मशीन। यह मशीन भी भाप-जनित्र और टरबाइन से कार्य करती है।

नमूने को निकाल लेते हैं। ऐसे नमूने १५ से २० फुट तक के लंबे हो सकते हैं। भूगर्भवेत्ता इन नमूनों की परीक्षा कर चट्टानों की प्रकृति का पता लगाते हैं।

जमीन की सतह पर सूराख का व्यास १५ से २० इंच होता है। प्रायः सौ फुट की खुदाई के बाद उसमें इस्पात का ढक्कन (बाहरी कवर) डाला जाता है। ढक्कन के बाह्य भाग और सूराख की दीवार के बीच पम्प द्वारा सीमेंट डाला जाता है। इससे दीवार फटकर गिरती नहीं है और जल के आगमन में भी रुकावट होती है। तब छोटे-छोटे भागों में गहरी खुदाई करते हैं और अधिकाधिक पतला ढक्कन डालते जाते हैं। यह काम तब तक चलता रहता है जब तक तेलवाला स्तर न पहुँच जाता है।

इन कूपों में तेल मिल जाने पर अनेक दूसरे प्रश्न उपस्थित होते हैं। जैसे—तेल को कैसे ऊपर लाया जाय? इनकी द्रुतगति के बहाव को कैसे रोका जाय? इनमें जो कंकड़ मिले हुए हैं, उन्हें कैसे हटाया जाय? यदि तेल तेज धारा में निकलता है तो उसके वेग को कैसे कम किया जाय? क्या किया जाय कि तेल में आग लगने का भय न रहे?

खुदाई में गैसें भी कभी-कभी इतनी तेजी से निकलती हैं कि चट्टानों के धक्के से चिनगारी उत्पन्न होने का भय रहता है और उससे आग लग सकती है। किसी इंजन से

चित्र ४—तेल-कूप में लगी आग। यह आग लोसएन्जेल (अमेरिका) में १६२६ ई० में लगी थी।

भी चिनगारी निकलकर आग उत्पन्न कर सकती है। कभी-कभी सिगरेट अथवा दियासलाई के जलते टुकड़ों से भी आग लग जाती है। वायु में बिजली की चमक से भी

आग लगने का भय रहता है। यदि ऐसे कुएँ में आग लग जाय, तब यह दूसरे कुओं में फलकर अपार हानि न करे, इसके लिए भी सावधानी की आवश्यकता होती है।

एक समय मेक्सिको के एक कूप में आग लग गई थी। वहाँ तेल प्रबल धारा में निकल रहा था। इस आग की लौ १५०० फुट ऊँची थी। उस आग की कड़कड़ाहट कई मील तक सुनी जाती थी। उससे इतना धुआँ बना था कि सूरज छिप गया था और दिन में ही रात हो गयी थी। उससे इतनी तेज गरमी उत्पन्न हुई थी कि कुएँ में ३०० फुट के अन्दर जाना असम्भव हो गया था।

इंजीनियर लोगों ने इस कुएँ को बन्द करा देने का निश्चय किया। इसको बन्द करने के लिए एक बहुत बड़े ढक्कन की आवश्यकता पड़ी। बैरेल टंकी को तोड़कर उसके भारी इस्पात-पट्ट को जोड़कर मोटा ढक्कन बनाया गया। भारी इस्पात का रेल, जिसका भार ३० टन था, बिछाकर उसे मोटे लोहे के तार से घसीटकर कुएँ के मुँह पर लाकर बैठाने की चेष्टाएँ हो रही थी कि कुएँ के पार्श्व की धरती धँस गयी। एक हजार फुट व्यास का एक बड़ा दरार फट गया और वह शीघ्र ही तेल से भर गया।

अब दरार में पर्याप्त पानी डालकर तेल के प्रवाह के रोकने की चेष्टाएँ हुईं। यह काम हो ही रहा था कि आप से आप आग बुझ गई; क्योंकि कुएँ की गैस और तेल समाप्त हो गया था।

आग बुझ जाने के बाद भी कष्ट समाप्त नहीं हुआ। उस कुएँ से बड़ी तेजी से गरम नमकीन पानी का बहना शुरू हुआ और २४ घण्टे में प्रायः ७०० लाख गैलन नमकीन पानी कुएँ से निकला।

यह आग ४८ दिन तक जलती रही थी। ऐसा अनुमान है कि इस बीच २० लाख गैलन से अधिक तेल जला होगा।

रूमानिया के एक तेल-कूप में ऐसी ही आग लगी थी। यह आग ढाई वर्ष तक जलती रही थी।

ईराक के तेल-नलों में भी कभी-कभी आग लग जाती है। वहाँ के निवासी अरब लोग नल में छेद कर आग लगा देते हैं। यह आग जलती रहती है। एक ऐसे ही आग लगने के दृश्य का चित्र यहाँ दिया हुआ है।

पेट्रोलियम-कूप में यदि आग लग जाती है, तो उसे बुझाने के लिए भाप का उपयोग होता है। बहुत ऊँचे दबाववाले बॉयलरों में भाप के अनेक नल लगे रहते हैं। इन सब भाप के नलों को आग पर छोड़ देते हैं। भाप से वायु का आगमन रुक जाता है और वायु के अभाव में आग बुझ जाती है।

आग बुझाने की एक दूसरी रीति लौ के ऊपर लोहे के ढक्कन को खींचकर रख देना है। कभी-कभी ऐसी आग को जलती हुई ही छोड़ देते हैं।

कच्चे पेट्रोलियम के उपयोगी बनाने का काम कारखाने में होता है। जहाँ जिस स्थल पर तेल का परिष्कार होता है, उस परिष्कार स्थल को 'परिष्करणी' कहते हैं। कुछ परिष्करणियाँ तो कूपों के निकट में ही होती हैं, पर कुछ तेल-कूपों से बहुत दूर भी होती हैं।

ईरान के तेल-क्षेत्र हाल्फकेल और मजीदी-सुलेमान से तेल को, नल द्वारा १२० मील दूर वीरान पहाड़ी होकर फारस की खाड़ी में अबादान नामक टापू में ले जाया जाता है। वहाँ बहुत बड़ी-बड़ी आधुनिकतम यंत्रों से सुसज्जित परिष्करणियाँ आज बनी हैं।

ईरान के प्राचीन नगर मोसल के निकट किरकुक में तेल-क्षेत्र है। थोड़ी मात्रा में वहाँ तेल का परिष्कार होता है, पर अधिक तेल मरुभूमि होकर पलेस्टाइन के हैफा नगर में, सीरिया के त्रिपोली में लाया जाकर परिष्कृत किया जाता है। तेल का नल ११२०मील चलकर हैफा पहुँचता है। मार्ग में मरुभूमि में लगभग एक दर्जन पम्प करने के स्टेशन बने
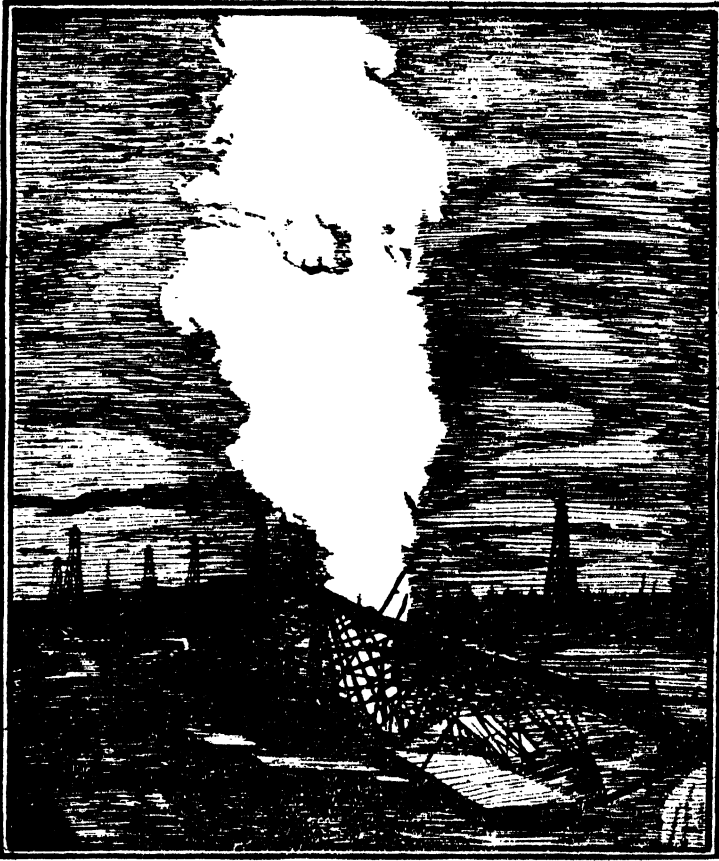
चित्र ५—रूमानिया के तेल-नल में लगी आग, जो १ वर्ष तक जलती रही।

हैं। इस नल के बैठाने में दस हजार व्यक्ति लगे थे और उसमें लगभग साढ़े तेरह करोड़ रुपया लगा था। केवल मार्ग के निश्चित करने में एक साल लगा था। मार्ग में न कोई रास्ता है और न कोई रेल। वहाँ के रहनेवाले केवल कुछ घुमक्कड़ जातियाँ थीं। नल लगाने के लिए सब सामान—नल, लोहे को उठाने-चढ़ाने के यंत्र, हथियार, खेमे, बिछावन, खाने के सामान, पीने का पानी आदि—साथ ले जाना पड़ता था।

इस काम के लिए विशेष लॉरियाँ और ट्रैक्टर बनाये गये थे। इन स्थानों में दिन में बेहद गरमी पड़ती थी। रात में वहाँ का ताप शून्य से भी नीचे गिर जाता था।

जाड़े में भी बाढ़ से पड़ाव में पानी भर जाता था। सबसे अधिक भय तो उन घुमक्कड़ जातियों से थी, जो कभी-कभी बन्दूक दिखाकर लूटने की चेष्टा करते थे। कुछ भागों में तो इन लॉरियों के आगे-आगे बन्दूकधारी सिपाही चलते थे।

इन सब बातों से अधिक भय उत्पन्न करनेवाली बात धूलों की आँधी थी। जब आँधी चलती थी तब जल्दी जाती नहीं थी। कई दिनों तक चलती रहती थी। कभी-कभी पड़ाव को पूर्ण रूप से मटियामेट कर देती थी।

ईराक में दो नल साथ-साथ चलते हैं। एक हैफा को जाता है और दूसरा त्रिपोली को। किरकुक से हैडिथा तक यूफ्रेटीज नदी के तट पर प्रायः १५९ मील तक दोनों नल साथ-साथ चलते हैं। हैडिथा से वे अलग-अलग हो जाते हैं। दक्खिनवाला नल ईराक,
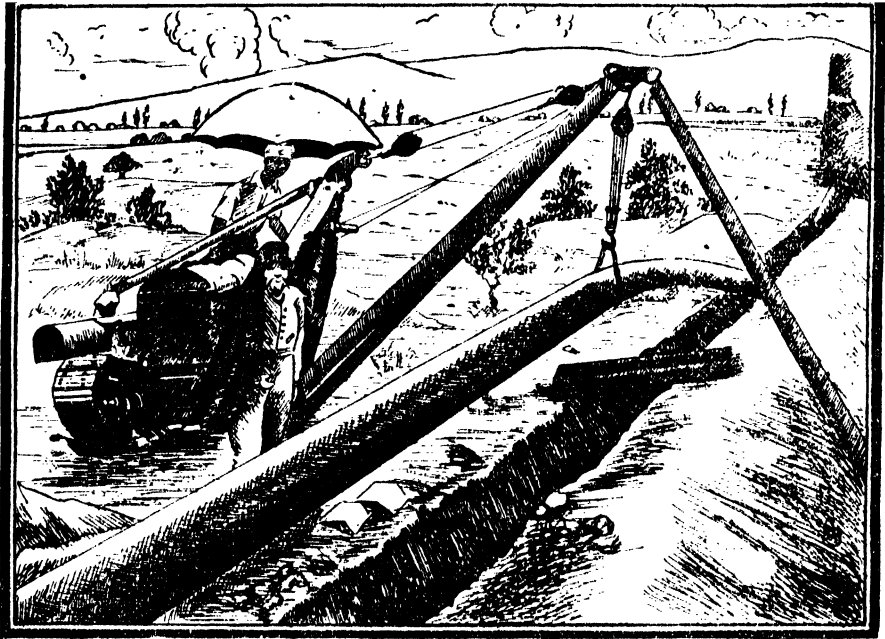
चित्र ६—पेट्रोलियम नल के जमीन में रखने का दृश्य (ईराक का)

ट्रान्सजोर्डन और पलेस्टाइन होकर हैफा जाता है। उत्तरवाला नल सीरिया होकर त्रिपोली जाता है। हैफा का नल ६२० मील और त्रिपोली का नल ५३० मील लम्बा है।

प्रत्येक नल ४० फुट लंबा होता है। ११५० मील के नलों का भार १२० हजार टन होता है। यह नल जमीन के अन्दर गड़ा रहता है। विशेष मशीनों से नल रखने की खाई खोदी गयी थी। खोदनेवाली मशीन २ फुट चौड़ी और ६ फुट गहरी खाई को प्रतिदिन एक मील की औसत गति से खोदती थी। पहले नलों को जोड़ते हैं। जब सब ठीक

से जोड़ दिये जाते हैं तब उन्हें खाई में डाला जाता है। कभी-कभी ऐसी मिट्टी से होकर यह नल जाता है जो नल को आक्रान्त कर नष्ट कर सकती है। ऐसी दशा में नल पर कोई संरक्षक आवरण चढ़ा देने की आवश्यकता पड़ती है।

संरक्षक आवरण चढ़ाने के लिए नल को पहले रगड़कर साफ किया जाता है। पहले लोहे के तार के ब्रश से और पीछे नारियल के रेशे के ब्रश से साफ करते हैं। तार के ब्रश
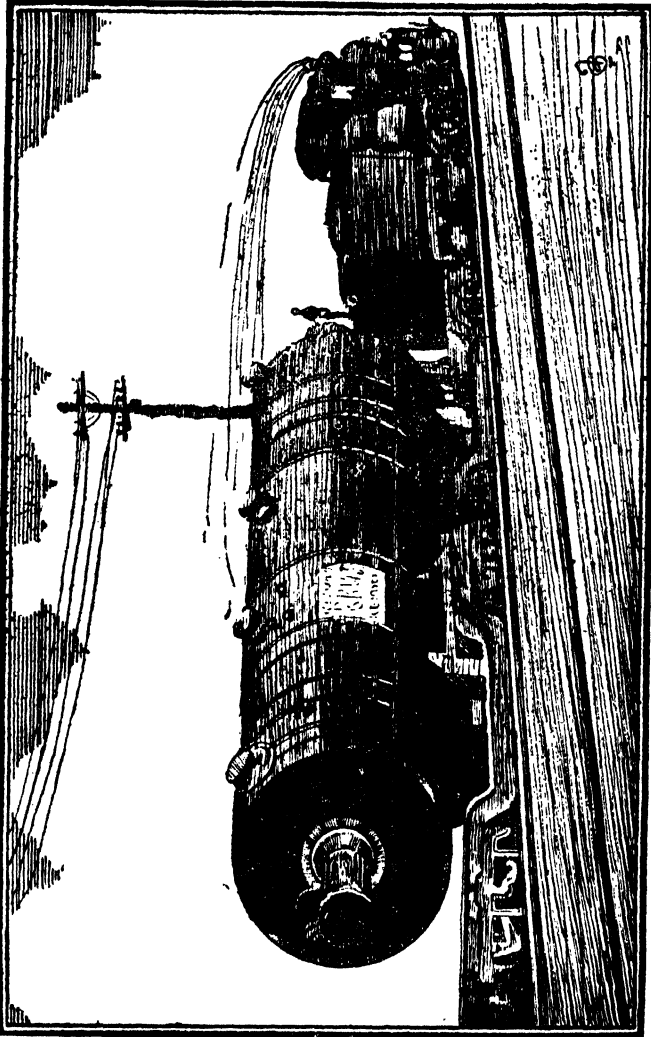
चित्र ७—पेट्रोलियम रखने की टंकी, जिसकी तौल २ हजार टन है।

से मैल और मुरचा सब निकलकर इस्पात का तल साफ हो जाता है। फिर नारियल के रेशे के ब्रश से नल पर नीचे का एक अस्तर चढ़ाते हैं। जब वह अस्तर सूख जाता है तब उसके ऊपर इनेमल का संरक्षक अस्तर हाथ से चढ़ाते हैं। उसके बाद सारे नल को एस्बेस्टस में लपेटकर उसपर मिट्टी रखकर गाड़ देते हैं।

द्रव गुरुत्व के कारण बहता है। चूँकि नल पहाड़ों के नीचे और ऊपर होकर आता-जाता है, इस कारण स्थान-स्थान पर तेल के पम्प करने की आवश्यकता होती है। इससे तेल के बहने में सहूलियत होती है और बहाव स्थायी और एक-सा होता है। पम्प करने के अनेक स्टेशन रास्ते में होते हैं। प्रत्येक स्टेशन पर इंजीनियर और उनके साथ कुछ स्थानीय नौकर रहते हैं।

तेल के नल को सुरक्षित रखने की आवश्यकता होती है। अनेक अरब लोग पलेस्टाइन और ट्रांसजोर्डन में बन्दूक की गोली से नल में छेद कर देते हैं। इससे तेल बह कर नष्ट हो जाता है। पम्प-स्टेशन पर तेल के बहाव को जानने के लिए मापीयंत्र लगे रहते हैं। उससे बहाव और उसके स्थान का जल्द पता लग जाता है। ऐसी दशा में कुछ समय के लिए तेल का बहाव बन्द कर छेद की मरम्मत कर देते हैं। ऐसे नलों से प्रतिवर्ष प्रायः ४० लाख टन तेल बहता है।

हैफा में इस तेल को १६ बहुत बड़े-बड़े टैंकों में रखा जाता है। यहाँ तेल के परिष्कार का एक बहुत बड़ा कारखाना बना है। उसमें तेल की सफाई होती है। सफाई के बाद तेल को जहाजों पर लाद कर भिन्न-भिन्न देशों को भेजते हैं। हैफा की इस तेल की परिष्करणी के चलते भूमध्यसागर में ब्रिटिश समुद्री बेड़े को रखना पड़ता है। अबादान की तेल-परिष्करणी से स्वेज-नहर के पूर्व के ब्रिटिश समुद्री बेड़े को तेल मिलता है।

सिंगापुर में समुद्री बेड़े के लिए जमीन के अन्दर जो तेल की टंकी बनी है, उसमें १० लाख २५'० हजार टन पेट्रोल अँट सकता है। साधारण समय में यह तेल ६ मास के खर्च के लिए काफी होता है।

कच्चे पेट्रोलियम का कुछ उपयोग नहीं है। तेल के परिष्कार से ही पेट्रोलियम ईथर, पेट्रोल, किरासन, ईंधन तेल, स्नेहक तेल, वेसलीन, मोम, पिच और तारकोल प्राप्त होते हैं। परिष्कार की विधि परिश्रमसाध्य और पेचीली होती है। वास्तविक विधि कच्चे तेल की प्रकृति पर निर्भर करती है और इस बात पर निर्भर करती है कि उससे कौन-सा पदार्थ निकालना चाहते हैं। परिष्कार के यंत्र पेचीले, मूल्यवान् और परिश्रमसाध्य होते हैं। ऐसी परिष्करणी के भारत में स्थापित करने का वर्णन अन्यत्र दिया गया है।

छठा अध्याय

रासायनिक रीति से पेट्रोलियम का परिष्कार

आसवन से पेट्रोलियम के जो विभिन्न अंश प्राप्त होते हैं, उनकी रासायनिक रीति से परिष्कार की आवश्यकता होती है; क्योंकि उनमें कुछ ऐसे पदार्थ रहते हैं, जिनका रहना ठीक नहीं है। ये कैसे पदार्थ हैं, यह पेट्रोलियम के उद्गम, प्रकृति और आसवन के विशिष्ट अंश पर निर्भर करता है। इन अंशों में सरलता से ऑक्सीकृत होनेवाले पदार्थ नहीं रहना चाहिए। पेट्रोलियम के विभिन्न अंशों में रेज़िन या एस्फाल्ट नहीं रहना चाहिए। इनमें अन्य अस्थायी पदार्थ भी नहीं रहना चाहिए। पेट्रोल में सौरभिक यौगिकों से कोई हानि नहीं होती, वरन् लाभ ही होता है। इससे पेट्रोल में सौरभिक पदार्थों का रहना अच्छा ही है; पर किरासन में सौरभिक पदार्थ नहीं रहना चाहिए; क्योंकि इससे किरासन की प्रदीप्ति कम हो जाती है। पेट्रोलियम के किसी अंश में गन्धक यौगिकों का रहना बहुत हनिकारक होता है। गंधक सीमित मात्रा से अधिक कभी नहीं रहना चाहिए।

ये अपद्रव्य भौतिक रीतियों से नहीं निकलते। इन्हें विशेष रासायनिक प्रतिकारकों के उपचार से निकालने की आवश्यकता पड़ती है। अतः रासायनिक रीतियों का अवलंबन पेट्रोलियम के परिष्कार के लिए आवश्यक हो जाता है।

सलफ्यूरिक अम्ल उपचार

पेट्रोलियम के परिष्कार में सलफ्यूरिक अम्ल का उपयोग बहुत अधिकता से होता है। परिष्कार के लिए इसका उपयोग पहले-पहल १८५५ ई० में हुआ था। अब इसका उपयोग कुछ कम हो रहा है; क्योंकि स्नेहन तेल के निर्माण में इसके स्थान में विभिन्न विलायकों के द्वारा अनेक पदार्थों का आज उपयोग हो रहा है। बहुत अधिक परिष्कृत तेल प्राप्त करने में आज निर्जल एल्यूमिनियम क्लोराइड का उपयोग हो रहा है।

१९३० ई० तक भंजन से प्राप्त पेट्रोल के परिष्कार में केवल सलफ्यूरिक अम्ल का ही उपयोग होता था। पर, अब इस काम के लिए इसका उपयोग कम हो रहा है; क्योंकि इससे अनेक गुरुभाज निकल जाते हैं और पेट्रोल की औक्टेन-संख्या कम हो जाती है।

सलफ्यूरिक अम्ल के उपचार से गोंद का बनना और रंग का बढ़ना रोका जा सकता है, पर प्रति-ऑक्सीकारकों के उपयोग से भी आज गोंद का बनना रोका जाता है। पेट्रोल में अब रंग डालकर रँगा जाता है। इससे पेट्रोल में रंग के बढ़ने का अब कोई महत्त्व ही नहीं रह गया है।

यदि पेट्रोलियम में गन्धक है तो इसका भी परिष्कार सलफ्यूरिक अम्ल द्वारा होता है। किरासन के परिष्कार में तो सलफ्यूरिक अम्ल विशेष रूप से और अधिक मात्रा में उपयुक्त होता है। इससे पेट्रोलियम के रंग और गन्ध भी निकल जाते हैं, इससे सौरभिक यौगिक भी निकल जाते हैं और किरासन से इनका निकलना आवश्यक भी है, नहीं तो किरासन की प्रदीप्ति की कमी हो जाती है।

पेट्रोलियम में अपद्रव्य कम मात्रा में ही रहते हैं। उनके दूर करने में सलफ्यूरिक अम्ल की अपेक्षया अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है। यदि अधिक मात्रा का उपयोग न हो, तो वे पूर्णतया नहीं निकलते। अम्ल से अन्य उपस्थित हाइड्रोकार्बनों में भी विशिष्ट परिवर्त्तन होते हैं।

निम्न ताप पर अल्प समय के संस्पर्श से पैराफीन और नैफ्थीन हाइड्रो-कार्बन सान्द्र सलफ्यूरिक अम्ल से आक्रान्त नहीं होते। पर, कुछ ऐसे हाइड्रो-कार्बन हैं जो सान्द्र अम्ल में घुलते हुए देखे गये हैं। आइसोब्युटेन ऐसे अम्ल में कुछ घुलता है। पैराफीन के निम्न सदस्य—आइसोब्युटेन तक—सधूम सलफ्यूरिक अम्ल में घुलते हैं। पर, यह तभी होता है जब वे लम्बे समय तक प्रक्षुब्ध होते रहते हैं। समय, ताप और सान्द्रता की वृद्धि से अवशोषण बढ़ जाता है। सम्भवतः यहाँ आक्सीकरण और सल्फोनीकरण होते हैं। कुछ लोगों ने सल्फोनिक अम्ल-प्रसून की उपस्थिति स्पष्ट रूप से पाई है।

सामान्य ताप पर और अल्प मात्रा से सान्द्र सलफ्यूरिक अम्ल से सौरभिक हाइड्रो-कार्बन आक्रान्त नहीं होते। सधूम सलफ्यूरिक अम्ल से यदि ताप की वृद्धि की जाय तो उसका सल्फोनीकरण होता है। यदि पेट्रोलियम में सौरभिक और ओलिफीन दोनों विद्यमान हों तो उनसे अलकलीकरण हो सकता है। सान्द्र सलफ्यूरिक अम्ल से भी बहुत निम्न ताप पर अलकलीकरण होता हुआ देखा गया है। बेंज़ीन और हेक्सिलीन से हेक्सिल बेंज़ीन और फिर उससे मेथिल-ब्युटिल फेनील मिथेन पाये गये हैं।

असंतृप्त हाइड्रो-कार्बनों पर सलफ्यूरिक अम्ल की क्या क्रियाएँ होती हैं, यह ठीक-ठीक मालूम नहीं है। ऐसा समझा जाता है कि इससे एस्टर बनता है और पुरुभाजन होता है। यह भी समझा जाता है कि ओलिफीन पहले अलकोल सलफ्यूरिक अम्ल बनते और बाद में उसके जलांशन से अलकोहल बनता है। यह एक क्रिया होती है। दूसरी क्रिया में ओलिफीन का पुरुभाजन होता है। उच्च अणुभारवाले यौगिकों से पुरुभाजन अधिक होता और निम्न अणुभारवाले यौगिकों से अलकोहल अधिक बनता है।

भंजित अंशों से गन्धक के निकालने अथवा जल-सा सफेद पेट्रोल प्राप्त करने में सलफ्यूरिक अम्ल का उपयोग बहुत आवश्यक है। गोंद बनना रोकने के लिए ऐसे पेट्रोल में प्रति-ऑक्सीकारक डाला जाता है। अम्ल की क्रिया से ओलिफीन से तारकोल नहीं प्राप्त होता।

ओलिफीन के निकल जाने से पेट्रोल के बहुमूल्य (non-knocking) अवयव निकल जाते हैं। इस कारण औक्टेन-संख्या घट जाती है और इससे एक दूसरा लाभ भी होता है। इस प्रकार से उपचारित तेल का लेड टेट्रा-एथिल पर अधिक प्रभाव पड़ता है। सम्भवतः ओलिफीन के साथ-साथ गंधक के निकल जाने से ऐसा होता है। कुछ दशाओं में अम्ल से औक्टेन-संख्या बढ़ी हुई पाई गई है।

गंधक यौगिकों पर अम्ल की क्रिया दो प्रकार से होती है। एक तो वह गन्धक-यौगिकों को आक्सीकृत कर सकता है और दूसरा गन्धक-यौगिकों को घुला सकता है। ये दोनों ही तनुता से प्रभावित होते हैं। अतः अम्ल की सान्द्रता का अधिक प्रभाव पड़ता है।

मौरेल और एगलौफ (Morrel and Egloff) ने गन्धक को निकालने के लिए विभिन्न तनुता के सलफ्यूरिक अम्ल के उपयोग से निम्नलिखित फल प्राप्त किया था—

सान्द्र सलफ्यूरिक अम्ल प्रतिशत	पाउण्ड प्रति बैरेल	गन्धक की प्रतिशत मात्रा
१००	१२'०	०'३२
९०	१३'३	०'३९
८०	१५'०	०'५१
७०	१७'०	०'६८
६०	२०'०	०'७५
मूल पेट्रोलियम	—	०'८८

उन्होंने यह भी देखा कि सान्द्र अम्ल की मात्रा की वृद्धि से गन्धक निकलने की दर में कमी होती है, औक्टेन-संख्या का ह्रास शीघ्रता से होता है, मल अधिक बनता है और पुरुभाज की हानि होती है।

पेट्रोलियम के विभिन्न अंशों को अम्ल के साथ अलग-अलग साधित कर और उन्हें मिलाकर प्राप्त करना अच्छा होता है। विभिन्न अंशों में गन्धक की मात्रा भिन्न-भिन्न होने से कम अम्ल के उपयोग से ही काम चल जा सकता है।

उच्च ताप से आक्सीकरण और अवकरण क्रियाएँ अधिक होती हैं। इससे अम्ल और हाइड्रोकार्बन कुछ नष्ट हो जाते हैं। उच्च ताप से पुरुभाजन भी अधिकता से होता है। इस कारण उच्च ताप से यथासम्भव बचना चाहिए। इसके लिए अच्छा होता है कि अम्ल और पेट्रोलियम अंशों को ठंडा कर उन्हें मिलाया जाय। इस उपचार के लिए एक ओर से पेट्रोलियम को लाते और दूसरी ओर से अम्ल को लाते हैं। जब क्रियाएँ दोनों के बीच सम्पन्न हो जाती हैं, तब केन्द्रापसारित्र में मल को अलग कर लेते हैं।

ऐसी दशा में अम्ल गन्धक-यौगिकों को घुलाकर निकाल देता है। कम अम्ल और निम्नताप के कारण पुरुभाजन और सल्फोनीकरण भी बहुत कम होता है। इसके लिए २०° से ६०° फ० अधिक वांछित है। अम्ल और पेट्रोलियम के संस्पर्श का समय भी जहाँ तक सम्भव हो, कम रहना चाहिए। अधिक देर तक संस्पर्श रहने से पेट्रोलियम के संघटन बहुत-कुछ परिवर्तित हो जाते हैं। इस संबंध में जो आँकड़े प्राप्त हुए हैं, उनसे स्पष्ट रूप से मालूम हो जाता है कि संस्पर्श के समय की अल्पता लाभकारक है।

अम्ल द्वारा उपचार की दक्षता नापने की किसी प्रामाणिक रीति के अभाव में यह कहना कठिन है कि कौन रीति अच्छी है। अम्ल के उपचार के बाद क्षार से धोने और

कभी-कभी मिट्टी के संसर्ग में लाने से जटिलता और बढ़ जाती है। अम्ल द्वारा उपचार का आसवन से बड़ा घनिष्ठ संबंध है। यदि परिष्कार अच्छा हुआ है तो आसवन में सरलता होती है और यदि परिष्कार ठीक नहीं हुआ तो आसवन में कठिनता होती है। परिष्कार में यदि कोई कठिनता है तो आसवन में भी साधारणतया यह कठिनता पाई जाती है।

अम्ल के उपचार से जो मल प्राप्त होता है, वह बहुत पेचीला होता है। ओलिफीन से एस्टर और अलकोहल बनते हैं। सौरभिक, नैफ्थीन और फीनोल से सल्फोनिक यौगिक बनते हैं और नाइट्रोजन क्षारों से लवण बनते हैं। इसमें नैफ्थीनिक अम्ल, गन्धक-यौगिक, एस्फाल्टीय पदार्थ भी घुलकर आ जाते हैं। आक्सीकरण और अवकरण प्रतिक्रियाओं के उत्पाद, स्कंधित रेजिन, विलेय हाइड्रोकार्बन, जल और मुक्त अम्ल भी इसमें रहते हैं। इनके अनुपात विभिन्न नमूनों में विभिन्न होते हैं और परिष्कार की परिस्थिति से भी बदलते हैं।

मल में अम्ल होने के कारण उनका अपवहन कुछ कष्टकर होता है। इसे तनु करके अम्ल को बैठने के लिए छोड़ देते हैं। हलके तेलों के मलों को, जो कोलतार-सा चञ्चल अविलेय होता है, जलाकर सरलता से नष्ट कर दे सकते हैं। भारी तेलों से प्राप्त मल दानेदार और अर्द्ध-ठोस होते हैं। उनका अपवहन कुछ कठिन होता है। एस्फाल्ट के निर्माण में उनके उपयोग का सुझाव रखा गया है। मल को जलाकर सल्फर-डायक्साइड बनाने का भी सुझाव रखा गया है। सल्फर-डायक्साइड को आक्सीकरण से सल्फर-ट्रायक्साइड में परिणत कर सलफ्यूरिक अम्ल बनाने का प्रयत्न हुआ है।

एस्फाल्ट का दूर करना

कच्चे पेट्रोलियम में एस्फाल्ट रहता है। कुछ एस्फाल्ट आसुत में आ जाता है और शेष अवशिष्ट भाग में रह जाता है। पेट्रोलियम के आक्सिजन और गंधक एस्फाल्ट और रेजिन के रूप में ही रहते हैं।

सलफ्यूरिक अम्ल से एस्फाल्ट निकल जाता है। कैसे निकलता है, क्या क्रियाएँ होती हैं, इसका ठीक-ठीक पता नहीं है। यहाँ रासायनिक और भौतिक प्रतिक्रियाएँ दोनों ही होती हैं; इसमें कोई सन्देह नहीं है।

यहाँ अल्प मात्रा में अलकली विलयन अथवा जल से मल के निक्षिप्त होने में सहूलियत होती है। इससे मालूम होता है कि बिखरे हुए कलिल पदार्थों का अवक्षेपण यहाँ होता है। एक का मत है कि पेट्रोलियम के परिष्कार में एस्फाल्टीय पदार्थों का अम्ल द्वारा अवक्षेपण होता है। एक दूसरे का मत है कि बिखरे हुए एस्फाल्टीय पदार्थों का अम्ल द्वारा अवशोषण होता है। किरासन तेल के रंग को रंगमापी रीति से मापा गया था, उससे पता लगता है जो एस्फाल्ट तेल में बिखरा हुआ रहता है, वह अवक्षिप्त एस्फाल्ट से भिन्न होता है। परिष्कार से गन्धक के अम्ल की मात्रा कम हो जाती है और उससे सल्फर-डायक्साइड निकलता है। इससे इस बात की पुष्टि होती है कि परिष्कार में प्रधानतया रासायनिक क्रियाएँ होती हैं। यह सम्भव है कि इसमें कलिल पदार्थों का अवक्षेपण भी होता है।

पैराफिन आसुत से मोम निकालने के लिए प्रति बैरेल १० से २५ पाउण्ड अम्ल की आवश्यकता होती है। ट्रांसफॉर्मर तेल के लिए प्रति बैरेल ५० से २५० पाउण्ड अम्ल की और सफेद तेल के लिए प्रति बैरेल २५० पाउण्ड तक अम्ल की आवश्यकता पड़ती है। सामान्य स्नेहक तेल के लिए औसत १५ पाउण्ड अम्ल की आवश्यकता पड़ती है। यदि तेल में नैफ्थीनिक और एस्फाल्टीय पदार्थ अधिक हैं तो अधिक अम्ल की आवश्यकता पड़ सकती है। यदि अन्य रीतियों के साथ अम्ल के उपयोग की आवश्यकता हो तो प्रति बैरेल एक से दो पाउण्ड अम्ल से काम चल सकता है।

अम्ल की अधिक मात्रा से अनावश्यक पदार्थ अवश्य निकल जाते हैं; पर तेल के आवश्यक हाइड्रोकार्बन पर भी आक्रमण होता है और वह कुछ निकल जाता है। अम्ल की मात्रा की कमी से अपद्रव्य पर्याप्त मात्रा में नहीं निकलते, ताप की वृद्धि से रंग भी गाढ़ा होता है। यदि ताप बहुत नीचा है, तो अम्ल से तारकोल पूर्णतया नहीं निकलता। अम्ल से उपचार के पूर्व हलके नैफ्था अथवा प्रोपेन के डालने से तारकोल के बैठने में सहायता मिलती है। प्रोपेन को बिना गरम किये निकाल सकते हैं। गरम करना अच्छा नहीं है; क्योंकि गरम करने से एस्टर का विच्छेदन हो रंग गाढ़ा हो जाता है।

यदि अपेक्षया अल्प मात्रा में अम्ल को तेल के संसर्ग में लाकर प्रक्षुब्ध कर केन्द्रापसारित्र में अलग करने का प्रबन्ध न हो तो थोक में अम्ल डालकर प्रक्षुब्ध किया जा सकता है। ऐसे प्रकार्य के लिए बड़े-बड़े ऊर्ध्वाधार-पात्र बने हुए हैं, जिनमें कई हजार बैरेल तेल अँट सकता है। इन पात्रों के पेंदे शंक्वाकार होते हैं, जहाँ से मल निकाला जा सकता है। यहाँ कई घण्टे तक संसर्ग में रखने की आवश्यकता होती है। प्रक्षुब्ध करने के लिए या तो वायु को प्रवाहित करते अथवा चक्रण-पम्प का उपयोग करते हैं। यदि तेल और अम्ल के बीच पूर्णतया संस्पर्श हो जाय तो इसके लिए कुछ ही मिनट पर्याप्त हैं। अम्ल तारकोल का शीघ्र अलग होना आवश्यक है, नहीं तो वह फिर घुलकर रंग ला देता है और फिर अधिक श्यान हो जाने के कारण कठिनता उत्पन्न करता है।

थोड़ा पानी डालकर प्रक्षुब्ध करने से अवक्षेपण में सहायता मिलती है। मल को फिर बैठ जाने के लिए छोड़ देते हैं। इस प्रकार अलग हुआ 'आम्लिक तेल' को पानी से धोकर दूसरे पात्र में हस्तान्तरित कर देते हैं। क्षार से धोने के पूर्व ऐसा करना आवश्यक है, नहीं तो पायस बन जाने की सम्भावना रहती है।

क्षार-धावन के लिए श्यान तेल के लिए १० से २० प्रतिशत सान्द्रण के सोडियम-हाइड्राक्साइड का विलयन उपयुक्त हो सकता है। यहाँ गरम करने की आवश्यकता नहीं होती, यहाँ क्षार की मात्रा आवश्यक मात्रा से अधिक रहती है और उसे पुनः प्राप्ति का उपचार होता है। श्यान तेलों के लिए क्षार के अधिक तनु विलयन का उपयोग होता है। यहाँ भाप द्वारा थोड़ा गरम भी किया जाता है। क्षार की मात्रा अधिक नहीं रहने से उसकी पुनः प्राप्ति की आवश्यकता नहीं पड़ती। कभी-कभी पायस के तोड़ने के लिए किसी पदार्थ के डालने की आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए जलीय अलकोहल का इस्तेमाल होता है। अन्त में पानी से धोकर वायु के प्रवाह से तेल को सुखाते हैं।

आजकल अम्ल के उपचार के बाद क्षार का उपयोग नहीं होता। अम्ल तारकोल को आजकल नहीं निकालते। मिट्टी द्वारा अवशोषण से अम्ल निकाला जाता है। इससे तेल का निराकरण होकर रंग दूर हो जाता है।

एल्युमिनियम-क्लोराइड

तेल के परिष्कार के लिए एल्युमिनियम क्लोराइड का भी आज उपयोग होता है। यह बहुत क्रियाशील पाया गया है। इससे ओलिफीन पुरुभाजन से और गंधक यौगिक योगशील यौगिक बनकर निकल जाते हैं। गोंद बननेवाले पदार्थ भी गंधक के साथ ही निकल जाते हैं। इसे केवल क्षार के साथ धोने की आवश्यकता होती है। इस विधि में ह्रास बहुत अधिक होता है। यहाँ रासायनिक क्रिया बड़ी पेचीली है। अनेक गौण क्रियाएँ यहाँ होती हैं। इससे पेचीलापन और बढ़ जाता है। विभिन्न हाइड्रोकार्बनों पर एल्युमिनियम क्लोराइड की क्रिया का उल्लेख पूर्व में हो चुका है। इससे गन्धक के यौगिकों का निष्कासन कितना होता है, इसका अध्ययन बहुत-कुछ हुआ है। एल्युमिनियम क्लोराइड का उपयोग केवल उच्चकोटि के स्नेहक तैल के निर्माण में ही होता है।

जिंक-क्लोराइड

पेट्रोलियम के परिष्कार में जिंक-क्लोराइड का भी उपयोग अब अधिकता से हो रहा है। इससे गोंद बननेवाले पदार्थ और मरकैप्टन गन्धक सरलता से निकल जाते हैं। यदि पेट्रोलियम के वाष्प को जिंक-क्लोराइड के प्रबल जलीय विलयन में ले जायँ तो वे निकल जाते हैं। इसके लिए उपयुक्त ताप १५०° से १७५° सें० के बीच है। इस ताप पर दो से बारह सेकंड का संसर्ग पर्याप्त है। यहाँ क्रिया प्रधानतया उत्प्रेरकीय होती है। यह पुरुभाजन में सहायता करता है। इससे पेट्रोलियम का ह्रास बहुत अल्प होता है। इससे मरकैप्टन जिंक-सल्फाइड में परिणत हो जाते हैं। जिंक-क्लोराइड का कुछ अंश हाइड्रोजन-सल्फाइड अथवा जल से प्रतिक्रियित हो नष्ट हो जाता है। इसकी विभिन्न क्रियाओं को इस प्रकार समीकरण द्वारा प्रकट कर सकते हैं—

मरकैप्टन के साथ क्रिया इस प्रकार होती है—

$$ZnCl_2 + 2RSH = ZnS + R_2S + 2HCl$$
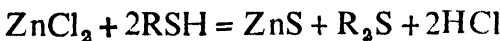
हाइड्रोजन-सल्फाइड के साथ क्रिया इस प्रकार होती है—

$$ZnCl_2 + H_2S = ZnS + 2HCl$$
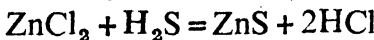
जल के साथ क्रिया इस प्रकार होती है—

$$ZnCl_2 + H_2O = Zn(OH)Cl + HCl$$
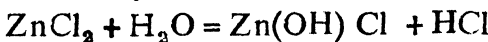
जिंक-क्लोराइड के साथ उपचार विशिष्ट पात्रों में होता है, जिसपर जिंक-क्लोराइड की क्षारक क्रिया न होती हो।

मधुकरण-विधि

पेट्रोल में हाइड्रोजन-सल्फाइड और मरकैप्टन का रहना बहुत आपत्तिजनक है। इनमें तीव्र अरुचिकर गंध होती है और ये पात्रों को आक्रान्त भी करते हैं। ऐसे पेट्रोल को,

जिनमें ये गन्धक-यौगिक रहते हैं; आम्लिक कहते हैं। गन्धक-यौगिकों के निकालने की विधि को 'मधुकरण-विधि' कहते हैं।

क्षार-धावन से हाइड्रोजन-सल्फाइड और कुछ सीमा तक निम्नतर मरकैप्टन निकल जाते हैं। अनेक रीति मालूम हैं, जिनसे मरकैप्टेन के आक्सीकरण से वे एल्किल डाइ-सल्फाइड में परिणत हो जाते हैं। ये एल्किल-डाइसल्फाइड प्रायः उसी ताप पर उबलते हैं, जिस ताप पर पेट्रोल उबलता है। अतः आसवन से पृथक् नहीं किये जा सकते। यदि ये पेट्रोल में रह जायँ तो मधुकरण-विधि से गन्धक की मात्रा कम नहीं होती। अन्तर केवल यह होता है कि हाइड्रोजन-सल्फाइड और मरकैप्टन के स्थान में अब डाइसल्फाइड रहता है।

डाक्टर-रीति

डाक्टर-रीति में डाक्टर का विलयन इस्तेमाल होता है। डाक्टर का विलयन सोडियम-प्लम्बाइट का क्षारीय विलयन है जिसमें अल्प मात्रा में मुक्त गंधक रहता है। इसके व्यवहार से लेड-सल्फाइड का काला अवक्षेप निकल आता है। इससे पेट्रोल की गंध सुधर जाती और उसका मधुकरण हो जाता है।

पेट्रोलियम को डाक्टर उपचार के पहले क्षार से धोते हैं। इससे हाइड्रोजन-सल्फाइड और कुछ निम्नतर मरकैप्टन निकल जाते हैं। इससे सोडियम-सल्फाइड बनता है, जो जल में विलेय होकर जलांशित हो जाता है। विभिन्न मरकैप्टन विभिन्न मात्रा में निकलते हैं। निम्नतर मरकैप्टन अधिक मात्रा में और उच्चतर मरकैप्टन अपेक्षया अल्प मात्रा में।

क्षार-धावन के बाद डाक्टर विलयन के उपचार से उदासीन लेड मरकैप्टन बनता है। इस क्रिया के समीकरण निम्नलिखित हैं—

$$Na_2PbO_2 + 2RSH = Pb(RS)_2 + 2NaOH$$
$$Pb(RS)_2 + S = PbS + R_2S_2$$
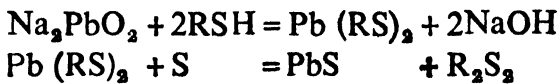
डाक्टर उपचार में गंधक डालने की आवश्यकता होती है। इससे प्रतिक्रिया-मिश्रण का रंग पीला से नारंगी, फिर लाल, फिर धुँधला कपिल होता है और अन्त में काला हो जाता है। यह रंग-परिवर्त्तन अनेक माध्यमिक यौगिकों के बनने के कारण होता है। लेड मरकैप्टाइड से लेड सल्फाइड, फिर लेड थायोमरकैप्टाइड और फिर अन्त में लेड पोलि-सल्फाइड बनते हैं। इन माध्यमिक यौगिकों की उपस्थिति वस्तुतः देखी गई है। यहाँ भास्मिक लेड मरकैप्टाइड भी बनते हैं। पर प्रमुख प्रतिक्रिया वही होती है, जिससे लेड-सल्फाइड बनता है—

$$Pb(RS)_2 + S = PbS + R_2S_2$$
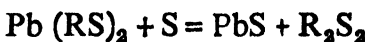
जब यह क्रिया पूर्ण हो जाती है, तब हाइड्रोजन सल्फाइड और कुछ क्रियाशील मरकैप्टन निकल जाते और तेल मीठा हो जाता है।

गंधक डालने पर ही तेल का मीठा होना शुरू होता है। इस समय जो लेड सल्फाइड बनता है, वह बहुत बारीक होता है। इतना बारीक कि उसके नीचे बैठने में कई

घण्टे लग जाते हैं। यह सम्भव है कि इसे बैठने में ही अनेक मरकैप्टन अवशोषित हो निकल जाते हैं। मरकैप्टन का ऐसा अवशोषण वास्तव में देखा गया है।

यह देखा गया है कि यदि पेट्रोल में स्थायी लेड-सल्फाइड निलम्बित हो तो उसमें और गंधक डालने से निलम्बन टूट जाता है। लेड मरकैप्टन से गन्धक की प्रतिक्रिया होकर पोलिसल्फाइड बनता है। सम्भवतः इस पोलिसल्फाइड के बनने के कारण ही डाक्टर-विधि से तेल का मधुकरण होता है।

तेल में जो सल्फाइड रह जाता है, वह आपत्तिजनक होता है। ऐसे तेल के प्रकाश में व्यक्त किरण से रंग आ जाता है और धुँधलापन बढ़ जाता है। इसका कारण गंधक अथवा अल्कोल-डाइसल्फाइड की उपस्थिति समझा जाता है। इस प्रतिक्रिया में नार्मल-प्रोपिल सल्फाइड विशेष रूप से सक्रिय पाया गया है। इसका धुँधलापन उपयुक्त पदार्थ डालकर रोका भी जा सकता है। इसके लिए लेसिथिन बहुत उपयोगी और दक्ष पाया गया है।

पेट्रोल में औक्टेन-संख्या की वृद्धि के लिए लेड टेट्रा-एथिल डाला जाता है। लेड टेट्रा-एथिल के प्रभाव को गंधक के यौगिक कम कर देते हैं। इनसे औक्टेन-संख्या गिर जाती है। डाक्टर-विधि से मधुकृत पेट्रोल की औक्टेन-संख्या एल्किल पोलिसल्फाइड के कारण गिर जाती है।

गंधक के यौगिकों से आक्सीकरण-निरोधकों पर भी प्रभाव पड़ता है। मरकैप्टन और पोलिसल्फाइड का सबसे अधिक हानिकारक प्रभाव पड़ता है। पोलिसल्फाइड का प्रभाव अधिक घातक होता है। इस कारण यह आवश्यक है कि डाक्टर-उपचार में न्यूनतम गन्धक का उपयोग हो।

डाक्टर-विलयन में पात्र से निकलने पर मुक्त अलकली के साथ लेड सल्फाइड रहता है। इसे भाप से तप्त पात्र में ले जाकर उसमें वायु के प्रवाह से डाक्टर-विलयन का पुनर्जनन हो जाता है जिसे फिर उपयुक्त कर सकते हैं।

डाक्टर-विलयन के साथ प्रतिक्रिया बड़ी पेचीली होती है। यहाँ अनेक प्रतिक्रियाएँ साथ-साथ होती हैं। कुछ लोगों का मत है और इसकी पुष्टि भी प्रयोगों से हुई है कि लेड-सल्फाइड-लेड प्लम्बेट में परिणत हो जाता है।

$$PbS + 4NaOH + 2O_2 = Na_2PbO_2 + Na_2\ SO_4 + 2H_2O$$

लेड-प्लम्बाइट-बनने के लिए पहले लेड सल्फाइड लेड सल्फाइड में परिणत हो जाता है, उसके साथ-साथ सोडियम-थायोसल्फेट भी बनता है। इस सोडियम थायोसल्फेट से फिर सोडियम सल्फाइट और सोडियम सल्फाइड बनते हैं।

$$2PbS + 2O_2 + 6\ NaOH = 2Na_2\ PbO_2 + Na_2\ S_2O_3 + 3H_2O$$
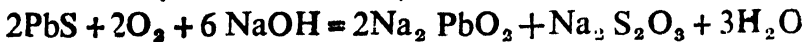
यहाँ लेड की क्षति बहुत अल्प होती है। केवल गन्धक और क्षार खर्च होते हैं।

लेड-सल्फाइड-रीति

लेड-सल्फाइड मरकैप्टन को अवशोषित कर लेता है। इससे केवल लेड-सल्फाइड से भी पेट्रोलियम का मधुकरण हो सकता है। लेड-सल्फाइड की उपस्थिति में वायु द्वारा

मरकैप्टन के आक्सीकरण से डाइसल्फाइड बनता है। यहाँ प्रबल क्षार की उपस्थिति में लेड-सल्फाइड के निलम्बन में वायु के प्रवाह से मरकैप्टन आक्सीकृत हो लेड-सल्फाइड और डाइसल्फाइड बनता है। इससे पेट्रोल का मधुकरण हो जाता है। यदि मरकैप्टन की मात्रा अधिक है तो अधिक वायु की आवश्यकता पड़ती है।

यहाँ प्लम्बाइट की मात्रा अधिक नहीं बननी चाहिए। यदि प्लम्बाइट की मात्रा अधिक हो तो सोडियम सल्फाइड डालकर उसकी मात्रा कम कर सकते हैं। अधिक मात्रा में गन्धक भी नहीं बनना चाहिए। अधिक गन्धक का रहना ठीक नहीं है। वायु द्वारा आक्सीकरण भी नियंत्रित रहना चाहिए। यह लेड-सल्फाइड प्रधानतया उत्प्रेरक का काम करता है। यहाँ केवल आक्सीजन खर्च होता है। कुछ क्षार सोडियम सल्फेट और सोडियम थायोसल्फेट के रूप में नष्ट हो जाता है।

कॉपर-क्लोराइड-रीति

क्यूप्रिक लवणों में आक्सीकरण की क्षमता होती है। ये मरकैप्टन को डाइसल्फाइड में परिणत कर देते हैं। यहाँ गन्धक की आवश्यकता नहीं होती। इससे पोलिसल्फाइड नहीं बनता। क्यूप्रिक-क्लोराइड के विलयन का मधुकरण के लिए उपयोग हुआ है। इस काम के लिए कॉपर-सल्फेट (तूतिया) को सोडियम क्लोराइड के विलयन में डालने से क्यूप्रिक क्लोराइड बनता है। क्यूप्रिक क्लोराइड का लवण के प्रबल विलयन की उपस्थिति में क्रिया होती है। क्यूप्रस् क्लोराइड का, लवण के विलयन में विलेय होने के कारण, अवक्षेपण नहीं होता। पेट्रोल में कुछ ताँबा रह जाता है। सोडियम सल्फाइड के जलीय विलयन द्वारा धोकर वह निकाला जा सकता है। क्यूप्रस्-क्लोराइड में वायु के प्रवाह से वह क्यूप्रिक क्लोराइड में परिणत हो जाता है और तब फिर उपयोग में आ सकता है।

हाइपोक्लोराइट-रीति

सोडियम या कैलसियम हाइपोक्लोराइट से भी पेट्रोलियम का मधुकरण हो सकता है। इसका मुक्त गन्धक पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। थायोफीन इससे शीघ्र आक्रान्त हो जाता है। ७ से ८ पी-एच् में थायोफीन का गन्धक सल्फेट में परिणत हो जाता है। हाइपोक्लोराइड से उपचार के पहले क्षार से मुक्त गन्धक को निकाल लेना चाहिए। क्षार से कुछ निम्नतर मरकैप्टन भी निकल जाते हैं। सल्फाइड आक्सीकृत हो सल्फोन बनते हैं। निम्न अणुभारवाले सल्फोन जल में विलेय है। मरकैप्टन इससे आक्सीकृत हो पहले डाइसल्फाइड बनते हैं और पीछे धीरे-धीरे सल्फोनिक और सलफ्यूरिक अम्ल में परिणत हो जाते हैं। आक्सीकरण का नियंत्रण संस्पर्श-काल, हाइपोक्लोराइट-सान्द्रण और विलयन-क्षारीयता से होता है। क्लोरीकरण-प्रतिक्रिया को रोकने और अम्ल के निराकरण के लिए प्रति लिटर १ ग्राम मुक्त क्षार रहना चाहिए। तनुता से आक्सीकरण की तीव्रता बढ़ती है; क्योंकि जल से हाइपोक्लोराइट का जलांशन हो मुक्त हाइपोक्लोरस अम्ल बनता है जो अधिक क्रियाशील आक्सीकारक होता है। विलयन में हाइपोक्लोराइट की मात्रा प्राप्य क्लोरीन के विचार से ०.२ से ०.३ नार्मल रहनी चाहिए।

यह रीति पेट्रोलियम से प्राप्त विभिन्न अंशों के मृदुकरण में ही उपयुक्त होती है। भंजन से प्राप्त अंशों में असंतृप्त हाइड्रोकार्बन होने के कारण उनके और हाइपोक्लोरस अम्ल के बीच रासायनिक प्रतिक्रिया होकर क्लोरोहाइड्रिन बनने की सम्भावना रहती है।

गन्धक-यौगिक

पेट्रोलियम आसुत में लेश में मुक्त गन्धक रहता है, अधिकांश गन्धक यौगिक रूप में रहता है। हाइड्रोजन सल्फाइड, मरकैप्टन, सल्फाइड, डाइसल्फाइड, थायोफीन, सल्फेट, सल्फेनिक अम्ल, सलफ्यूरिक अम्ल और कार्बन डाइसल्फाइड पाये गये हैं। अधिकांश परिष्कार-प्रतिकारकों का गन्धक पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। डाक्टर विलयन से ही गन्धक आक्रान्त होता है। इससे गन्धक का बनना रोकना चाहिए। कार्बन-काल के निर्माण में पेट्रोलियम गैसों में गन्धक नहीं रहना चाहिए। आसवन से गन्धक हाइड्रोजन सल्फाइड में परिणत हो जाता है। थोड़ा हाइड्रोजन-सल्फाइड जलीय क्षार से सरलता से दूर किया जा सकता है।

यदि तेल में गंधक हो और ऐसे तेल का भंजन हो तो भंजन से पहले हाइड्रोजन-सल्फाइड को निकाल देना चाहिए।

गैसों से हाइड्रोजन-सल्फाइड निकालने के लिए अनेक प्रतिकारकों का व्यवहार होता है। निम्न ताप पर वायु के बुलबुले देने से अवशोषित हाइड्रोजन-सल्फाइड निकल जाता है। उच्च ताप पर गरम करने से भी हाइड्रोजन सल्फाइड निकल जाता है। सलफ्यूरिक अम्ल अथवा निर्जल एल्युमिनियम क्लोराइड से मरकैप्टन निकल जाता है। गरम करने से मरकैप्टन ओलिफीन और हाइड्रोजन-सल्फाइड में परिणत हो जाता है। यदि उत्प्रेरक उपस्थित हों तो थायो-ईथर भी बनते हैं। एल्युमिनियम क्लोराइड से गन्धक यौगिक योगशील यौगिक बनते हैं। इससे सल्फाइड और डाइसल्फाइड भी निकल जाते हैं। चक्रीय सल्फाइड अम्ल में घुलकर निकल जाते हैं। हाइपोक्लोराइट से सल्फाइड सल्फोन में परिणत हो जाता है जो जल में विलेय होता है। डाइसल्फाइड सल्फोनिक और सलफ्यूरिक अम्ल में बदल जाते हैं। थायोफीन का सल्फोनीकरण होकर विलेय सल्फोनिक अम्ल बनता है। सोडियम हाइपोक्लोराइट से थायोफीन नहीं निकलता।

ठोस पर गन्धक यौगिकों के अधिशोषण से भी उन्हें दूर कर सकते हैं। इसके लिए जेल, फुलर-मिट्टी और बौक्साइट इस्तेमाल हुए हैं। बड़ी मात्रा में भी बौक्साइट का उपयोग हुआ है। गन्धक यौगिकों के उत्प्रेरकीय हाइड्रोजनीकरण से भी गन्धक को हाइड्रोजन सल्फाइड में परिणत कर दूर करने की चेष्टाएँ हुई हैं। निकेल की उपस्थिति में गन्धक यौगिकों का विच्छेदन होता हुआ देखा गया है। इससे पेट्रोलियम का विच्छेदन नहीं होता। पर यहाँ निकेल बड़ी शीघ्रता से विषाक्त हो जाता है। प्राकृतिक सिलिकेट, बौक्साइट और प्रस्तुत एल्युमिना भी उत्प्रेरक का काम देता है। ३०० से ४००° श० पर संस्पर्श से मरकैप्टन, सल्फाइड और डाइसल्फाइड विच्छेदित हो जाते हैं; पर थायोफीन विच्छेदित नहीं होता।

छठा अध्याय (क)

भौतिक रीति से पेट्रोलियम का परिष्कार

पेट्रोलियम के परिष्कार की भौतिक रीतियाँ सस्ती होती हैं और उनका नियंत्रण सरल और निश्चित होता है। इसमें पेट्रोलियम की हानि न्यूनतम होती है। भौतिक रीतियों से जो अवशिष्ट भाग बच जाता है, वह यद्यपि उच्चकोटि का नहीं होता, तथापि अधिक उपयोगी होता है। भौतिक रीतियों में अधिशोषण, प्रवृत्य विलयन और अवक्षेपण अधिक महत्त्व के हैं। प्रशीतन के साथ मणिभीकरण का भी उपयोग हुआ है। आसवन का वर्णन अन्यत्र हुआ है।

अधिशोषण

कुछ पदार्थों में रंगों के अवशोषण की क्षमता होती है। ऐसे पदार्थों के उपयोग से पेट्रोलियम के परिष्कार का बहुत वर्षों से व्यवहार होता आ रहा है। ऐसे पदार्थों में हड्डी का कोयला अथवा जान्तव-काल एक महत्त्व का पदार्थ है। फुलर मिट्टी सदृश मिट्टियों का उपयोग भी पुराना है। इनके अतिरिक्त, सक्रियित कोयला और सिलिकाजेल भी तेल के परिष्कार में उपयुक्त हुए हैं।

पेट्रोलियम पर फुलर मिट्टी और सक्रियित कोयले का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण प्रभाव रंग को दूर करना है। इससे मालूम होता है कि ऍस्फाल्टीय और रेजिन पदार्थ निकल जाते हैं। इसकी पुष्टि इससे भी होती है कि इस प्रकार से परिष्कृत पेट्रोलियम में आक्सिजन की मात्रा कम हो जाती है और हाइड्रोजन की मात्रा बढ़ जाती है। कुछ लोगों ने पेट्रोलियम के पारच्यवन से प्राप्त फुलर मिट्टी में रेजिन पाया है। इनके अतिरिक्त फुलर मिट्टी से नैफ्थीनिक अम्ल भी शीघ्र अधिशोषित हो जाते हैं। फुलर मिट्टी से नाइट्रोजन यौगिक भी पूर्णतया निकलते देखे गये हैं।

बौक्साइट से भी गन्धक यौगिक निकल जाते हैं। प्रति बैरेल ३६० पाउण्ड बौक्साइट से गन्धक यौगिकों की मात्रा ०.१३४ से ०.०२ प्रतिशत हो जाती है। हाइड्रोकार्बन भी बौक्साइट से अधिशोषित हो जाते हैं। पर ये अधिशोषित हाइड्रोकार्बन फिर शीघ्रता से निकल भी जाते हैं। रेज़िन और ऍस्फाल्ट के लिए कार्बन डाइसल्फाइड, बेंज़ीन, ईथर और क्लोरोफार्म-सदृश अधिक दक्ष विलायक की आवश्यकता पड़ती है। फुलर मिट्टी से पुरुभाजन या इसी प्रकार की अन्य क्रियाएँ होती हैं जिससे अधिशोषण की प्रतिक्रिया उत्क्रमणीय नहीं होती। ओलिफीन का पुरुभाजन होता हुआ फुलर मिट्टी की उपस्थिति में वास्तव में देखा गया है।

अधिशोषण पर अणुभार का प्रभाव पड़ता है। उच्च अणुभारवाले पदार्थ अधिक अधिशोषित होते हैं और निम्न अणुभारवाले कम। इस संबंध में कुछ लोगों का मत इसके प्रतिकूल भी है।

अधिशोषण से अंशन भी होता है। फुलर मिट्टी सदृश पदार्थों के द्वारा पारच्यवन से केवल रंग में ही परिवर्त्तन नहीं होता ; वरन्, विशिष्ट भार, श्यानता और अन्य गुणों में भी परिवर्त्तन होता है। अस्थि-काल से भी विशिष्ट भार और श्यानता में कमी देखी गई है। ०·८१० विशिष्ट भार के तेल से ऐसे अंश पाये गये हैं जिनका विशिष्ट भार ०·७६६० से ०·८२०५ होता है। एक नमूने का विशिष्ट भार ०·८३७५ था। इससे ०·८२०० से ०·८६०० तक विशिष्ट भार के अंश पाये गये।

फुलर मिट्टी के पारच्यवन से रंग हट जाने के साथ-साथ उसमें कुछ परिवर्त्तन भी होता है। यदि विधि उत्क्रमणीय हो तो पेट्रोलियम द्वारा मिट्टी के धोने से उसे प्राप्त भी कर सकते हैं। पर ऐसा नहीं होता है। इससे मालूम होता है कि पुरुभाजन-सदृश कुछ क्रियाएँ होती हैं, जिनके कारण केवल पेट्रोलियम से उन्हें नहीं प्राप्त किया जा सकता। किसी प्रबलतर विलायक की आवश्यकता होती है। बेंज़ीन, कार्बन डाइसल्फाइड, कार्बन टेट्राक्लोराइड या इनके मिश्रण इस काम के लिए उपयुक्त होते हैं। इससे जो पदार्थ प्राप्त होते हैं, वे कपिल रंग-से काले रंग के और चिपचिपा होते हैं। इससे मालूम होता है कि वे रेज़िन और ऍस्फाल्ट-वर्ग के पदार्थ हैं। फुलर मिट्टी के पुनर्जीवितकरण की कोई सफल चेष्टाएँ नहीं हुई हैं।

फुलर मिट्टी की जाँच अनेक व्यक्तियों के द्वारा बहुत-कुछ हुई है। यह सिलिका-वर्ती मिट्टी है। बहुत कड़ी होती है। इसमें रंगों के अवशोषण की क्षमता रहती है। इसके रासायनिक संघटन विभिन्न होते हैं; पर सबमें जलीयित एल्युमिनियम सिलिकेट रहता है। जल की मात्रा अधिक रहती है। ताजा मिट्टी के वायु में सुखाने से भार का आधा पानी के रूप में निकल जाता है। अवशिष्ट भाग में अब भी प्रायः १८ प्रतिशत जल रहता। अधिशोषण पर पानी की मात्रा का प्रभाव पड़ता है। सम्भवतः आदि में जल की मात्रा और उसके निकल जाने से कलिल बनावट का घनिष्ठ संबंध है और उसी पर उसकी अधिशोषण-क्षमता निर्भर करती है, वायु में सूखी फुलर मिट्टी का संघटन हिरज़ेल (Hirzel) ने इस प्रकार दिया है—

		प्रतिशत			प्रतिशत
सिलिका,	SiO_2	५६·४३	फेरिक ऑक्साइड	Fe_2O_3	३·२३
एल्युमिना,	Al_2O_3	११·४७	चूना	CaO	३·०६
मैगनीशिया,	MgO	६·२४	सोडा और पोटाश,		१·२८
जल,	H_2O	१७·४५			

सिलिका की मात्रा ४० से ८० प्रतिशत, एल्युमिना की मात्रा ४ से २० प्रतिशत और जल की मात्रा ५ से १२ प्रतिशत बदलती रहती है। इसके संघटन का अधिशोषण-क्षमता से कोई संबंध नहीं प्रतीत होता। भौतिक बनावट का ही अधिशोषण-क्षमता से संबंध बहुत अधिक सम्भव प्रतीत होता है।

अधिशोषण का कार्य अधिकांश 'क्रियाशील' तल के कारण होता है। तल के

सम्भवतः केशिका होने के कारण ही उसमें अधिशोषण-गुण होता ह। तल की सूक्ष्म बनावट और अधिशोषण का परस्पर संबंध है, ऐसा प्रयोगों से मालूम होता है।

एक प्रयोग में देखा गया है कि बालू से जितना अधिशोषण होता है, उसका ५ हजार गुना अधिशोषण उतने ही भार की फुलर मिट्टी से होता है।

इस काम के लिए वायु में सूखी फुलर मिट्टी को पीसते हैं और विभिन्न अक्षों की चलनी में छानते हैं। १५ से ३० अक्षि, ३० से ६० अक्षि, ६० से ८० अथवा ६० से ६० अक्षि चूर्ण को अलग-अलग करते हैं। ३० से ६० अक्षि चूर्ण की अपेक्षा ६० से ८० अक्षि चूर्ण १० से १५ प्रतिशत अधिक दक्ष होता है। १५ से ३० अक्षि चूर्ण की अपेक्षा ३० से ६० अक्षि चूर्ण २० प्रतिशत अधिक दक्ष होता है। चूर्ण को फिर मिरतप्त करते हैं जिससे जल, मुक्त और सम्भवतः ५० प्रतिशत संयुक्त, निकल जाता है। इसके लिए २५०° से० या इससे ऊपर ताप तक गरम करना पड़ता है। पर संपुजन ताप नहीं पहुँचना चाहिए। मिट्टी को कुछ मिनट ही इस ताप पर रखना पड़ता है।

मिट्टी को अम्लों के साथ उपचारित कर अधिक दक्ष बना सकते हैं। इसके लिए सलफ्यूरिक अम्ल अथवा हाइड्रोक्लोरिक अम्ल का, १० से २० प्रतिशत सान्द्रण का, विलयन उपयुक्त होता है। इससे मिट्टी बहुत महीन हो जाती है, अतः यह चूर्ण पारच्यवन के लिए उपयुक्त नहीं है। यह केवल संस्पर्श के व्यवहार में आ सकता है। अम्लों से धोने के कारण लोहे और एल्युमिनियम के आक्साइड निकल जाते हैं और इससे तल की वृद्धि होकर दक्षता बढ़ जाती है। मिट्टी में अम्ल के रह जाने से भी उसका प्रभाव अच्छा पड़ता है।

सिलिका-जेल से भी पेट्रोलियम के अपद्रव्य अधिशोषित हो निकल जाते हैं। सिलिका-जेल देखने में स्फटिक बालू-सा दीख पड़ता है। वह बहुत महीन होता है। २५० अक्षि से छन जाता है। यह गन्धक-यौगिकों को बहुत अधिशोषित कर लेता है। रेजिन भी इससे निकल जाता है। इससे रंग भी दूर हो जाता है। इसमें बड़े छोटे-छोटे रन्ध्र होते हैं, जिन्हें अतिसूक्ष्मदर्शक से भी नहीं देख सकते। इससे गन्धक की मात्रा पेट्रोल में ०·५८ से ०·०१ प्रतिशत हो जाती है। स्नेहक तेल में गन्धक की मात्रा ३·६३ से ०·४१ प्रतिशत हो जाती है। रंग के दूर होने से श्यानता भी घट जाती है। भाप से जेल सक्रियित हो जाता है।

बौक्साइट का उपयोग १६१५ ई० में शुरू हुआ। इसका काम ठीक फुलर मिट्टी-सा होता है। इसे वायु की अनुपस्थिति में ४०० से ६००° से० तक जलाकर ३० से ६० अक्षि चलनी में छानकर पारच्यवन के लिए इस्तेमाल करते हैं। ठंडा होने के समय वायु के अभाव से अधिशोषण-क्षमता बढ़ जाती है, गन्धक से जल्दी रंग निकलता है। गंधक निकालने के लिए इसकी मात्रा अधिक चाहिए। किरासन में गन्धक की मात्रा ०·१३४ से ०·०१७ करने के लिए प्रति बैरेल ६ पाउण्ड बौक्साइट की आवश्यकता पड़ती है। भारत का बौक्साइट इसके लिए श्रेष्ठ होता है। ईरान का तेल भारत के बौक्साइट से ही परिष्कृत होता है।

मिट्टी से पेट्रोलियम के परिष्कार में दो रीतियाँ उपयुक्त होती हैं। एक 'पारच्यवन-रीति' और दूसरा 'संस्पर्श-निस्यन्दन'।

पारच्यवन

एक ऊर्ध्वाधार इस्पात का बेलन दानेदार फुलर मिट्टी से भर दिया जाता है। बेलन १५ से ३० फुट लम्बा और ५ से १२ फुट व्यास का होता है। इसके पेंदे में छेद होता है अथवा पेंदा कपड़े से मढ़ा होता है। १८ फुट ऊँचे और ७ फुट चौड़े छनने में प्रायः ८ टन मिट्टी अँटती है। १४ फुट ऊँचे और १२ फुट चौड़े में २०.३ टन मिट्टी अँटती है। बड़े-बड़े छननों में ५० टन तक मिट्टी अँटती है। इस प्रकार के अनेक बेलन एक मकान में बने होते हैं। और ऐसे बने होते हैं कि उनको भाप-कुंडली से गरम कर सकें।

ऊपर से तेल पम्प कर डाला जाता है। यह मिट्टी द्वारा बहकर नीचे गिरता है। गिरने की गति दबाव पर निर्भर करती है। पहले दबाव कम रहता है। जब तेल पेंदे में पहुँच जाता है तब दबाव बढ़ाया जाता है। यदि ऐसा न किया जाय तो तेल के भार में नीचे बह जाने की संभावना रहती है। एक दूसरी रीति भी उपयुक्त होती है। पेंदे को बन्द कर ऊपर से तेल पम्प कर डालते हैं। जब मिट्टी तेल से भर जाती है और वायु निकल गई है तब पेंदे को खोलते हैं और ऊपर से पम्प करके तेल को डालते हैं। तेल की धारा ऐसी रहती है कि जितना समय मिट्टी के संसर्ग में उसे रखना चाहें, उतने समय तक रख सकते हैं। उसका ताप आवश्यकतानुसार १०० से २००° फ० रखते हैं।

किस दर से तेल को बेलन में पम्प करना चाहिए, यह मिट्टी की तह की गहराई, मिट्टी के कणों के विस्तार, तेल की प्रकृति, ताप और कितना परिष्कार करना चाहते हैं, उन पर निर्भर करता है। न्यून श्यानता का तेल मिट्टी की तह से जल्दी निकल जाता है। अधिक श्यान तेल भी उच्चतर ताप पर जल्दी छन जाता है। तेल मिट्टी के बहुत निकट संस्पर्श में आवे, इसके लिए आवश्यक है कि मिट्टी की तह मोटी हो। यदि मिट्टी बहुत महीन हो, तभी संस्पर्श अति निकट से होता है। किरासन के तेल में, जिसमें अपद्रव्य बहुत कम रहते हैं, यदि २० पाउण्ड दबाव पर तेल को पम्प किया जाय तो तेल का बहाव अधिक तेज रख सकते हैं। औषधों के लिए जो तेल होता है, उसे थोड़ा गरम कर धीरे-धीरे गुरुता के सहारे बहाने से अच्छा तेल प्राप्त होता है। बहुत रंगीन तेल के लिए ही उच्च ताप की आवश्यकता पड़ती है।

कितने तेल के परिष्कार के लिए कितनी मिट्टी लगेगी, यह कहना सरल नहीं है। यह बहुत-कुछ तेल की प्रकृति पर निर्भर करता है। तेलों की प्रकृति एक नहीं होती। स्थान-स्थान और समय-समय पर प्रकृति बदलती रहती है। मिट्टी कितनी बार उपयुक्त हुई है और इसका पुनर्जीवितकरण कितनी बार हुआ है, इसपर भी निर्भर करता है। बेल (Bell) का मत है कि एक बार उपयुक्त एक टन मिट्टी से ७ से १० बैरेल तेल, अथवा मध्यम श्यानता के १२ से १५ बैरेल स्नेहक तेल का रंग दूर हो जाता है। पैराफिन मोम के २० से ३० बैरेल का रंग एक टन मिट्टी से दूर हो जाता है।

यदि पेंदे से निकला तेल साफ न हो तो तेल का पम्प करना बन्द कर देते हैं। उसमें केवल वायु को दबाव से प्रवाहित करते हैं। इसके बाद पेट्रोलियम नैफ्था पम्प करते हैं। इससे तेल घुल जाता है। जब नैफ्था में कोई रंग न आवे, तब नैफ्था का प्रवाह बन्द कर देते हैं। आसवन से नैफ्था को पुनः प्राप्त कर लेते हैं। उसके बाद बेलन

में भाप ले जाते हैं। इससे सारा नैफ्था निकल जाता है। इससे मिट्टी का बहुत-कुछ मैल निकल जाता है। केवल कुछ रेज़िन और अस्फाल्ट-पदार्थ रह जाते हैं। इनको निकाल डालने के लिए मिट्टी को जलाने की आवश्यकता पड़ती है। इसका जलाना घूर्णक भट्टी में अच्छा होता है। सीधे आग पर जलाना अच्छा नहीं होता। जलाकर ठंडा कर लेते हैं, तब काम में लाते हैं। नैफ्था से धोने और भाप के प्रवाह को ले जाने में पर्याप्त समय लगता है। जलाने से पर्याप्त हानि होती है। मिट्टी को साधारणतया १० से १८ बार तक पुनर्जीवित कर सकते हैं। विलायकों के द्वारा भी मिट्टी के पुनर्जीवितकरण की चेष्टाएँ हुई हैं; पर यह रीति महँगी पड़ती है। विलायकों में अल्कोहल और एसिटिक अम्ल का मिश्रण, सल्फोनिक अम्ल, साबुन का जलीय विलयन, आईसो-प्रोपिल अल्कोहल और २० प्रतिशत से कम जल, ९० प्रतिशत बेंज़ीन और १० प्रतिशत एसीटोन उपयुक्त हुए हैं।

संस्पर्श-निस्यन्दन

इस रीति में महीन मिट्टी को तेल के साथ मिलाकर प्रक्षुब्ध कर निथरने के लिए छोड़ देते हैं। प्रति गैलन ०.१ से १.० प्रतिशत महीन मिट्टी उपयुक्त होती है। मिट्टी पेंदे में बैठ जाती है और तेल ऊपर रह जाता है। पारच्यवन-रीति से इसमें कम समय लगता है। अम्ल के उपचार के बाद मिट्टी के व्यवहार से अम्ल और मैल निकल जाते हैं तथा रंग दूर हो जाता है।

इस काम के लिए फुलर-मिट्टी का बारीक अंश इस्तेमाल हो सकता है। रसायनतः सक्रियित मृदश्म (Bentonite) भी इस्तेमाल होता है। सामान्य मिट्टी भी उपयुक्त हो सकती है। ऐसी मिट्टी सबसे सस्ती पड़ती है; पर मृदश्म की अधिक सक्रियता इसकी पूर्त्ति कर देती है। ऐसी मिट्टी १०० से २०० अक्षि चलनी में छनी हुई होती है। पानी के साथ कीचड़ के रूप में भी इसका व्यवहार हो सकता है। पानी के साथ मिट्टी का उपयोग अधिक सुविधाजनक होता है; क्योंकि भाप के कारण वायु से तेल के आक्सीकरण में रुकावट होती है।

इस रीति से आधे घण्टे से एक घण्टे में सफाई हो जाती है। अधिक समय की आवश्यकता नहीं पड़ती। उच्च ताप पर सफाई और जल्द होती है। सामान्य मिट्टी के लिए निम्न ताप अधिक उपयुक्त पाया गया है। निम्न ताप पर समय अधिक लगता है और उच्च ताप पर कम। हलके तेल के लिए ३०० से ४५०° फ० ताप और अधिक श्यान तेल के लिए ४५० से ६००° ताप अधिक उपयुक्त है।

संस्पर्श-निस्यन्दन और आसवन साथ-साथ चल सकता है। मिट्टी के साथ मिलाकर गरम करके फिर भभके में डालकर आसवन कर सकते हैं।

पेट्रोलियम का मिट्टी-उपचार

भंजित पेट्रोलियम में असंतृप्त हाइड्रोकार्बन रहते हैं। उनसे गोंद और रंग बनते हैं। रंग बननेवाले चक्रीय असंतृप्त हाइड्रोकार्बन, फलवीन, हैं। ओलिफिनीय हाइड्रोकार्बन बेंज़ीन के साथ मिलकर आक्सीकरण से गोंद बनते हैं।

भंजित पेट्रोल का सल्फ्यूरिक अम्ल के साथ उपचार नहीं करना चाहिए; क्योंकि इससे ओलिफीन निकल जाते हैं जिससे ऑक्टेन-संख्या कम हो जाती है। ऐसे पेट्रोल का

मिट्टी के साथ उपचार अच्छा होता है। सल्फ्यूरिक अम्ल से हानि भी अधिक होती है। सलफ्यूरिक अम्ल से जहाँ ३ से ५ प्रतिशत की हानि होती है, वहाँ मिट्टी के उपचार से केवल ०·५ से १·५ प्रतिशत की हानि होती है। मिट्टी के व्यवहार से गन्धक नहीं निकलता। इस कारण, गन्धक-यौगिकों के कारण मिट्टी की दक्षता में कोई कमी नहीं होती।

मिट्टी के उपयोग से पेट्रोल के रंग और गंध उन्नत हो जाते हैं और गोंद निकल जाता है। आक्सिजन में पेट्रोल का स्थायित्व भी बढ़ जाता है। जलाने से मिट्टी का पुनर्जीवितकरण हो जाता है। इस प्रकार पेट्रोल के परिष्कार के बाद उसे क्षार से धोकर मृदुकरण करते हैं। व्यापार में जो विधियाँ उपयुक्त होती हैं, उनमें तीन अधिक महत्त्व की हैं। दो विधियाँ वाष्प-कला में और एक विधि द्रव-कला में उपयुक्त होती हैं। एक को ग्रे (Gray)-विधि, दूसरी को स्ट्रैटफोर्ड (Stratford)-विधि और तीसरी को औस्टेरस्ट्रौम (Osterstrom)-विधि कहते हैं।

ग्रे-विधि

भंजन-पात्र-मीनार से निकले वाष्प सीधे मिट्टी में जाता है। कुछ भारी अंश द्रवीभूत हो जाता है। यह द्रवीभूत अंश विलायक का काम करता है और पुरुभाज को मीनार-स्तम्भ में धो डालता है। मीनार से निकला वाष्प अंशित हो पेट्रोल के रूप में प्राप्त होता है। भारी अंश पुरुभाज के साथ मिलकर मीनार के पेंदे में इकट्ठा हो फिर भंजन-पात्र में लौटा दिया जाता है। कोयला न बन जाय, इसके लिए कभी-कभी भारी अंश को उद्वाष्पक में ले जाकर भारी पुरुभाज को तारकोल के रूप में निकाल लिया जाता है। यहाँ मीनार-स्तम्भ में दबाव ५० से ४०० पाउण्ड तक रहता है और उसका ताप २८० से ५००° फ० रहता है। ताप इतना ऊँचा न होना चाहिए कि पुरुभाज को उद्वाष्पित कर सके। अधिक काल तक संस्पर्श से औक्टेन-संख्या में कमी नहीं होती और पुरुभाज के बनने में हानि भी बहुत कम होती है। फुलर मिट्टी के एक टन से १००० से २५००० बैरेल तक पेट्रोलियम का उपचार हो सकता है। बीच-बीच में भाप के प्रवाह से मिट्टी को सक्रियित कर सकते हैं।

स्ट्रैटफोर्ड-विधि

यह विधि भी वाष्प-कला में उपयुक्त होती है। इसमें तेल को वाष्पीभूत करते हैं। वाष्प को आंशिक संघनन से भिन्न-भिन्न अंशों में इकट्ठा करते हैं। किसी विशिष्ट अंश को लेकर मीनार में प्रविष्ट कराते हैं। नीचे से वाष्प मीनार में प्रविष्ट करता है। मीनार में बुदबुद-थाल १० से १४ की संख्या में रहते हैं। नीचे से वाष्प ऊपर उठता हुआ महीन मिट्टी के पतले कीचड़ से मिलता है। मिट्टी का यह पतला कीचड़ पेट्रोल में बना होता है। प्रति गैलन पेट्रोल में २०० अक्षिवाली एक पाउंड मिट्टी रहती है। यह कीचड़ शिखर के थाल के ठीक नीचे से मीनार-स्तम्भ में प्रविष्ट करता है। पेंदे से वाष्प शिखर पर पहुँचकर

ऊष्मा-विनिमायक और संघनक में संघनित्र हो इकट्ठा होता है। पुरुभाजन के साथ कीचड़ नीचे बैठ जाता है और तेल अंशकारक में चला जाता है। एक टन मिट्टी से लगभग १००० बैरेल पेट्रोल की सफाई हो जाती है।

औस्टरस्ट्रौम-विधि

यह विधि उस भंजित पेट्रोल के लिए उपयुक्त होती है, जिसमें गोंद बननेवाले अवयवों की मात्रा अधिक रहती है। यहाँ तेल-आसुत को ५०० से ६००° फ० ताप तक भभके में गरम करते हैं। भभके में दबाव १००० पाउण्ड तक का रहता है। यहाँ कुछ पुरुभाजन होता है। अब द्रव को ३० से ६० अक्षि की मिट्टी में उसी दबाव पर ले जाते हैं। मिट्टी बहुत समय तक इस्तेमाल हो सकती है। एक टन मिट्टी से ७०,००० हजार बैरेल भंजित पेट्रोल का परिष्कार हो सकता है। ४ से ७ प्रतिशत पुरुभाज का क्षय होता है। यदि पेट्रोल कम भंजित है तो क्षय और भी कम होता है।

विलायकों का उपयोग

पहले-पहल विलायकों का उपयोग किरासन से द्रव सल्फर डायक्साइड द्वारा सौरभिक और असंतृप्त हाइड्रोकार्बनों के निकालने में हुआ था। इसके बाद अन्य विलायकों का उपयोग हुआ। एमिल-अल्कोहल, ईथर-अल्कोहल मिश्रण और अन्य विलायकों का पीछे उपयोग हुआ; पर बड़ी मात्रा में इन विलायकों का उपयोग नहीं होता है। स्नेहक तेल के परिष्कार में, पेट्रोल के प्रति-आघात अवयवों और नैफ्था के अधिक विलेय अंशों के निकालने में, इसका उपयोग हुआ है।

सलफ्यूरिक अम्ल के उपयोग में कुछ त्रुटियाँ हैं। इसमें सन्देह नहीं कि अम्ल से रेज़िन, नाइट्रोजन और गंधक यौगिक और कुछ सक्रिय हाइड्रोकार्बन निकल जाते हैं; पर उससे निकले विभिन्न अवयवों की प्राप्ति में कठिनाई होती है। इससे जो उत्पाद बनते हैं, उन्हें क्या किया जाय और जो अम्ल बच जाता है, उसे कैसे पुनः प्राप्त किया जाय, ये प्रश्न अभी हल नहीं हो सके हैं। ये त्रुटियाँ विलायकों के उपयोग में नहीं हैं। विलायकों से कोक बननेवाले अंशों, चक्रीय हाइड्रोकार्बनों, रेज़िन, अस्फाल्ट और गंधक यौगिकों को अलग-अलग कर उपयोग कर सकते हैं।

यदि ठीक प्रकार से विलायक का चुनाव हो तो पेट्रोलियम के अनावश्यक अंश घुलकर एक स्तर में आ जाते हैं और अन्य पैराफीनीय अंश दूसरे स्तर में रह जाते हैं। इस प्रकार विलायक की सहायता से पेट्रोलियम दो अंशों या स्तरों में विभक्त हो जाता है। एक में पोलिनैफ्थीन और पोलिएरोमैटिक अंश रहते हैं और दूसरे में पैराफीनीय अंश। विलायक दोनों अंशों में विद्यमान रहता है। दोनों स्तरों में दोनों प्रकार के पदार्थ रहते हैं। इस कारण केवल एक निष्कर्ष से सब अपद्रव्यों को पूर्णतया निकाल डालना सम्भव नहीं है। यदि विलायक का चुनाव ठीक हुआ है, तो एक स्तर में अपद्रव्य बड़ी मात्रा में रहते हैं और दूसरे स्तर में अपेक्षया कम। यदि इस उपचार को दुहराया जाय, तो और भी अपद्रव्य निकल जाते हैं। इस प्रकार विलायकों से अनावश्यक अंशों के

निकालने में कभी तो केवल 'एक-संस्पर्श' से काम चल जाता है और कभी 'बहु-संस्पर्श' की आवश्यकता होती है।

एक संस्पर्श रीति में विलायक और तेल को मिलाकर पृथक् होने को रख देते हैं। इस काम को थोक में करते हैं अथवा अनवरत रूप में। यदि अनवरत करना होता है तब तेल और विलायक को एक नल या मिश्रण-कक्ष में लाकर निथरने के लिए रख देते हैं, जहाँ विलायक विभिन्न स्तरों में अलग हो जाता है।

बहु-संस्पर्श-रीति भी थोक में अथवा अनवरत रूप में होती है, एक तेल को विलायक से निष्कर्ष निकाल लेने के बाद उसमें फिर ताजा विलायक डालकर निष्कर्ष निकालते हैं। यह रीति साधारणतया प्रयोगशाला में ही उपयुक्त होती है।

एक तीसरी रीति का भी उपयोग होता है। इसे 'प्रतिप्रवाह'-रीति कहते हैं। इस रीति में एक ओर से विलायक आता है और दूसरी ओर से पेट्रोलियम आता है। दोनों एक संस्पर्श-क्षेत्र में मिलते हैं। उस क्षेत्र में कुछ पदार्थ भरा रहता है अथवा विडोलक लगा रहता है। ऐसे कई संस्पर्श क्षेत्र रह सकते हैं। व्यापार में यही रीति उपयुक्त होती है। इसमें विलायक की अल्प मात्रा लगती है। विलायक प्रायः संतृप्त होकर संस्पर्श-क्षेत्र से निकलता है। यह फिर निथरने के लिए छोड़ दिया जाता है। पाँच निष्कर्ष से प्रायः ६४ प्रतिशत अपद्रव्य निकल जाते हैं।

इस निष्कर्ष के लिए अनेक विलायकों के उपयोग का सुझाव भिन्न-भिन्न लोगों ने दिया है। इनमें डाइक्लोरोएथिल ईथर (क्लोरेक्स), फरफ्युरल, नाइट्रोबेंज़ीन, फीनोल, सल्फर डायक्साइड, सल्फर डायक्साइड बेंज़ीन और क्रेसिलिक अम्ल-प्रोपेन (डुओसोल) का व्यापार में उपयोग हुआ है। किस विलायक का उपयोग करना अच्छा होगा, यह पेट्रोलियम की प्रकृति पर निर्भर करता है। विलायक का मूल्य, स्थायित्व, पुनः प्राप्ति की सरलता, विलेयता, विभिन्न स्तरों का पृथक्करण, अपद्रव्यों के घुलाने की क्षमता इत्यादि बातें हैं, जिनका विचार आवश्यक होता है।

हल्के तेलों के लिए सल्फर डायक्साइड अच्छा होता है; पर भारी तेलों के लिए यह ठीक नहीं है; क्योंकि भारी तेल इसमें कम घुलते हैं। यदि इसमें बेंज़ीन डाल दिया जाय, तो इस कमी की पूर्त्ति हो जाती है और तब यह बहुत अच्छा विलायक हो जाता है। फीनोल की विलेयता बहुत अधिक है। इसमें थोड़ा जल डालकर विलेयता कम की जा सकती है।

परस्पर न मिलनेवाले विभिन्न प्रकृति के दो विलायकों का भी उपयोग हो सकता है। ऐसा विलायक क्रेसिलिक अम्ल और प्रोपेन का मिश्रण है, यदि प्रतिप्रवाह-रीति में संस्पर्श-क्षेत्र में विलायक के ऐसे मिश्रण को ले जायँ तो पैराफीनीय अवयव प्रोपेन के साथ एक ओर चले जायँगे और चक्रीय अवयव क्रेसिलिक अम्ल के साथ दूसरी ओर चले जायेंगे।

विलायक के साथ इस उपचार के बाद केवल मिट्टी के साथ उपचार की आवश्यकता पड़ती है। भारी तेल में यदि एस्फाल्टीय अवयव पूर्णतया न निकल गये हों, तो उसे हल्के अम्ल से उपचार की आवश्यकता हो सकती है। यथासम्भव अम्ल

के उपचार से बचना ही अच्छा होता है; क्योंकि इस उपचार से जो मल बनता है, उसका निकालना कठिन होता है। विलायक से उपचार के पूर्व में मोम का निकाल डालना अच्छा होता है; क्योंकि ऐसा करने से निष्कर्ष के बाद जो तेल प्राप्त होता है, उसका बहाव-विन्दु ऊँचा होता है। उपचार के बाद मोम निकालने से परिष्कृत तेल की मात्रा भी कम हो जाती है।

फीनोल और फरफ्यूरल का उपयोग १०० से २५०° फ० ताप पर होता है। उच्च ताप के कारण श्यानता कम रहती है और पृथकरण में सरलता होती है। डाइक्लोरएथिल और और नाइट्रोबेंज़ीन ३०° से ६०° फ० पर पैराफीनीय श्रेणी के तेल के लिए उपयुक्त होते हैं। हल्के तेल के लिए सल्फर डायक्साइड निम्न ताप पर उपयुक्त होता है और भारी तेल के लिए सल्फर डायक्साइड-बेंज़ीन ६० फ० पर उपयुक्त होता है।

विलायक को निष्कर्ष से पूर्णतया निकाल डालना आवश्यक है। यह काम निर्वात आसवन और वाष्प की सहायता से होता है। सल्फर डायक्साइड के बहाव से बेंज़ीन निकाला जा सकता है। विभिन्न विलायकों के गुण निम्नलिखित हैं—

नाम	सूत्र	विशिष्ट-भार १५°श०	क्वथनांक ०°श०	गलनांक ०°श०	दमकांक ०°फ०	जल में विलेयता २०°श० पर	श्यानता १४०°फ सेंटीपायज़
बज़ीन	C_0H_6	०'८८४	८०	५'५	१०	०'०७	०'३८६
सल्फर डायक्सायड	SO_2	१'३६७	-१०	-७३	—	१८०°श०	०'१६४
क्रेसिलिक अम्ल	$C_0H_4CH_3OH$	१'०४५	१८६	—	१८६	—	—
प्रोपेन	C_3H_8	०'५११	-४५	-१६०	—	—	—
डाइक्लोरएथिल ईथर	$(C_2H_4Cl)O_2$	१'२२०	१७८	-५२	१६८	१'०१	२'०६
फरफ्युरल	C_4H_3OCHO	१'१६२	१६१	-३६	१३८	५'८	०'४१६
नाइट्रोबेंज़ीन	$C_0H_5NO_2$	१'२०७	२११	५'७	२०८	०'१६	१'०१४
फीनोल	C_0H_5OH	१'०७२	१८२	४१	१७४	८'२	१'५६

भिन्नक अवक्षेपण

पेट्रोलियम में यदि रेज़िन और एस्फाल्ट की मात्रा अधिक हो, तो विलायकों से उन्हें पूर्णरूप से नहीं निकाल सकते। इन्हें अवक्षेपण से निकालने की चेष्टाएँ हुई हैं। इसके लिए मिथेन, ईथेन, प्रोपेन, ब्युटेन, पेण्टेन और हेक्सेन उपयुक्त हुए हैं, पूर्व में देखा गया था कि हल्के नैफ्था से रेज़िन और एस्फाल्ट अवक्षिप्त हो जाते हैं। इसीसे इस संबंध में अन्वेषण की उत्तेजना मिली और उसके फलस्वरूप हाइड्रोकार्बन के उपयोगों का पता लगा।

मिथेन और ईथेन की अवक्षेपण-क्रियाएँ बहुत तीव्र होती हैं। इतनी तीव्र कि उनका उपयोग सुविधाजनक नहीं है। इन्हें द्रव दशा में रखना भी कठिन होता है; क्योंकि इसके लिए बड़े उच्च दबाव की आवश्यकता पड़ती है। प्रोपेन और ब्युटेन की क्रियाएँ अधिक सुविधाजनक होती हैं। इनके उपयोग में कोई विशेष कठिनाई नहीं है। प्रोपेन के साथ कुछ

ईथेन मिला दिया जाय, अथवा ब्युटेन के साथ कुछ प्रोपेन मिला दिया जाय, तो इनका काम और अच्छा होता है। ये मिश्रण अच्छे प्रतिकारक हैं। शुद्ध प्रोपेन प्राप्त करने में कोई कठिनाई भी नहीं होती है। केवल उसमें प्रोपिलीन नहीं रहना चाहिए। प्रोपेन में ईथेन के रहने से अवशिष्ट उत्पाद की श्यानता बढ़ जाती है और ब्युटेन के रहने से अवशिष्ट उत्पाद की श्यानता घट जाती है।

द्रव प्रोपेन से रेज़िन और एस्फाल्ट का अवक्षेपण हो जाता है। यह आश्चर्य की बात है कि यदि ताप को ८० और १००° फ० कर दिया जाय तो प्रोपेन का विलायक गुण नष्ट हो जाता है। इस ताप के नीचे यह सामान्य विलायक का काम करता है। १२०° और १४०° फ० के बीच एस्फाल्ट और रेज़िन अवक्षिप्त हो जाते हैं। इससे ऊपर ताप पर भारी चक्रीय यौगिक अवक्षिप्त होते हैं। प्रोपेन के क्रांतिक ताप २१२° फ० तक प्रायः समस्त भारी अवयव निकल जाते हैं। यदि इस स्थिति में दबाव की वृद्धि की जाय, तो विलेयता बढ़ती है।

यदि ताप १८०° फ० रखा जाय तो प्रोपेन द्वारा एस्फाल्ट का पृथक्करण और अच्छा होता है। यदि ताप इससे ऊँचा हो तो तेल और प्रोपेन के अमिश्र्य होने के कारण कठिनता बढ़ जाती है।

यह रीति थोक में अथवा अविरत रूप में समान रूप से व्यवहृत हो सकती है। प्रतिवाह-रीति में भी इसका उपयोग हो सकता है। इसमें एक नया सुधार यह हुआ है कि पहले ११०° फ० पर एस्फाल्ट को निकालकर तब १५०° फ० पर पुनः अवक्षिप्त करते हैं। इससे बहुत अधिक श्यान तेल—जिसमें एस्फाल्ट की मात्रा अधिक रहती है—प्राप्त होता है। इससे एक और लाभ यह होता है कि एस्फाल्ट अवक्षिप्त कर लेने पर ठंडा करने से मोम भी सरलता से निकल आता है।

सातवाँ अध्याय

भारत में पेट्रोलियम का परिष्कार

तेल-कूप से जो पेट्रोलियम निकलता है उसे कच्चा पेट्रोलियम कहते हैं। यह रंगीन, गाढ़ा और बदबूदार होता है। कच्चा पेट्रोलियम किसी काम का नहीं होता है। उपयोग में लाने के लिए इसकी सफाई करनी पड़ती है। ऐसी सफाई को 'परिष्कार करना' कहते हैं। पेट्रोलियम का परिष्कार बड़े-बड़े कारखानों में होता है। ऐसे कारखानों को 'परिष्करणी' कहते हैं।

जहाँ तेल के कुएँ होते हैं, वहाँ तो पेट्रोलियम का परिष्कार होता ही है—कहीं तेल के कूपों के निकट में और कहीं वहाँ से बहुत दूर पर। अनेक देशों में जहाँ पेट्रोलियम कूप नहीं है, वहाँ भी तेल की सफाई के लिए परिष्करणी बनी हुई है।

आसाम (भारत) में अल्पमात्रा में पेट्रोलियम पाया गया है। परिष्कार के लिए वहाँ भी परिष्करणी है। पेट्रोलियम की सफाई के साथ-साथ उसे विभिन्न अंशों में अलग-अलग भी करते हैं। आसाम के अतिरिक्त बम्बई के निकट भी एक बहुत बड़ी परिष्करणी बनी है, जहाँ तेल की सफाई हो रही है। इन दोनों परिष्करणियों से भारत की बहुत कुछ माँगें पूरी हो सकेंगी, ऐसी आशा की जाती है। पर, देश की समस्त माँगों की पूर्ति के लिए और परिष्करणियों की आवश्यकता तो होगी ही।

आसाम की परिष्करणी

कर्नल ड्रेक ने सन् १८५६ ई० में धरती में छेद कर पेट्रोलियम पहले-पहल निकाला था। इसके कुछ वर्षों के बाद ही आसाम के तेल-कूपों का पता लगा। आसाम के ब्रह्मपुत्र नदी के तटों पर, घने जंगलों में कोयले की खानों की खोजें हो रही थीं, ऐसी खोज में ही एक स्थान पर धरती की खोदाई से सन् १८६६ ई० में पेट्रोलियम निकल आया। यह स्थान डिगबोई के निकट 'नाहोरपुंग' में था। इससे पहले कहीं-कहीं तेलों के झरने पाये गये थे। अब पेट्रोलियम की खोज में लोगों की रुचि बढ़ी और इसके फलस्वरूप सन् १८६७ ई० के २६ मार्च को तेल का एक स्रोत ११८ फुट की गहराई में मिला। एशिया-खंड का यह पहला तेल-कूप था, जो यंत्रों के सहारे खोदा गया था। पर इस कुँए का जीवन-काल अल्प था। कुछ ही दिनों में इसका तेल समाप्त हो गया। घने जंगलों के कारण और रेल-मार्ग के अभाव में कुछ वर्षों तक तेल के पता लगाने का काम रुका रहा।

प्रायः इसी समय, सन् १८८२ ई० में आसाम रेलवे और ट्रेडिंग कम्पनी के प्रयत्न से कोयला ढोने के लिए लेडो से डिब्रूगढ़ तक रेल का रास्ता बना। रास्ता बनाने के

काम करते समय ही इस कम्पनी ने डिगबोई में तेल-कूप का पता लगाया। फिर तो अन्य कुएँ भी खोदे गये और उनमें तेल पाया गया। सन् १८६८ ई० तक डिगबोई में ऐसे तेल निकालने के पन्द्रह कुएँ खोदे जा चुके थे। आसाम रेलवे और ट्रेडिंग कम्पनी ने तेल निकालने के लिए एक दूसरी कम्पनी सन् १८६६ ई० में 'आसाम आयल कम्पनी' खड़ी की। अब नियमित रूप से तेल निकालने का काम शुरू हो गया। इस नई कम्पनी ने तेल निकालने का पट्टा आसाम रेलवे और ट्रेडिंग कम्पनी से लिया। अब १७,००० से २०,००० गैलन तक तेल की सफाई के लिए डिगबोई में एक परिष्करणी खुल चुकी है।

'आसाम आयल कम्पनी' का मूल-धन कम था। यह कम्पनी अधिक रुपया न लगा सकती थी। वह अब 'बरमा शेल कम्पनी' के संरक्षण में काम करने लगी। 'बरमा शेल कम्पनी' ने वस्तुतः इसे अपने हाथ में ले लिया। पुराने यंत्र के स्थान पर उसने आधुनिक यंत्र इङ्गलैण्ड और अमेरिका से मँगाकर लगाये। पेट्रोलियम-व्यवसाय की अब दिन-दिन उन्नति होने लगी। बहुत दिनों तक इस परिष्करणी का उत्पादन केवल १८०,००० गैलन प्रतिदिन, अथवा २५०,००० टन प्रतिवर्ष था। अब पेट्रोल, किरासन, डीजेल तेल, ईंधन तेल, बिटुमिन आदि सभी तरह के तेलों के उत्पादन में वृद्धि हुई। प्राकृत गैसों से भी पेट्रोल प्राप्त करने का प्रबन्ध किया गया। स्नेहन-तेल की प्राप्ति का भी प्रबन्ध हुआ। नये-नये कूपों की खोज होने लगी। आज भी नये कूपों की खोज जारी है। कुछ नये कूप मिले भी हैं।

आज इस कम्पनी में पर्याप्त धन लगा हुआ है। इसमें प्रायः ८००० से अधिक व्यक्ति काम करते हैं। डिगबोई के आस-पास ३४,००० से अधिक व्यक्ति, किसी-न-किसी रूप में, इस कम्पनी से सम्बन्धित हैं। ऐसे व्यक्तियों में कूप खोदनेवाले खनक, भूगर्भ-विशेषज्ञ, पेट्रोलियम-विशेषज्ञ, रसायनज्ञ, इंजीनियर, सड़क बनानेवाले ओवरसियर, मोटर-कार, बस और ट्रक हाँकनेवाले ड्राइवर, आफिस में काम करनेवाले क्लर्क और कारखाने में काम करनेवाले श्रमिक हैं। काम करनेवालों के स्वास्थ्य के लिए आधुनिक साधनों से सुसज्जित एक बड़ा अस्पताल भी है। इसमें रोगियों के लिए २०० शय्याएँ, एक्स-किरण-यंत्र, पुस्तकालय और औषधालय हैं। कार्य-कर्त्ताओं के रहने के लिए घर बने हुए हैं। पीने के पानी का, धोने के पानी का और शौचालय का विशेष प्रबन्ध है। बालकों की शिक्षा के लिए प्राथमिक और माध्यमिक स्कूल हैं, जिनमें ३००० से अधिक छात्र पढ़ते हैं।

बम्बई की परिष्करणी

स्वतंत्रता मिलने के बाद भारत-सरकार ने तेल का परिष्कार करनेवाला कारखाना खोलने की सम्भावना पर जाँच-पड़ताल करने की इच्छा प्रकट की, फलस्वरूप एक प्रौद्योगिक मिशन को यह काम सौंपा गया। उस मिशन में पाँच बड़ी-बड़ी तेल से सम्बन्ध रखनेवाली कम्पनियों के प्रतिनिधि थे। उनमें सबसे प्रमुख व्यक्ति 'बरमा शेल-रिफाइनरी' के जेनरल मैनेजर श्री० एच्० जे० ट्रो थे। इस प्रौद्योगिक मिशन ने तीन मास तक भारत के बम्बई, दिल्ली, कलकत्ता, मद्रास, विशाखापत्तनम्, नागपुर, अहमदाबाद और भावनगर नगरों में घूमकर अपनी रिपोर्ट तैयार की और बम्बई और विशाखापत्तनम् में परिष्करणी खोलने का

सुझाव रखा। 'बरमा शेल-परिष्करणी' की ओर से यह भी प्रस्ताव आया कि बम्बई में परिष्करणी खोलने के लिए वह तैयार है। सन् १९५१ ई० के १५ दिसम्बर को, बम्बई में, पेट्रोलियम परिष्करणी खोलने की स्वीकृति पर भारत और 'बरमा शेल-रिफाइनरी' के बीच दोनों ओर से हस्ताक्षर हो गये।

इस संविदा के अनुसार सन् १९५२ ई० में काम शुरू हो गया। शीघ्र ही सारी योजनाएँ तैयार हो गईं। यह निश्चय हुआ कि इन योजनाओं की पूर्त्ति में २५ करोड़ रुपये लगेंगे। इस योजना के तैयार करने में सबसे बड़ा हाथ 'बरमा शेल-रिफाइनरी' के जेनरल मैनेजर एच्. जे. ट्रो का था। उन्हें इस काम में कुछ प्रमुख विशेषज्ञों से सहायता मिली थी, जिनमें ई० जे० मार्टिन, एम्० जे० एच् गेरले, जे० ए० नार्मन, जे कार्न, डब्लू आरा मुयिरहेड, एन्० जे० गिब्सन और जे० डब्लू० मेलोन के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। ये सभी तेल से सम्बन्ध रखनेवाले भिन्न-भिन्न शाखाओं के विशेषज्ञ हैं।

परिष्करणी के बनाने के लिए बम्बई से दस मील दूर ट्राम्बे नामक एक द्वीप चुना गया। यहाँ की धरती की विशेष रूप से जाँच हुई और वह कारखाने के लिए उपयुक्त पाई गई। उस कारखाने के लिए ४५० एकड़ जमीन ली गई। सरकार से १५ जनवरी सन् १९५३ ई० को उसकी रजिस्टरी हो गई। उसके बाद कारखाने के निर्माण का काम शुरू हुआ।

सबसे पहले बम्बई बन्दरगाह से परिष्करणी तक पेट्रोलियम ले जाने के लिए नल लगाने की जरूरत पड़ी। इस नल के लगाने में १३ लाख रुपये लगने का अनुमान था। उसके लिए कुछ दूरी तक बाँध बँधाने की भी जरूरत पड़ी। यह बाँध १०० फुट चौड़ा और १००० फुट लम्बा था। इस बाँध के बाँधने में ५८ दिन लग गये। बाँध में १३०,००० टन मिट्टी लगी। पेट्रोलियम के संग्रह के लिए एक भांडार-गृह का भी निर्माण करना पड़ा। इस भांडार-गृह का क्षेत्रफल २३,६०० वर्गफुट इसके बनाने में १४० टन इस्पात और ४८,७०० वर्गफुट एस्बेस्टस की चादरें लगीं। यह भांडार-गृह तीस दिनों में तैयार हो गया।

समस्त परिष्करणी के तैयार होने में ६०,००० टन इस्पात के लगने का अनुमान है। २०,००० घन गज कंक्रीट लगेगी। १२ मील लम्बी सड़कें बनेंगी। १०० मील लम्बे बिजली के तार बैठाने पड़ेंगे। ४००,००० घन गज मिट्टी खोदकर वहाँ ४५०,००० टन तेल रखने की टंकी बनेगी। यहाँ यंत्रों के स्तम्भ १३० फुट ऊँचे और २७ फुट व्यास तक के मोटे बनेंगे। कारखाने के लिए प्रति दिन २,००००० टन पानी पम्प होकर बम्बई से आवेगा। प्रतिदिन पीने के लिए १० लाख गैलन पानी की आवश्यकता होगी।

इसके तैयार होने का आनुमानिक काल सन् १९५६ ई० था; पर समय के पूर्व ही १९५५ ई० में वह परिष्करणी काम करने लगी। परिष्करणी में कच्चा पेट्रोलियम फारस की खाड़ी के क्षेत्रों से आता है। लाने के लिए बड़े-बड़े टैंकर, ३०,००० टन के बने हैं। यहाँ से जो उत्पाद निकलेगा, उससे वैदेशिक विनिमय में ४·३ से ६ करोड़ रुपये की बचत होगी। यह बचत परिष्कृत उत्पादों की कीमत में कमी के कारण होगी।

परिष्करणी के समीप ही काम करनेवाले आफिसरों और श्रमिकों के लिए ५०० घर बनाने का अनुमान है। उनके खेल-कूद आमोद-प्रमोद के लिए १० एकड़ भूमि छोड़ दी गई है। उसमें करीब २५० उच्च कर्मचारी होंगे, जिन में रसायनज्ञ, इंजीनियर,

भूगर्भवेत्ता, मशीनचालक, एकाउण्टैण्ट और प्रशासक होंगे। इन सब का प्रशिक्षण इङ्गलैण्ड, यूरोप और डिगबोई (आसाम) के कारखानों में होगा। इनमें अधिकांश भारतीय होंगे। कच्चे तेल से लेकर परिष्कृत उत्पादों का परीक्षण और नियंत्रण इन्हीं के द्वारा होगा। यहीं से विभिन्न भागों के लिए रेलों, जहाजों और ट्रकों से समान भेजने का प्रबन्ध होगा। नये-नये उत्पादों के प्रस्तुत करने के लिए शोधशाला होगी, जिसमें उच्च कोटि के वैज्ञानिक शोधकार्य करेंगे।

परिष्करणी चौबीसो घण्टे चालू रहेगी। कार्यकर्त्ताओं के कल्याण और सुरक्षा के लिए पूरा प्रबन्ध रहेगा। औषध और चिकित्सक सरलता से प्राप्य होंगे।

परिष्करणी के तीन प्रमुख अंग होंगे। एक अंग में कच्चे तेल का आसवन होगा, दूसरे में विभिन्न प्रभागों का उपचार से शोधन होगा और तीसरे में उच्च क्थनांकवाले अंशों का भंजन होगा, जिससे उपयोगी अंश पेट्रोल की मात्रा अधिक-से-अधिक प्राप्त हो सकेंगे।

आसवन लम्बे-लम्बे स्तम्भाकार मीनारों में सम्पादित होता है। मीनारों में प्रभाग-स्तम्भ होते हैं। स्तम्भ अनेक कक्षों अथवा छिद्रित थालों से बने होते हैं। कच्चा पेट्रोलियम को सावधानी से तपाने पर वाष्प और तेल प्रभाग-स्तम्भ में आकर अलग-अलग होते हैं। तपाने का कार्य इस्पात के बने आष्ट्र में होता है, जिसमें ईंटों का अस्तर लगा रहता है। आष्ट्र को गैस-तेल अथवा ईन्धन-तेल से जलाते हैं। आष्ट्र से तेल और वाष्प निकलकर स्तम्भ में जाते हैं, जहाँ तेल संघनित होकर बैठ जाता है और बाद में निकाल लिया जाता है। वाष्प कई क्रमों में संघनित होकर अलग-अलग किस्म का तेल बनता है। संघनीय गैसें संघनित हो जाती हैं और पहले पेट्रोल ईथर, फिर मोटर स्पिरिट (पेट्रोल), तब किरासन, फिर क्रमशः हल्का गैस-तेल, भारी गैस-तेल, ईंधन-तेल आदि प्राप्त होते हैं। असंघनीय गैसें पेट्रोलियम गैस के रूप में निकलती हैं। इस गैस के विशेष उपचार से भी मोटर स्पिरिट की प्राप्ति हो सकती है।

इस प्रकार से प्राप्त तेलों का उपचार करना पड़ता है। इस उपचार से ही वे काम के योग्य होते हैं। पेट्रोल, किरासन, गैस-तेल ईंधन-तेल सबके उपचार से उनकी उत्कृष्टता बढ़ जाती है और अवमिश्रण से डीजेल तेल प्राप्त होता है, जो कुछ इंजनों में जलता है। आटा पीसने की चक्की ऐसे ही तेल से चलती है। ईंधन-तेल के आसवन से बिटुमिन प्राप्त होता है। इसके भंजन से उच्चकोटि का पेट्रोल प्राप्त होता है। इन सब प्रकार्यों का प्रबन्ध बम्बई की ट्रॉम्बे-परिष्करणी में हुआ है।

पेट्रोलियम के परिष्कार की एक दूसरी ऐसी ही परिष्करणी विशाखापत्तनम् में 'स्टैंडर्ड वैक्युयम आयल कम्पनी' और 'काल्टेक्स' (इण्डिया) लिमिटेड द्वारा खोली जा रही है। इस का मूल धन भी प्रायः २० से २५ करोड़ रुपये का होगा। इसका विस्तार भी बम्बई की परिष्करणी के समान ही होगा।

आठवाँ अध्याय

पेट्रोलियम के भौतिक गुण

श्यानता

द्रवों के महत्त्व का एक गुण उनकी श्यानता है। पेट्रोलियम के गुणों में श्यानता महत्त्व का है। स्नेहन के लिए जब पेट्रोलियम उपयुक्त होता है, तब उसकी श्यानता से ही उसके अच्छे या बुरे होने का पता लगता है। श्यानता को नापने के लिए हमें किसी इकाई की आवश्यकता होती है। सेण्टीमीटर ग्राम सेकंड-पद्धति में जो इकाई उपयुक्त होती है, उसे 'पोयाज़' कहते हैं। साधारणतया इसका शतांश 'सेण्टी-पोयाज़' ही उपयुक्त होता।

श्यानता पर ताप का प्रबल प्रभाव पड़ता है। ताप की वृद्धि से श्यानता कम हो जाती है। दबाव से श्यानता बढ़ती है। श्यानता घनत्व के अनुपात में होती है। घनत्व ताप की वृद्धि से घटता और दबाव की वृद्धि से बढ़ता है। चुम्बकीय क्षेत्रों में श्यानता घट जाती है।

श्यानता नापने के लिए 'विस्कोमीटर' का उपयोग होता है, अनेक प्रकार के 'विस्कोमीटर' बने हैं। कुछ विस्कोमीटर का वर्णन 'पेट्रोलियम-परीक्षण'-प्रकरण में हुआ है। इन विस्कोमीटरों में श्यानता की नाप नहीं होती, यहाँ श्यानता और घनत्व के गुणनफल की नाप होती है। इस गुणनफल को 'गतिज श्यानता' कहते हैं। सामान्य श्यानता को 'निरपेक्ष श्यानता' कहते हैं। गतिज श्यानता की इकाई 'स्टोक' है। इसके शतांश मान को 'सेंटीस्टोक' कहते हैं। स्नेहन के लिए गतिज श्यानता ही उपयुक्त होती है। यथार्थ इंजीनियरिंग-गणना के लिए ही निरपेक्ष श्यानता का उपयोग होना चाहिए। ओस्टवाल्ड विस्कोमीटर के आधार पर ही आज अनेक प्रकार के विस्कोमीटर बने हैं। इधर अनेक सूक्ष्म विस्कोमीटर भी बने हैं, जिनमें द्रवों की बड़ी अल्प मात्रा से, एक सी० सी० के दशांश या इससे कम भाग से सभी श्यानता की माप हो सकती है। कुछ विशेष प्रकार के विस्कोमीटर केवल पेट्रोलियम-परीक्षण के लिए बने हैं। ऐसे विस्कोमीटर में एक पात्र से दूसरे पात्र में बहने के लिए कितना समय (सेकंड में) लगता है, इसकी माप की जाती है। परिणाम को सेकंड में व्यक्त करते हैं। ऐसे ही विस्कोमीटर रेडवूड विस्कोमीटर, एंगलर (Englor) विस्कोमीटर और सेबोल्ट (Saybolt) विस्कोमीटर हैं। रेडवूड विस्कोमीटर का ग्रेट-ब्रिटेन में, एंगलर का यूरोप में और सेबोल्ट का अमेरिका में उपयोग होता है।

इन विस्कोमीटरों से सीधे श्यानता की माप होती है या ऐसे गुण की जिसका श्यानता से सरल और सीधा सम्बन्ध है। इसमें घनत्व का विचार नहीं होता और उसके

लिए किसी संशोधन की भी आवश्यकता नहीं होती। ऐसे उपकरणों से 'गतिज श्यानता' का ज्ञान होता है।

गतिज श्यानता और सेबोल्ट श्यानता के बीच सम्बन्ध स्थापित करने की अनेक चेष्टाएँ हुई हैं। इसके लिए निम्नलिखित सूत्र अच्छा समझा जाता है—

$$\text{गतिज श्यानता} = \text{क} \left(\text{सेबोल्ट श्यानता} + \frac{\text{ख}}{\text{सेबोल्ट श्यानता}} \right)$$

यहाँ 'क' 'ख' नियतांक है।

केशिका-विधि के अतिरिक्त एक दूसरी विधि से भी श्यानता की माप होती है। इसको गेंद-पतन-विधि कहते हैं। इसमें एक गोला होता है, जो विभिन्न घनत्व के तेल या द्रव में गिरता है। इसके गिरने की गति से श्यानता मापी जाती है। गिरने का कारण अवश्य ही गुरुत्व है। हॉपलर (Hoppler) विस्कोमीटर एक ऐसा ही विस्कोमीटर है। यह एक बेलनाकार नली है, जिस में द्रव रखा जाता है। यह नली ऊर्ध्वाधार नहीं रहती, नत रहती है और गोला उसमें फिसलता हुआ गिरता है। इसमें द्रव की अधिक मात्रा लगती है। इस कारण इसका उपयोग नहीं होता ; पर इससे परिणाम बहुत यथार्थ प्राप्त होता है। इसी प्रकार के और भी कई विस्कोमीटर बने हैं, पर उनका उपयोग साधारणतया नहीं होता।

एक दूसरे प्रकार का भी विस्कोमीटर बना है। इसे 'घूर्णक (रोटरी) विस्कोमीटर' कहते हैं। इस विस्कोमीटर में द्रव एक बेलनाकार पात्र में रहता है, जो घूमता रहता है। ऐसे विस्कोमीटर मैकमाइकेल (MacMichael) और स्टॉर्मर (Stormer) विस्कोमीटर हैं। इन विस्कोमीटरों से बहुत यथार्थ परिणाम नहीं प्राप्त होता। उनके परिणाम में साधारणतया २ प्रतिशत त्रुटि रह जाती है।

घनत्व

पेट्रोलियम का घनत्व एक महत्त्वपूर्ण गुण है। घनत्व से ही हमें पता लगता है कि किसी कच्चे पेट्रोलियम के नमूने में कितना पेट्रोल और कितना किरासन है। पीछे पता लगा कि केवल घनत्व के ज्ञान से हम पेट्रोलियम की वाष्पशीलता, स्नेहन की श्यानता, पेट्रोल की वाष्पशीलता इत्यादि का ठीक-ठीक ज्ञान नहीं पाते। इससे घनत्व का महत्त्व आज बहुत कुछ कम हो गया है।

किसी पदार्थ के इकाई-आयतन में कितनी संहति (mass) है, इसी को घनत्व कहते हैं। मेट्रिक-पद्धति में एक सी० सी० के (ग्राम में) भार को घनत्व कहते हैं।

घनत्व के लिए आजकल 'विशिष्ट गुरुत्व' का अधिकता से उपयोग होता है। विशिष्ट गुरुत्व किसी पदार्थ के आयतन का उतने ही जल के आयतन का अनुपात है। इसके लिए पदार्थ और जल के ताप का ज्ञान आवश्यक है। साधारणतया ४° श० पर जल के घनत्व से किसी पदार्थ के घनत्व की तुलना की जाती है, क्योंकि ४° श० ताप पर ही जल के एक ग्राम का आयतन एक माना गया है। जल का घनत्व ताप से घटता-बढ़ता है; पर उसका विशिष्ट गुरुत्व सदा एक ही रहता है। विशिष्ट गुरुत्व में ताप का उल्लेख

अवश्य होना चाहिए। नहीं तो ऐसे मान का मूल्य कुछ नहीं है। पेट्रोलियम के परीक्षण में ६०°/६०° फ० ताप प्रामाणिक माना गया है।

घनत्व अथवा विशिष्ट गुरुत्व ही साधारणतया पेट्रोलियम-व्यवसाय में उपयुक्त होता है। पर, इंजीनियर 'ए० पी० आई० गुरुत्व' का भी उपयोग करते हैं। 'ए० पी० आई० गुरुत्व' बोमे स्केल से निकला है।

$$\text{बोमे डिगरी} = \frac{१४०}{\text{विशिष्ट गुरुत्व } ६०/६० \text{ फ०}} - १३०$$

कुछ द्रव-मापियों में त्रुटि पाई गई थी। इस कारण ऐसे द्रवमापी में इसका संशोधन करना पड़ा और उसके लिए निम्नलिखित सूत्र उपयुक्त समझा गया है।

$$\text{स्केल} = \frac{१४१\cdot५}{\text{विशिष्ट गुरुत्व } \frac{६०}{६०} \text{ फ०}} - १३१\cdot५$$

इसी स्केल को 'ए० पी० आई० गुरुत्व स्केल' नाम दिया गया है। पेट्रोलियम के सब अंशों का विशिष्ट गुरुत्व ०·६ और १·० के बीच रहता है। गुरुत्व नाप के लिए (१) विशिष्टभार बोतल अथवा (२) तरलमान का उपयोग होता है।

प्रसार का तापीय गुणक

ताप के परिवर्त्तन से घनत्व में परिवर्त्तन होता है। पेट्रोलियम की बिक्री आयतन से होती है। इस कारण आयतन और भार में सम्बन्ध स्थापित करने के लिए प्रसार के तापीय गुणक का ज्ञान बहुत आवश्यक है। पेट्रोलियम के तापीय गुणक का विस्तार
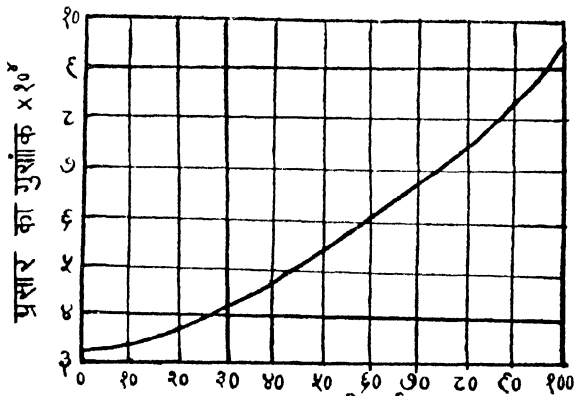
चित्र ८—प्रसार के गुणांक और घनत्व सम्बन्धी वक्र

से अध्ययन हुआ है और उससे जो आँकड़े प्राप्त हुए हैं, उनसे एक वक्र खींचा गया है जिसका चित्र यहाँ दिया हुआ है। घनत्व का विभिन्न ताप पर निर्धारण सामान्य विधियों से होता है। वाष्पों का घनत्व विक्टरमेयर-विधि से भी निकाला जाता है।

तल-तनाव और अन्तःसीमीय तनाव

पेट्रोलियम के विभिन्न अंशों के तल-तनाव का अध्ययन हुआ है; पर इससे कोई विशेष लाभ नहीं देखा गया है। तल-तनाव की विधि भी बहुत यथार्थ नहीं है। इसके परिणाम बहुत यथार्थ नहीं पाये गये हैं। इनका मान प्रति सेंटीमीटर २९ और ३५ डाइन के बीच रहता है।

यदि पेट्रोलियम में साबुन, वसा-अम्लसदृश अ-हाइड्रोकार्बन घुले हों, तो उनसे तल-तनाव घट जाता है। तेल के आक्सीकृत उत्पाद से भी तल-तनाव घट जाता है। घुली गैसें भी तल-तनाव को घटाती हैं। परिष्कार या संशोधन से तल-तनाव का मान एक-ब-एक बढ़ जाता है।

ताप के परिवर्त्तन से तल-तनाव में जो परिवर्त्तन होता है, उसका भी अध्ययन हुआ है। उससे व्यावहारिक उपयोग का कोई परिणाम नहीं निकला है।

कुछ पदार्थों के तल-तनाव यहाँ दिये हुए हैं—

पेट्रोल	२६	डाइन प्रति	सेंटीमीटर
किरासन	३०	,,	,,
स्नेहक तेल	३२-३४	,,	,,

बहुत हलके नैफ्था का तल-तनाव २० डाइन से भी कम पाया गया है। अन्तःसीमीय तनाव वैसा ही पाया गया है जैसा तल-तनाव होता है। तेल-जल का अन्तःसीमीय तनाव पी. एच्. पर बहुत कुछ निर्भर करता है। बहुत परिष्कृत तेल का अन्तःसीमीय तनाव पी. एच्. से स्वतंत्र होता है, पर कम परिष्कृत अथवा अल्प आक्सीकृत तेल का अन्तःसीमीय तनाव, पी. एच्. के मान की वृद्धि से, शीघ्रता से कम होता जाता है। ऐसा कार्बनिक अम्लों के कारण होता है। जल-एस्फाल्ट के अन्तःसीमीय तनाव का भी अध्ययन हुआ है। कठोरतर एस्फाल्ट के मान कम होते हैं।

तल-तनाव का मापन

तल-तनाव के मापन की अनेक विधियाँ हैं। उनमें नुए (Nuo"y) की विधि का सबसे अधिक उपयोग होता है। इस विधि में उस बल को नापते हैं जो द्रव के तल पर एक हलका तार वलय को खींचने के लिए आवश्यक है। यह विधि सरलतम है और इससे बहुत यथार्थ फल प्राप्त होता है। अन्तःसीमीय तनाव भी इसी विधि से नापा जा सकता है। अन्तःसीमीय तनाव को नापने के लिए बिन्दु-भार-विधि भी उपयुक्त होती है। पर, इससे प्राप्त परिणाम यथार्थ नहीं होते।

वर्त्तनांक

पेट्रोलियम के परीक्षण में वर्त्तनांक बड़े महत्त्व का गुण है। इससे पेट्रोलियम की प्रकृति का बहुत कुछ पता लगता है। अणुभार एक होते हुए, वर्त्तनांक की इस क्रम में वृद्धि होती है। पैराफिन, नैफ्थीन और सौरभिक। एक-चक्रीय की अपेक्षा बहु-चक्रीय नैफ्थीन और बहु-सौरभिक के वर्त्तनांक ऊँचे होते हैं। एक ही प्रकार के तेल में अणुभार की वृद्धि से वर्त्तनांक में वृद्धि होती है।

वर्त्तनांक का निर्धारण आबे वर्त्तनांकमापी में होता है। इससे यथार्थ परिणाम पर्याप्त प्राप्त होता है। निर्धारण भी सरल और शीघ्र होता है। पुल्फ्रिच का वर्त्तनांकमापी भी यथार्थ परिणाम के लिए अधिक उपयुक्त होता है।

ताप की वृद्धि से वर्त्तनांक कम होता है। वर्त्तनांक का तापगुणक घनत्व के तापगुणक का ०·५६ गुना होता है।

यह नियम पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बनों के लिए बिलकुल ठीक है; पर अ-हाइड्रोकार्बनों के लिए ठीक नहीं है। दबाव से भी वर्त्तनांक में परिवर्त्तन होता है।

वर्त्तन-विक्षेपण

किसी पदार्थ के प्रकाश के दो तरंग-दैर्घ्यों के वर्त्तनांकों के बीच के अन्तर को वर्त्तन-विक्षेपण कहते हैं। अधिकांश अन्वेषकों ने हाइड्रोजन की सी (६,५६३ आँ) और एफ् (४,८६१ आँ) रेखाओं का उपयोग किया है। इस गुण से पेट्रोलियम की प्रकृति निर्धारित करने में बड़ी सहायता मिलती है। इस विक्षेपण को नापने के लिए भी आबे वर्त्तनांकमापी का उपयोग होता है।

काशिता

सब कच्चे पेट्रोलियम काशितावान् होते हैं। वे दक्ष-भ्रामक होते हैं। कुछ तेल वाम-भ्रामक भी होते हैं। बहुत थोड़े तेल अकाशितावान् होते हैं। पेट्रोलियम तेल के सब अंश एक-से काशितावान् नहीं होते। मध्यभाग उसका सबसे अधिक काशितावान् होता है। २००° श० के नीचे के अंश में काशिता नहीं होती।

चुम्बकीय क्षेत्र में काशिता आ जाती है

एक्स-किरण-व्याभंग का भी अध्ययन हुआ है; पर उससे कोई व्यावहारिक लाभ नहीं पाया गया है।

पारनीललोहित अवशोषण-वर्णक्रम

पेट्रोलियम के अवशोषण-वर्णक्रम का अध्ययन हुआ है। इससे पेट्रोलियम में बेंज़ीन, नैफ्थलीन और फिनान्थ्रीन संजातों का पता लगता है। कौन संजात वास्तव में विद्यमान हैं, इसका पता नहीं लगता। अन्थ्रासीन संजातों का इससे पता नहीं लगता। बहुत उच्च परिष्कृत तेल में भी कुछ-न-कुछ सौरभिक रह जाते हैं, इसका इससे स्पष्ट प्रमाण मिलता है। शुद्ध पैराफिन और नैफ्थीन के वर्णक्रम में कोई अंतर नहीं देखा गया है।

प्रतिदीप्ति

प्रतिदीप्ति का पारनीललोहित-अवशोषण से घना संबंध है। किसी पदार्थ पर जब पारनीललोहित प्रकाश डाला जाता है, तब कुछ तो उसका अवशोषण हो जाता है; पर कुछ दृश्यों का तरंगदैर्घ्य क्षेत्र में बहिर्गमन होता है। यह प्रभाव सौरभिक पदार्थों में अधिकतम स्पष्ट होता है और संघनित वलय की वृद्धि से प्रबलता से बढ़ता है। बेंज़ीन के संजात बहुत अल्प प्रतिदीप्त होते हैं, नैफ्थलीन के संजात अधिक और तीन या तीन से अधिक वलय के

यौगिक तो प्रबलता से प्रतिदीप्त होते हैं। पैराफिन या नैफ्थीन तो प्रायः नहीं ही, अथवा बहुत ही अल्प प्रतिदीप्त होते हैं।

प्रतिदीप्ति से पेट्रोलियम की प्रकृति का पता लगाने की चेष्टाएँ हुई हैं। कुछ रीतियाँ प्रस्तावित भी हुई हैं, पर उनसे कोई लाभ होते नहीं देखा गया है। एक बात इससे अवश्य मालूम होती है। रखने से जब तेल का ह्रास होता है, वह इससे मालूम हो जाता है।

बाह्य पदार्थों का प्रभाव प्रतिदीप्ति पर बहुत पड़ता है। कुछ तो प्रतिदीप्ति को बिलकुल नष्ट कर देते हैं और कुछ उसकी थोड़ी वृद्धि करते हैं। ऐसा क्यों होता है, इसका ठीक-ठीक पता नहीं लगा है। ऐसा समझा जाता है कि ये पदार्थ तेल के साथ मिलकर अस्थायी पदार्थ बनते हैं। तेल में ०·१ प्रतिशत सल्फर-डायक्साइड से प्रतिदीप्ति बिलकुल नष्ट हो जाती है, पर यदि सामान्य ताप पर भी इस गैस को निकाल दिया जाय, तो प्रतिदीप्ति लौट आती है।

रंग

अनेक हाइड्रोकार्बन रंगीन, हरा, नीला और लाल होते हैं। ये हाइड्रोकार्बन सौरभिक होते हैं। साधारणतया इनमें कई वलय संघनित होते हैं। पेट्रोलियम में रंग इन हाइड्रोकार्बनों के कारण नहीं होता। पेट्रोलियम के निम्न क्वथनांक-अंश अधिक रंगीन होते हैं। ऐसे अंश में अणु में दो वलय से अधिक नहीं रह सकते। परिष्कार से भी इनका रंग जल्दी नहीं निकलता। ये रंग क्या है, इसका पता नहीं लगता। कुछ लोगों का मत है कि इनमें फलवीन (Fulvenes) रहते हैं। इनकी मात्रा बहुत ही अल्प रहती है और सामान्य परिष्कार अथवा आसवन से कठिनाई से निकलते हैं। यदि इन्हें सधूम सल्फ्यूरिक अम्ल अथवा सिलिका से साधित किया जाय तो प्रायः जल-सा सफेद तेल प्राप्त होता है।

सेबोल्ट रंगमापी से रंग का निर्धारण होता है। क्रोमेट और फेरिक लवणों की तुलना से भी रंग का निर्धारण हो सकता है। प्रकाश-विद्युत् रंगमापी का उपयोग आज बढ़ रहा है।

अवरक्त अवशोषण-वर्णक्रम

अवरक्त-अवशोषण वर्णक्रम से पेट्रोलियम के संबंध में अनेक बातें मालूम होती हैं। वसा-यौगिकों के कार्बन-हाइड्रोजन बन्धन-वर्णक्रम विशेष महत्व के हैं; क्योंकि ये वर्णक्रम परमाणुओं के बन्धनों से संयुक्त परमाणुओं के परमाणुभार पर निर्भर करते हैं। कार्बन और हाइड्रोजन की संहति में बहुत विभिन्नता होने के कारण इनके वर्णक्रम से प्राथमिक, द्वितीयक और तृतीयक हाइड्रोकार्बनों को सरलता से विभेद कर सकते हैं। यह विधि केवल पैराफिन हाइड्रोकार्बनों के लिए अधिक उपयुक्त है। ओलिफीन-हाइड्रोकार्बनों में अणु की दृढ़ता के कारण प्रभाव पेचीला हो जाता है। चक्रीय यौगिकों में और भी अधिक पेचीला हो जाता है। पर, ऐसे यौगिकों के वर्णक्रम से यौगिकों के पहचानने में, समावयवों के पहचानने में, सहायता मिलती है।

गलनांक

अणुभार की वृद्धि से शुद्ध पैराफिन हाइड्रोकार्बन के गलनांक क्रमशः बढ़ते जाते हैं। अणु की संमिति से भी गलनांक बढ़ता है।

नार्मल पैराफिन हाइड्रोकार्बनों के गलनांक निम्नलिखित हैं :—

कार्बन परमाणु की संख्या	गलनांक °श०	कार्बन परमाणु की संख्या	गलनांक °श०
१	—१८२	२०	३६
२	—१७२	२१	४०
३	—१८७	२२	४४
४	—१३६	२३	४७
५	—१३०	२४	५१
६	—९४	२५	५३
७	—९१	२६	५७
८	—५७	२७	६०
९	—५४	२८	६२
१०	—३०	२९	६४
११	—२६	३०	६६
१२	—१०	३१	६८
१३	—६	३२	७०
१४	६	३३	७२
१५	१०	३४	७३
१६	१८	३५	७५
१७	२२	४०	८१
१८	२८	५०	९२
१९	३२	६०	९९

सशाख हाइड्रोकार्बनों के गलनांक नार्मल हाइड्रोकार्बनों के गलनांक से बहुत निम्नतर होते हैं। असंतृप्ति का प्रभाव गलनांक पर पड़ता है। यद्यपि ईथेन —१७२° श० पर और एथिलीन —१६९·५° श० पर पिघलता है और दोनों के गलनांक में अन्तर बहुत कम है; पर साइक्लो-हेक्सेन और साइक्लो-हेक्सीन (गलनांक क्रमशः ६·२° श० और —१०४° श०) के गलनांकों में बहुत अधिक अन्तर है। द्विबन्ध की संबद्धता से गलनांक में बहुत अन्तर आ जाता है। नार्मल ब्युटेन —१३५° श० पर और १,३—ब्युटेडीन —५° श० पर पिघलता है। ये हाइड्रोकार्बन जल्दी मणिभ नहीं बनते। ठंडे होने पर वे काँच-सा ठोस बन जाते हैं। गलनांक का निर्धारण शीतक वक्र के समस्थल (Plateau) द्वारा होता है।

वाष्प-दवाव और क्वथनांक

क्वथनांक बहुत कुछ अणुभार पर निर्भर करता है। संमिति से इसपर बहुत अल्प प्रभाव पड़ता है। २०० अणुभारवाले हाइड्रोकार्बन सामान्य दबाव पर आसुत हो जाते हैं। शून्य में ५०० अणु भारवाले तक आसुत हो जाते हैं। क्वथनांक से पेट्रोलियम की प्रकृति के सम्बन्ध की कोई बात नहीं मालूम होती। इसके आसवन-वक्र कुछ महत्त्व के हैं; क्योंकि उनसे पेट्रोल के सम्बन्ध में कुछ बातें मालूम होती हैं।

कथनांक पर दबाव का प्रचुर प्रभाव पड़ता है। ये व्यवसाय की दृष्टि से महत्त्व के भी हैं। शुद्ध हाइड्रोकार्बन और पेट्रोलियम दोनों के वाष्प-दबाव और ताप के सम्बन्ध में अनेक निबन्ध छपे हैं। इस सम्बन्ध में कई सूत्र भी निकले हैं और उनकी पुष्टि सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से भी होती है।

वाष्पायन की गुप्त ऊष्मा

पेट्रोलियम-व्यवसाय में वाष्पायन की गुप्त ऊष्मा बड़े महत्त्व की है। क्योंकि, इससे आसवन-यंत्र के बनाने में सहायता मिलती है। विभिन्न पैराफिन-हाइड्रोकार्बनों के वाष्पायन की गुप्त ऊष्मा बड़ी सावधानी से निकाली गई है और उनका वक्र खींचा गया है। ताप की वृद्धि से उसका मान बड़ी शीघ्रता से घटता है और क्रांतिक ताप पर शून्य हो जाता है। हाइड्रोकार्बनों के अणुभार की वृद्धि से गुप्त ऊष्मा क्रमशः बढ़ती है।

नार्मल हाइड्रोकार्बनों की अपेक्षा सशाख हाइड्रोकार्बनों की गुप्त ऊष्मा कुछ कम होती है। चक्रीय हाइड्रोकार्बनों की गुप्त ऊष्मा कुछ अधिक होती है, पेट्रोलियम तेल के वाष्पायन की गुप्त ऊष्मा निम्नलिखित समीकरण से प्राप्त होती है—

$$\text{गुप्त ऊष्मा} = \frac{१}{\text{वि० गु०}}(११०.९ - ०.०९\ \text{त})$$

जहाँ गुप्त ऊष्मा प्रति पाउण्ड 'त' ताप पर ब्रिटिश ऊष्मा मात्रक में है और विशिष्ट गुरुत्व ६०/६०° फ० पर है।

विशिष्ट ऊष्मा

पेट्रोलियम की विशिष्ट ऊष्मा महत्त्व की है, क्योंकि पेट्रोलियम से निकले विभिन्न अंशों के गरम और ठंडा करने में इसकी आवश्यकता पड़ती है, पैराफिन हाइड्रोकार्बनों की विशिष्ट ऊष्मा का विशेष अध्ययन हुआ है और उसके फलस्वरूप निम्नलिखित समीकरण प्राप्त हुआ है—

$$\text{'त' ताप पर तेल की विशिष्ट ऊष्मा} = \frac{१}{\text{वि० गु०}}(०\cdot३८८ + ०\cdot०००४५\ \text{त})$$

जहाँ वि० गु० तेल का विशिष्ट गुरुत्व है। ताप की वृद्धि से विशिष्ट ऊष्मा बढ़ती है और विशिष्ट गुरुत्व की वृद्धि से घटती है। इस समीकरण से प्राप्त अंक में पाँच प्रतिशत से अधिक की त्रुटि नहीं होती। पैराफिन-तेल के लिए तो बिलकुल ठीक बैठता है; पर उच्च सौरभिक तेलों के लिए अंक कुछ कम होता है और भंजित तेल के लिए तो और भी कम होता है।

ऊष्मीय चालकता

हाइड्रोकार्बन-तेलों की ऊष्मीय चालकता का अध्ययन हुआ है। ठोस पैराफिन मोम की चालकता ०·०००५६ है। ताप से इसमें प्रायः कोई अन्तर नहीं पड़ता। हाइड्रोकार्बनों की चालकता का मान निम्नलिखित समीकरण से प्राप्त होता है—

$$\text{ऊष्मीय चालकता} = \frac{०\cdot२८}{\text{घनत्व}}(१ - ०\cdot०००५४\ \text{त}) \times १०^{-२}$$

परिणाम साधारणतया यथार्थ होता है।

क्रांतिक गुण

शुद्ध हाइड्रोकार्बनो के क्रांतिक ताप, दबाव और आयतन का अध्ययन हुआ है। पर मिश्र हाइड्रोकार्बनों के क्रांतिक गुण शुद्ध हाइड्रोकार्बनों के गुणों से बिलकुल भिन्न होते हैं। पेट्रोलियम के अनेक अंशों के क्रांतिक गुणों का अध्ययन हुआ है। इनमें 'स्थिर' और 'गति' दोनों रीतियों का उपयोग हुआ है। निम्न ताप के लिए 'स्थिर' रीति अधिक उपयुक्त है। उच्च ताप के लिएप्रारम्भिक भंजन ताप के— लिए—'गति' रीति अधिक उपयुक्त है।

दहन ऊष्मा

पेट्रोलियम की दहन ऊष्मा का निर्धारण बड़ी यथार्थता से हुआ है। इसका मान निम्नलिखित समीकरण से प्राप्त होता है—

दहन ऊष्मा = १२४००–२१०० × वि० गु०, जहाँ विशिष्ट गुरुत्व ६०/६०°५० फ० ताप का है। विभिन्न अंशों की दहन ऊष्मा निम्नलिखित है—

पदार्थ	दहन ऊष्मा		
कच्चा पेट्रोलियम	१०,००० से ११, ६००	कलॉरी	प्रतिग्राम
पेट्रोल	११२०० से ११४७०	,,	,,
किरासन और डीजेल तेल	१०,४५० से ११,२००	,,	,,
इंधन तेल	९,५५० से ११,१५०	,,	,,

दमकांक और अग्नि-अंक

तेलों का दमकांक व्यवसाय की दृष्टि से महत्त्व का है। जलाने के लिए तेल उपयुक्त है अथवा नहीं; उसके जलाने में कोई विपद् की आशंका है अथवा नहीं, इसका ज्ञान दमकांक से होता है। दमकांक की निर्धारण-विधि का विस्तार से उल्लेख परीक्षण-अध्याय में हुआ है। पेट्रोलियम का अग्नि-अङ्क वह ताप है, जिसपर तेल बिना किसी बाह्य ऊष्मा से स्वयं जलता रहता है।

मेघ-बिन्दु और बहाव-बिन्दु

पेट्रोलियम-तेल के नमूने को ठंडा किया जाता है। जिस ताप पर तेल में मलिनता आ जाती है, वही उस तेल का मेघ-बिन्दु है। जिस ताप पर तेल का बहना रुक जाता है, वह ताप तेल का बहाव-बिन्दु। मेघ-बिन्दु पर वस्तुतः मोम का अवक्षेप निकलना शुरू हो जाता है। यहाँ ठंडा करने में बड़ी सावधानी की आवश्यकता पड़ती है। बहुत धीरे-धीरे तेल को ठंडा करना चाहिए, नहीं तो एक-ब-एक ठंडा करने से जो मान प्राप्त होता है, वह यथार्थ मान से नीचा होता है। जिस तेल में मोम नहीं होता, उसका मेघ-बिन्दु नहीं होता है।

बहाव-बिन्दु भी मोम के कारण ही होता है। इस दशा में तेल में इतना मोम होना चाहिए कि वह लेई-सा पिंड बन जाय। मोम-रहित तेल का भी बहाव-बिन्दु होता है; क्योंकि बहुत ठंडा करने से तेल की श्यानता बढ़ती जाती है और अन्त में वह काँच-सा बन सकता है।

एनिलीन-बिन्दु

एनिलीन-बिन्दु वह ताप है जिसपर तेल और एनिलीन के सम भाग मिश्र्य होते हैं। इसे नापने के लिए तेल और एनिलीन के सम आयतन को मिलाकर गरम करते हैं, उसे बराबर हिलाते रहते हैं। जब मिश्रण समावयव हो जाता है, तब उसे धीरे-धीरे ठंडा करते हैं। जिस ताप पर मेघ-बिन्दु पहुँच जाता है, उसे लिख लेते हैं। यह ताप तेल का एनिलीन-बिन्दु है। यह ताप बहुत यथार्थ होता है। पानी के लेश से एनिलीन-बिन्दु बहुत बढ़ जाता है। अतः इस प्रयोग के लिए एनिलीन विशेष रूप से सूखा रहना चाहिए। ऐसे एनिलीन के हिमांक-६'२° श० और न-हेप्टेन के एनिलीन-बिन्दु ७०'६° श० से एनिलीन के सूखे होने का निश्चय हो जाता है। इसके लिए एनिलीन का अभिनव आसुत होना आवश्यक नहीं है; पर इसे आसुत कर और सुखाकर अच्छे प्रकार से बन्द कर अन्धेरे में रखे रहने से बहुत दिनों तक काम चल सकता है।

एनिलीन-बिन्दु से सौरभिक यौगिकों की उपस्थिति का बहुत कुछ पता लगता है। इनके रहने से पेट्रोलियम के विलायक गुण और पेट्रोल के दहन-गुणों का हमें ज्ञान प्राप्त होता है।

वैद्युत चालकता

पेट्रोलियम की वैद्युत चालकता अत्यन्त अल्प होती है। इसका मान $१०^{-१७}$ से $१०^{-१२}$ ओम का होता है। अपद्रव्यों के लेश से चालकता में बहुत अन्तर हो जाता है। ताप की वृद्धि से तेलों की चालकता बढ़ती है, पर यदि तेल में मोम हो तो चालकता कम हो जाती है। तेल के बहुत पतले फिल्मों की चालकता बहुत ही ऊँची पाई गई है।

अणुभार

व्यवसाय की दृष्टि में पेट्रोलियम का अणुभार महत्त्व का नहीं है; पर पेट्रोलियम किस श्रेणी का है, इसका निश्चय करने में इससे सहायता मिलती है और अणुभार का उपयोग आज अधिकता से बढ़ रहा है।

पट्रोलियम के कुछ अंशों के अणुभार

पेट्रोल	१००
हलका नैफ्थीनीय स्नेहक तेल	१५०
हलका पैराफिनीय स्नेहक तेल	३००
भारी नैफ्थीनीय स्नेहक तेल	३००
भारी पैराफिनीय स्नेहक तेल	६००

साधारणतया अणुभार हिमांक-विधि से निकाले जाते हैं। इसमें अनेक विलायकों का उपयोग हुआ है। इनसे जो परिणाम प्राप्त होते हैं, वे दसवें प्रतिशत के अन्दर यथार्थ होते हैं। उत्क्वथनांक-विधि का भी इधर उपयोग हुआ है। इससे परिणाम बहुत शीघ्र निकलता और समान रूप से यथार्थ भी होता है। वाष्प-घनत्व-रीति से

भी अणुभार निकाला गया है। वाष्पायन की गुप्त ऊष्मा-विधि से भी अणुभार निकाला गया है। कुछ भौतिक गुणों के द्वारा भी अणुभार निकालने की चेष्टाएँ हुई हैं। औसत तेलों के लिए यह रीति असन्तोषजनक नहीं है; पर इससे प्राप्त परिणाम सन्निकट होते हैं—बहुत यथार्थ नहीं होते। अतः जहाँ बड़े यथार्थ परिणाम की आवश्यकता हो, वहाँ उनका उपयोग नहीं हो सकता है।

पेट्रोलियम के विभिन्न प्रभागों का वास्तविक लक्षण देना तो बिलकुल असम्भव है; पर उनके लक्षणों का कुछ आभास निम्नलिखित आंकड़ों में मिल जायगा—

मोटर स्पिरिट (पेट्रोल)

हल्का क़िस्म

प्रारम्भिक क्वथनांक	२५-४०° श०
अन्तिम क्वथनांक	१७०-१९०° स०
१६०° श० पर आसुत	४० प्रतिशत

भारी किस्म

प्रारम्भिक क्वथनांक	३५-५०° श०
अन्तिम क्वथनांक	१९०-२१५° श०
१००° श० पर आसुत	२५ प्रतिशत

सफेद स्पिरिट

दमकांक (आवेल परीक्षण)	७७-८५° फ०
प्रारम्भिक क्वथनांक	१०५-११५° श०
अन्तिम क्वथनांक	२००-२२०° श०
१७०° श० पर आसुत	९० प्रतिशत

किरासन

दमकांक (आवेल परीक्षण)	८५-१३०° फ०
प्रारम्भिक क्वथनांक	११०-१३५° श०
अन्तिम क्वथनांक	२८०-३२५° श०
२००° श० आसुत	३० प्रतिशत

गैस तेल

दमकांक (पेंस्की-मार्टेन्स)	१५०-२००° फ०
३५०° श० पर आसुत	६० प्रतिशत

स्नेहन तेल

हल्का किस्म

दमकांक (पेंस्की-मार्टेंस)	३२०-३४०° फ०
७०° फ० पर श्यानता (रेडवुड विस्कोमीटर न० १)	३२५-५२५ सेकंड
१४०° फ० पर श्यानता (रेडवड विस्कोमीटर न० २)	६०-७५ सेकंड

मध्यम किस्म

दमकांक (पेंस्की-मार्टेन्स)	३५०-३८०° फ०
७०° फ० पर श्यानता (रेडवूड विस्कोमीटर न० १)	९००-१५०० सेकंड
१४०° फ० पर श्यानता (रेडवूड विस्कोमीटर न० २)	११०-१३५ सेकंड

भारी किस्म

दमकांक (पेंस्की-मार्टेन्स)	४००-४४०° फ०
१४०° फ० पर श्यानता (रेडवूड विस्कोमीटर न० १)	१५०-३०० सेकंड
२००° फ० पर श्यानता (रेडवूड विस्कोमीटर न० २)	५०-६० सेकंड

ईंधन तेल

दमकांक (पेंस्की-मार्टेन्स)	१५०-२२०° फ०
श्यानता	बहुत विभिन्न
शीत-परीक्षण	बहुत विभिन्न
कलॉरी-मान	१०,१००-१०,८०० कलॉरी प्रतिग्राम
गन्धक	०.५-४.० प्रतिशत

पैराफिन मोम

द्रवणांक	१२०-१३५° फ०

नवाँ अध्याय

पेट्रोलियम का रसायन

पेट्रोलियम में प्रधानतया हाइड्रोकार्बन रहता है। हाइड्रोकार्बन कार्बन और हाइड्रोजन का यौगिक है। कार्बन एक बड़े महत्त्व का तत्त्व है। इस तत्व की दो विशेषताएँ हैं। इसका आशय यह है कि कार्बन का एक परमाणु हाइड्रोजन, क्लोरीनब्रोमीन इत्यादि तत्वों के चार-चार परमाणुओं से संयुक्त हो सकता है। कार्बन की दूसरी विशेषता यह है कि कार्बन के परमाणु परस्पर बहुत बड़ी संख्या में संयुक्त हो अनेक यौगिक बन जाते हैं। इस गुण के कारण ही कार्बन के यौगिकों की संख्या आज पाँच लाख तक पहुँच गई है।

हाइड्रोकार्बन कई प्रकार के होते हैं। कुछ हाइड्रोकार्बन ऐसे हैं, जिनमें कार्बन के समस्त परमाणु केवल हाइड्रोजन परमाणुओं से संयुक्त हो संतृप्त यौगिक बनते हैं। ऐसे हाइड्रो-कार्बन को संतृप्त हाइड्रोकार्बन या पैराफिन हाइड्रोकार्बन कहते हैं। पैराफिन हाइड्रो-कार्बनों में हाइड्रोजन की मात्रा महत्तम होती है।

एक दूसरे प्रकार के हाइड्रोकार्बनों में हाइड्रोजन परमाणुओं की संख्या अपेक्षया कम होती है। ऐसे हाइड्रोकार्बनों को असंतृप्त हाइड्रोकार्बन कहते हैं। असंतृप्त हाइड्रो-कार्बनों की फिर दो श्रेणियाँ होती हैं। जिस श्रेणी में हाइड्रोजन-परमाणु की संख्या अधिक होती है, उसे ओलिफिन या एथिलीन हाइड्रोकार्बन और जिनमें हाइड्रोजन-परमाणु की संख्या कम होती है, उन्हें ऐसिटिलीन हाइड्रोकार्बन कहते हैं। इन संतृप्त और असंतृप्त हाइड्रोकार्बनों में कार्बन के परमाणु एक खुली शृंखला में बद्ध रहते हैं।

एक दूसरे प्रकार के हाइड्रोकार्बनों में कार्बन के परमाणु बन्द शृंखला में बद्ध रहते हैं। ऐसे हाइड्रोकार्बनों को चक्रिक हाइड्रोकार्बन कहते हैं। चक्रिक हाइड्रोकार्बनों में भी कई श्रेणियाँ होती हैं। एक श्रेणी को नैफ्थीन कहते हैं और दूसरी को सौरभिक।

पेट्रोलियम में पैराफिन, नैफ्थीन, सौरभिक और असंतृप्त हाइड्रोकार्बन रहते हैं। पेट्रोलियम का अधिक अंश ४० और ३५० श० के बीच उबलता है। जो अंश निम्न ताप पर उबलता है, उसमें हाइड्रोजन की मात्रा अधिक रहती है और ज्यों-ज्यों क्वथनांक बढ़ता है, कार्बन की मात्रा बढ़ती जाती है।

पेट्रोलियम के हाइड्रोकार्बनों का अध्ययन कठिनाई से भरा हुआ है। अभीतक अपेक्षया कुछ ही हाइड्रोकार्बनों का पृथक्करण हो सका है। इधर पेट्रोलियम के कुछ अंशों में कौन-कौन हाइड्रोकार्बन हैं, उन्हें पता लगाने के अधिक प्रयत्न हुए है। ऐसे प्रयत्नों के फल-स्वरूप ओक्लाहोमा के क्षेत्रों से प्राप्त १८०° श० से नीचे उबलनेवाले अंश में जो हाइड्रो-कार्बन पाये गये हैं, उनके नाम नीचे दिये जाते हैं—

पैराफिनीय-सारिणी

संख्या	नाम और किस्म	सूत्र	क्वथनांक °श०
१	मिथेन	CH_4	—१६१·७
२	ईथेन	C_2H_6	—८८·६
३	प्रोपेन	C_3H_8	—४२·२
४	आइसो-ब्युटेन	C_4H_{10}	—१२·१
५	न-ब्युटेन	C_4H_{10}	—०·२
६	मैथिल-ब्युटेन	C_5H_{12}	·७·६
७	न-पेण्टेन	C_5H_{12}	३६·१
८	२, ३-डाइमेथिल ब्युटेन	C_6H_{14}	५८·०
९	२-मेथिल पेण्टेन	C_6H_{14}	६०·३
१०	३-मेथिल पेण्टेन	C_6H_{14}	६३·३
११	न-हेक्सेन	C_6H_{14}	६८·७
१२	२,२-डाइमेथिल पेण्टेन	C_7H_{16}	७८·६
१३	३-मेथिल हेक्सेन	C_7H_{16}	९०·०
१४	३-मेथिल हेक्सेन	C_7H_{16}	९२·०
१५	न-हेप्टेन	C_7H_{16}	९८·४
१६	२-मेथिल हेप्टेन	C_8H_{18}	११७·२
१७	न-ऑक्टेन	C_8H_{18}	१२५·६
१८	२,६-डाइमेथिल हेप्टेन	C_9H_{20}	१३५·२
१९	२,३-डाइमेथिल हेप्टेन	C_9H_{20}	१४०·८
२०	४-मेथिल ऑक्टेन	C_9H_{20}	१४२·४
२१	२-मेथिल ऑक्टेन	C_9H_{20}	१४३·३
२२	३-मेथिल ऑक्टेन	C_9H_{20}	१४४·२
२३	न-नोनेन	C_9H_{20}	१५०·७
२४	न-डीकेन	$C_{10}H_{22}$	१७४·०
२५	न-डोडीकेन	$C_{12}H_{26}$	२१६·६
	नैफ्थीन		
१	साइक्लोपेण्टेन	C_5H_{10}	४९·५
२	मेथिल साइक्लो पेण्टेन	C_6H_{12}	७१·९
३	साइक्लो हेक्सेन	C_6H_{12}	८०·८
४	१,१-डाइमेथिल साइक्लो पेण्टेन	C_7H_{14}	८७·५
५	ट्रांस-१,३-डाइमेथिल साइक्लोपेण्टेन	C_7H_{14}	९०·९

पैराफिनीय सारिणी

संख्या	नाम और किस्म	सूत्र	क्वथनांक ०°श०
६	ट्रांस १,३-डाइमेथिल साइक्लोपेण्टेन	C_7H_{14}	९१·९
७	मेथिल-साइक्लो हेक्सेन	C_7H_{14}	१००·९
८	औक्टा-नैफ्थीन	C_8H_{16}	११९·८
९	१,३-डाइमेथिल साइक्लोहेक्सेन	C_8H_{16}	१२०·३
१०	१,२-डाइमेथिल साइक्लोहेक्सेन	C_8C_{16}	१२३·४
११	एथिल साइक्लोहेक्सेन	C_8H_{16}	१३१·८
१२	नोना नैफ्थीन	C_9H_{18}	१३६·७
१३	१,२,४-ट्राइमेथिल साइक्लोहेक्सेन	C_9H_{18}	१४१·२
	सौरभिक		
१	बेंज़ीन	C_6H_6	८०·१
२	टोलिवन	C_7H_8	११०·६
३	एथिल बेंज़ीन	C_8H_{10}	१३६·२
४	पैरा-जाइलीन	C_8H_{10}	१३८·४
५	मीटा-जाइलीन	C_8H_{10}	१३९·२
६	अर्थो-जाइलीन	C_8H_{10}	१४४·४
७	आइसो-प्रोपील बेंज़ीन	C_9H_{12}	१५२·४
८	न-प्रोपील बेंज़ीन	C_9H_{12}	१५९·५
९	१-मेथिल-३-एथिल बेंज़ीन	C_9H_{12}	१६१·३
१०	१-मेथिल-४-एथिल बेंज़ीन	C_9H_{12}	१६१·९
११	१,३,५-ट्राइमेथिल बेंज़ीन	C_9H_{12}	१६९·२
१२	१-मेथिल-२-एथिल बेंज़ीन	C_9H_{12}	१६४·७
१३	१,२,४-ट्राइमेथिल बेंज़ीन	C_9H_{12}	१६९·२
१४	१,२,३-ट्राइमेथिल बेंज़ीन	C_9H_{12}	१७६·१
१५	१,२,३,४-टेट्रामेथिल बेंज़ीन	$C_{10}H_{14}$	२०५·१
१६	५,६,७,८-टेट्राहाइड्रो नैफ्थलीन	$C_{10}H_{14}$	२०७·६
१७	नैफ्थलीन	$C_{10}H_8$	२८१·०
१८	२ मेथिल नैफ्थलीन	$C_{11}H_{10}$	२४१·१
१९	१-मेथिल नैफ्थलीन	$C_{11}H_{10}$	२४४·८
२०	१-मेथिल-५,६,७,८-टेट्राहाइड्रो नैफ्थलीन	$C_{11}H_{14}$	२४३·३
२१	२-मेथिल-५,६,७,८-टेट्राहाइड्रो नैफ्थलीन	$C_{11}H_{14}$	२२९·०

९९ और १४९° श० पर उबलनेवाले अंश से ११ हाइड्रोकार्बनों का पृथक्करण हुआ था। सारे तेल की यह ७९ प्रतिशत मात्रा थी। इससे रॉसिनी इस सिद्धान्त पर पहुँचे कि यद्यपि पेट्रोलियम में अनेक हाइड्रोकार्बन उपस्थित रह सकते हैं; पर उनका अधिक भाग कुछ हाइड्रोकार्बनों का ही बना हुआ है। उन्होंने गणना कर देखा है कि इस भाग के आधे अंश केवल ८ हाइड्रोकार्बनों और दो-तृतीयांश केवल १८ हाइड्रोकार्बनों के बने हैं—यद्यपि इनमें समस्त हाइड्रोकार्बनों की संख्या १०० रहती है और सैद्धान्तिक दृष्टि से १००० हाइड्रोकार्बन हो सकते हैं।

इन अंशों में ५ हेक्सेनों में केवल ४, ९ हेप्टेनों में केवल ४, १८ ऑक्टेनों में केवल २, ३५ नोनेनों में केवल १ और ७५ डीकेनों में केवल १ पृथक् किया गया है। सौरभिक हाइड्रोकार्बनों में ३ मेथिल-बेंज़ीन और नैफ्थीनों में साइक्लो-हेक्सेन और मेथिल-साइक्लोहेक्सेन अधिकता से पाये गये हैं। इस अंश में ओलिफीन हाइड्रोकार्बन बिलकुल नहीं थे। इस अंश में पैराफिन ३० प्रतिशत, नैफ्थीन ३० प्रतिशत और सौरभिक १० प्रतिशत थे।

आसवन और प्रभागशः स्तम्भ की दक्षता से हाइड्रोकार्बनों का पृथक्करण अधिक सफलता से आजकल होता है। हाइड्रोकार्बनों के पृथक्करण में विभिन्न दबाव पर आसवन, अन्य द्रवों के साथ मिलाकर आसवन, प्रवृत्य प्रविलयन, सिलिकाजेल पर प्रवृत्य अधिशोषण, रसायनों के प्रति विभिन्न प्रतिक्रिया और मणिभीकरण का उपयोग हुआ है।

पेट्रोलियम से निकली गैसों में मिथेन, ईथेन, प्रोपेन, न-ब्युटेन और आइसोब्युटेन पाये गये हैं। अमेरिकी गैसों में पेण्टेन और आइसोपेण्टेन भी पाये गये हैं। नियो-पेण्टेन किसी गैस में नहीं मिला है।

कुछ वैज्ञानिकों ने ऐसे प्रभागशः स्तम्भ के साथ आसवन किया है, जिसमें ३५ या ३५ से अधिक पट्ट थे। उसके परिणाम से मालूम हुआ कि पेट्रोल में प्रधानतया सीधी खुली हुई शृंखलाएँ और सौरभिक हाइड्रोकार्बन थे। दो पेट्रोल के तुलनात्मक अध्ययन से पैराफिन के सम्बन्ध में निम्नांकित आँकड़े प्राप्त हुए हैं—

	पेन्सिलवेनिया-पेट्रोल	मिचीगान-पेट्रोल
	प्रतिशत	प्रतिशत
समावयवी हेक्सेन	३·३५	०·८२
न-हेक्सेन	२·७	६·७८
समावयवी हेप्टेन	४·०७	१·२३
न-हेप्टेन	३·३१	१०·०५
समावयवी ऑक्टेन	७·५०	१·८८
न-ऑक्टेन	५·४६	७·७२

पेन्सिलवेनिया-पेट्रोल में बहुत शुद्ध २-मेथिल पेण्टेन, न-हेप्टेन और न-ऑक्टेन भी पाये गये हैं। अल्पमात्रा में २,३-डाइमेथिल ब्युटेन और ३-मेथिल पेण्टेन भी पाये गये हैं। डाइमेथिल साइक्लो-पेण्टेन और डाइमेथिल साइक्लो-हेक्सेन का भी पता लगा है।

२,२-डाइमेथिल ब्युटेन को भी कुछ लोगों ने निकाला है। कुछ नैफ्थीन हाइड्रोकार्बन का भी पता लगा है। भिन्न भिन्न क्षेत्रों के पेट्रोल में पैराफिन और सौरभिक हाइड्रो-कार्बनों के समानुपात एक-से नहीं होते।

किरासन

किरासन का क्वथनांक १७५ से २७५° श० होता है। इस अंश का अध्ययन और अन्वेषण बहुत विस्तार से अनेक वैज्ञानिकों के द्वारा हुआ है। इसका संशोधन भी बहुत यथार्थता से प्रबल और सधूम सलफ्यूरिक अम्ल द्वारा हुआ है। किरासन में जो पैराफिन हाइड्रोकार्बन पाये गये हैं, उनमें २१.° क्वथनांक के $C_{12}H_{26}$ हाइड्रोकार्बन से २७५° क्वथनांक के $C_{16}H_{34}$ हाइड्रोकार्बन पाये गये हैं। सम्भवतः इसमें इन हाइड्रोकार्बनों के समावयवी रूप भी विद्यमान हैं।

वैगनर ने मध्य-अमेरिका के किरासन का बड़ी सावधानी से अध्ययन किया है। इस किरासन का सल्फर-डायक्साइड के द्वारा निष्कर्ष निकाला था। उससे ५.४ प्रतिशत निष्कर्ष निकला था। इस किरासन के निम्नलिखित गुण थे—

क्वथनांक	१६२ से २४०° श०
विशिष्ट गुरुत्व	०.८१३२

निष्कर्ष के परीक्षण से ऐसे अंश प्राप्त हुए, जिनके निम्नांकित गुण थे—
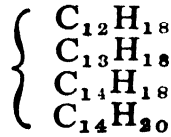
विशिष्ट गुरुत्व	०.८७ से ०.९१८
सूत्र	$C_{12}H_{18}$, $C_{13}H_{18}$, $C_{14}H_{18}$, $C_{14}H_{20}$
अणुभार	१६२ से १८८

वैगनर ने इन मिश्रणों में चक्रिक ओलिफीन और सम्भवतः डाइ-ओलिफीन भी पाये थे। यह संभव है कि कच्चे तेल में ओलिफीन हाइड्रोकार्बन न हों और आसवन से वे बने हों।

सल्फर-डायक्साइड से निष्कर्ष निकाल लेने पर जो अविलेय हाइड्रोकार्बन बच गये थे, उनमें ६५ प्रतिशत ऐसे थे, जिन पर सलफ्यूरिक अम्ल की कोई क्रिया नहीं थी। ऐसे अंश के निम्नलिखित गुण थे—

अणुभार	१८२ से १९६
हिमांक	—४३ से -२१° श०
संघटन	$C_{13}H_{26}$ से $C_{14}H_{28}$

संभवतः ये एक-चक्रिक नैफ्थीन हैं।

२५० से १७५° श० के बीच उबलनेवाले किरासन में डाइमेथिल नैफ्थलीन और फ्लूरीन के होने का पता लगा है। कुछ अंश में ६० से ८५ प्रतिशत साइक्लोहेक्सेन श्रेणी के हाइड्रोकार्बन थे। हाइड्रोकार्बनों की प्रकृति का ज्ञान विहाइड्रोजनीकरण से बहुत कुछ हुआ है।

संक्षेप में किरासन में सशाख पैराफिन, एक-चक्रिक और द्वि-चक्रिक नैफ्थीन, मिश्रित सौरभिक-नैफ्थीन, जिनके अणु-भार C_{12} से C_{15} होते हैं, रहते हैं। कुछ चक्रिक असंतृप्त यौगिक भी रहते हैं; पर यह निश्चित नहीं है कि वे कच्चे पेट्रोलियम में रहते हैं अथवा आसवन से भंजन द्वारा बनते हैं।

गैस-तेल

गैस-तेल के संघटन का ज्ञान हमें बहुत अल्प है। इस के अणु-भार C_{15} से C_{20} के बीच पाये गये हैं। ये अधिक पेचीले होते हैं; क्योंकि इनके समावयवों की संख्या बहुत बड़ी होती है। ऐसा अनुमान है कि गैस-तेल में सौरभिक और नैफिथनीय हाइड्रोकार्बन एक और द्वि-चक्रिक नैफ्थीन तथा नैफ्थीन-सौरभिक रहते हैं। इसके प्राप्त करने में भंजन रोका नहीं जा सकता। आसवन के समय कुछ असंतृप्त हाइड्रोकार्बन अवश्य टूट जाते हैं; यह तेल अधिक क्रियाशील होता है। यह सरलता से आक्सीकृत हो जाता है। इसके क्रियाशील होने का कारण 'टरशियरी' हाइड्रो-कार्बन समझा जाता है। ऐसा हाइड्रोजन १,२ मेथिल साइक्लोपेण्टेन में है, जो क्वथनांक पर वायु से आक्सीकृत हो जाता है।

क्वथनांक की ऊपरी सीमा अथवा तेल का अणुभार अनिश्चित है। यह तेल स्नेहन के लिए ठीक नहीं है। इंधन के लिए ही यह तेल उपयोगी है।

गैस-तेल में C_{16} से C_{19} के पैराफिन होते हैं। C_nH_{2n} सूत्र के हाइड्रो-कार्बन भी पाये गये हैं। ऐसे हाइड्रो-कार्बनों में $C_{17}H_{34}$ तक के हाइड्रो-कार्बन पाये गये हैं। C_nH_{2n-2} के हाइड्रो-कार्बन भी C_{19} से C_{20} तक के पाये गये हैं। इससे केवल यह बात स्पष्ट हो जाती है कि इसमें संतृप्त और असंतृप्त दोनों प्रकार के हाइड्रो-कार्बन रहते हैं।

स्नेहक तेल

स्नेहक तेल गाढ़ापन अथवा सान्द्रता के कारण अन्य तेलों से भिन्न होता है। किन कारणों से तेल में सान्द्रता होती है, इस सम्बन्ध में एक मत नहीं है। पेन्सिलवेनिया से प्राप्त स्नेहक तेल के विश्लेषण से पता लगा कि इसमें C_{19} से C_{27} के हाइड्रोकार्बन रहते हैं। इसमें जो ठोस रहता है, वह C_nH_{2n+2} संघटन का हाइड्रोकार्बन होता है और जो द्रव रहता है, वह C_nH_{2n} संघटन का। कुछ स्नेहक तेल में C_nH_{2n-2} और C_nH_{2n-4} संघटन के हाइड्रोकार्बन भी पाये गये हैं। कुछ नमूनों में C_nH_{2n-20} संघटन के हाइड्रोकार्बन भी पाये गये हैं।

उपस्नेहक तेल में कम हाइड्रोजनवाले और अधिक हाइड्रोजनवाले—दोनों प्रकार के हाइड्रोकार्बन रहते हैं। उनका विशिष्ट भार भी उच्च और निम्न दोनों प्रकार के होते हैं।

उपस्नेहक तेल के एक नमूने से गैस के द्वारा उद्वाष्पित कर सारा हलका तेल निकाल लिया गया और उसके सारे मोम भी निकाल लिये गये। उसका प्रभागशः आसवन कर उनको विलायकों के द्वारा अलग-अलग कर लेने पर उसके एक नमूने में निम्नलिखित गुण पाये गये थे—

सेबोल्ट सान्द्रता, १००° फ०	२१८ से २४०
विशिष्ट गुरुत्व, ६०° फ०	०·९९६ से ०·९११

वर्त्तनांक १५७१० से १·५००८

मात्रिक सूत्र $\begin{cases} C_{19}H_{26} \text{ से } C_{22}H_{38} \\ C_nH_{2n-12} \text{ से } C_nH_{2n-6} \end{cases}$

उपस्नेहक तेल के एक नमूने को बहुत-उच्च शून्य में आसवन किया। फिर उसे सल्फर डायक्साइड से निष्कर्ष निकालकर सौरभिक और मिश्रित सौरभिक यौगिकों को दूर कर दिया। फिर, एथिलिक्लोराइड द्वारा नाम को हटा लिया और सिलिका जेल से रंग दूर कर दिया गया। तब चक्रिक अंश, मोम और पैराफिन को निकालकर उसका परीक्षण किया। इन अंशों का क्वथनांक, हिमांक, घनत्व, वर्त्तनांक, ऐनिलीन में विलयन का क्रांतिक विन्दु, अणुभार, प्रारंभिक विश्लेषण, और अवरक्त अवशोषण-वर्णक्रम निकाला गया।

स्नेहक अंश को २२ प्रभागों में विभक्त किया। इनका विशिष्ट गुरुत्व ०·८५ से ०·८६ के बीच था। उनकी सेबोल्ट सान्द्रता १३७ से ५३० सेकेंड थी। कार्बन-परमाणु की संख्या २७ से ३८ थी। इन प्रभागों को फिर ऐसीटोन से निष्कर्ष निकालकर प्रत्येक अंश को फिर लगभग ३० अंशों में विभाजित किया। इनमें न्यूनतम और महत्तम क्वथनांक अंशों के निम्नलिखित गुण थे—

	न्यूनतम क्वथनांक अंश	महत्तम क्वथनांक अंश
सामान्य सूत्र	C_nH_{2n-9} से C_nH_{2n}	$C_nH_{2n-7.4}$ से $C_nH_{2n-1.7}$
घनत्व, १००° फ०	०·९० से ०·८२	०·८८३ से ०·८४६
सेबोल्ट सान्द्रता, १००° फ०	२९१ से ८६	७२० से ३३७
सान्द्रतांक	३६ से १४९	७५ से ११५
क्वथनांक, १ मिमी० दबाव पर	२०४ से २०८° श०	२७० से २७५° श०

न्यूनतम क्वथनांकवाले प्रयोग में २८ कार्बन रहते हैं। जो अंश ऐसीटोन में सबसे कम विलेय है, उसमें केवल एक-वलय नैफ्थीन रहता है। अधिक विलेय अंश में दो-वलय और तीन-वलय रहता है। इन नैफ्थीनों में ५-कार्बन या ६-कार्बन-चक्र रहते हैं। हलके तेलों में २२ या २३ कार्बन रहता है और भारी तेलों की पार्श्व-शृङ्खला में १० से १५ कार्बन-परमाणु रहते हैं। महत्तम क्वथनांकवाले तेल में ३७ कार्बन परमाणु रहते हैं। सबसे कम विलेय अंश में अधिकांश दो-वलय नैफ्थीन और सबसे अधिक विलेय अंश में तीन-वलय या चार-वलय नैफ्थीन रहते हैं।

विभिन्न विलायकों के द्वारा सक्रिय अंश के निकाल लेने पर विभिन्न अंश इस प्रकार पाये गये थे —

दो से तीन नैफ्थीन वलय + आवश्यक पैराफीन श्रृंखला	८ प्रतिशत
एक सौरभिक वलय, दो से तीन नैफ्थीन वलय + आवश्यक पैराफीन श्रृंखला	२५ ”
दो सौरभिक वलय, दो नैफ्थीन वलय + आवश्यक पैराफीन श्रृंखला	३७ ”
तीन सौरभिक और एक नैफ्थीन वलय + आवश्यक पैराफीन श्रृंखला	३० ”

पराफिन-हाइड्रोकार्बन

पैराफिन-हाइड्रोकार्बन के प्रथम चार सदस्य साधारण ताप पर गैस होते हैं। पाँच से सोलह परमाणुवाले हाइड्रोकार्बन द्रव होते हैं और शेष मोम-सा ठोस होते हैं। जिन हाइड्रोकार्बनों में सारे कार्बन-परमाणु एक सीधी शृङ्खला में रहते हैं, उन्हें नार्मल हाइड्रोकार्बन कहते हैं। कुछ हाइड्रोकार्बनों में शाखाएँ भी होती हैं। ऐसे हाइड्रोकार्बनों को सशाख हाइड्रोकार्बन कहते हैं। नार्मल हाइड्रोकार्बनों के गलनांक सशाख हाइड्रोकार्बनों के गलनांक से ऊँचे होते हैं। नार्मल हाइड्रोकार्बनों के क्वथनांक भी ऊँचे होते हैं।

निम्नतर वाष्पशील सदस्यों में गंध होती है; पर अरुचिकर नहीं। अवाष्पशील ऊँचे सदस्यों में गंध नहीं होती। सब हाइड्रोकार्बन रंग-रहित होते हैं। जल में इनकी विलेयता बड़ी ही अल्प होती है। निम्नतर सदस्य जल के साथ हाइड्रेट बनते हैं। ये हाइड्रेट उच्च दबाव में ही स्थायी होते हैं, और देखने में बर्फ-से होते हैं। नार्मल हाइड्रोकार्बन अधिक स्थायी होते हैं। सशाख हाइड्रोकार्बन उतने स्थायी नहीं होते।

अधिकांश प्रतिकारकों के प्रति पैराफीन-हाइड्रोकार्बन स्थायी और अविलेय होते हैं। रसायनतः ये अक्रिय होते हैं। विशेषतः निम्नतर तापों पर इनका आक्सीकरण हो सकता है। शीतल दशा में भी गैसीय हाइड्रोकार्बन क्लोरीन और ब्रोमीन से आक्रान्त होते हैं। सूर्य-प्रकाश से इस क्रिया में तीव्रता आ जाती है। यहाँ हाइड्रोजन के स्थान को क्लोरीन या ब्रोमीन ले लेता है; अर्थात् क्लोरीन और ब्रोमीन द्वारा हाइड्रोजन विस्थापित होता है। द्रव हाइड्रोकार्बन पर क्रिया मन्द होती है; पर उच्च ताप पर यहाँ भी तीव्रता आ जाती है। आयोडीन की उपस्थिति से भी इस क्रिया में तीव्रता आ जाती है। स्वयं आयोडीन की पैराफिन-हाइड्रोकार्बन पर कोई क्रिया नहीं होती। लोहे और लोहे के लवणों की उपस्थिति से भी क्लोरीन और ब्रोमीन की क्रिया की तीव्रता बढ़ जाती है।

नाइट्रोसोल क्लोराइड कुछ हाइड्रोकार्बनों को आक्रान्त करता है।

यदि हाइड्रोकार्बनों को सलफ्यूरिक अम्ल के साथ प्रक्षुब्ध करें तो निम्न ताप पर बड़ी मन्द क्रिया होती है। ताप, समय और सान्द्रता की वृद्धि से अवशोषण बढ़ जाता है; पर क्रियाएँ कैसे होती हैं, इसका ज्ञान बहुत अधूरा है। कुछ लोगों ने उत्पाद से मोनो-सल्फोनिक और डाइ-सल्फोनिक संजात प्राप्त किये हैं।

हलके नाइट्रिक अम्ल का नार्मल हाइड्रोकार्बन पर सामान्य परिस्थिति में कोई क्रिया नहीं होती। ऊष्मा और दबाव से क्रिया बड़ी मन्द होती है। सान्द्र नाइट्रिक अम्ल की नार्मल हाइड्रोकार्बनों पर ठंड में कोई क्रिया नहीं होती; पर सशाख हाइड्रोकार्बनों पर क्रिया होती है। सधूम उष्ण नाइट्रिक अम्ल की वायुमण्डल के दबाव पर भी प्रतिक्रिया होती है। वाष्पकला में निम्न सदस्यों पर प्रतिक्रिया होकर ऐसे पदार्थ बनते हैं, जिनका व्यापारिक महत्त्व है। ये विलायक के लिए उपयुक्त होते हैं।

नार्मल हाइड्रोकार्बनों को सशाख हाइड्रोकार्बनों से निकालना सरल नहीं है। कुछ लोगों ने पृथक्करण के लिए क्लोरोसलफोनिक अम्ल का उपयोग बताया है। क्लोरोसलफोनिक अम्ल की सशाख हाइड्रोकार्बनों पर प्रबल प्रतिक्रिया होती है; पर नार्मल हाइड्रोकार्बनों पर कोई प्रतिक्रिया नहीं होती। एण्टीमनी पेण्टाक्लोराइड से भी पृथक्करण के प्रयोग हुए हैं। सशाख हाइड्रोकार्बन सामान्य ताप पर इससे आक्रान्त होते हैं; पर नार्मल और निओ-हाइड्रोकार्बन और अशाख नैफथीन इससे आक्रान्त नहीं होते। द्रव सल्फर-डायक्साइड से पृथक्करण की सारी चेष्टाएँ असफल रही हैं।

पेट्रोलियम से हाइड्रोकार्बनों का पृथक्करण सरल नहीं है। दक्ष और यथार्थ अंशन द्वारा १२ कार्बन से कम परमाणुवाले हाइड्रोकार्बनों का पृथक्करण हो सकता है। उच्च हाइड्रोकार्बनों का पृथक्करण पूर्णतया नहीं होता।

पेट्रोलियम में कितना पैराफिन हाइड्रोकार्बन रहता है, यह ज्ञात नहीं है। कच्चे पेट्रोलियम के पेट्रोल में ७० से ८० प्रतिशत तक पैराफीन हाइड्रोकार्बन रह सकता है। भारी गैस-तेल और हलके स्नेहक तेल में १० प्रतिशत तक पैराफिन रह सकता है और भारी अवशिष्ट अंशों में प्रायः पाँच प्रतिशत हाइड्रोकार्बन रह सकता है। मोम-रहित कच्चे तेल में पैराफिन बहुत अल्प रहता है। कुछ अस्फाल्ट और गंधकवाले तेलों में ठोस पैराफिन अधिक मात्रा में रहता है।

एक, दो और तीन कार्बन परमाणुवाले हाइड्रोकार्बन केवल एक ही होते हैं। चार कार्बन परमाणुवाले हाइड्रोकार्बन दो होते हैं। पाँच कार्बन परमाणुवाले हाइड्रोकार्बन तीन होते हैं। छह कार्बन परमाणुवाले हाइड्रोकार्बन ५ और सात परमाणुवाले ९ होते हैं। इस प्रकार कार्बन परमाणुओं की वृद्धि से समावयवियों की संख्या बढ़ती जाती है। कार्बन-परमाणुओं की संख्या ४० होने से समावयवियों की संख्या ६२×१०^{१२}; अर्थात् ६२०००००००००००० होती है।

समावयवीकरण

नार्मल पैराफिन हाइड्रोकार्बन का सशाख-हाइड्रोकार्बन में परिवर्त्तन का अन्वेषण बहुत अल्प हुआ है। इस परिवर्त्तन में ऊर्जा में परिवर्त्तन अधिक नहीं होता है। तापीय उपचार का अधिक प्रभाव नहीं पड़ता, पर उत्प्रेरकों की उपस्थिति में साधारण ताप अथवा निम्न ताप पर भी अणु का पुनर्विन्यास विस्तृत होता है। उत्प्रेरकों में एल्युमिनियम क्लोराइड और ब्रोमाइड सर्वश्रेष्ठ हैं। उच्च ताप पर जिंक-क्लोराइड और मोलिबडेनम भी कुछ प्रभावोत्पादक होता है। एल्युमिनियम ब्रोमाइड की उपस्थिति में

२७° श० और १ वायुमण्डल के दबाव पर नार्मल और आइसो-ब्युटेन के बीच साम्य स्थापित होने पर मिश्रण में आइसो-ब्युटेन की मात्रा ७८ से ८२ प्रतिशत पाई गई थी। इस साम्य दशा के पहुँचने में एक हजार घण्टे लगे थे। इस उत्पाद में अन्य यौगिकों की मात्रा लेशमात्र थी। उत्प्रेरक में कोई परिवर्त्तन नहीं हुआ था। हाइड्रोजन ब्रोमाइड अथवा जल से प्रतिक्रिया की गति में वृद्धि होती है। धातुओं से भी प्रतिक्रिया-गति बढ़ जाती है; किन्तु १० प्रतिशत बेंज़ीन की उपस्थिति से नार्मल ब्युटेन और नार्मल पेण्टेन का परिवर्त्तन २७° सें० पर ६५० घंटे पर भी नहीं होता है।

नार्मल पेण्टेन का परिवर्त्तन अपेक्षया सरलता से होता है। नार्मल हेक्सेन और नार्मल हेप्टेन से सक्रियित एल्युमिनियम क्लोराइड की उपस्थिति में मन्द ताप पर भी अनेक उत्पाद प्राप्त होते हैं।

नार्मल हाइड्रोकार्बन सशाख-हाइड्रोकार्बनों में कैसे बदल जाते हैं, इसकी व्याख्या अनेक लोगों ने की है। ऐसा समझा जाता है कि उत्प्रेरक के प्रभाव से कार्बन शृंखला टूट जाती है और उससे पहले एक असंतृप्त हाइड्रोकार्बन और निम्न अणुभार के पैराफिन बनते हैं। फिर ये दोनों मिलकर सशाख-हाइड्रोकार्बन बनते हैं। नार्मल पेण्टेन पहले टूट कर निम्न सूत्र के यौगिक बनते हैं—

```
                                                        
क — क — क — क — क  ⇄  क — क = क + क — क  ⇄  क — क — क — क
                                                   |
                                                   क
```

नार्मल हेप्टेन से यह परिवर्त्तन इस प्रकार होता है—

```
क — क — क — क — क — क — क → क — क — क — क + क — क = क
क — क — क — क → क — क — क
                    |
                    क

   क   क            क   क
   |   |            |   |
क — क + क = क → क — क — क — क
   |                |
   क                क
```
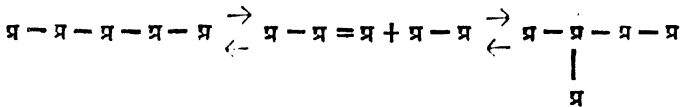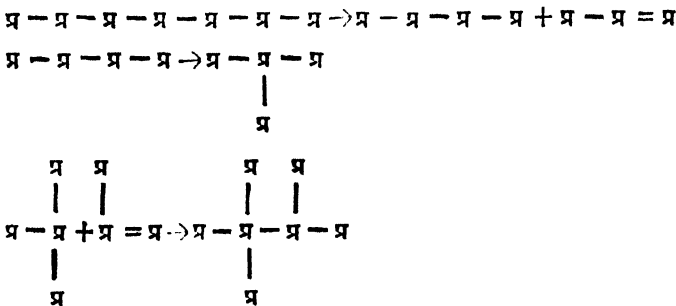
कुछ रसायनज्ञों का मत है कि उपर्युक्त रीति के अनुसार यह क्रिया इतनी सरल नहीं है। पैराफिन पहले उत्प्रेरक के साथ एक अस्थायी पेचीला यौगिक बनता है। यह यौगिक पैराफिन के कार्बन के टूटने और दो अल्किल-समूह के बनने के कारण बनता है। इन दोनों के बीच एक पूरा इलेक्ट्रान अष्टक बनता है और दूसरा इलेक्ट्रान षष्टक बनता है। ये दोनों उत्प्रेरक से सह-संयोजकता से बँधे होते हैं। अतः अकार्बनिक आयनों से मुक्त होते हैं। षष्टक इलेक्ट्रान द्वारा अंश हाइड्रोजन अथवा मिथेन से मिलकर परिवर्त्तित हो सकता है। अष्टक इलेक्ट्रानवाला अंश अपरिवर्त्तित रहता है। फिर अष्टक इलेक्ट्रानवाला अंश षष्टक इलेक्ट्रानवाले अंश से मिलकर ताप के प्रभाव से सशाख-हाइड्रोकार्बन बनता है। उच्च ताप पर और भी विभाजन होकर हाइड्रोजन और निम्नतर पैराफिन बनते हैं।

अल्किलीकरण

ऊपर कहा गया है कि पैराफिन हाइड्रोकार्बन अक्रिय होते हैं। अनुकूल परिस्थिति में ही उनका हैलोजनीकरण, नाइट्रोकरण और आक्सीकरण होता है। इधर देखा गया है कि सशाख-हाइड्रोकार्बनों का अल्किलीकरण शीघ्रता से सम्पादित हो जाता है। सामान्य ताप पर बोरनट्राइ-फ्लोराइड से भींगे हुए निकेल धातु नामक उत्प्रेरक से सशाख-हाइड्रोकार्बनों में ओलिफीन सरलता से जोड़ा जा सकता है। इससे उच्च अणुभारवाले सशाख-हाइड्रोकार्बन बनते हैं। यह प्रतिक्रिया भंजन के ठीक प्रतिकूल प्रतिक्रिया है। पर यह प्रतिक्रिया सामान्य है। वायुमण्डल के दबाव पर प्रायः २६०° से० पर आइसो-ब्युटेन और आइसो-ब्युटिलीन मिल जाते हैं। यह प्रतिक्रिया और शीघ्रता से होती है, यदि उत्प्रेरक के रूप में सलफ्यूरिक अम्ल से अम्लीकृत बोरन फ्लोराइड-एल्युमिनियम क्लोराइड उपयुक्त हो। बिना उत्प्रेरक के सहयोग से ५१०° से० और ४५०० पाउण्ड दबाव पर अल्किलीकरण होता हुआ पाया गया है। एथिलीन और आइसो-ब्युटिलीन से २'२-डाइमेथिल ब्युटेन और एथिलीन और प्रोपेन से नार्मल और आइसो-पेण्टेन पाये गये हैं।

ब्युटेन से डोडीकेन तक के नार्मल हाइड्रोकार्बन एल्युमिनियम क्लोराइड अथवा एल्युमिनियम ब्रोमाइड के उत्प्रेरण से सफलता से प्रतिक्रियित होते हैं। यह सम्भव है कि अल्किलीकरण के पूर्व में समावयवीकरण भी होता हो।

ओलिफीन की योगशील प्रतिक्रिया महत्व की है; क्योंकि इससे उच्च औक्टेन-संख्या का उत्पादन होता है। इससे जो हाइड्रोकार्बन प्राप्त होते हैं, वे अनेक प्रतिक्रियाओं के सम्पादन के फलस्वरूप ऐसे उत्पाद बनते हैं, जिनके क्वथनांक बड़े विभिन्न होते हैं। इस क्रिया की उपयुक्त स्थिति के चुनाव से पेट्रोल-सा पदार्थ प्राप्त करना सम्भव हो सकता है। चूँकि ये उत्पाद सशाख संतृप्त हाइड्रोकार्बन होते हैं; अतः इनका औक्टेन मान ६० या इससे ऊपर होता है।

पैराफिन अल्किलीकरण में एथिलीन का उपयोग उच्च ओलिफीन की अपेक्षा कुछ कठिन होता है। पर बोरन ट्राइफ्लोराइड या एल्युमिनियम क्लोराइड उत्प्रेरक से उच्च दबाव प्रति वर्गइंच पर ५० से १०० पाउण्ड दबाव—पर प्रतिक्रिया का सम्पादन बहुत-कुछ सन्तोषजनक होता है। प्रोपिलीन से प्रतिक्रिया अधिक सन्तोषजनक होती है। यदि पैराफिन का ओलिफीन से अनुपात ४:१ हो तो निम्नलिखित यौगिक बनते हुए पाये गये हैं—

प्रोपिलीन-आइसो-ब्युटेन
२,३-डाइमेथिल ब्युटेन
२,३-डाइमेथिल पेंटेन
२,४-डाइमेथिल पेंटेन
२,२,४-ट्राइमेथिल पेंटेन
प्रोपिलीन-आइसो पेंटेन
२-मेथिल पेंटेन
३-मेथिल पेंटेन

२,३-डाइमेथिल पेंटेन
२,१-डाइमेथिल हेक्सेन
२,४-डाइमेथिल हेक्सेन
२,५-डाइमेथिल हेक्सेन
आइसो-ब्युटिलीन-आइसो-ब्युटेन;—आइसो पेंटेन
२,३-डाइमेथिल ब्युटेन
२,३-डाइमेथिल पेंटेन
२,४-डाइमेथिल पेंटेन
२,२,४-ट्राइमेथिल पेंटेन
२,४-डाइमेथिल हेक्सेन
२,५-डाइमेथिल हेक्सेन
२,२,५-ट्राइमेथिल हेक्सेन

यहाँ जो प्रक्रिया होती है, वह बहुत पेचीली होती है। अनेक प्रकार से यौगिकों का संकलन होता है। बिना किसी उत्प्रेरक के सहयोग से उच्च ताप और दबाव में एथिलीन और प्रोपेन से पेंटेन और आइसो पेंटेन का मिश्रण प्राप्त हुआ था। ऐसी ही परिस्थिति में एथिलीन और आइसो-ब्युटेन से २,२-डाइमेथिल ब्युटेन प्राप्त हुआ जब कि बोरन-ट्राइफ्लोराइड या एल्युमिनियम क्लोराइड की उपस्थिति में २,३-डाइमेथिल ब्युटेन प्राप्त हुआ था। इससे स्पष्ट है कि उत्प्रेरकों के प्रभाव से समावयवीकरण होता है।

ओलिफीन हाइड्रोकार्बन

पेट्रोलियम में असंतृप्त हाइड्रोकार्बनों का समानुपात ऊँचा होता है, यह धारणा विश्लेषण-आँकड़ों पर आधारित है। हाइड्रोजन का समानुपात कम होने पर भी इस परिणाम पर पहुँचना कि असंतृप्त हाइड्रोकार्बन की मात्रा अधिक है, ठीक नहीं है। यह सम्भव है कि हाइड्रोजन की मात्रा कम होने और यौगिकों के सक्रिय होने पर भी पदार्थ असंतृप्त न हो।

साधारणतया सान्द्र सल्फ्यूरिक अम्ल या ब्रोमीन या आयोडीन के अवशोषण से असंतृप्ति के समानुपात का अनुमान लगाते हैं। किन्तु, यह रीति भी विश्वसनीय नहीं है। पेट्रोलियम के सलफ्यूरिक अम्ल के साथ प्रतिक्रिया से अनेक परिवर्त्तन होते हैं। ताप का उन्नयन होता है, सल्फर-डायक्साइड निकलता है, सल्फोनीकरण होता है और तारकोल का पृथक्करण होना है। कुछ असंतृप्त हाइड्रोकार्बन शीघ्र अवशोषित हो जाते हैं और कुछ विलम्ब से। अणुभार की वृद्धि से अवशोषण की वृद्धि होती है।

पैराफिन हाइड्रोकार्बन की आयोडीन-संख्या अनिश्चित है। यह केवल योगशील यौगिक ही नहीं बनता, वरन् प्रतिस्थापन-उत्पाद भी बनता है। कुछ ओलिफीनों का आयोडीन से प्रतिक्रिया भी नहीं होती है। यदि भारी तेल को सलफ्यूरिक अम्ल के साथ उपचार करें तो ऐसे तेल का संकलन और प्रतिस्थापन दोनों कम हो जाते हैं। यदि उसका सलफ्यूरिक अम्ल से उपचार न हो तो संकलन कम हो जाता है; पर प्रतिस्थापन ऊँचा हो जाता है। कुछ यौगिक अस्थायी शाख के कारण आयोडीन और सलफ्यूरिक अम्ल से आक्रान्त होते हैं।

कच्चे तेल में ओलिफीन रहते हैं अथवा नहीं, यह निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है। कुछ लोगों का मत है कि कच्चे तेल में ये नहीं रहते। पृथ्वी के अन्दर ताप, दबाव, लवण-विलयन, अम्लीय और क्षारीय पदार्थों के संसर्ग से इनका न रहना ही सम्भव मालूम होता है। आसवन से कुछ-न-कुछ भंजन अवश्य होता है। इसी भंजन से ये आसुत में आ जाते हैं। भंजन से बड़ी मात्रा में ओलिफीन बनते हैं, इसमें सन्देह नहीं।

पुरुभाजन

छोटे-छोटे अणुओं से भारी अणुवाले यौगिकों के बनने को पुरुभाजन कहते हैं। पुरुभाजन से जो नये यौगिक बनते हैं, उन्हें पुरुभाज कहते हैं। नये यौगिकों में तत्त्वों का समानुपात पूर्व के यौगिक तत्त्वों के समानुपात में ही होता है। परमाणु के विन्यास भी प्रायः वैसे ही होते हैं, केवल अणुभार बढ़ जाता है। वह वृद्धि भी सरल अनुपात में ही होती है। जिन यौगिकों के बनने में परमाणु के विन्यास में भिन्नता आ जाती है, ऐसी प्रतिक्रिया को कार्बन-रसायन में संवनन कहते हैं।

पुरुभाजन प्रतिक्रिया बड़े महत्त्व की है। इस पुरुभाजन-क्रिया द्वारा ही कृत्रिम रबर का निर्माण संभव हुआ है। कुछ पुरुभाजन निम्न ताप पर होता है और कुछ के लिए उच्च ताप की आवश्यकता पड़ती है। उत्प्रेरकों की उपस्थिति से पुरुभाजन में सहायता मिलती है।

ब्युटाडीन के पुरुभाजन से 'कृत्रिम रबर' बनता है। पुरुभाजन का अध्ययन आज बहुत विस्तार से हुआ है और इस संबंध में अनेक नियम बने हैं। इनके द्वारा पुरुभाजन के सम्बन्ध में अनेक बातें हमें मालूम होती हैं। उन नियमों में निम्नलिखित नियम उल्लेखनीय हैं —

(१) अधिक विद्युत्-ऋणात्मक प्रतिस्थापक से पुरुभाजन अधिक सरलता से होता है। प्रोपिलीन (मेथिल एथिलीन) की अपेक्षा स्टाइरीन (फेनील एथिलीन) से पुरुभाजन शीघ्रता से होता है।

(२) असममित यौगिकों से पुरुभाजन शीघ्रता से होता है। सममित डाइफेनील एथिलीन की अपेक्षा फेनील एथिलीन से पुरुभाजन अधिक सरलता से होता है।

(३) अ-अन्तिम स्थान में प्रतिस्थापक से पुरुभाजन सरलता से होता है। २-मेथिल ब्युटाडीन का पुरुभाजन १-मेथिल ब्युटाडीन की अपेक्षा अधिक शीघ्रता से होता है।

(४) असंतृप्त बन्धनों में हाइड्रोजन के रहने से पुरुभाजन शीघ्र होता है। १,१,३,४-टेट्रामेथिल ब्युटाडीन का पुरुभाजन १,१,४,४-टेट्रामेथिल ब्युटाडीन से अधिक शीघ्र होता है। पुरुभाजन के लिए द्विबन्धवाले कार्बन में कम-से-कम एक हाइड्रोजन का रहना आवश्यक है।

अधिकांश यौगिकों में केवल गरम करने से पुरुभाजन होता है। पुरुभाजन के लिए भिन्न-भिन्न यौगिकों को भिन्न-भिन्न ताप तक गरम करना पड़ता है। ७० वायुमण्डल के दबाव पर ३९० से ४००° सें० के बीच गरम करने से एथिलीन का, ३९० वायुमण्डल पर ३३०° से ३७०° सें० तक गरम करने से प्रोपिलीन और ब्युटिलीन का पुरुभाजन होता है।

उत्प्रेरक

पुरुभाजन में अनेक उत्प्रेरक उपयुक्त हुए हैं। सामान्य ओलिफीन के लिए सलफ्यूरिक और फास्फरिक ऐसे अम्ल, अजल हेलाइड (एल्युमिनियम-क्लोराइड, जिंक-क्लोराइड, बोरन-फ्लोराइड), सक्रिय तल पदार्थ (एल्युमिना, सिलिकाजेल, सक्रिय कार्बन, फुलर मिट्टी) उपयुक्त हुए हैं और डाइओलिफीन के लिए आक्सिजन, पेराक्साइड और अलकली धातुएँ उपयुक्त हुई हैं।

आक्सिजन के लेश से एथिलीन और प्रोपिलीन के पुरुभाजन में त्वरण आता है। तुरत का तैयार एस्टाइरिन के पुरुभाजन के लिए २००° सें० पर ७ घंटे लगते हैं, पर एस्टाइरिन को कुछ हफ्तों तक वायु में रखे रहने से और २००° सें० पर पुरुभाजन तत्काल हो जाता है। आइसोप्रीन के पुरुभाजन में पेराक्साइड उत्प्रेरक का काम करता है। हाइड्रोक्विनोन से पुरुभाजन का ह्रास होता है। सम्भवतः हाइड्रोक्विनोन पेराक्साइड को नष्ट करता है। भंजित पेट्रोलियम के आत्म-आक्सीकरण से गोंद का बनना पेराक्साइड की सक्रियता के कारण ही होता है। कृत्रिम रबर के निर्माण में सोडियम धातु उत्प्रेरक के रूप में उपयुक्त होती है।

सलफ्यूरिक अम्ल की सक्रियता फास्फरिक अम्ल की सक्रियता से अधिक प्रबल होती है। इस कारण पुरुभाजन का नियंत्रण कुछ कठिन होता है; पर सान्द्रण, ताप, दबाव और प्रतिक्रियित पदार्थों के संघटन के समंजन से इसका नियंत्रण हो जाता है। इस प्रतिक्रिया को जब बड़ी मात्रा में सम्पन्न करना होता है, तब कठिनता बहुत-कुछ बढ़ जाती है। बड़ी मात्रा में अनेक पार्श्व-प्रतिक्रियाएँ भी होती हैं, जिनका ठीक-ठीक ज्ञान प्राप्त करना कठिन होता है। उत्प्रेरक कैसे कार्य करते हैं, इस सम्बन्ध में कोई सर्वसम्मत सिद्धान्त नहीं है। इसमें कोई माध्यमिक यौगिक अवश्य बनता है; पर क्या बनता है, यह ठीक मालूम नहीं होता।

बर्थेलो (Berthelot) का मत है कि अम्लों के साथ ओलिफीन एस्टर बनते हैं। अन्य अन्वेषकों ने भी इस मत की पुष्टि की है। प्रोपिलीन का हलके फास्फरिक अम्ल के साथ २७५ से ३०९° सें० के बीच एस्टर बनना पाया गया है। ऐसे एस्टर फिर एक अणु का दूसरे अणु की प्रतिक्रिया से विच्छेदित कर अम्लों को मुक्त करते है।

क्लाइन और ड्रेक (Kline and Drake) के मतानुसार अम्लों से ओलिफीन का सक्रियण होता है। ओलिफीन इससे दो टुकड़ों में बँट जाते हैं। ये टुकड़े अभिमुख आवेश से आविष्ट होते हैं, ये फिर अ-सक्रियित ओलिफीन के युग्म बन्धन से मिलकर पुरुभाज बनते हैं। इस मत की पुष्टि में अनेक उदाहरण दिये या पाये गये हैं।

विटमोर (Whitmore) का दूसरा ही मत है। उनका कथन है कि पहले क्रम में उत्प्रेरक का हाइड्रोजन आयन युग्म बन्धन के साथ मिलकर धनावेश से आवेष्टित कार्बन-हाइड्रोजन का समूह बनता है। इससे युग्म बन्धन के एक कार्बन परमाणु में केवल ६ एलेक्ट्रान बच जाता है। इससे एलेक्ट्रान-दृष्टिकोण से अणु अस्थायी हो जाता है। ऐसा धनावेश से आविष्ट समूह तब या तो उत्प्रेरक के साथ मिलकर ऋण आयन को ग्रहण कर लेता है अथवा एक धन आयन को छोड़कर वही या दूसरा ओलिफीन बनता है अथवा कार्बन

परमाणुओं के पुनर्विन्यास से कोई स्थायी पदार्थ बनता है जिससे प्रोटीन निकल जाने पर एक नया ओलिफीन बनता है अथवा वह एक दूसरे ओलिफीन के साथ संयुक्त हो बड़ा अणु बनता है। इनमें कौन मत ठीक है, इसका कोई निश्चित प्रमाण नहीं मिला है।

ओलिफीन पर तनु सलफ्यूरिक अम्ल की एक दूसरी क्रिया भी होती है। यह जलयोजन की क्रिया है। इस क्रिया से ओलिफीन जल से संयुक्त हो अलकोहल बनता है। इस सम्बन्ध में आइसो-ब्युटिलीन पर सलफ्यूरिक अम्ल की क्रिया का विस्तार से विभिन्न अवस्थाओं में अध्ययन हुआ है। कितना पानी का अंश अवशोषित हो जाता है, यह अम्ल में पानी की मात्रा पर निर्भर करता है। इससे सामान्य ताप पर कुछ दिनों तक रखे रहने से अथवा ६० से १००° से० तक गरम करने से त्रितीयक ब्युटिल अल्कोहल के अतिरिक्त द्विभाज और त्रि-भाज प्राप्त होते हैं। यदि ताप ऊँचा हो तो अल्पकाल में अधिक वाष्पशील पुरुभाज बनते हैं। यदि गरम करने के पूर्व विलयन की अम्लता बढ़ा दी जाय, तो उससे कम वाष्पशील पुरुभाज बनते हैं। इस क्रिया में कुछ आइसो-ब्युटिलीन गैस के रूप में निकल भी जाता है। यदि अम्लता कम हो तो उससे अधिक गैस निकलती है, उच्च अम्लता से पुरुभाज अधिक बनते हैं; पर द्वि-भाज की मात्रा कम रहती है।

इसके अध्ययन से पता लगता है कि ओलिफीन के पुरुभाजन से पुरुभाज बनते हैं। पुरुभाजों का फिर समावयवीकरण होकर नेफ्थीन बनते हैं। नेफ्थीनों के विहाइड्रोजनीकरण से सक्रिय असंतृप्त यौगिक बनते हैं। इस प्रतिक्रिया के साथ-साथ पुरुभाज का हाइड्रोजनीकरण होकर संतृप्त यौगिक भी बनते हैं।

प्रबल सलफ्यूरिक अम्ल की क्रिया का नियंत्रण कुछ कठिन होता है। कई गौण-क्रियाएँ होती हैं। अम्ल का अवकरण होकर सल्फर-डायक्साइड निकलता है। हाइड्रोकार्बन आक्सीकृत होकर तारकोल में परिणत हो जाता है। ताप बहुत ऊँचा उठ जाता है। उत्पाद उबलने लगता है। इन गौण क्रियाओं को बहुत-कुछ सल्फेट या बोरिक अम्ल और ग्लिसरीन डालकर रोका जा सकता है।

फास्फरिक अम्ल से क्रिया अपेक्षया सरल होती है। यदि दबाव और ताप अनुकूल हों तो सब सरल ओलिफीन इससे पुरुभाजित हो जाते हैं। इनके पुरुभाजन से पैराफिन, नेफ्थीन और सौरभिक प्राप्त होते हैं। २५० से ३००° से० के बीच ६०० पाउण्ड दबाव पर एथिलीन के पुरुभाजन से जो पुरुभाज प्राप्त होते हैं, उसमें २५ प्रतिशत ओलिफीन और कुछ नेफ्थीन और सौरभिक रहते हैं। हल्के अंश में पैराफिन और ओलिफीन की मात्रा महत्तम होती है। प्रोपिलीन का पुरुभाजन अधिक सरलता से होता है। इससे भी उसी प्रकार के उत्पाद बनते हैं।

जिंकक्लोराइड से एथिलीन और प्रोपिलीन का केवल पुरुभाजन होता है। एथिलीन से २७५° से० ताप और १०५० पाउण्ड दबाव पर ओलिफीन और कुछ नेफ्थीन बनते हैं, सौरभिक नहीं बनते। प्रोपिलीन पर क्रिया निम्न ताप पर ही होती है।

फुलर की मिट्टी से भी पुरुभाजन होता है। सामान्य और उच्च ताप दोनों ही परिस्थितियों में पुरुभाजन होता है, यद्यपि विभिन्न अवस्थाओं में भिन्न-भिन्न मात्राओं में और कुछ भिन्न किस्म के भी उत्पाद बनते हैं।

एल्युमिना, सिलिकाजेल, एल्युमिनियम क्लोराइड भी उत्प्रेरक के रूप में उपयुक्त हुए हैं।

पुरुभाजन में प्रतिक्रियाएँ कैसी होती हैं, इस सम्बन्ध में बहुमान्य सिद्धान्त यह है कि मुक्त मूलक के कारण मूलक परस्पर या दूसरे के साथ मिलकर श्रृंखला बनते हैं। इसके अनेक प्रमाण मिलते हैं। एथिलीन बड़ी सहूलियत से एस्टाइरिन के साथ पुरुभाजित होता है। आइसो-ब्युटिलीन नार्मल ब्युटीन से पुरुभाजित होता है। एथिलीन लेड टेट्राएथिल के साथ गरम करने से अथवा एज़ो-मिथेन से मेथिल-मूलक मुक्त होने से पुरुभाजित होता है। मरकरी डाइहेप्टील के गरम करने से कुछ टेट्राडोकेन प्राप्त होता है। ये मूलक कार्बन कार्बन बन्धन के टूटने से बनते हैं। इस प्रकार बनकर ये अन्य अणुओं को सक्रियित कर उच्च हाइड्रोकार्बन बन जाते हैं।

नैफ्थीन-हाइड्रोकार्बन

नैफ्थीन के सूत्र वही हैं जो ओलिफीन के हैं; अर्थात् उनका सूत्र C_nH_{2n} है; पर ये संतृप्त हाइड्रोकार्बन हैं। हाइड्रोजन परमाणुओं की संख्या संतृप्त हाइड्रोकार्बनों के हाइड्रोजन-परमाणुओं की संख्या से कम होने पर भी ये संतृप्त हाइड्रोकार्बन हैं। इसका कारण यह है कि इनमें कार्बन-परमाणु परस्पर संबद्ध हो चक्र बनते हैं। इनके चक्र मेथिलीन-समूह (CH_2) से बने होते हैं।

अन्य हाइड्रोकार्बनों की नाईं इनकी भी सजातीय श्रेणियाँ होती हैं। दो या तीन प्रकार की श्रेणियाँ इनकी होती हैं। एक श्रेणी में मेथिलीन-समूह की संख्या क्रमशः बढ़ती जाती है। दूसरी श्रेणी में पार्श्व-समूह की संख्या क्रमशः बढ़ती जाती है। प्रथम श्रेणी और द्वितीय श्रेणियों के उदाहरण निम्नलिखित हैं—

साइक्लोब्युटेन	साइक्लोपेण्टेन	साइक्लोहेक्सेन इत्यादि
मेथिल साइक्लोब्युटेन	मेथिल साइक्लोपेण्टेन	मेथिल साइक्लोहेक्सेन इत्यादि
एथिल साइक्लोब्युटेन	एथिल साइक्लोपेण्टेन	एथिल साइक्लोहेक्सेन इत्यादि

पार्श्व-श्रृंखला के कारण इनमें समावयवता सम्भव है। एथिल साइक्लोपेण्टेन और डाइमेथिल साइक्लोपेण्टेन में, प्रोपिल साइक्लोपेण्टेन, ट्राइमेथिल साइक्लोपेंटेन और मेथिल-एथिल साइक्लोपेंटेन में समावयवता है।

तीसरी श्रेणी में विभिन्न किस्म के चक्र होते हैं। डाइसाइक्लोपेंटील मिथेन $C_5H_9-CH_2-C_5H_9$ और डाइसाइक्लोहेक्सील मिथेन $C_6H_{11}-CH_2-C_6H_{11}$ इसके उदाहरण हैं।

रेखात्मक समावयवता भी इस वर्ग के यौगिकों में पाई गई है। इस वर्ग के यौगिकों में केवल साइक्लोप्रोपेन और मेथिलसाइक्लोप्रोपेन गैस हैं। शेष सब यौगिक द्रव हैं। ये पेट्रोलियम में पाये जाते हैं। ट्राइसाइक्लोडीकेन पोलैंण्ड के पेट्रोलियम से निकाला गया है। बैकू और सुराखानी पेट्रोल में एथिल साइक्लोहेक्सेन और डाइ-और ट्राइ-मेथिल साइक्लोहेक्सेन पाया गया है। गैलिशिया और रूस के तेल में नैफ्थीन पाया गया है। अक्लाहोमा और

पोलैण्ड के पेट्रोलियम में भी नैफ्थीन देखा गया है। इन हाइड्रोकार्बनों का रसायनशाला में संश्लेषण भी हुआ है।

ये हाइड्रोकार्बन रंग-रहित द्रव हैं। इनमें बड़ी मन्द गन्ध होती है। इनका विशिष्ट भार तदनुरूप पैराफिन से ऊँचा होता है। ये पैराफिन-सा ही स्थायी होते हैं। इनका रासायनिक व्यवहार भी पैराफिन-सा ही होता है। एक-सा गुण होने के कारण नैफ्थीन का पैराफिन से पृथक्करण कठिन होता है। विभिन्न विलायकों से पृथक्करण भी कठिन है। यौगिक गुणों के अध्ययन से पृथक् करने अथवा मात्रा निर्धारित करने की चेष्टाएँ हुई हैं। वर्त्तनांक और घनत्व का उपयोग हुआ है।

सौरभिक हाइड्रोकार्बन

कुछ पेट्रोलियम में सौरभिक हाइड्रोकार्बन अधिक मात्रा में रहते हैं और कुछ पेट्रोलियम में अत्यन्त अल्प मात्रा में। पेन्सिलवेनिया के पेट्रोलियम में सौरभिक हाइड्रोकार्बन अल्प मात्रा में और ईस्ट इण्डीज तथा कैलिफोर्निया के पेट्रोलियम में अधिक मात्रा में रहते हैं। कुछ पेट्रोलियम की ऑक्टेन-संख्या ऊँची होती है। इससे इस सिद्धान्त पर पहुँचना कि उसमें सौरभिक हाइड्रोकार्बन अधिक है, ठीक नहीं है; क्योंकि आइसो-पैराफिन के कारण भी ऑक्टेन-संख्या ऊँची हो सकती है। निम्न ताप पर मन्द भंजन से सौरभिक हाइड्रोकार्बन की मात्रा बहुत-कुछ बढ़ाई जा सकती है। कुछ नमूने में ४२०° से० पर और कुछ नमूने में ५५०° से० पर सौरभिक हाइड्रोकार्बन बना हुआ पाया गया है।

पेट्रोलियम में अनेक बेंज़ीन संजातों का पता लगा है। ऐसे यौगिकों में निम्नलिखित वस्तुएँ निश्चित रूप से पाई गई हैं—

बेंज़ीन	एथिल टोल्विन	नैफ्थलीन
टोल्विन	पारा-साइमिन	डाइमेथिल नैफ्थलीन
अर्थो-ज़ाइलीन	मिटा-आइसोसाइमिन	टेट्रामेथिल-नैफ्थलीन
मिटा-ज़ाइलीन	कई टेट्रामेथिल बेंज़ीन	आइसो-एमिल-नैफ्थलीन
पारा-ज़ाइलीन	डाइएथिल टोल्विन	
कई ट्राइमेथिल बेंज़ीन	आइसो-एमिल बेंज़ीन	
एथिल बेंज़ीन		

इन हाइड्रोकार्बनों की प्रतिशत मात्रा बड़ी अल्प रहती है यद्यपि कुछ नमूनों में—विशेषतः ईस्ट इण्डीज के पेट्रोलियम में—इनकी मात्रा बड़ी अधिक पाई गई है। ओक्लाहोमा के तेल में, जिसका भंजन नहीं हुआ है, निम्नलिखित मात्रा में ये वस्तुएँ पाई गई हैं—

तीनों ज़ाइलीन	०·३	प्रतिशत
एथिल बेंज़ीन	०·०३	,,
मेसिटिलीन	०·०२	,,
स्यूडोक्यूमिन	०·२	,,
हेमिमेलिटीन	०·०६	,,

पेन्सिलवेनिया के पेट्रोलियम में बेंज़ीन ०·५८ प्रतिशत, टोल्विन ०·५७ प्रतिशत और ज़ाइलीन १·१६ प्रतिशत पाये गये हैं। फारमोसा के पेट्रोलियम में बेंज़ीन १ प्रतिशत, टोल्विन ८ प्रतिशत और ज़ाइलिन ८ प्रतिशत पाये गये हैं। बोर्नियो के तेल में २५ से ४० प्रतिशत सौरभिक पाये गये हैं। इनमें ६ से ७ प्रतिशत तो केवल नैफ्थलीन-श्रेणी के हाइड्रोकार्बन पाये गये हैं। ईरान के पेट्रोलियम में इसी प्रकार के हाइड्रोकार्बन पाये गये हैं। बरमा के पेट्रोलियम में १० प्रतिशत तक निम्नलिखित हाइड्रोकार्बन पाये गये हैं—

टोल्विन	पारा-साइमिन
अर्थो-ज़ाइलीन	बीटा-आइसोएमिल नैफ्थलीन
मिटा-ज़ाइलीन	
पारा-ज़ाइलीन	क्यूमिन
मेसिटिलीन	

पेट्रोलियम से सौरभिक नाइट्रो-यौगिक बनाकर अथवा सल्फोनेट बनाकर पृथक् किये जाते हैं। सावधान आसवन और विलायकों द्वारा निष्कर्ष से भी उन्हें पृथक् कर सकते हैं। एक ने ऐसिटिक अम्ल द्वारा आसवन से पृथक्करण की चेष्टाएँ की थीं। नाइट्रो-यौगिक बनाकर यदि इसे पृथक् कर दिया जाय, तो ऐसा मालूम होता है कि ये विस्फोटक बनाने में उपयुक्त हो सकते हैं। अन्य विधियों के पृथक्करण से यथार्थ फल नहीं प्राप्त होता। परिणाम मात्रात्मक भी नहीं होता है। साधारणतया मात्रा निकालने की रीति है—उन्हें पिक्रिक अम्ल में परिणत करना और पिक्रिक अम्ल की मात्रा को अनुमापन द्वारा मालूम करना। सूक्ष्म रंगमापी विधि से अधिक यथार्थ फल प्राप्त होते हैं। इनके भौतिक गुणों के तुलनात्मक अध्ययन से भी शीघ्र और यथार्थ फल प्राप्त हो सकते हैं। विशिष्ट भार, वर्त्तनांक, विशिष्ट विक्षेपण, एनिलीन और नाइट्रोबेंज़ीन में क्रांतिक विलयन ताप का उपयोग हो सकता है। इन भौतिक गुणों का उपयोग ओलिफ़ीन की उपस्थिति में कठिन होता है।

अ-हाइड्रोकार्बन अंश

पेट्रोलियम में हाइड्रोकार्बन के अतिरिक्त कुछ अ-हाइड्रोकार्बन पदार्थ भी रहते हैं। ऐसे पदार्थों में कुछ ऑक्सिजन के यौगिक, कुछ गन्धक के यौगिक और कुछ नाइट्रोजन के यौगिक हैं।

आक्सिजन-यौगिक

पेट्रोलियम में आक्सिजन की मात्रा साधारणतया कम प्रायः दो प्रतिशत से अधिक नहीं रहती। कुछ लोगों ने अधिक आक्सिजन की उपस्थिति का वर्णन किया है; पर ऐसा मालूम होता है कि इस अधिक मान का कारण अयथार्थ विश्लेषण है। कुछ नमूनों में अधिक मान अवश्य पाया गया है; पर इसका कारण वायुमण्डल के आक्सिजन द्वारा आक्सीकरण समझा जाता है। पेट्रोलियम के उच्च क्वथनांकवाले प्रभाग में आक्सिजन की मात्रा अधिक रहती है; क्योंकि आक्सिजन के द्वारा अणुभार बढ़ जाता है और उससे क्वथनांक ऊँचा हो जाता है।

पेट्रोलियम में आक्सिजन कहाँ से आता है, इसका ज्ञान हमें नहीं है। यह संभव है कि जिस पदार्थ में पेट्रोलियम बना है, उसी से आक्सिजन आया हो अथवा जिपसम के हाइड्रोकार्बन द्वारा अवकरण से आक्सिजन आया हो।

कुछ पेट्रोलियम में वसा-अम्लों के एस्टर, एन्हीड्राइड या लैक्टोन पाये गये हैं। *सम्भवतः ये मोम या मोम के जल-विच्छेदन से बने उत्पाद हैं।* कुछ पेट्रोलियम में अल्कोहल और कीटोन भी पाये गये हैं। इन तेलों की ऐसिटील-संख्या पर्याप्त होती है। कुछ पेट्रोलियम में वसा-अम्लों के अनेक निम्न सदस्य पाये गये हैं। ऐसे अम्लों में कुछ पेट्रोलियम में फार्मिक अम्ल, औक्जैलिक अम्ल, पामिटिक, स्टियरिक, मिरिस्टिक, ऐरेकिडिक अम्ल; कुछ पेट्रोलियम में आइसो-एमिल-ऐसिटिक, डाइएथिल प्रोपियोनिक अम्ल; कुछ पेट्रोलियम में नार्मल और आइसोवेलेरिक अम्ल, न-हेप्टिलिक, न-औक्टिलिक और न-नोनिलिक अम्ल, न-ब्युटिरिक और न-वेलेरिक तथा डाइमेथिल मेलियिक एन्हीड्राइड पाये गये हैं। इनके अतिरिक्त ऐसिटिक, प्रोपियोनिक और आइसो-ब्युटिरिक अम्ल भी पाये गये हैं।

फीनोल

कुछ तेलों में फीनोल पाये गये हैं। पेट्रोल में भी फीनोल का लेश पाया जाता है। भंजित अंश में क्रेसिलिक अम्ल पाया गया है। सम्भवतः उच्च अणुभारवाले हाइड्रोकार्बन के ताप-विच्छेदन से यह बनता है। कुछ लोगों का मत है कि साइक्लोहेक्सेनोल के विहाइड्रोजनीकरण और पार्श्व-श्रृंखला की क्षति से ये बनते हैं।

फीनोल अल्प मात्रा में रहता है। अर्थो-क्रीसोल सबसे अधिक मात्रा में पाया जाता है। अनेक ज़ीलेनोल विभिन्न मात्रा में पाये जाते हैं। कैलीफोर्निया के भंजित तेल में स्युडोक्युमिनोल, जापानी तेल में डाइ और ट्राइ-एथिल फीनोल और पोलैण्ड के तेल में बीटा-नैफ्थोल पाये गये हैं। एक तेल में डाइ और ट्राइ-हाइड्राक्सी-बेंजीन और एक दूसरे नमूने में ट्राइमेथिल हाइड्रोक्वीनोन पाये गये हैं।

कोलतार-अम्लों से तुलना करने पर कोलतार-अम्लों और पेट्रोलियम-अम्लों में बहुत-कुछ समानता पाई जाती है। फीनोल से अधिक मात्रा क्रीसोलिक अम्लों की रहती है। क्रीसोलिक अम्लों का पृथक्करण सरलता से होता है। अलकली विलयन से धोने से क्रीसोल निकल आते हैं। क्रीसोलिक अम्लों का फीनोल गुणांक ऊँचा होता है। इस कारण इसका उपयोग कीटाणुओं और कवकों के नाश करने में अधिकता से होता है। पेड़-पौधों पर छिड़कने के लिए भी इसका उपयोग होता है। उत्प्लावन प्रतिकारक के रूप में भी यह उपयुक्त होता है।

भूगर्भ-विज्ञान की दृष्टि से सबसे पीछे बननेवाले कच्चे पेट्रोलियम में फीनोल की मात्रा अधिक रहती है। इससे इस अनुमान की पुष्टि होती है कि जिन पदार्थों से पेट्रोलियम बना है, उन्हीं का आक्सिजन पेट्रोलियम में आता है। इस बात की पुष्टि इससे भी होती है कि सीपों से बने पेट्रोलियम में ऑक्सिजन की मात्रा अधिक रहती है।

नैफ्थीनिक अम्ल

नैफ्थीनिक अम्लों में ऐसे चक्रिक अम्ल रहते हैं, जिनके अणुभार छोटे से लेकर १००० तक या इससे भी ऊँचे होते हैं। ये अम्ल क्या हैं, इस संबंध में अनेक दिनों तक वाद-विवाद होता रहा था; पर पीछे निश्चित रूप से मालूम हो गया कि ये ऐसे अम्ल हैं, जिनमें नैफ्थलीन चक्र में कारबौक्सील-समूह रहते हैं। इन अम्लों के वास्तविक संघटन का अभीतक निश्चित रूप से पता नहीं लगा है। पर इस दिशा में इधर सन्तोषजनक प्रगति हुई है और हो रही है। पेट्रोलियम में अल्प मात्रा में पैराफीन अम्ल भी रहते हैं।

नैफ्थीनिक अम्ल किस मात्रा में रहते हैं, इसका पता नीचे दिये अंकों से लगता है—

पेट्रोलियम का स्रोत	श्रेणी	प्रभाग	नैफ्थीनिक अम्ल प्रतिशत
पेन्सिलवेनिया	पैराफिनिक	किरासन	०·००६
पेन्सिलवेनिया	पैराफिनिक	गैस-तेल	०·०१०
पूर्व टेक्सास	मध्यम	किरासन	०·००१
मध्यअमेरिका	मध्यम	किरासन	०·००१
कैलीफोर्निया	नैफ्थीनिक	नैफ्था	०·०१
		किरासन	०·०६
		गैस-तेल	०·३६
भारी टेक्सास	नैफ्थीनिक	किरासन	०·०७५
		गैस-तेल	०·३५
हल्का बलखानी (रूसी तेल)	नैफ्थीनिक	कच्चा तेल	१·०४
		किरासन	०·४
भारी बलखानी	ऐस्फाल्टिक	कच्चा तेल	१·१०
		किरासन	०·५
बिनागाडी	ऐस्फाल्टिक	कच्चा तेल	०·८४
		किरासन	०·५
रमनी	मध्यम	कच्चा तेल	०·४०
		किरासन	०·२
सुरखानी	मध्यम	कच्चा तेल	०·२०
		किरासन	०·२०

कुछ लोगों का मत है कि नैफ्थीनिक अम्ल कच्चे तेल में नहीं होते, परिष्कार के कारण तेलों में आ जाते हैं। पर कुछ कच्चे तेलों में निश्चित रूप से यह पाया गया है। इससे यह निश्चित है कि कच्चे तेलों में नैफ्थीनिक अम्ल रहते हैं।

नैफ्थीनिक अम्ल कार्बोक्सीलिक अम्ल है। इसमें कोई सन्देह नहीं है; पर इनके संघटन क्या हैं, इसका ठीक-ठीक पता हमें नहीं है। कुछ नैफ्थीनिक अम्ल संश्लेषण से प्राप्त हुए हैं; पर इनके विशिष्ट गुरुत्व एक से अधिक होते हैं जब कि प्राकृत नैफ्थीनिक अम्लों के विशिष्ट गुरुत्व एक से कम होते हैं।

इन अम्लों को हाइड्रोकार्बनों में परिणत करने के प्रयत्न हुए हैं, इन प्रयोगों से हम किसी निश्चित परिणाम पर नहीं पहुँच सके हैं। क्योंकि इससे जो हाइड्रोकार्बन बने हैं, उनकी मात्रा इतनी अल्प प्राप्त हुई है कि उससे किसी निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचना संभव नहीं है। ऐसा मालूम होता है कि ये हाइड्रोकार्बन साइक्लोपेटेन हैं।

इन अम्लों की पार्श्व-श्रृंखलाओं की प्रकृति के जानने के प्रयत्न हुए हैं। इससे पता लगता है कि इनकी पार्श्व-श्रृंखलाएँ भिन्न-भिन्न श्रेणियों की अनेक रहती हैं। इनमें २, २, ४-ट्राइमेथिल साइक्लोपेन्टील ऐसिटिक अम्ल $CH_2\,C\,(CH_3)_2\,CH\,(CH_3)\,CH_2\,CH\,CH_2\,COOH$ और गामा-ब्युटेरिक (मेथिल साइक्लोपेंटील) अम्ल $CH_3\,C_3\,H_5\,CH_2\,CH_2\,COOH$. प्राप्त हुए हैं।

C_8 से C_{12} वाले हाइड्रोकार्बनों में एक-चक्रिक और C_{13} से C_{23} वाले हाइड्रोकार्बनों में द्वि-चक्रिक हाइड्रोकार्बन पाये गये हैं। अधिकांश अम्लों में प्राथमिक अम्ल $-CH_2\,COOH$; कुछ में द्वितीयक अम्ल $=CH\,cOOH$ पाये गये हैं। तृतीयक अम्ल $\equiv C\,cOOH$ किसी में नहीं पाया गया है।

उच्च अणु-भारवाले हाइड्रोकार्बनों के संघटन का ज्ञान बिलकुल अनिश्चित है।

६ और ७ कार्बन अणुवाले अम्ल कच्चे तेल में नहीं पाये जाते; पर ये विभिन्न प्रभागशः आसुत में पाये गये हैं। इससे प्रमाणित होता है कि उच्च अणु-भारवाले पदार्थों के भंजन से ये बनते हैं। कुछ वैज्ञानिकों का मत है कि जल के साथ पेट्रोलियम के आसवन से तीन प्रकार की क्रियाएँ संभव हो सकती हैं—

(१) कार्बोक्सील समूह का टूटकर निकल जाना जिससे नैफ्थीनिक हाइड्रोकार्बन बनते हैं।

(२) पार्श्व-श्रृंखला का टूटकर निकल जाना जिससे छोटे नैफ्थीनिक अम्ल बनते हैं।

(३) पार्श्व-श्रृंखला का टूटकर निकल जाना, जिससे हाइड्रोकार्बन और पैराफीनिक अम्ल बनते हैं।

अनेक वैज्ञानिकों ने इस दिशा में प्रयोग कर अनेक अम्लों को प्राप्त किया है जिनमें १, २, ४-ट्राइमेथिल साइक्लोपेंटील-ऐसिटिक अम्ल, साइक्लोपेंटील कार्बोक्सीलिक, साइक्लोपेंटील ऐसिटिक, ३-मेथिल साइक्लोपेंटील ऐसिटिक अम्ल प्रमुख हैं।

बड़ी मात्रा में नैफ्थीनिक अम्ल प्राप्त करने की चेष्टाएँ हुई हैं। इसमें सफलता भी मिली है। नैफ्थीनिक अम्ल के निकालने में हल्के दाहक सोडा का उपयोग होता है। पेट्रोलियम के दाहक सोडा के विलयन के साथ उपचार से नैफ्थीनिक अम्ल साबुन बनकर निकल जाता है। दाहक सोडा के हल्के विलयन से दो लाभ होते हैं। पहला लाभ यह होता है कि इससे ऊँचे अणुभारवाले और दुर्बल अम्ल नहीं निकलते। ऐसे अम्लों से दाहक सोडा के विलयन से रेज़िन बनने का भय रहता है। व्यापार की दृष्टि से इन अम्लों का रहना ठीक नहीं है। दूसरा लाभ यह होता है कि हल्के विलयन से उदासीन हाइड्रो-

कार्बनों के निकलने का भय नहीं रहता। इन हाइड्रोकार्बनों को साबुन से पायस बनने अथवा अधिशोषित होने का भय रहता है।

इस प्रकार से प्राप्त साबुन को उद्वाष्पन द्वारा गाढ़ा करते हैं। पर्याप्त गाढ़ा हो जाने पर नमक का प्रबल विलयन डालकर साबुन को अवक्षिप्त कर अधिक शुद्ध रूप में प्राप्त करते हैं; अथवा हलके अम्ल से नैफ्थीनिक अम्ल को अवक्षिप्त कर लेते हैं। इनके विश्लेषण से पता लगता है कि इनकी अम्ल-संख्या नीची होती है। इनमें हाइड्रोकार्बन प्रायः १५ प्रतिशत तक रहते हैं।

साबुन के जलीय विलयन में नैफ्था द्वारा हाइड्रोकार्बन को घुलाकर पृथक् कर सकते हैं अथवा अम्ल का अल्कली द्वारा उदासीन बनाकर नमक द्वारा पुनः अवक्षेप प्राप्त कर सकते हैं। हाइड्रोकार्बनों को फिर आसवन द्वारा सरलतापूर्वक साबुन से निकाल सकते हैं।

नैफ्थीनिक अम्लों के सोडियम साबुन का शोधन सरल होता है। शुद्ध साबुन प्राप्त होने पर उसे अम्लों में अथवा मेथिल एस्टर में परिणत कर सकते हैं। एस्टर के प्रभागशः आसवन से वे शुद्ध रूप में प्राप्त होते हैं।

कच्चे नैफ्थीनिक अम्ल के रंग और गंध दोनों बुरे होते हैं। सलफ्यूरिक अम्ल, सक्रिय मिट्टी और आक्सीकरण से उनमें सुधार होता है; पर रख देने से गंध फिर लौट आती है। इससे मालूम होता है कि आक्सीकरण के कारण उनमें गंध होती है।

इन नैफ्थीनिक अम्लों की शुद्धता और अणुभार विभिन्न होते हैं। ऐसा समझा जाता है कि ये अनेक अम्लों के मिश्रण होते हैं।

नैफ्थीनिक अम्लों के सामान्य गुण गरी-तेल के अम्लों-जैसे होते हैं। जल में इनकी विलेयता विभिन्न होती है। इनके अणुभार भी १७५ से २८७ के बीच होते हैं। ये अम्ल धातुओं को आक्रान्त करते हैं। सीसा, जस्ता, ताँबा, लोहा, टिन और ऐल्युमिनियम सब इनसे आक्रान्त होते हैं। इनमें कुछ धातुओं पर आक्रमण तीव्रता से होता है और कुछ पर बहुत धीरे-धीरे। इनके लवण अमणिभीय होते हैं। अल्कली-धातुओं के लवण साबुन-से होते हैं। ये जल में पर्याप्त विलेय होते हैं और झाग देते हैं। झाग देना शुद्धता से कम होता जाता है। अकल्लीय-मिट्टी-धातुओं के लवण प्रायः ठोस होते हैं। ये जल, अल्कोहल और पेट्रोलियम ईथर में अविलेय होते हैं। भारी धातुओं के लवण ठोस तथा जल और अल्कोहल में अविलेय होते हैं; पर एथिल-ईथर और पेट्रोलियम-ईथर में विलेय होते हैं।

नैफ्थीनिक अम्लों के ताँबे के लवण पेट्रोल या बेंजीन में विलीन होकर नीला रंग देते हैं। इससे यह प्रतिक्रिया नैफ्थीनिक अम्लों के पहचानने में उपयुक्त हो सकती है; पर यह स्मरण रखना चाहिए कि ओलियिक अम्ल का लवण भी ऐसा ही रंग देता है।

नैफ्थीनिक अम्लों और उनके लवणों के अनेक उपयोग बताये गये हैं। ये कृमिनाशक होते हैं। ताँबे और टिन के लवण काठ के परिरक्षण में उपयुक्त हो सकते हैं। इन अम्लों के साबुन अच्छे होते हैं। ये ग्रीज़ भी बनते हैं। इसके ताँबे का साबुन जहाज के पेंदे के रँगने में पेट के रूप में व्यवहृत होता है। इसके सीसा, कोबाल्ट, जस्ते

और मैंगनीज के साबुन पेंट-शुष्ककारक के रूप में एवं वस्त्र-व्यवसाय में व्यवहृत होते हैं। इसके लवण जलाभेद्य प्रतिकारक, पायस-कारक और मुद्रण-स्याही के विलायक के लिए अच्छे कहे गये हैं। इसके सीस के लवण स्नेहक के रूप में काम आते हैं। कुछ डीज़ेल इंजिन में पिस्टन-वलय चिपक न जायँ, इस काम के लिए बनाये गये स्नेहक में कैलशियम और अल्युमिनियम के लवण अच्छे समझे जाते हैं। इससे स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है कि नैफ़्थीनिक अम्लों के लवण अब अधिक उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं।

रेज़िन-सा पदार्थ

अधिकांश पेट्रोलियम में, विशेषतया उच्च क्वथनांकवाले प्रभागों में रेज़िन-सा या अस्फाल्ट-सा पदार्थ अर्द्ध-ठोस और ठोस अवस्था में रहते हैं। इनमें आक्सिजन की मात्रा अल्प रहती है। इस कारण इन्हें भी आक्सिजन-यौगिकों में रखते हैं। ऐसा मालूम होता है कि आक्सीकरण से ये रेज़िन बनते हैं।

कम अस्फाल्टवाले कच्चे तेल के आसवन से जो अभंजित वाष्पशील आसुत प्राप्त होते हैं, वे साधारणतया रेज़िन और अस्फाल्ट से मुक्त होते हैं। अधिकांश कच्चे तेल के आसुत स्नेहन प्रभाग में पर्याप्त मात्रा में रहते हैं और यदि उन्हें बिना शोधन के उपयोग में लाया जाय तब वे कष्ट देते हैं।

रेज़िन और अस्फाल्टवाले कच्चे तेल के आसवन पर जो अवशेष बच जाता है, उसमें विभिन्न मात्रा में रेज़िन और अस्फाल्ट रहते हैं। कुछ अवशेष से तो अस्फाल्ट प्राप्त किया जा सकता है। भंजन से जो पेट्रोल और किरासन प्राप्त होते हैं, देखा गया है कि प्रारम्भ में तो उसमें कोई रेज़िन नहीं है ; पर कुछ दिनों के बाद उसमें रेज़िन का निक्षेप पाया जाता है। रेज़िन और अस्फाल्ट का नैफ्थीनिक और पोली-नैफ्थीनिक अम्लों से घना संबंध है। इनके आक्सीकरण से ही ये रेज़िन बनते हैं।

अनेक स्नेहक तेलों में बड़ी यथार्थता से रेज़िन की मात्रा पाई गई है। कुछ तेलों में लगभग ४ प्रतिशत, कुछ तेलों में ४·३ प्रतिशत और कुछ तेलों में १·२ से २·४ प्रतिशत तक रेज़िन पाया गया है। अम्ल के द्वारा शोधन से इसकी मात्रा आधी हो जाती है। इस रेज़िन का मौलिक विश्लेषण हुआ है। इसमें—

कार्बन	८२ से ८४ प्रतिशत
हाइड्रोजन	८·७ से १०·० प्रतिशत
आक्सिजन	५·३ से ८·० प्रतिशत
राख	०·२ से १·६ प्रतिशत

पाये गये हैं। इसका विशिष्ट गुरुत्व १·० से ऊपर होता है।

रेज़िन के निकालने की दो रीतियाँ उपयुक्त हुई हैं। एक रीति में तेल का ७० प्रतिशत अल्कोहल से निष्कर्ष निकालते हैं। ऐसे निष्काषित रेज़िन में ८ प्रतिशत तक आक्सिजन पाया गया है। इस निष्कर्ष को कोयले अथवा फुलर मिट्टी के साथ मिलाकर अनेक विलायकों के द्वारा फिर निष्कर्ष निकालते हैं। पेट्रोलियम ईथर से हाइड्रोकार्बन निकल

जाते हैं। ईथर, बेंज़ीन और क्लोरोफार्म से रेज़िन निकलते हैं। दूसरी रीति में अधिशोषण-विधि का उपयोग हुआ है। अधिशोषक से फिर विभिन्न विलायकों के द्वारा रेज़िन निकालते हैं। इन रेज़िनों के गुण निम्नलिखित थे—

विलायक	विशिष्ट गुरुत्व	आयोडीन-संख्या	गन्धक प्रतिशत	औसत अणुभार
७० प्रतिशत अलकोहल	१·८६७	८·०	०·५५	१५८८
एमिल अलकोहल	१·०५६	१६·२	१·०२	११५६
ईथर	१·०४४	३२·३	२·११	८०१
बेंज़ीन	१·११०	—	—	—
क्लोरोफार्म	१·०७१	—	—	—

एक रूसी कच्चे तेल से, जो मोमवाला नहीं था, निम्नलिखित मात्रा में रेज़िन प्राप्त हुआ था—

प्रभाग	रेज़िन प्रतिशत	विशिष्ट गुरुत्व	अवस्था	अणुभार	मात्रिक सूत्र
कच्चा पेट्रोलियम	८·२	१·०४	ठोस	५८६	$C_{41}H_{57}O_2$
किरासन	०·०७	१·०१	द्रव	२६०	$C_{19}H_{29}O_2$
गैस-तेल	०·६	१·०३	अर्धठोस	३१६	$C_{22}H_{31}O_2$
हलका स्नेहक आसुत	५·८	१·०३	अर्धठोस	४६६	$C_{32}H_{47}O_2$
भारी स्नेहक आसुत	७·४	१·०४	ठोस	४७१	$C_{32}H_{47}O_2$
अवशिष्ट इंधन-तेल	२१·३	१०·४	ठोस	७५७	$C_{53}H_{73}O_3$
ऍस्फाल्ट	२०·८	१·०४	ठोस	७८८	$C_{55}H_{77}O_3$

जिस पेट्रोलियम से रेज़िन निकाला गया है प्रायः उसी अनुपात का रेज़िन का भी अणुभार है अथवा किंचित् ज्यादा है। इससे मालूम होता है कि ये केवल आक्सीकरण से बने हैं। इनके बनने में कोई संघनन-प्रतिक्रिया नहीं हुई है। कम अणुभारवाले रेज़िन ही ऐसीटोन और अलकोहल में विलेय हैं। इनकी विलेयता पर ताप का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। कुछ दशा में तो ३५° से ७८° बढ़ने पर विलेयता २० गुनी बढ़ जाती है। इनके विलयन सामान्य विलयन होते हैं। वे कोलायडल नहीं होते। ऐसा कहा गया है कि पेट्रोलियम का रंग रेज़िन में ही रहता है।

कुछ लोगों ने रेजिन में अल्पमात्रा में गन्धक भी पाया है। इसमें एक युग्म-बन्धन भी रहता है। आक्सिजन किस रूप में विद्यमान है, इसका निश्चित रूप से हमें पता नहीं है। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि यह ईथर अथवा कीटोन के रूप में रहता है।

ऐस्फाल्टीन

रेज़िन के सिवा पेट्रोलियम में ऐस्फाल्टीन भी रहते हैं। ये रेज़िन से इस बात में भिन्न हैं कि ये पेट्रोलियम ईथर में अविलेय होते हैं, यद्यपि ये बेंज़ीन और क्लोरोफार्म में

विलेय हैं। गरम करने पर ये फूलते हैं, पिघलते नहीं हैं। इनके विलयन कोलायडल और बहुत ही प्रक्षिप्त तथा स्थायी होते हैं। इनके विश्लेषण से पता लगता है कि इनमें कार्बन ८५·२ प्रतिशत, हाइड्रोजन ७·४ प्रतिशत, गन्धक ०·७ प्रतिशत और आक्सिजन ६·७ प्रतिशत रहते हैं। इनके संघटन बहुत-कुछ स्थायी होते हैं। इनके विशिष्ट गुरुत्व और आयोडीन-संख्या में अधिक भिन्नता नहीं देखी जाती है। इनके अणुभार बहुत भारी यानी कई हजार होते हैं।

ऐस्फाल्टीन के संघटन का ज्ञान हमें बिलकुल संदिग्ध है। कुछ में तो आक्सिजन ईथरीय या कीटोन-रूप में हैं; पर कुछ में ऐसे अस्थायी रूप में हैं कि वह स्थान बदलता-सा मालूम होता है। इसे बिलकुल शुद्ध रूप में प्राप्त करना कठिन है।

गन्धक-यौगिक

सभी कच्चे पेट्रोलियम में गन्धक रहता है। इसकी मात्रा ०·०४ प्रतिशत से लेकर ४·५ प्रतिशत तक रहती है। पेन्सिलवेनिया के तेल में सबसे कम और मेक्सिको के तेल में सबसे अधिक गन्धक की मात्रा रहती है। साधारणतया हलके और अधिक वाष्पशील तेलों में कम और भारी अस्फाल्टिक तेलों में गन्धक की मात्रा अधिक रहती है। भूगर्भ की दृष्टि से नये बने तेलों में गन्धक की मात्रा अधिक और पुराने बने तेलों में कम रहती है। ऐसा समझा जाता है कि बहुत दिनों तक तेलों के धरती में रहने से गन्धक-यौगिकों का अधिशोषण हो जाता है। इससे तेल में गन्धक-यौगिकों की मात्रा कम हो जाती है।

पेट्रोलियम में गन्धक का रहना उपादेय नहीं है। यदि इसकी मात्रा ०·२ से ०·४ प्रतिशत रहे, तो कोई हानि नहीं है; पर अनेक तेलों में इसकी मात्रा १ प्रतिशत रहती है। कुछ तेलों में तो १ से २ प्रतिशत तक गन्धक रहता है। ऐसे तेलों से जो गैस निकलती है, उसमें हाइड्रोजन-सल्फाइड रहता है। पेट्रोलियम या प्राकृत गैसों से गन्धक अथवा हाइड्रोजन-सल्फाइड का निकालना एक समस्या है, जिसका हल सरल नहीं है।

पेट्रोलियम के एक नमूने में गन्धक की मात्रा ०·६५ प्रतिशत थी। विभिन्न प्रभागों में गन्धक का वितरण इस प्रकार पाया गया —

प्रभाग	प्रतिशत	गन्धक प्रतिशत
पेट्रोल	३१·७	०·०२
किरासन	१८·३	०·०५
गैस-तेल	५·७	०·१०
स्नेहक आसुत	२८·२	०·७७
ईंधन-तेल	१५·२	०·७६
गैस और हानि	०·८	१४·०४

ऐसा समझा जाता है कि गन्धक पेट्रोलियम में मुक्त दशा में नहीं रहता। अधिकांश गन्धक हाइड्रोजन-सल्फाइड के रूप में मुक्त अथवा संयुक्त रहता है। इसके यौगिक ऊँचे अणुभार के होते हैं। गरम करने पर ये अस्थायी होते हैं और हाइड्रोजन-सल्फाइड मरकैप्टन और अन्य सक्रिय यौगिकों के रूप में रहते हैं। तेलों से हाइड्रोजन-सल्फाइड निकाल लेने पर तेलों से दुर्गंध निकल जाती है। यह हाइड्रोजन सल्फाइड कहाँ से आता है, यह कहना सरल नहीं है। सम्भव है कि सल्फेटों के अवकरण से यह बनता हो।

गन्धक के कौन-कौन यौगिक तेलों में रहते हैं, इसका अनुसंधान पूर्ण रूप से नहीं हुआ है। यह सम्भव है कि हाइड्रोजन-सल्फाइड, मरकैप्टन सल्फाइड, थायोफीन कार्बन बाइ-सल्फाइड और चक्रिक सल्फाइड उनमें रहते हैं। कुछ लोगों ने इन यौगिकों को पृथक् भी किया है। पेट्रोलियम की दुर्गंध मरकैप्टन के कारण होती है। कुछ लोगों ने अल्कली-सल्फाइड मेथिल-एथिल-सल्फाइड और मेथिल-प्रोपील-सल्फाइड भी तेलों से निकाला है। कुछ लोगों ने टेट्रामेथिलीन और पेण्टामेथिलीन सल्फाइड भी पाया है। थायोफीन और अल्फामेथिल-थायोफीन भी तेलों में पाये जाते हैं।

उच्च ताप से गन्धक के यौगिक विच्छेदित हो जाते हैं। भंजन से मरकैप्टन और सल्फाइड शीघ्रता से विच्छेदित हो जाते हैं; पर थायोफीन भंजन-ताप पर स्थायी होता है। उत्प्रेरकों पर गन्धक-यौगिकों की क्रियाएँ होती हैं और उनकी दक्षता घट जाती है।

मोटर इंजिन में जलनेवाले पेट्रोल में गन्धक नहीं रहना चाहिए। इससे इंजिन के विभिन्न भागों का क्षय होता है—विशेषतः जल के संसर्ग में सम्भवतः जल के संसर्ग से सलफ्यूरस अम्ल बनता है, जो इस्पात को आक्रान्त करता है। मरकैप्टन ताँबे और पीतल को वायु की उपस्थिति में तीव्रता से आक्रान्त करते हैं। सम्भवतः मरकैप्टन से वार्निश का पुरुभाजन भी होता है। मुक्त गन्धक भी संक्षारक होता है। सल्फाइड, डाइ-सल्फाइड और थायोफीन कम संक्षारक होते हैं; पर ये ऑक्टेन संख्या को कम कर देते हैं। क्योंकि, लेड-टेट्राएथिल पर इनकी प्रतिक्रियाएँ होती हैं। पेट्रोल में ०·१ प्रतिशत से अधिक गन्धक नहीं रहना चाहिए। ईंधन-तेल में इससे अधिक गन्धक रहने से भी विशेष हानि नहीं है। स्नेहक तेल में अल्प मात्रा में गन्धक सह्य है और धातुओं के क्षय को रोकने में सहायक हो सकता है, पर अधिक रहने से हानिकारक होता है; क्योंकि आक्सीकरण के प्रतिरोध को यह कम कर देता है। गन्धक को कैसे दूर कर सकते हैं, इसका वर्णन अलग होगा।

गन्धक का निर्धारण

गैसों में हाइड्रोजन-सल्फाइड की मात्रा का निर्धारण आयोडीन-विलयन के द्वारा किया जाता है। यदि गैसों में असंतृप्त हाइड्रोकार्बन हो तो लेड-नाइट्रेट के द्वारा किया जा सकता है। वाष्पशील तेलों में गन्धक का निर्धारण 'दीप'-विधि से और भारी तेलों में बिम्ब-विधि से होता है। मरकैप्टन का निर्धारण अमोनियी कॉपर-सल्फेट अथवा सिल्वर

नाइट्रेट द्वारा अनुमापन से होता है। इसकी पहचान २,४-डाइनाइट्रोक्लोरोबेंजीन के साथ युग्मलवण बनाने के कारण होती है। मुक्त गन्धक का निर्धारण 'रंगमितीय'-विधि से 'डाक्टर'-प्रतिक्रिया के द्वारा अथवा ताँबे के पत्तर के कलुषित होने के कारण होता है।

नाइट्रोजन-यौगिक

सब पेट्रोलियम में नाइट्रोजन रहता है। इसकी मात्रा साधारणतया २ प्रतिशत से कम ही रहती है, यद्यपि एक नमूने में २·३ प्रतिशत पाई गई है। ऐसा समझा जाता है कि डूमा-विधि से नाइट्रोजन की मात्रा निर्धारित होने के कारण नाइट्रोजन का मान अधिक आया है; क्योंकि केल्डाल-विधि से ३७ नमूने के विश्लेषण से औसत मान ०·१० प्रतिशत ही प्राप्त हुआ है।

किस रूप में नाइट्रोजन पेट्रोलियम में वर्त्तमान है, उसका ज्ञान बहुत अपूर्ण है। पिरिडीन और क्विनोलीन-समूह के क्षार अवश्य रहते हैं; पर नाइट्रोजन का बहुत अल्प अंश ही इस रूप में रहता है। 'बेली' ने वर्णन किया है कि कैलिफोर्निया तेल का हलके सलफ्यूरिक अम्ल से निष्कर्ष निकालने पर प्रायः कुछ भी नाइट्रोजन नहीं निकला। यह सम्भव है कि कच्चे पेट्रोलियम में जो नाइट्रोजन रहता है, उसका अणुभार बहुत ऊँचा होता है। आसवन से यह सम्भवतः टूटकर कम अणुभारवाला यौगिक बनता है।

बेली ने इस विषय पर जो काम किया है, उससे पता लगता है कि तेल में डाइ-, ट्राई और टेट्रा-एल्किल क्विनोलीन रहते हैं। ऐसे १२ एल्किलों को उन्होंने अलग कर पहचाना है। २,३,९-ट्राइमेथिल पिरिडीन में साइक्लोपेण्टील और साइक्लोहेक्सील-समूह जुड़ा हुआ पाया गया है। क्विनोलीन, मेथिलक्विनोलीन और मेथिल पिरिडीन के संजात भी पाये गये हैं। कच्चे पेट्रोलियम में नाइट्रोजन क्षार अवश्य रहते हैं; पर उनके अणुभार बहुत ऊँचे होते हैं। आसवन से वे टूटकर अपेक्षया कम अणुभार के क्षारों में बदल जाते हैं। अधिकांश अन्वेषण आसुत तेलों के नाइट्रोजन यौगिकों पर ही हुए हैं। इस अल्प नाइट्रोजन के होने से पेट्रोलियम की उत्पत्ति के कार्बनिक सिद्धान्त का कुछ सीमा तक प्रतिपादन होता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। भंजन के बाद पेट्रोलियम में अरुचिकर गन्ध का होना भी नाइट्रोजन-यौगिकों के टूटकर कम अणुभार के कार्बनिक क्षारों का बनना सूचित करता है।

दसवाँ अध्याय

पेट्रोलियम की सामूहिक प्रतिक्रियाएँ

पेट्रोलियम के हाइड्रोकार्बनों का पृथक्करण बहुत कठिन है। इस कारण पेट्रोलियम की सामूहिक प्रतिक्रियाओं से उनके सम्बन्ध में बहुत पता लगता है, अतः वे महत्त्व के हैं। ऐसी प्रतिक्रियाओं में एक महत्त्व की प्रतिक्रिया पेट्रोलियम का आक्सीकरण है।

आक्सीकरण

पेट्रोलियम का आक्सीकरण महत्त्वपूर्ण होने पर भी इसका ज्ञान हमें बहुत अधूरा है। पेट्रोलियम के उपयोग में—चाहे वह मोटर-इंधन, डीजेल-इंधन या किरासन के रूप में हो—आक्सीकरण ही प्रधान प्रतिक्रिया होती है। इन सब उपयोगों में दहन-ताप पर जलकर पेट्रोलियम से गैसीय उत्पाद प्राप्त होते हैं। पेट्रोलियम के आंशिक आक्सीकरण से व्यापार की दृष्टि से अनेक उपयोगी पदार्थ अल्कोहल, एलडीहाइड अम्ल और एस्टर बनते हैं। अल्कोहल और एस्टर विलायक के रूप में, एलडीहाइड रेज़िन के निर्माण में और अम्ल साबुन के निर्माण में उपयुक्त होते हैं। कुछ कामों के लिए आक्सीकरण उपादेय नहीं है। वहाँ आक्सीकरण के रोकने की चेष्टा होती है। जहाँ स्नेहक के रूप में मशीनों को चिकनाने के लिए स्नेहक तेल इस्तेमाल होता है, वहाँ आक्सीकरण न होना ही आवश्यक है। टरबाइन में जोड़ों इत्यादि में गोंद-सा पदार्थों का इकट्ठा होना और भंजित पेट्रोल में गोंद का बनना आक्सीकरण के कारण ही होता है।

साधारणतया पेट्रोलियम आक्सीकरण का प्रतिरोधक समझा जाता है; पर वायु या आक्सिजन से यह सरलता से आक्रान्त होता है। यदि किरासन को वायु के प्रवाह में आसुत करें तो उत्पाद में इतना अम्ल पाया जाता है कि उसकी पहचान सरलता से हो जाती है। छह घण्टे तक वायु और सूर्य-प्रकाश में खुला रखने से स्नेहक तेलों में पर्याप्त परिवर्त्तन होता हुआ देखा गया है। भारी तेल के बहुत अधिक काल तक वायु में रखने से रेज़िन और ऍस्फाल्ट का बनना पाया गया है। गरम करने से ये क्रियाएँ तीव्रता से होती हैं। ऐसा समझा जाता है कि इन तेलों में बड़ी अल्प मात्रा में ऐसी वस्तुएँ रहती हैं, जो आक्सिजन-वाहक होती हैं। इस बात से इसकी पुष्टि होती है कि परिष्कृत तेलों—जिनसे ये अस्थायी पदार्थ निकाल दिये गये हैं—का आक्सीकरण इतनी तीव्रता से नहीं होता। यदि इन तेलों का परिष्कार बहुत सूक्ष्मता से हो तो तेलों के आक्सीकरण को रोकनेवाले पदार्थ निकल जाते हैं।

आक्सीकरण बहुत पेचीली प्रतिक्रिया है। पेट्रोलियम के आक्सीकरण का अध्ययन कठिनता से भरा हुआ है ; क्योंकि आक्सीकरण में अनेक माध्यम यौगिक बनते हैं। अनेक लोगों ने आक्सीकरण का अध्ययन किया है ; पर परिस्थिति एक न होने से उनके परिणामों की तुलना करना ठीक नहीं है। परिस्थिति के अल्प परिवर्त्तन से भी परिणामों में बहुत विभिन्नता आ जाना स्वाभाविक है।

निम्न ताप के आक्सीकरण से पैराफिन पहले एल्डीहाइड बनते हैं, जो पीछे निम्नतर एल्डीहाइडों और कार्बन-मनौक्साइड में अथवा अम्लों में परिणत हो जाते हैं तथा अम्ल फिर कार्बन-डायक्साइड और जल में परिणत हो जाते हैं। इस सम्बन्ध में जो अन्वेषण लोगों ने किये हैं, उनसे पता लगता है कि आक्सीकरण से पहले अन्त के मेथिल-मूलक पर आक्रमण होता है। ऑक्टेन के आक्सीकरण से पहले ऑक्टल्डीहाइड बनता है जो पीछे हेप्टल्डीहाइड, निम्न ताप पर कार्बन मनौक्साइड और जल, उच्चताप पर कार्बन-डायक्साड तथा जल में परिणत हो जाता है। ६५०° से० के ऊपर ताप पर कार्बन-डायक्साइड का बनना एक-ब-एक बहुत प्रमुख हो जाता है और विस्फोटक तीव्रता से सञ्चालित होता है। ऐसा मालूम होता है कि एल्डीहाइड क्रमशः निम्नतर और निम्नतम होता हुआ अन्त में कार्बन-डायक्साइड और जल में परिणत हो जाता है। सशाख-ऑक्टेन में भी ऐसी ही प्रतिक्रियाएँ होती हैं। यहाँ भी अन्त का मेथिल-मूलक ही पहले आक्रान्त होता है। द्वितीयक और तृतीयक मेथिल-मूलक पहले नहीं आक्रान्त होते। इस प्रकार पहले एल्डीहाइड और जल बनते हैं। यह एल्डीहाइड क्रमशः छोटा होता है और कार्बन-मनौक्साइड बनता है। यहाँ जब कार्बन शाख के निकट पहुँचता है, तब एल्डीहाइड के स्थान में कीटोन बनता है। इस दशा में आक्सीकरण के प्रति प्रतिरोध बहुत अधिक बढ़ जाता है।

२,२,४-ट्राइमेथिल पेण्टेन का निम्न ताप पर आक्सीकरण नहीं होता। ५१५° से० निम्न ताप पर कोई क्रिया नहीं होती। इस ताप पर कार्बन-मनौक्साइड और कार्बन-डायक्साइड दोनों बनते हैं। जब ताप ५६०° से० पहुँच जाता है तब केवल कार्बन-डायक्साइड बनता है। इससे यह पता लगता है कि १-ऑक्टीन और न-ऑक्टीन के आक्सीकरण एक-से होते हैं। ऑक्टीन में आक्सीकरण युग्मबन्ध पर नहीं होता, वरन् अन्तिम मेथिल-मूलक पर होता है। अन्य असंतृप्त हाइड्रोकार्बन के साथ भी ऐसी ही प्रक्रिया होती है।

बरवेल (Barwell) का मत है निम्न ताप पर १२०° से १४०° के बीच पैराफिन मोम के आक्सीकरण में बीटा-कार्बन पर प्रधानतः आक्रमण होता है और उसके बाद गामा-कार्बन पर तथा उसके सन्निकट कार्बन इत्यादि पर होता हुआ बीच की ओर बढ़ता है। इस प्रकार से बना अल्कोहल फिर कीटोन में और तब कीटोन दो अम्लों में परिणत हो जाता है। कीटोन-मूलक बड़ी शृंखला के साथ जाता है। इस प्रकार फार्मिक अम्ल, ऐसिटिक अम्ल और उच्चतर अम्ल बड़ी मात्रा में बनते हैं, जो अल्कोहल के साथ मिलकर एस्टर बनते हैं। इनसे लैक्टोन बनते हैं। प्रकाश और धातुओं के साबुन सदृश उत्प्रेरकों से आक्सीकरण की वृद्धि होती है।

जेम्स (James) ने किरासन तेल की वाष्प-कला के आक्सीकरण से उत्पाद में अल्कोहल, अल्डीहाइड अल्कोहल, अल्डीहाइड कीटोन, अल्डीहाइड अम्ल, अल्डीहाइड हाइड्रौक्सी-अम्ल, कीटो-अम्ल, हाइड्रौक्सी-कीटो अम्ल और इन अम्लों के एस्टर और असंतृप्त हाइड्रोकार्बन पाये थे। इनके अतिरिक्त इन पदार्थों के संघनन-पुरुभाजन से बड़े उच्च अणु-भार के अणु और रेज़िन पदार्थ बनते हैं। ये पदार्थ कैसे बनते हैं, इसका ठीक-ठीक पता नहीं है।

साधारणतया ओलिफीनों का आक्सीकरण अधिक शीघ्रता से होता है; पर 'बीटी' और 'एडगर' (Beatty and Edgor) ने देखा कि १- और ३-हेप्टीन के आक्सीकरण की अपेक्षा न-हेप्टेन का आक्सीकरण अधिक शीघ्रता से होता है; पर ओलिफीनों का आक्सीकरण मन्द आक्सीकारकों—जैसे पोटाश परमैंगनेट—के द्वारा भी हो जाता है। इनमें युग्मबन्ध पर पहले आक्रमण होकर हाइड्राक्सी-यौगिक बनते हैं और पीछे इन हाइड्राक्सी-यौगिकों के द्विबन्ध के स्थान पर टूटने से अम्ल बनते हैं। वायु अथवा आक्सिजन से पहले पेरौक्साइड बनते हैं, जो अस्थायी होते हैं और फिर टूटकर अल्डीहाइड और कीटोन प्रदान करते हैं।

$$\text{प्रउ}_3-\text{प्रउ}=\text{प्रउ}_2+\text{अ}_2\rightarrow\text{प्रउ}_3-\underset{\underset{\text{अ}}{|}}{\overset{\overset{\text{उ}}{|}}{\text{प्र}}}-\underset{\underset{-\text{अ}}{|}}{\text{प्रउ}_2}\rightarrow\text{प्रउ}_3\text{प्रउअ}+\text{उप्रउअ}$$

या

$$\begin{matrix}\text{प्रउ}_3\\ \text{प्रउ}_3\end{matrix}>\text{प्र}=\text{प्रउ}_2+\text{अ}_2\rightarrow\begin{matrix}\text{प्रउ}_3\\ \text{प्रउ}_3\end{matrix}>\begin{matrix}\text{प्र}-\text{प्रउ}_2\\ |\quad\;\; |\\ \text{अ}-\text{अ}\end{matrix}\rightarrow\begin{matrix}\text{प्रउ}_3\\ \text{प्रउ}_3\end{matrix}>\text{प्रअ}+\text{उप्रउअ}$$
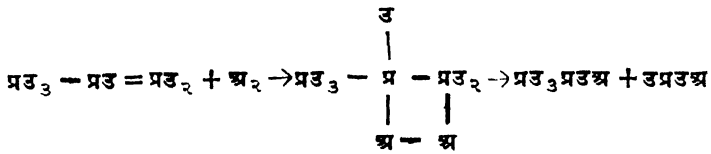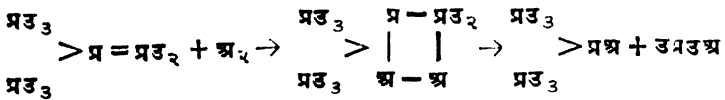
'लेनहर' (Lenher) का यह मत है और यह एथिलीन और प्रोपिलीन के आक्सीकरण पर आधारित है। इसमें पहले पेरौक्साइड बनते हैं और ये पेरौक्साइड फिर ओलिफीन अणु से मिलकर इपौक्साइड (Epoxide) बनते हैं। ये इपौक्साइड ही पुनर्विन्यास से पहले अल्डीहाइड में और आक्सीकरण से पीछे अम्ल में परिणत हो जाते हैं।

हाइड्रौक्सिलीकरण-सिद्धान्त

कुछ वैज्ञानिकों का मत है कि हाइड्रोकार्बन आक्सिजन के साथ मिलकर अस्थायी माध्यमिक हाइड्रौक्सी-यौगिक बनता है। ये यौगिक फिर विच्छेदित होकर अन्य स्थायी यौगिक बनते हैं। उदाहरण-स्वरूप मिथेन आक्सिजन के साथ पहले नवजात मेथिल अल्कोहल और फिर डाइ-हाइड्रौक्सीमिथेन बनता है, जिससे पानी निकलकर फार्मल्डीहाइड और मनौक्साइड और जल बनता है।

$$\text{प्रउ}_4\xrightarrow{\text{अ}}\text{प्रउ}_3\text{अउ}\rightarrow\text{प्रउ}_2(\text{अउ})_2\rightarrow\text{उप्रउअ}+\text{उ}_2\text{अ}\xrightarrow{\circ}\text{प्रअ}+\text{उ}_2\text{अ}$$
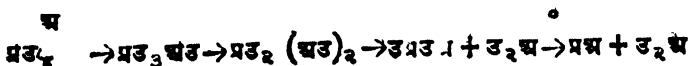
एलिथिन निम्नलिखित रीति से अस्थायी हाइड्रौक्सी-यौगिक बनकर अन्त में कार्बन-डायक्साइड और कार्बन-मनौक्साइड देता है—

प्रउ$_2$ प्रउ (अउ) प्रउ (अउ)

| $\xrightarrow{\text{अ}}$ | $\xrightarrow{\text{अ}}$ | $\xrightarrow{\text{अ}}$ २ उप्रउअ → २प्रअ + २उ$_2$

प्रउ$_2$ प्रउ$_2$ प्रउ (अउ)

o

↓

उ$_2$अ + प्रअ ← उप्र अअउ

o

↓ अउ

/

प्रअ → प्रअ$_2$ + उ$_2$अ

—

अउ
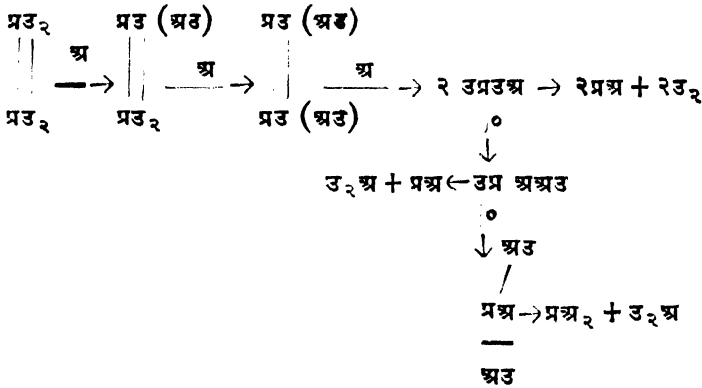
आक्सीकरण में पहला क्रम हाइड्रौक्सिलीकरण का है। तब यह अल्डीहाइड बनता है और अल्डीहाइड फिर पेरौक्साइड बनता है। हाइड्रोकार्बन सीधे पेरौक्साइड नहीं बनता। इस सिद्धान्त पर अनेक लोगों का विश्वास नहीं है; क्योंकि अनेक प्रयत्न करने पर भी अल्कोहल या ग्लाइकोल नहीं मिला है। किन्तु, हाल में नेविट और गार्डनर (Newitt and Gardner) ने जो प्रयोग किये हैं, उनमें वायुमण्डल के दबाव पर मिथेन और इथेन के आक्सीकरण में मेथिल और एथिल अल्कोहल मिले हैं; डाइ-हाइड्रौक्सी अल्कोहल अभी तक नहीं मिले हैं।

कुछ लोगों का मत है कि उच्च दबाव पर मेथिल-अल्कोहल फार्मल्डीहाइड के अवकरण से प्राप्त होता है। कुछ लोगों का मत है कि पैराफिन की अपेक्षा अल्कोहल आक्सीकरण के अधिक प्रतिरोधक होते हैं। एक ही परिस्थिति में फेनिल-मेथिल कार्बिनोल के आक्सीकरण से उतना एसिटो-फिनोल नहीं बनता जितना एथिल बेंजीन के आक्सीकरण से बनता है। इसके सिवा हाइड्रौक्सिलीकरण-सिद्धान्त में नवजात आक्सिजन की कल्पना से हाइड्रौक्सी माध्यम यौगिक का निर्माण बताया गया है। इसका भी विरोध हुआ है। इनके अतिरिक्त अन्य कुछ बातें भी इस सिद्धान्त के विरोध में कही जाती हैं।

पेरौक्सीकरण-सिद्धान्त

यह सिद्धान्त हैरिस (Harries) के संतृप्त हाइड्रोकार्बन के निम्न ताप पर और ओज़ोन की प्रतिक्रिया पर आधारित है। हैरिस का मत है कि ओज़ोन के साथ एक माध्यमिक पेरौक्साइड बनता है, जिसे 'मोलोक्साइड' कहते हैं। संतृप्त हाइड्रोकार्बन के आक्सीकरण में माध्यमिक उत्पाद के रूप में कार्बनिक पेरौक्साइड को किसी ने पहचाना नहीं है। किन्तु यह प्रमाणित हो गया है कि कोई सक्रिय आक्सीकारक अवश्य रहता है। पेरौक्साइड का माध्यमिक यौगिक के रूप में बनना युक्तिसंगत मालूम पड़ता है। यह संभव है कि मिथेन आक्सिजन के साथ पहले मिथेन-पेरौक्साइड बनता है, जो अस्थायी

होने के कारण शीघ्र ही विच्छेदित हो फार्मल्डीहाइड बन जाता है अथवा मिथेन के एक दूसरे अणु के साथ मिलकर मेथिल-अल्कोहल बन सकता है।

प्रउ$_४$ + अ$_२$ → प्रउ$_४$ (अ$_२$) या प्रउ$_3$अअउ → उप्रउअ + उ$_२$अ

$$CH_4 + O_2 \rightarrow CH_4O_2 \text{ or } CH_3OOH \rightarrow HCHO + H_2O$$

अथवा

प्रउ$_४$ (अ$_२$) + प्रउ$_४$ → २ प्रउ$_3$अउ

$$CH_4(O_2) + CH_4 \rightarrow 2\,CH_3OH$$
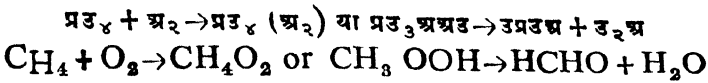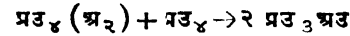
पेरौक्सीकरण सिद्धान्त का सबसे प्रबल प्रमाण निम्नलिखित प्रयोग है—

हेक्सेन, हेप्टेन और ऑक्टेन के मिश्रण के मन्द आक्सीकरण से १२५° से० तक पर्याप्त श्वेत धुआँ प्राप्त होता है। इसके संघनन से दो स्तरों में द्रव प्राप्त होते हैं। ऊपरी स्तर में हाइड्रोकार्बन रहता है, जिसमें पर्याप्त मात्रा में अल्डीहाइड भी रहते हैं। निचले स्तर में अम्ल रहता है और उसमें प्रबल आक्सीकरण गुण होता है। इस द्रव के निर्वात आसवन से एक पीला तेल प्राप्त होता है, जिसमें अलफा-हाइड्रोक्सी-ऐल्किल-पेरौक्साइड $R-O-O-CH(OH)R$ के गुण रहते हैं। हेप्टेन के नील-लोहित प्रकाश से ५०° से० पर आक्सीकरण द्वारा अलफा-हाइड्रोक्सी-एल्किल किस्म का पेरौक्साइड प्राप्त हुआ था। ऐसा समझा जाता है कि इन प्रक्रियाओं में स्वयं हाइड्रोकार्बन के स्थान में हाइड्रोकार्बन-मूलक के साथ आक्सिजन का योग होता है। यह निम्नलिखित समीकरणों से स्पष्ट हो जाता है—

प्रउ$_४$ → प्रउ$_3$ + उ २ उ + अ$_२$ → उ$_२$अ$_२$

प्रउ$_3$ + उ + अ$_२$ → प्रउ$_3$अअउ प्रउ$_3$अअउ → उप्रउअ + उ$_२$अ

२ प्रउ$_3$ + अ$_२$ → प्रउ$_3$अअप्रउ$_3$ प्रउ$_3$अअप्रउ$_3$ → प्रउ$_3$अउ + उप्रउअ

$$CH_4 \rightarrow CH_3 + H \qquad 2H + O_2 \rightarrow H_2O_2$$
$$CH_3 + H + O_2 \rightarrow CH_3OOH \qquad CH_3OOH \rightarrow HCHO + H_2O$$
$$2CH_3 + O_2 \rightarrow CH_3OOCH_3 \qquad CH_3OOCH_3 \rightarrow CH_3OH + HCHO$$
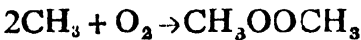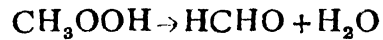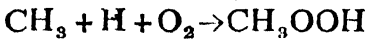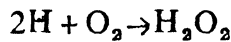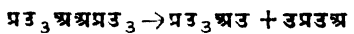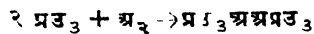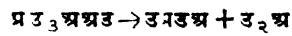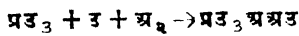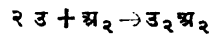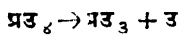
यह सम्भव है कि उपर्युक्त प्रकार से हाइड्रोजन पेरौक्साइड का अथवा मेथिल-हाइड्रोजन-पेरौक्साइड का फार्मल्डीहाइड के संघनन से हाइड्रौक्सी-पेरौक्साइड बने और अल्डीहाइड के सीधे आक्सीकरण से पर-अम्ल बन जाय।

लेविस (Lewis) पेरौक्साइड सिद्धान्त के विरुद्ध हैं। उनका कहना है कि किसी संतृप्त हाइड्रोकार्बन का पेरौक्साइड बनना नहीं देखा गया है। उनका मत है कि संतृप्त हाइड्रोकार्बन का पहले विहाइड्रोजनीकरण होकर असंतृप्त हाइड्रोकार्बन बनता है जो फिर आक्सिजन के साथ मिलकर सक्रिय पेरौक्साइड बन सकता है। अनेक अन्वेषकों ने निम्न ताप पर असंतृप्त हाइड्रोकार्बन बनते पाया है। पेट्रोलियम तेल को १७०° से० तक वायु में गरम करने से उसकी आयोडीन ब्रोमीन-संख्या बढ़ी हुई पाई गई है। इससे असंतृप्त हाइड्रोकार्बन की वृद्धि स्पष्ट प्रमाणित होती है।

पेट्रोल में गोंद

भंजन से प्राप्त पेट्रोल-अंश को बहुत दिनों तक रखे रहने से, विशेषतः वायु और धातुओं के संसर्ग में, वह दो स्तरों में पृथक् हो जाता है। एक स्तर में रंग-रहित चञ्चल द्रव रहता है और दूसरे स्तर में रंगीन अर्ध-द्रव गोंद रहता है। प्रकाश से दो स्तरों के पृथक् होने की गति में तीव्रता आती है। यदि ऐसा पेट्रोल मोटरगाड़ी में उपयुक्त हो, तो उससे इंजिन में कठोर शुष्क रेज़िन जमा हो सकता है। द्रव और शुष्क गोंदों का विश्लेषण हुआ है और उससे निम्नलिखित मान प्राप्त हुए हैं—

	द्रव गोंद	शुष्क गोंद
कार्बन, प्रतिशत	६४·१७	७१·६५
हाइड्रोजन, प्रतिशत	८·५६	७·९९
आक्सिजन, प्रतिशत	२६·०८	१९·४८
गन्धक, प्रतिशत	०·२२	०·३१
राख, प्रतिशत	०·१७	०·१५
आयोडीन-संख्या (हेनस)	४७	६५
साबुनीकरण-संख्या	२८९	१४४
उदासिनीकरण-संख्या	६१५	१५१
अणुभार	१९२	३३८
द्रवणांक, ° से०	—	६८ से ७१

इन आँकड़ों से पता लगता है कि गोंद में आक्सिजन की मात्रा ऊँची है। युग्म-बन्ध कम है। अम्लता ऊँची है; पर साबुनीकरण-संख्या अपेक्षया कम है। अणुभार उतने ऊँचे नहीं हैं और द्रवणांक नीचा है।

गोंद भंजित पेट्रोल में ही बनता है। ऐसे पेट्रोल में असंतृप्त हाइड्रोकार्बन अवश्य रहते हैं। ये हाइड्रोकार्बन सरलता से आक्सीकृत होते हैं। अतः आक्सीकरण से गोंद के बनने का बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है।

पेट्रोल के आक्सीकरण का पहला क्रम पेरौक्साइड का बनना है। अनेक बातों से पेरौक्साइड बनने की पुष्टि होती है। पेट्रोल के सूर्य-प्रकाश और वायु में खुला रखने से उसमें पेरौक्साइड पाया गया है। इसमें अलडीहाइड भी पाया गया है। ऐसे पेट्रोल की अम्लता क्रमशः बढ़ती हुई पाई गई है। इससे मालूम होता है कि गोंद अम्लों से बना है। इसकी पुष्टि इस बात से भी होती है कि समय के बीतने से क्षारों में गोंद की विलेयता बढ़ती जाती है। कुछ लोगों ने गोंद के बनने में पेरौक्साइड माध्यम के बनने में सन्देह प्रकट किया है।

कुछ लोगों का विचार है कि भंजित पेट्रोल में डाइओलिफीन हाइड्रोकार्बन रहते हैं और इन्हीं के कारण रखे रहने से रेज़िन पृथक् हो जाता है। केवल ओलिफीन से गोंद नहीं बनता। डाइओलिफीन से गोंद बनता है।

ऐसा मालूम होता है कि सब हाइड्रोकार्बन गोंद नहीं बनते। गोंद बननेवाले हाइड्रोकार्बनों में डाइओलिफीन और चक्रीय ओलिफीन महत्व के हैं। इनकी उपस्थिति से

ही गोंद बनने की क्रिया प्रारम्भ होती है। एक बार जब गोंद बनने की क्रिया प्रारम्भ हो जाती है, तब उससे संतृप्त हाइड्रोकार्बन भी गोंद में परिणत हो सकते हैं।

गोंद की मात्रा—कुछ पेट्रोल में गोंद पहले से विद्यमान रहता है और कुछ पेट्रोल में पहले से गोंद विद्यमान न रहने पर भी गोंद बनने की क्षमता विद्यमान रहती है। पहले प्रकार के गोंद को 'पूर्व-निर्मित गोंद' और दूसरे प्रकार के गोंद को 'स्थितिज गोंद' कहते हैं। पहले प्रकार के गोंद से उनके निक्षिप्त हो जाने से इंजिन में खराबी होती है। दूसरे प्रकार के गोंद से कोई खराबी नहीं होती; पर उससे पेट्रोल की ऑक्टेन-संख्या कम हो जाती है।

गोंद की कितनी मात्रा से इंजिन में खराबी नहीं हो सकती, इसमें विभिन्न मत हैं। एक वैज्ञानिक का मत है कि १०० सी० सी० पेट्रोल में १० मिलिग्राम गोंद सह्य है। यदि गोंद की मात्रा १०० सी० सी० में २५ मिलिग्राम हो जाय तो ३००० मील चलने के बाद इंजिन की शक्ति में ह्रास होता है और यदि ५० मिलिग्राम हो जाय तो इंजिन की शक्ति तुरन्त घट जाती है और कुछ बल्ब चिपकने लगते हैं।

जल से ठंडा किये हुए एक सिलिंडर-इंजिन में जो प्रयोग हुए हैं, उनसे पता लगता है कि यदि इंजिन का ताप नीचा है तो किसी भी पेट्रोल से गोंद का निक्षेप नहीं होता; पर यदि ताप ऊँचा है तो गोंद के निक्षेप की मात्रा बढ़ती जाती है। केवल ३ मिलिग्राम गोंदवाले पेट्रोल से किसी भी दशा में गोंद का निक्षेप नहीं होता, इंजिन बिलकुल साफ रहता है। निम्न ताप पर वायु-पेट्रोल के अनुपात के परिवर्त्तन से कोई अन्तर नहीं पड़ता; पर उच्च ताप पर अधिक पेट्रोल से अधिक गोंद बनता है। यदि गोंद की मात्रा कम है, तो दहन-कक्ष में कार्बन-निक्षेप की मात्रा में कोई परिवर्त्तन नहीं होता। किन्तु, यदि ताप नीचा है तो कुछ गोंद इंजिन में चला जाता है और तब कार्बन-निक्षेप की मात्रा बढ़ जाती है।

आक्सीकरण निरोधक—पेट्रोल में गोंद बनना रोकने के लिए कुछ पदार्थों को डालना पड़ता है। ऐसे पदार्थों को आक्सीकरण-निरोधक कहते हैं। कार्बनिक रसायन में ऐसे पदार्थों को प्रति-आक्सीकारक कहते हैं। आक्सीकरण-निरोधकों से गोंद का बनना, रंग का गाढ़ा होना और प्रति-आघात मान का ह्रास रुक जाता है। ऐसे ही पदार्थ निरोधक होते हैं, जिनमें हाइड्राक्सिल और एमिनो-मूलक रहते हैं। ऐसे पदार्थों में पाइरोगैलोल, कैटिचोल, अल्फा-नैफ्थोल और पारा-फेनिलिन डाइएमिन प्रमुख हैं। पारा-एमिनोफीनोल सर्वोत्कृष्ट निरोधक पाया गया है। ऐसे निरोधक आक्सीकरण को कुछ सीमा तक रोकते हैं। इनसे प्रेरणा-काल बहुत बढ़ जाता है; पर जब यह प्रेरणाकाल बीत जाता है तब आक्सीकरण आरम्भ हो जाता है और आक्सीकरण-क्रिया अपना सामान्य रूप से कार्य शुरू कर देती है।

निरोध नापने के लिए कोई प्रामाणिक पदार्थ होना चाहिए। सब पेट्रोल एक-से नहीं होते। अतः इसके लिए पेट्रोल उपयुक्त नहीं हो सकता। बहुत सोच-विचार के बाद साइक्लो-हेक्सीन इस काम के लिए चुना गया है। इससे जो परिणाम निकला है, वह निम्नलिखित है—

निरोधक	साइक्लो-हेक्सीन-संख्या
पारा-एमिनो फीनोल	१४००
बेंजील-पारा-एमिनो-फीनोल	६३५
डाइबेंजील-पारा-एमिनो-फीनोल	६१५

निरोधक	साइक्लो-हेक्सीन-संख्या
पाइरोगैलोल	८४५
अल्फा-नैफ्थोल	६१०
पारा-फेनिलिन डाइएमिन	४७५
२'६-डाइमेथिल फीनोल	१७५
रिसोर्सिनोल	५५
बीटा-नैफ्थोल	३५

कुछ ऐसे भी यौगिक हैं जो प्रति-आक्सीकारक न होने पर भी आक्सीकरण को रोकते हैं। सम्भवतः ये धात्विक उत्प्रेरकों को, जो पेट्रोल में विद्यमान हों, नष्ट कर देते हैं। ऐसे पदार्थों में एक 'डाइ-सैलिसील-एथिलीन डाइएमिन' है। इसकी अत्यन्त अल्प मात्रा की आवश्यकता पड़ती है। यह ताँबे के घातक प्रभाव को पूर्णतया रोक देता है।

आजकल व्यापार के पेट्रोल में जिन पदार्थों का प्रति-आक्सीकारक के रूप में व्यवहार होता है, उनमें अल्फा-नैफ्थोल, मोनो-और, डाइ-बेंज़ील-पारा-एमिनोफीनोल और काष्ठ के तारकोल से प्राप्त एक अंश है, जिसमें क्रियोसोल, केटिचोल, एथिल ग्वैकोल, पाइरोगैलोल-मोनो-ईथर और कुछ ज़ीलेनोल रहते हैं।

ऐसा समझा जाता है कि ये निरोधक उन यौगिकों के संचय और वृद्धि को रोकते हैं जो आक्सीकरण में उत्प्रेरक का काम करते हैं। निरोधकों की प्रतिक्रिया की व्याख्या इस प्रकार की जाती है—

हाइड्रोकार्बन + आक्सिजन → हाइड्रोकार्बन पेराक्साइड १

हाइड्रोकार्बन-पेराक्साइड १ + निरोधक → हाइड्रोकार्बन पेराक्साइड २ + निरोधक पेराक्साइड
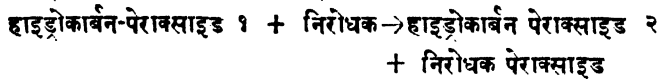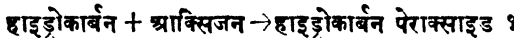
दोनों पेराक्साइड एक-दूसरे को नष्ट कर आक्सिजन-मुक्त करते हैं।

निरोधक पेराक्साइड + हाइड्रोकार्बन पेराक्साइड २ → हाइड्रोकार्बन + निरोधक + आणविक आक्सिजन

एक दूसरी रीति से भी इसकी व्याख्या की जाती है—

हाइड्रोकार्बन + आक्सिजन → हाइड्रोकार्बन-पेराक्साइड

निरोधक + आक्सिजन → निरोधक पेराक्साइड
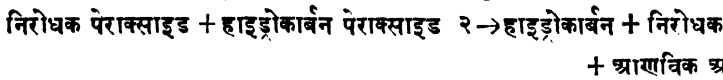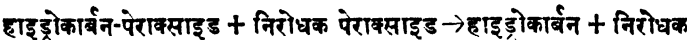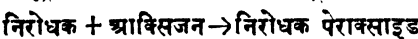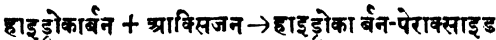
हाइड्रोकार्बन-पेराक्साइड + निरोधक पेराक्साइड → हाइड्रोकार्बन + निरोधक + आणविक आक्सिजन

इस प्रकार निरोधक का एक अणु अनेक पेराक्साइड अणुओं को विच्छेदित कर प्रेरणा-काल की अवधि को बढ़ा सकता है। यह सम्भव है कि निरोधक का परिवर्त्तन अथवा अवकरण इस प्रकार से हो जाय कि निरोधक निरोधक न रह जाय, वरन् अन्य किसी रूप में बदल जाय अथवा धीरे-धीरे निकल जाय। उस दशा में तब उसकी क्रिया मन्द या बन्द हो जाती और आक्सीकरण सामान्य रूप से चलने लगता है।

पेट्रोलियम के बने अनेक पदार्थ आज उपयुक्त होते हैं। ऐसे पदार्थों में स्नेहक एक है। स्नेहक केवल स्नेहन का ही काम नहीं करता, वरन् यह शीतक माध्यम भी होता है। कभी-कभी शीतक माध्यम का काम अधिक महत्त्व का होता है। कभी-कभी ऐसे स्नेहक का

ताप बहुत ऊँचा हो जाता है। और यदि वहाँ वायु का भी प्रवेश हो तो पेट्रोलियम का आक्सीकरण होकर ऐसे उत्पाद बनते हैं, जो विच्छेदित होकर कोक, वार्निश और मल बनते हैं जिनसे स्नेहन में बाधा पहुँचती है। शक्ति-उत्पादक मशीनों का ताप बहुत ऊँचा हो जाता है और उससे बाधाएँ खड़ी हो जाती हैं। कुछ मशीनों में यह परिवर्त्तन शीघ्रता से हो सकता है और कुछ में बहुत धीरे-धीरे, महीनों में। वाष्प टरबाइन में १५०° फ० से ऊपर ताप पर यह परिवर्त्तन वर्षों में होता है। कुछ मशीनों में २५०° फ० से ऊपर २५ से ५० घण्टे में ही यह परिवर्त्तन हो जाता है। आक्सीकरण से स्नेहक तेल में निम्नलिखित परिवर्त्तन होते हैं—

१. तेल का रंग गाढा हो जाता है।

२. तेल की अम्लता बढ़ जाती है।

३. तेल की श्यानता बढ़ जाती है।

४. अविलेय पदार्थों का अवक्षेप हो जाता है।

पहले-तीन परिवर्त्तनों में आक्सीकरण से विलेय पदार्थ बनते हैं। आक्सीकरण कैसे होता है, इसका ठीक-ठीक पता नहीं लगा है; पर यह निश्चित है कि पैराफिन किस्म के पदार्थों के आक्सीकरण से विलेय पदार्थ बनते हैं। पोलिनेफ्थिनिक किस्म के पदार्थों से अविलेय पदार्थ बनते हैं। विलेय पदार्थों के कारण ही श्यानता बढ़ती है। ऐसे पदार्थों में उच्च अणुभारवाले पदार्थ बनते हैं।

हाइड्रोजनीकरण

पैराफिन का हाइड्रोजनीकरण बड़ी कठिनता से होता है; क्योंकि पैराफिन संतृप्त हाइड्रोकार्बन हैं। ४५०° से० ताप और १०० वायुमंडल-दबाव पर पैराफिन मोम के हाइड्रोजनीकरण से पेंटेन से लेकर मोमवाले हाइड्रोकार्बन और लगभग १० प्रतिशत ओलिफिन प्राप्त होते हैं। चक्री यौगिक नहीं पाया गया था। पर कुछ लोगों ने अल्प मात्रा में नैफ्थीन और लेश में सौरभिक पाया है।

हाइड्रोजनीकरण से पेट्रोलियम का परिष्कार होता है। इसका रंग साफ हो जाता है और भंजन के साथ मिलने से वाष्पशील अंश की मात्रा बहुत-कुछ बढ़ जाती है।

हाइड्रोजनीकरण से सौरभिक पदार्थ नैफ्थीन में परिणत हो जाते हैं और ओलिफिन संतृप्त हाइड्रोकार्बन में। गन्धक और अन्य बाह्य पदार्थ अधिकांश निकल जाते हैं, सम्भवतः हाइड्रोजन-सल्फाइड, अमोनिया और जल के रूप में। इस काम के लिए हाइड्रोजन निम्नलिखित रीतियों से प्राप्त हो सकता है—

१. कोक पर वाष्प की क्रिया से जल-गैस, कार्बन-मनॉक्साइड सरलता से पृथक किया जा सकता है।

२. मिथेन पर भाप की क्रिया से

३. मिथेन के उच्च ताप पर तपाने से।

मिथेन को भाप के साथ प्रायः १६००° फ० पर वायुमंडल के दबाव पर उत्प्रेरक की उपस्थिति में गरम करने से कार्बन-मनॉक्साइड और हाइड्रोजन का मिश्रण प्राप्त होता है—

$$\text{कउ}_4 + \text{उ}_2\text{ओ} \rightarrow \text{कओ} + 3\text{उ}_2; \quad CH_4 + H_2O \rightarrow CO + 3H_2$$

अधिक भाप से एक दूसरी प्रतिक्रिया, उत्प्रेरक की उपस्थिति में, ८५०° फ० पर होती है।

$$प्रज + उ_2अ \rightarrow प्रअ_2 + उ_2 ; CO + H_2O \rightarrow CO_2 + H_2$$

इस प्रतिक्रिया के बाद उत्पाद में ८० प्रतिशत हाइड्रोजन और २० प्रतिशत कार्बन डायक्साइड रहता है। ट्राइ-इथेनोलेमिन के घर्ष-धावन (scrubbing) से कार्बन-डायक्साइड निकल जाता है। यह विधि व्यापार में उपयुक्त होती है।

हाइड्रोजन कीमती होने और उच्च दबाव और उच्च ताप की प्रतिक्रिया खर्चीली होने के कारण हाइड्रोजनीकरण प्रतिक्रिया का व्यवहार व्यवसाय में नहीं होता। भविष्य में इसकी स्थिति क्या होगी, यह कहा नहीं जा सकता।

हैलोजनीकरण

हैलोजन तत्त्वों की क्रिया पैराफिन हाइड्रोकार्बनों पर शीघ्रता से होती है। केवल आयोडीन इसमें अपवाद है। फ्लोरीन के साथ क्रिया बड़ी तीव्रता से होती है, क्लोरीन से तीव्रता कुछ कम और ब्रोमीन से और भी कम होती है। यह क्रिया वाष्पकला अथवा द्रव-कला दोनों में हो सकती है। प्रकाश, ताप और उत्प्रेरक से गति बढ़ जाती है। यहाँ विस्थापन-क्रिया होती है।

रिक्टर का मत है कि आयोडीन की निष्क्रियता हाइड्रोजन-आयोडाइड के कारण है। यदि हाइड्रोजन आयोडाइडड को आयोडिक अम्ल, मरक्यूरिक आक्साइड अथवा नाइट्रिक अम्ल द्वारा नष्ट कर दें तो आयोडीन के साथ भी वैसी ही क्रिया होगी।

ब्रोमीन की प्रतिक्रिया निश्चित होती है। पर, साधारणतया एक अणु में एक से अधिक ब्रोमीन परमाणु के प्रवेश में कठिनता होती है। लोहा उत्प्रेरक की सहायता से २६५ से ३७०° से० पर मिथेन, ईथेन, प्रोपेन, ब्युटेन के एक-ब्रोमो-संजात सरलता से वाष्प-कला में प्राप्त होते हैं।

हाइड्रोकार्बनों पर फ्लोरीन का अध्ययन बहुत कम हुआ है। मिथेन पर फ्लोरीन की क्रिया से कार्बन टेट्राफ्लोराइड और फ्लोरोफॉर्म प्राप्त होते हैं। एक या द्वि-फ्लोरो-संजात नहीं प्राप्त होते। एण्टीमनी फ्लोराइड और मरक्यूरिक फ्लोराइड से फ्लोरीन यौगिक बनते हैं।

पैराफिन हाइड्रोकार्बन पर क्लोरीन की क्रिया तीव्रता से होती है। विस्फोट को रोकने के लिए कभी-कभी विशेष सावधानी रखनी पड़ती है। ताप, उत्प्रेरकों (आयोडीन, लोहा, अलूमिनियम, लोहा के क्लोराइड, अलूमिनियम क्लोराइड, सक्रिय कार्बन, नीले प्रकाश, विद्युत् विसर्ग) से क्लोरीकरण में सहायता मिलती है। इनसे क्लोरीकरण की गति में वृद्धि होती है। पैराफिन हाइड्रोकार्बन के क्लोरीकरण पर बहुत काम हुए हैं। मोनोक्लोरो, डाइक्लोरो, ट्राइक्लोरो, टेट्राक्लोरो-संजात सब क्रमशः प्राप्त हो सकते हैं। क्लोरीकरण क्लोरीन गैस द्वारा अथवा एण्टीमनी पेण्टाक्लोराइड और सलफ्यूरील क्लोराइड द्वारा हो सकता है।

ओलिफीन का क्लोरीकरण और सरलता से होता है। यहाँ योगशील यौगिक बनते हैं। हैलायड अम्लों से भी यहाँ क्लोरीकरण हो जाता है। योगशील यौगिकों के अतिरिक्त प्रति-स्थापन उत्पाद भी प्राप्त हो सकते हैं। निम्नताप पर दोनों प्रकार के, योगशील और प्रतिस्थापन-उत्पाद बनते हैं। ताप की वृद्धि से प्रतिस्थापन-उत्पाद की मात्रा क्रमशः बढ़ती जाती है।

६००° से० पर प्रोपिलीन के क्लोरीकरण से प्रायः ८५ प्रतिशत तक एलिल क्लोराइड बनता है। यह यौगिक ग्लीसिरिन के संश्लेषण में उपयुक्त होता है।

नाइट्रोकरण

नाइट्रिक अम्ल से पैराफिन हाइड्रोकार्बन का नाइट्रोकरण और आक्सीकरण दोनों होते हैं। हल्के अम्लों और निम्न ताप से आक्सीकरण होता है और सान्द्र अम्लों और उच्च ताप से नाइट्रोकरण होता है।

पहले-पहल जो अनुसन्धान हुए थे, वे द्रव-कला में ही हुए थे। उत्पाद की प्रकृति बहुत-कुछ ताप, अम्ल सान्द्रण और प्रतिक्रिया पर निर्भर थी। एक साथ ही कई नाइट्रो-यौगिक बनते थे जिनका पृथक्करण कठिन होता था।

कुछ हाइड्रोकार्बन हल्के अम्ल से भी आक्रान्त होते हैं। कुछ के लिए प्रबल अम्ल की आवश्यकता होती है। कुछ हाइड्रोकार्बन सामान्य ताप पर भी आक्रान्त होते हैं और कुछ के लिए उच्च ताप की आवश्यकता होती है। नार्मल हाइड्रोकार्बन कठिनता से आक्रान्त होते हैं। सशाख हाइड्रोकार्बन शीघ्रता से आक्रान्त होते हैं।

सधूम नाइट्रिक अम्ल की क्रिया अधिक प्रचण्ड होती है। इसका सबसे अधिक प्रभाव सौरभिक हाइड्रोकार्बन पर, फिर टर्शियरी हाइड्रोकार्बन पर, तब नैफ्थीन पर और सबसे कम नार्मल पैराफिन पर पड़ता है।

ओलिफिन भी नाइट्रिक अम्ल से आक्रान्त होते हैं। योगशील यौगिकों के साथ-साथ आक्सीकरण भी होता है।

वाष्प-कला में भी हाइड्रोकार्बन का नाइट्रोकरण हुआ है। इससे अनेक नाइट्रो-यौगिक प्राप्त हुए हैं, जिनमें कुछ के उपयोग व्यापार में भी हुए हैं। इनके महत्त्व का उपयोग प्रलक्षारस व्यवसाय में है। ये रंग-हीन, अ-विस्फोटक और अ-क्षारक होते हैं।

अजल अलूमिनियम क्लोराइड

अलूमिनियम क्लोराइड से पैराफिन हाइड्रोकार्बन के कार्बन-कार्बन-बन्धन कुछ ढीले पड़ जाते हैं। कुछ हाइड्रोकार्बन में तो बन्धन टूट जाता है और तब उससे अन्य गौण प्रतिक्रियाएँ होती हैं। यदि हाइड्रोकार्बन में कई शाखाएँ हों तो केवल एक स्थान पर वे टूटते हैं। २,२, ४-ट्राइमेथिल पेण्टेन से केवल आइसोब्युटेन और टर्शियरी ब्युटिल बेंजीन, नार्मल ऑक्टेन से प्रोपेन, नार्मल और आइसो-ब्युटेन, पेण्टेन और हेक्सेन प्राप्त होते हैं।

ओलिफिन से उनका पुरुभाजन होता है। यह क्रिया बहुत तीव्रता से होती है। यह क्रिया-७८° से० पर भी होती हुई देखी गई है। अणुभार की वृद्धि से सक्रियता क्रमशः घटती जाती है। इस प्रतिक्रिया से अनेक पदार्थ बने हैं। इनमें कुछ व्यवसाय की दृष्टि से महत्त्व के भी हैं। इस प्रतिक्रिया से उत्पाद की श्यानता बढ़ी हुई पाई गई है और स्नेहक के लिए वे अच्छे प्रमाणित हुए हैं। इनकी क्रिया कैसी होती है, इस सम्बन्ध में निश्चित ज्ञान हमें नहीं है। एक मत है कि अलूमिनियम क्लोराइड हाइड्रोकार्बन के साथ पहले योगशील यौगिक बनता है। ऐसे अनेक योगशील यौगिकों का पृथक्करण हुआ है। ये योगशील यौगिक पीछे विच्छेदित हो अन्य यौगिक बनते हैं।

इनकी सहायता से पुरुभाजन द्वारा आज अनेक रेज़िन बने हैं। ये रेज़िन पेण्ट और वार्निश में इस्तेमाल हो सकते हैं। भंजन से प्राप्त आसुत से ये रेज़िन प्राप्त हुए हैं।

यदि भारी पेट्रोलियम तेल को ३ से ५ प्रतिशत अजल अलूमिनियम-क्लोराइड मिलाकर वायुमण्डल के दबाव पर धीरे-धीरे गरम किया जाय, तो उससे पेट्रोल और किरासन-सा कम ताप पर उबलनेवाले हाइड्रोकार्बन प्राप्त होते हैं। निम्नलिखित सारिणी में कुछ ऐसे प्रयोगों के फल दिये हैं—

	नैफ्थीनिक भारी तेल		पैराफिनिक भारी तेल	
	अलूमिनियम क्लोराइड के साथ	विना अलूमिनियम क्लोराइड के	अलूमिनियम क्लोराइड के साथ	विना अलूमिनियम क्लोराइड के
पेट्रोल	१७'७५	०	४२'३२	१८'०
नैफ्था	१३'०३	०'१०	१६'६७	१२'०
किरासन	८'६६	४'३	३'९३	३५'०
गैस-तेल	१७'१५	५२'०	८'११	२१'०
स्नेहन तेल	२५'५८	२५'५	—	—
अवशिष्ट तेल	—	१२'०	१३'१०	११'०
हानि	१७'८३	६'१	१५'८७	३'०

गन्धक की क्रिया

पेट्रोलियम पर गन्धक की क्रिया होती है और उससे हाइड्रोजन-सल्फाइड निकलता और ऊँचे संघनित उत्पाद बनते हैं। ऐसा कहा गया है कि पैराफिन मोम को प्रायः १५०° से० तक गंधक के साथ गरम करने से हाइड्रोजन-सल्फाइड प्राप्त होता है। यदि उसे २३०° से० पर गरम किया जाय तो कार्बन डाइसलफाइड भी निकलता है। इस ताप पर अधिक समय तक गरम करने से रेज़िन-सा पदार्थ प्राप्त होता है। ब्युटेन और न-हेप्टेन के ३०० से ३५०° के बीच गरम करने से थायोफीन और डाइथायोफीन भी पाये गये हैं। ११०० से० पर मिथेन और गन्धक से कार्बन डाइसलफाइड बनता है। नार्मल ऑक्टेन को गन्धक के साथ २७० से २८०° से० तक गरम करने से थायोफीन और डाइमेथिल थायोफीन बनते हैं। इन यौगिकों की मात्रा अपेक्षया अल्प रहती है।

ओलिफिन भी गन्धक के साथ इसी प्रकार के गन्धक-यौगिक बनते हैं। गन्धक के साथ साइक्लो-पैराफिन के गरम करने से उनका विहाइड्रोजनीकरण हो जाता है।

प्रकाश का प्रभाव

अपरिष्कृत तेल का रंग प्रकाश से बहुत हलका हो जाता या पूर्णतया दूर हो जाता है। भंजन से आसुत तेल में यह परिवर्त्तन और शीघ्रता से होता है। इसका कारण यह समझा

जाता है कि प्रकाश से हाइड्रोकार्बन सक्रिय हो जाते हैं और उनसे आक्सीकरण और पुरुभाजन की क्रियाओं में त्वरण आ जाता है। तेलों में ऑक्सिजन, कार्बन डायक्साइड और नाइट्रोजन मनॉक्साइड का अवशोषण बढ़ जाता है और नाइट्रोजन तथा हाइड्रोजन का अवशोषण प्रारम्भ हो जाता है।

ब्रूक्स (Brooks) ने प्रकाश-रासायनिक प्रभाव का विस्तृत रूप से अध्ययन कर देखा कि भंजित आसुत का अँधेरे में भी प्रचुरता से आक्सीकरण होता है ; पर रंग में कोई परिवर्त्तन नहीं होता, परन्तु ज्योंही उसे प्रकाश में रखा जाता है, रंग में परिवर्त्तन हो जाता है और अम्लता बहुत-कुछ बढ़ जाती है। गन्धक यौगिकों से रंग-परिवर्त्तन में वृद्धि होती है और पेट्रोल में धुँधलापन आ जाता है। मरकैप्टन से ऐसा नहीं होता। एलिकल-सलफाइड से यह प्रभाव विशेष रूप से होता है। धुँधलापन के होने का कारण सल्फर डायक्साइड, सल्फर ट्रायक्साइड और कार्बनिक पदार्थ हैं। छानने से ये दूर हो जाते हैं और रंग में उन्नति हो जाती है। ब्रूक्स का मत है कि जल में, जो बड़ी अल्पमात्रा में सदा ही पेट्रोल में रहता है, आम्लिक पदार्थों के घुलने के कारण पेट्रोल में परिक्षेपण होकर धुँधलापन आता है।

प्रकाश से गोंद के बनने में भी त्वरण आता है। आक्सिजन की उपस्थिति में कार्बन-चाप से सीधे पेट्रोलियम से प्राप्त पेट्रोल में भी गोंद बनता है। भंजित पेट्रोल में तो गोंद का बनना अधिक शीघ्रता से होता है।

सूर्य-प्रकाश में व्यक्तीकरण से पेरॉक्साइड ऑक्सिजन की मात्रा बढ़ी हुई पाई गई है। अँधेरे में अथवा बादल घिरे दिनों में ऑक्सिजन की मात्रा कम रहती है। पेट्रोल में अँधेरे में जो रंग बनता है, वह सीधे सूर्य-प्रकाश से दूर हो जाता है ; पर सूर्य-प्रकाश में बना रंग कठिनता से दूर होता है। पैराफिन तेल को सूर्य-प्रकाश में रखने से उसका विरंजन हो जाता है। पहले इसी रीति से कच्चे पेट्रोलियम का रंग बहुत-कुछ दूर किया जाता था। यहाँ दो प्रकार की क्रियाएँ होती हैं। एक आक्सीकरण होता है, जिससे रंग बनता और दूसरा विरंजन होता है जिससे रंग दूर होता है। विरंजन की गति अधिक होने से रंग का दूर होना सम्भव हो जाता है। विरंजन कैसे होता है, इसका ठीक-ठीक पता हमें नहीं है। यह सम्भव है कि असंतृप्त यौगिकों के पुरुभाजन से पेट्रोलियम का रंग निकल जाता हो। असंतृप्त हाइड्रोकार्बन क्रोमोफोर का काम करता है।

वैद्युत् चाप

पैराफिन हाइड्रोकार्बनों को अल्प विभव चाप अथवा उच्च विभव स्फुलिंग-विसर्जन में व्यक्तीकरण से हाइड्रोजन, कार्बन और एसिटिलीन-सदृश पदार्थ प्रचुर मात्रा में बनते हैं, जो बहुत उच्च ताप पर गरम करने से बनते हैं।

निःशब्द वैद्युत् विसर्जन

निःशब्द वैद्युत् विसर्जन से कार्बन-कार्बन-बन्धन का टूटना, विहाइड्रोजनीकरण और संघनन होते हैं। असंतृप्त हाइड्रोकार्बनों के पुरुभाजन से उच्च अणुभार के यौगिक बनते हैं।

कुछ सीमा तक असंतृप्त हाइड्रोकार्बनों का हाइड्रोजनीकरण भी होता है जिससे पूर्व हाइड्रोकार्बन से निम्न अणुभार और उच्च अणुभारवाले यौगिक बनते हैं।

यहाँ क्रिया बहुत पेचीली होती है और उत्पाद की प्रकृति और मात्रा बहुत-कुछ प्रतिक्रिया के दबाव, समय, विभव और आवृत्ति पर निर्भर करती है। कुछ हाइड्रोकार्बनों से द्रव और कुछ से ठोस उत्पाद प्राप्त होते हैं।

असंतृप्त हाइड्रोकार्बनों का पुरुभाजन सीधे हो जाता है। इनका कार्बन-कार्बन-बन्धन का टूटना और विहाइड्रोजनीकरण भी होता है। व्यापार में भी निःशब्द वैद्युत विसर्जन का उपयोग हुआ है। उच्चतर अणुभारवाले हाइड्रोकार्बन इससे ऐसे स्नेहक तेल बनते हैं, जो अच्छी कोटि के समझे जाते हैं।

ग्यारहवाँ अध्याय

पेट्रोलियम का आसवन

आसवन से पेट्रोलियम का परिष्कार होता है। सबसे पहले आसवन से ही पेट्रोलियम का परिष्कार शुरू हुआ था, यद्यपि आज परिष्कार के लिए अन्य कई रासायनिक और भौतिक विधियाँ उपयुक्त हो रही हैं। आज भी आसवन इसी उद्देश्य से होता है। आसवन से ही पेट्रोलियम के विभिन्न अंश, पेट्रोल, किरासन, नैफ्था, ईंधन तेल, स्नेहक तेल, मोम इत्यादि अलग-अलग किये जाते हैं। पेट्रोलियम की कुछ अशुद्धियाँ भी आसवन से दूर हो जाती हैं। पेट्रोलियम में पानी का कुछ अंश विद्यमान रहता है। आसवन से पेट्रोलियम का जल निकल जाता है। आसवन से कुछ गैसें भी निकलती हैं। इन गैसों में हल्के पेट्रोलियम के वाष्प रहते हैं। इस पेट्रोलियम-गैस को किसी तेल के द्वारा अवशोषित कर उसके पुनः आसवन से हल्का पेट्रोलियम प्राप्त करते हैं। इन हल्के तेलों के आज अनेक उपयोग हैं।

पेट्रोलियम का आसवन पेचीला होता है। इसका अध्ययन विस्तार से हुआ है। द्रव और गैस में एक अन्तर यह है कि गैस किसी भी बड़े-से-बड़े स्थान को पूर्णतया भर देती है जब कि द्रव ऐसा नहीं करता। इसका कारण यह है कि गैसों के अणु अधिक स्वतन्त्र होते हैं। अणुओं का परस्पर आकर्षण होता है। आकर्षण से वे एक-दूसरे से चिपके रहते हैं। अणुओं में गति होती है। प्रत्येक अणु की एक नियत ऊर्जा होती है, यदि इन अणुओं को किसी बन्द पात्र में रखें तो पात्र की दीवारों के कारण अणु बाहर नहीं निकल सकते। यदि अणुओं की ऊर्जा एक क्रांतिक मात्रा से कम कर दीजिए तो भी बाहर निकलने में वे असमर्थ होते हैं।

इसके सिवा अणुओं के बीच परस्पर टक्कर भी लगती रहती है; क्योंकि अणुओं के अपने विस्तार होते हैं। इस कारण वे बीच-बीच में टकराते रहते हैं। टक्करों से ऊर्जा की अदला-बदली होती रहती है। ऐसी स्थिति में किसी एक निश्चित क्षण में कुछ अणुओं की ऊर्जा दूसरे अणुओं से अधिक रहती है। किसी एक क्षण में प्रत्येक अणु की ऊर्जा का ठीक-ठीक ज्ञान प्राप्त करना सम्भव नहीं है।

द्रवों के कुछ अणुओं में ऊर्जा इतनी अधिक हो जाती है कि यदि उन्हें रोककर नहीं रखा जाय तो वे निकल भागते हैं। जो अणु मध्य में होते हैं, उनकी ऊर्जा तो परस्पर टक्कर से कुछ नष्ट हो जाती है, पर यदि वे द्रव के बाह्य तल पर हों तो ऊर्जा नष्ट नहीं होती और तब वे निकल भाग सकते हैं। जब किसी पात्र में द्रव रखा जाता है और द्रव के ऊपर जब स्थान रिक्त है तो वह रिक्त स्थान द्रव से निकले उसके वाष्प से भर जाता है। यदि दो द्रव हैं, तो वाष्प भी दोनों द्रवों के होते हैं। यह क्रम बराबर चलता रहता है। उच्च ऊर्जावाले

अणु तल पर से निकलते रहते हैं और उनके स्थान को दूसरे ग्रहण करते रहते हैं। यह क्रम बराबर चलता रहता है।

यदि अणुओं के बाहर निकलने का मार्ग नहीं है, अर्थात् वे बन्द पात्र में हैं; तो वे फिर पात्र से टकराकर द्रव की टक्कर में आकर ऊर्जा को खोकर द्रव से पकड़ लिये जाते हैं। ऐसी स्थिति में द्रव और वाष्प के बीच साम्य स्थापित हो जाता है, अर्थात् द्रव से जितने अणु बाहर निकलते, उतने ही अणु फिर द्रव में लौट आते हैं।

द्रव और वाष्प-कलाओं में भी यही सिद्धान्त लागू है। यदि किसी द्रव में दो या दो से अधिक अवयव विद्यमान हैं तो इन सब अवयवों से वाष्प निकलेगा। यदि पात्र बन्द है तो कुछ समय में द्रव और वाष्प-कलाओं में साम्य स्थापित हो जायगा, अर्थात् एक विशिष्ट गति से द्रव के अणु वाष्प में परिणत होंगे और उसी गति से वाष्प के अणु द्रव में परिणत हो जायँगे। इसका अन्तिम परिणाम यह होता है कि एक कला से दूसरी कला में परिवर्त्तन शून्य हो जाता है।

दुर्भाग्यवश हमें ऐसी कोई रीति नहीं मालूम है जिससे हम एक कला से दूसरी कला में परिवर्त्तन को नाप सकें। केवल कुछ विशेष परिस्थितियों में ही ऐसा नापना सम्भव हो सका है।

दबाव

किसी द्रव के तल से अणुओं का बाहर निकलना द्रव की प्रकृति और ताप पर निर्भर करता है। दबाव का अणुओं के बहिर्गमन पर प्रभाव पड़ता है। इससे द्रव और वाष्प के बीच साम्य नष्ट हो जाता है। यदि द्रव असंपीड्य है, तब दबाव का प्रभाव शून्य होता है और दबाव से बहिर्गमन की गति में कोई अन्तर नहीं पड़ता। यदि द्रव में एक ही पदार्थ है, तो किसी विशिष्ट ताप पर उसका दबाव निश्चित होता है। ऐसे दबाव को 'वाष्प-दबाव' कहते हैं। वाष्प-दबाव का उद्वाष्पन अथवा क्वथन से बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है।

आसवन का व्यावहारिक उपयोग किसी वाष्पशील द्रव-मिश्रण के अवयवों को कुछ सीमा तक पृथक् करना है। ऐसे द्रव के वाष्प में अधिक वाष्पशील अवयव का वाष्प-दबाव ऊँचा होता है और कम वाष्पशील अवयव का वाष्प-दबाव कम होता है।

सामान्य आसवन उस क्रम को कहते हैं, जिसमें द्रव और वाष्प के बीच साम्य स्थापित रहता है और द्रव से वाष्प बराबर निकलकर संघनित होता रहता है। ऐसे प्रक्रम से जो आसुत प्राप्त होता है, वह शुद्ध समझा जाता है और उसके पुनः परिष्कार की फिर आवश्यकता नहीं होती। किसी द्रव का उबलना और उसके वाष्प का संघनित होना सामान्य आसवन का यह एक अच्छा उदाहरण है। पर आसवन का यह सरलतम उदाहरण है।

सामान्य आसवन में द्रव से जो वाष्प बनता है, वह सदा निकलता रहता है। यहाँ द्रव सदा ही क्वथनांक पर होता है और वाष्प ओसांक पर। यदि दो द्रव परस्पर मिश्र्य हैं तो उनका आसवन अधिक पेचीदा होता है; क्योंकि दोनों द्रवों के क्वथनांक और उनके वाष्पों के ओसांक विभिन्न होते हैं।

निर्वात आसवन

ताप की कमी से वाष्प का दबाव कम होता है। अतः यदि आसवन का दबाव कम किया जाय तो क्वथनांक का ताप बहुत-कुछ कम किया जा सकता है। यदि कोई द्रव बहुत वाष्पशील है और विच्छेदित होने के पूर्व वाष्पीभूत हो जाता है तो कम दबाव के क्वथन से कोई लाभ नहीं होता ; पर यदि सामान्य आसवन से द्रव विच्छेदित हो जाता है, तो ऐसी दशा में न्यून दबाव पर अथवा निर्वात में क्वथन से पदार्थों का विच्छेदन रोका जा सकता है। पेट्रोलियम के अनेक अवयव क्वथनांक पर विच्छेदित हो जाते हैं। इनके लिए निर्वात आसवन आवश्यक होता है। ऐसा आसवन १ मिलीमीटर या इससे भी कम दबाव पर सम्पन्न किया जा सकता है।

सामान्य आसवन से निर्वात आसवन सिद्धान्त में भिन्न नहीं है। सिद्धान्ततः वे एक-से हैं। थोक में ऐसे आसवन एक-से ही होते हैं। पर, इसमें जो साधित्र उपयुक्त होते हैं, उनकी बनावट में कुछ अन्तर होता है। इसमें वाष्प का दबाव-पात भभके से संघनित्र में कम-से-कम होना चाहिए। इसके स्तम्भ भिन्न होते हैं और ऐसे बने होते हैं कि वाष्प सरलता से द्रव से निकलकर संघनित्र में द्रवीभूत होता रहे। इस दृष्टि से संघनित्र का नल पर्याप्त चौड़ा पर छोटा होता है। इसमें तीक्ष्ण मुड़ाव जहाँ तक सम्भव हो, नहीं रहना चाहिए।

कम दबाव के कारण वाष्प की मात्रा बहुत अधिक रहती है। एक मिलीमीटर दबाव पर वाष्प की मात्रा प्रायः हजारोंगुना बढ़ जाती है। गैसों की श्यानता-दबाव का स्वतंत्र होने के कारण साधित्र ऐसा होना चाहिए कि वायुमण्डल के दबाव पर जितना वाष्प निकलता है, उसके हजारोंगुना अधिक वाष्प निकलने का प्रबन्ध हो। इन विशेषताओं के कारण साधारणतया पेट्रोलियम का निर्वात आसवन नहीं होता। सामान्य आसवन का ही साधारणतया उपयोग होता है। वाष्प भभके से सीधे संघनित्र में आकर द्रवीभूत होता है।

वाष्प-आसवन

अमिश्र्य द्रवों के मिश्रण का आसवन कुछ भिन्न होता है। यदि दो द्रव एक-दूसरे में बिलकुल मिलते नहीं, तो इनका वाष्प में परिणत होना एक-दूसरे से स्वतंत्र होता है। प्रत्येक द्रव का उद्वाष्पन ऐसा होता है कि दूसरे द्रव का उसपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

ऐसे मिश्रण का आसवन तब होता है जब क्वथनांक-दबाव संघनित्र के दबाव से अधिक हो जाता है। तेल में पानी डालने के प्रभाव से ऐसा मिश्रण बनता है जिसका वाष्प-दबाव तेल के दबाव से अधिक होता है। इससे आसुत में तेल और पानी दोनों रहते हैं। इन दोनों की मात्रा उनके वाष्प-दबाव के समानुपात में होती है। ये दोनों द्रव एक-दूसरे में मिश्र्य न होने के कारण सरलता से पृथक्-पृथक् हो जाते हैं।

वाष्प-आसवन से वस्तुतः तेल का आसवन इसके वाष्प-दबाव के अधिक दबाव पर होता है, अतः आसवन द्रव के क्वथनांक के निम्न ताप पर ही होता है। इस सिद्धान्त के अनुसार किसी भी तेल का आसवन हो सकता है, पर यदि तेल के वाष्प-दबाव की मात्रा जल के वाष्प-दबाव की अपेक्षा बड़ी अल्प हो तो तेल की मात्रा आसुत में बड़ी अल्प होगी और इस विधि का कोई व्यावहारिक लाभ नहीं होगा। चूँकि जल का अणु-भार बहुत कम होता है, अतः उससे वाष्प-आसवन में सुविधा होती है।

वस्तुतः वाष्प-आसवन निर्वात आसवन के तुल्य है। व्यवहार में द्रव-जल के स्थान में भाप को भभके में प्रविष्ट कराया जाता है। संघनित्र से सम्भव है कि भभके में कुछ पानी रहे, पर साधारणतया पानी नहीं रहता।

एक दूसरे दृष्टिकोण से भी वाष्प-आसवन को देख सकते हैं, भाप को तेल-वाष्प का तनुकारक मान सकते हैं। वाष्प-रूप में तेल-वाष्प और भाप परस्पर मिल जाते हैं और इस प्रकार एकरूप बनकर तेल के वाष्प को द्रव में परिणत होने की गति को कम कर देते हैं। इससे तेल की अधिक मात्रा वाष्प में परिणत होती है, पर तेल-वाष्प की अधिक मात्रा द्रव-तेल में परिणत नहीं होती। यह रीति पेट्रोलियम के आसवन में उपयुक्त हो सकती है ; पर इसका व्यवहार अधिक नहीं होता। निर्वात-आसवन के साथ भी वाष्प-आसवन सम्पन्न किया जा सकता है, पर इसके लिए बड़े-बड़े पम्प की आवश्यकता होती है। भारी आसुतों के प्राप्त करने में इसका उपयोग अधिकता से होता है। प्रायः ५०० अणु-भारवाले तक तेलों का ऐसा आसवन हो सकता है।

आणविक आसवन

यह बिलकुल नई विधि है। इसका उपयोग अभी बड़ी मात्रा में नहीं हुआ है। इस संबंध में रसायनशाला में अनेक प्रयोग हुए हैं। उनसे मालूम होता है कि पेट्रोलियम के आसवन में भी इसका उपयोग हो सकता है।

यहाँ द्रव का उद्वाष्पन द्रव के एक बहुत बड़े तल पर होता है, उस तल से कुछ सेंटीमीटर की दूरी पर ही एक दूसरे तल पर वाष्प का संघनन होता है। दोनों तलों के बीच के स्थान को बहुत उच्च शून्य, ०·००१ मिलीमीटर के दबाव पर रखते हैं। इससे वाष्प के अणुओं के परस्पर टकराने का बहुत कम अवसर मिलता है।

यहाँ आसवन वस्तुतः पूर्ण शून्य में ही होता है ; क्योंकि यहाँ वाष्प को तरल में ले जाने के लिए कोई दबाव नहीं रहता। यहाँ उद्वाष्पन की गति वस्तुतः द्रव के वाष्प में परिणत होने की गति है। यहाँ क्वथनांक का कोई प्रश्न ही नहीं है। सब द्रव सब ताप पर उद्वाष्पित होकर आसुत होते हैं। यह आसवन ताप की वृद्धि से बढ़ता है। २००० अणुभारवाले कार्बनिक यौगिकों के लिए आसवन की गति बड़ी मन्द होती है। अतः वह व्यवहार्य नहीं है; क्योंकि ऐसे द्रवों को विच्छेदन-ताप के नीचे आसुत करना सम्भव नहीं है।

यह देखा गया है कि एक ही वाष्प-दबाव के पदार्थों के लिए उद्वाष्पन की गति अणु-भार के वर्गमूल के प्रतिलोमानुपात में होती है। अतः यहाँ आणविक आसवन से पृथक्करण वाष्प-दबाव के आधार पर नहीं होता, वरन् अणुभार के वर्गमूल और वाष्प-दबाव के अनुपात में होता है।

पेट्रोलियम का आसवन

पेट्रोलियम के आसवन की रीति दो बातों पर निर्भर करती है। वे हैं—पेट्रोलियम की प्रकृति और उससे निकले पदार्थ। कुछ व्यापार सामान्य हैं और अनेक तेलों के लिए उपयुक्त होते हैं। ऐसे व्यापारों में निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं—

(१) निर्जलीकरण, (२) स्थायीकरण, (३) प्राथमिक आसवन, (४) मोटा-ईंधन तेल का पुनरासवन, (५) स्नेहक तेल का पुनरासवन और (६) विलायक की पुनःप्राप्ति।

निर्जलीकरण

कच्चे पेट्रोलियम में जल अवश्य रहता है। साधारणतया यह पायस-रूप में रहता है। यदि जल की मात्रा कम है तो केवल आसवन से जल निकल जाता है। यदि अधिक है, तो तेल के रासायनिक उपचार की आवश्यकता होती है। आजकल आसवन के साथ-साथ नमक डालकर जल के निकालने की आवश्यकता होती है। आसवन से पहले कच्चे तेल को गरम कर लेते हैं। साधारणतया दबाव में प्रायः ३००° फ० तक गरम करते हैं। प्रति वर्गइंच पर लगभग २०० पाउण्ड दबाव इस्तेमाल होता है। इसी ताप पर कच्चे तेल को पर्याप्त समय तक रखकर जलीय लवण के विलयन को बैठ जाने के लिए पर्याप्त समय देते हैं। जल के इस प्रकार पृथक् हो जाने के कारण संघनित्र की क्षति न्यूनतम होती है। अब उष्ण कच्चे तेल को आसवन के लिए ले जाते हैं। यदि लवण डालने की आवश्यकता नहीं होती तो कच्चे तेल को केवल गरम कर पृथक्कारक में ले जाते हैं, जहाँ जल-वाष्प और हल्के हाइड्रो-कार्बन निकलकर साथ-साथ संघनित होते और फिर शीघ्र ही अलग-अलग तह में बँट जाते हैं।

स्थायीकरण

स्थायीकरण में कच्चे तेल का आसवन करते हैं, जिससे प्रोपेन और ब्युटेन-सदृश हल्के हाइड्रोकार्बन निकल जाते हैं। इन हाइड्रोकार्बनों के कारण अनावश्यक उच्च वाष्प-दबाव नहीं होता। यह प्रकार्य विशेषतया पेट्रोल के लिए अच्छा समझा जाता है, यद्यपि कच्चे तेल से भी इससे सहूलियत होती है। यह प्रकार्य विरत रूप से चलता है—कच्चे तेल को ३००° फ० तक गरम करके आंशिक मीनार में न्यून दबाव में ले जाते हैं। यहाँ दबाव केवल ४० से ७५ पाउण्ड के बीच होता है। मीनार में भाप के प्रवाह से अधिक वाष्पशील अंश निकल जाते हैं। जहाँ पेट्रोलियम का आसवन बहुत बड़े पैमाने पर होता है, अर्थात् जहाँ १० हजार या इससे अधिक बैरेल का आसवन प्रतिदिन होता है, वहाँ कच्चे तेल का स्थायीकरण अवश्य होता है। स्थायीकरण से जो बहुत हलका पेट्रोल प्राप्त होता है, उसमें पेण्टेन और अन्य हल्के हाइड्रोकार्बन ६० प्रतिशत तक रहते हैं। यह अंश भारी अंश में मिलाकर पेट्रोल के लिए इस्तेमाल होता है।

प्राथमिक आसवन

कच्चे तेल के प्राथमिक आसवन से वह विभिन्न वाष्पशीलता और विभिन्न श्यानता के अंशों में सरलता से अलग-अलग हो जाता है। बहुत वर्षों तक यह आसवन थोक में और एक विशेष प्रकार के भभके में होता था। ऐसे भभके बहुत बड़े-बड़े लगभग ३५००० बैरेल धारिता के होते थे। पीछे ऐसे भभकों के स्थान में क्षैतिज बेलनाकार भभके इस्तेमाल होने लगे। ऐसे भभके की धारिता एक हजार बैरेल होती थी और एक किनारे से नीचे की ओर से आग के द्वारा गरम की जाती थी। ऐसे भभके में आंशिक मीनार जुड़ी रहती थी जिसमें तेल-वाष्प संघनित होता था। आजकल जो भभके उपयुक्त होते हैं, वे विरत आसवनवाले होते हैं। ऐसे भभके ताप-हस्तान्तरण और अंशन की तीक्ष्णता में अधिक दक्ष और प्रकार्य-मूल्य अल्प होते हैं; पर इनके बनाने में अधिक खर्च पड़ता है और ये अधिक स्थान घेरते हैं।

इससे तेल का भंजन भी होता है। इस आसवन से निम्नलिखित उत्पाद प्राप्त होते हैं—

(१) पेट्रोल, (२) भारी नैफ्था, (३) किरासन, (४) गैस-तेल, (५) मोम-आसुत और (६) पात्र में अवशेष।

कुछ वर्ष पूर्व तक कच्चे तेल के आसवन से उसे केवल पैराफिनीय और नैफ्थीनीय अंशों में पृथक् करते थे। इन अंशों के क्वथनांक विभिन्न होते थे। पीछे देखा गया कि तेल के अस्फाल्ट अंश भी महत्त्व के हैं। अस्फाल्ट-अंश से स्नेहक तेल प्राप्त होता था। ऐसे तेल को पहले ६००° फ० पर गरम करते थे। इससे पेट्रोल २२५° फ० पर, नैफ्था ३३०° फ० पर, किरासन ४२५° फ० पर और गैस-तेल ५३०° फ० पर निकल आता था। अवशिष्ट अंश को अब दूसरे पात्र में ७८०° फ० तक गरम करते हैं और ५० से ७५ मिमी० पारद-शून्य में वाष्प को संघनित करते हैं। यहाँ गैस-तेल ३७५° फ० पर, मोम-आसुत ५००° फ० पर, भारी स्नेहक तेल ६६०° फ० पर और अवशिष्ट अंश पेंदे में रह जाता है।

जिस तेल में अस्फाल्ट बहुत कम हो, उसको केवल ७००° फ० तक गरम करके विभिन्न अंशों को एक वायुमण्डल के दबाव पर ही इकट्ठा कर सकते हैं। इसमें अवशिष्ट अंश में भारी स्नेहक तेल रह जाता है। ऐसे तेल से निम्नलिखित अंश प्राप्त होते हैं—

	पेन्सिलवेनिया का कच्चा तेल जिसमें अस्फाल्ट कम है	ओकलाहोमा का कच्चा तेल जिसमें अस्फाल्ट अधिक है
	प्रतिशत	प्रतिशत
पेट्रोल	१७	२०
भारी नैफ्था	२०	४
किरासन	११	१२
गैस-तेल	१६	२०
मोम आसुत	१९	१४
भारी मोम-आसुत	—	७
अवशेष	१७	२३

हल्का आसुत का पुनरासवन

इस अंश को जिसमें पुरुभाजित उत्पाद विद्यमान रहते हैं, फिर से आसवन की आवश्यकता पड़ती है। आसवन का ताप ऐसा होना चाहिए कि पेट्रोल का आसवन हो जाय, पर ऐसा ताप नहीं होना चाहिए कि उसमें उपस्थित अन्य अस्थायी पदार्थों का विच्छेदन हो जाय। साधारणतया इसको ३५०° फ० के लगभग गरम करते हैं और आसुत को दो क्रमों में इकट्ठा करते हैं। पहले क्रम में वायुमण्डल के दबाव पर मीनार में तेल-वाष्प संघनित होता है। प्रायः आधा इस क्रम में निकल जाता है। दूसरे क्रम में २५ मिमी० पारद के दबाव पर आसवन करते हैं। यहाँ वाष्प एक दूसरी मीनार के पेंदे में इकट्ठा होता है। उच्च क्वथनांक अंश इससे निकल आता है। पात्र में बहुत अल्प अंश रह जाता है। पहली मीनार में प्रति बैरेल कुछ पाउण्ड भाप, खुली भाप, इस्तेमाल हो सकता है। दूसरी मीनार में शून्य होता है और उबालने के लिए बन्द भाप-कुंडली इस्तेमाल हो सकती है।

स्नेहक तेल का पुनरासवन

इस तेल में मोम के अतिरिक्त अन्य अंश भी विद्यमान रहते हैं। इसके ठंडा करने और प्रेस में छानने से मोम निकल जाता है। इसमें कुछ गैस-तेल और कुछ निम्न स्थान का स्नेहक तेल रहता है। इन्हें अलग-अलग करने के लिए मोम के निकल जाने पर तेल का पुनरासवन करते हैं। ऐसे आसवन में तेल को ७००° से ७५०° फ० तक गरम करके वाष्प को ऐसी मीनार में ले जाते हैं, जिसके ऊपर के भाग का ताप प्रायः ४६०° फ० और नीचे के भाग का ताप ६००° फ० रहता है। गैस-तेल के वाष्प ऊपर द्रवीभूत होते हैं, हलके स्नेहक तेल के अंश मध्यभाग में और भारी स्नेहक तेल पेंदे में इकट्ठा होते हैं। कुछ कारखानों में प्रति बैरेल ४० पाउण्ड के समानुपात में ७००° फ० पर खुली भाप उपयुक्त होती है। इससे निम्नलिखित मात्रा में विभिन्न अंश प्राप्त होते हैं—

गैस-तेल	१५	से	५० प्रतिशत
हल्का स्नेहक तेल	३०	से	६५ ,,
भारी स्नेहक तेल	१५	से	२० ,,

बारहवाँ अध्याय

पेट्रोलियम तेल का भंजन

रसायनज्ञों का यह सामान्य अनुभव है कि गरम करने से कार्बनिक पदार्थ टूट-फूट जाते, विच्छेदित हो जाते, झुलस जाते, जल जाते और कभी-कभी वाष्प बनकर उड़ जाते हैं। पेट्रोलियम तेल के गरम करने से गैस का बनना १७६२ ई० में पहले-पहल देखा गया था। इसके अनेक वर्षों के बाद पहले-पहल पेट्रोलियम से बनी गैस का प्रकाश उत्पन्न करने के लिए उपयोग हुआ था। सिलिमैन ने पेट्रोलियम से गैस तैयार की थी। पीछे एक परिष्करणी में देखा गया था कि भारी पेट्रोलियम-तेल से किरासन बनता है। इसके बाद पेट्रोलियम को गरम करने से जो पदार्थ बनते हैं, उनका विशेष रूप से अध्ययन हुआ। वायु-शून्य पात्र में पेट्रोलियम के इस प्रकार के गरम करने को 'पेट्रोलियम का भंजन' कहते हैं। रसायन में इस सामान्य क्रिया को अग्न्यंशन (pyrolysis) कहते हैं। आज इस विधि का बहुत प्रचुरता से उपयोग होकर भारी तेलों से वायुयानों और मोटर-गाड़ियों के लिए पेट्रोल प्राप्त होता है। इस कारण भंजन का महत्त्व आज बहुत अधिक बढ़ गया है।

आज हाइड्रोकार्बनों के भंजन का अध्ययन बहुत विस्तार और यथार्थता से हुआ है। भिन्न-भिन्न ताप पर जो परिवर्त्तन होते हैं, उसका अच्छा ज्ञान हमें प्राप्त है। देखा गया है कि उपयुक्त परिस्थिति में निम्न क्वथनांक के द्रव-पदार्थ, ५००° से० से ऊपर गैस, ६००° से ७००° से० पर तेल-गैस, ६००° से० पर सौरभिक हाइड्रोकार्बन और १०००° से० के ऊपर हाइड्रोजन और कार्बन प्रधानतया बनते हैं। पेट्रोलियम के आसवन में भी कुछ-न-कुछ भंजन अवश्य होता है; क्योंकि पात्र के तल पर के तेल का अति-तापन रोका नहीं जा सकता।

स्नेहक तेल के कोक-आसवन में, गैस-तेल के अग्न्यंशन में, ईंधन-तेल के पेट्रोल बनाने में और भारी ईंधन-तेल की श्यानता कम करने में भंजन का उपयोग होता है। गैस-तेल से गैस बनाने में भंजन होता है। तेल-गैस में गैसीय हाइड्रोकार्बन रहते हैं।

अल्प-अणुभार के हाइड्रोकार्बन का भंजन

पेट्रोलियम के भंजन में गैसें निकलती हैं। ऐसी गैसों में प्रायः आधा मिथेन रहता है। मिथेन बहुत स्थायी होता है। ५००° से० से नीचे यह बिलकुल स्थायी होता है, और ७००° से० पर ही कुछ भंजित होता है। इसके भंजन से हाइड्रोजन निकलता और कार्बन मुक्त होता है। १५००° से० पर यह पूर्ण रूप से विघटित हो जाता है। इसके मध्य के उत्पाद में एथिलीन और एसिटिलीन पाये गये हैं। एथिलीन और एसिटीलीन कैसे बनता है, इस सम्बन्ध में कोई निश्चित मत नहीं है। एक सुझाव है कि मिथेन मेथिलीन बनता है और

मेथिलीन फिर एथिलीन बनता और एथिलीन फिर एसिटिलीन और हाइड्रोजन में परिणत होकर तब अन्त में कार्बन और हाइड्रोजन में परिणत हो जाता है।

$CH_4 = CH_2 + H_2$ (मेथिलीन और हाइड्रोजन)

$CH_2 + CH_4 = C_2H_6$ (ईथेन)

$C_2H_6 = C_2H_4 + H_2$ (एथिलीन और हाइड्रोजन)

$C_2H_4 = C_2H_2 + H_2$ (एसिटिलीन और हाइड्रोजन)

$C_2H_2 = 2C + H_2$ (कार्बन और हाइड्रोजन)
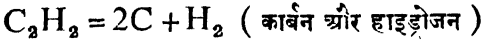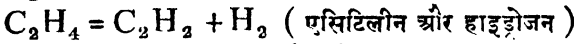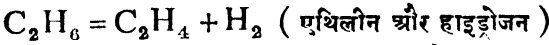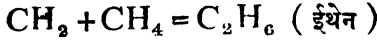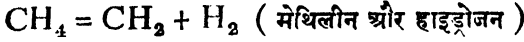
मिथेन के भंजन से हाइड्रोजन, एथिलीन, एसिटिलीन और ईथेन बनते हैं। इससे जो द्रव प्राप्त होता है, उसमें सौरभिक और असंतृप्त हाइड्रोकार्बन रहते हैं। ८५० से १०००° से० पर ४ प्रतिशत द्रव, १००० से १२००° से० तक १३ प्रतिशत द्रव प्राप्त होते हैं। ताप की वृद्धि और दबाव की न्यूनता से एसिटिलीन बनता है। १५००° से० पर और ५० मि० मी० दबाव पर १५ प्रतिशत तक एसिटिलीन पाया गया है। उत्प्रेरकों से भंजन में सहायता मिलती है। लोहे और निकेल से विच्छेदन ताप कम हो जाता है और कार्बन और हाइड्रोकार्बन जल्द बनते हैं।

ईथेन के भंजन से एथिलीन, एसिटिलीन, मिथेन, हाइड्रोजन और ब्युटाडीन बनते हैं। ऐसा समझा जाता है कि ईथेन पहले मेथिलीन और हाइड्रोजन में टूटता है और ये फिर संयुक्त हो अन्य यौगिक बनते हैं। ५५० से ६००° से० पर कार्बन बनता है। ७५०° से० पर ब्युटाडीन बनता है। ९००° से० पर २१'९ प्रतिशत द्रव बनता है। ११७०° से० पर मिथेन, कार्बन और हाइड्रोजन बनते हैं और १५००° से० पर केवल हाइड्रोजन और कार्बन बनते हैं।

एक कार्बन परमाणु को दूसरे कार्बन परमाणु से अलग करने में ७३,००० कलारी ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है। कार्बन को हाइड्रोजन से अलग करने में ९३,००० कलारी ऊर्जा चाहिए।

द्विबन्ध कार्बन-परमाणुओं को तोड़ने में १,२५,००० कलारी की आवश्यकता होती है।

एथिलीन के १५००° से० से ऊपर गरम करने से वह कार्बन और हाइड्रोजन में टूट जाता है। ८०० से ९००° से० के बीच वह टूटकर एथिलीन और मिथेन बनता है। ६००° से० से नीचे ताप पर केवल पैराफिनीय द्रव प्राप्त होता है। उच्च दबाव से नैफ्थीन भी बनता है। ६००° से० से ऊपर सौरभिक मिलते हैं। निम्न ताप पर पुरुभाजन भी होता है। ६००° से० पर ब्युटाडीन देखा गया है। ७५०° से० पर इसकी मात्रा महत्तम होती है। ८००° से० पर सौरभिक तारकोल में परिणत हो जाता है और ८५०° से० पर बिलकुल लुप्त हो जाता है। सौरभिक द्रवों में साइक्लो-हेक्सीन और बेंज़ीन पाये गये हैं।

प्रोपिलीन का भंजन ६००° से० पर शुरू होता है। भंजन से हाइड्रोजन, मिथेन, एथिलीन, प्रोपेन, ब्युटिलीन, द्रव-चक्री असंतृप्त हाइड्रोकार्बन, हेक्साडीन, साइक्लोहेक्सीन इत्यादि प्राप्त होते हैं। ७००° से० पर सारा द्रव सौरभिक होता है।

नार्मल ब्युटेन का भंजन ६००° से० पर ३० सेकेंड में २२ प्रतिशत तक होता है। ६०० और ६५०° से० के बीच भंजन से मिथेन, ईथेन, प्रोपेन, प्रोपिलीन, एथिलीन और ब्युटीन बनते हैं। ६५०° से० और १०० पाउण्ड दबाव पर ४२ प्रतिशत तक प्रोपिलीन और

१६ प्रतिशत तक एथिलीन प्राप्त होते हैं। वायुमण्डल-दबाव पर जितना ओलिफीन बनता है, उसका आठ से १० गुना अधिक उच्च दबाव पर बनता है।

आइसोब्युटेन से भी वैसे ही पदार्थ प्राप्त होते हैं जैसे नार्मल ब्युटेन से प्राप्त होते हैं। आइसोब्युटेन से अपेक्षया अधिक हाइड्रोजन बनता है। इससे मालूम होता है कि टरशियरी कार्बन का हाइड्रोजन उतना स्थायी नहीं होता। इससे हाइड्रोजन, आइसोब्युटिलीन, मिथेन, ईथेन और प्रोपिलीन बनते हैं। मिथेन की मात्रा पर्याप्त बनती है। आइसोब्युटेन से आइसोब्युटीन प्राप्त करने के लिए ताप को नीचा, दबाव को न्यून और प्रतिक्रिया-काल को अल्प रखना आवश्यक है। प्रतिक्रिया-काल के अल्प होने से गौण क्रियाएँ न्यूनतम होती हैं।

निम्न ताप और दबाव में आइसोब्युटीन का पुरुभाजन होता है। उच्च ताप पर उसका भंजन होता है। भंजन उतना सरल नहीं है। इससे मिथेन, प्रोपिलीन और एथिलीन बनते हैं। ब्युटीन और ब्युटाडीन इससे नहीं पाये गये हैं। इससे पर्याप्त मात्रा में द्रव प्राप्त होता है। ६५०° से ७००° से० पर ६३ प्रतिशत तक बेंज़ीन, टोल्विन और उच्चतर सौरभिक हाइड्रोकार्बन पाये गये हैं। अधिक समय के संस्पर्श से उच्चतर अणुभार के यौगिक अधिक मात्रा में प्राप्त होते हैं; पर हाइड्रोजन या नाइट्रोजन की उपस्थिति से द्रव की मात्रा कम मिलती है।

नार्मलब्युटीन के भंजन से १-ब्युटीन, सिस-२-ब्युटीन और ट्रांस-२-ब्युटीन प्राप्त होते हैं। ६००° से० पर २-ब्युटीन अधिक स्थायी होता है। इनके अतिरिक्त मिथेन, एथिलिन, प्रोपिलीन और हाइड्रोजन भी बनते हैं। ६००° से० से ऊपर द्रव बनते हैं। ७००° से० पर द्रव की महत्तम मात्रा प्राप्त होती है। ६००° से० पर साइक्लोहेक्सीन और मेथिल साइक्लोहेक्सीन भी मिलते हैं। ६५०° से० पर सौरभिक अधिक पाये जाते हैं।

पेण्टेन तीन होते हैं। नार्मल पेण्टेन, आइसोपेण्टेन और नियोपेण्टेन। इनमें नियोपेण्टेन सबसे अधिक स्थायी होता है। २० सेकंड में ५७५° से० पर इसका केवल ४ प्रतिशत विच्छेदित होता है। इसके विच्छेदन से मिथेन और आइसोब्युटीन बनते हैं।

नार्मल पेण्टेन का भंजन ३११° से० पर शुरू होता है और ६००° से० पर टूटकर मिथेन, ईथेन, प्रोपेन, एलिथीन, प्रोपिलीन और ब्युटिलीन बनता है।

आइसोपेण्टेन का भंजन ३८३° से० पर शुरू होता है। ४२५° से० पर ४ घंटे के व्यक्तीकरण से आइसोपेण्टेन का केवल ५·५ प्रतिशत विच्छेदन होता है, जबकि नार्मल पेण्टेन का इसी परिस्थिति में केवल ४ प्रतिशत विच्छेदन होता है, ६००° से० पर उसका ८० प्रतिशत विच्छेदन हो मिथेन, ईथेन, प्रोपिलीन १-ब्युटिलीन और २-ब्युटिलीन बनते हैं। एथिलीन और प्रोपेन नहीं बनते। आइसोपेण्टेन की बड़ी मात्रा के विच्छेदन से ही पर्याप्त आइसोब्युटीन प्राप्त हुआ था। इसमें हाइड्रोजन और ब्युटाडीन भी बनते हैं, पर इसकी मात्रा १० प्रतिशत से अधिक नहीं होती।

केवल दो हेक्सेन, नार्मल हेक्सेन और २, ३-डाइमेथिल ब्युटेन के भंजन का विस्तार से अध्ययन हुआ है। नार्मल हेक्सेन के भंजन का ४२५° और ५७५° से० पर अध्ययन हुआ है। इसके भंजन से मिथेन, ईथेन, एथिलीन, प्रोपिलीन, ब्युटिलीन और पेण्टेन प्राप्त हुए हैं।

२, ३-डाइमेथिल ब्युटेन से मिथेन, प्रोपेन, प्रोपिलीन एथिल-मेथिल, एथिलीन और ट्राइ-मेथिल-एथिलीन प्राप्त हुए हैं।

साइक्लो-पैराफिन और ओलिफीन

चक्रीय यौगिक अधिक स्थायी होते हैं। इनका समावयवीकरण सरलता से होता है।

साइक्लोप्रोपेन का प्रायः पूर्णतया समावयवीकरण ४७०° से० पर होता है। ६००° से० तक केवल समावयवीकरण होता है। समावयवीकरण से प्रोपिलीन बनता है। ६००° से० से ऊपर प्रोपिलीन के अन्यंशन के उत्पाद प्राप्त होते हैं।

साइक्लोप्रोपीन अधिक स्थायी होता है। इसका भी पुरुभाजन हो मेथिल एसिटिलीन या एलीन बनता है।

साइक्लोब्युटेन और साइक्लोब्युटीन के अन्यंशन का अध्ययन नहीं हुआ है।

साइक्लोपेण्टेन सबसे अधिक स्थायी होता है। साइक्लोपेण्टेन से ही नैफ्थीन बनते हैं। ६५० और ८००° से० के बीच साइक्लोपेण्टेन एथिलीन और प्रोपिलीन बनता है। अल्प मात्रा में साइक्लोपेण्टाडीन भी बनता है।

साइक्लोपेण्टाडीन और साइक्लोपेण्टीन का पुरुभाजन होता है। वायु या आक्सिजन की उपस्थिति में पुरुभाजन के साथ-साथ आक्सीकरण भी होता है और उससे रेज़िन पदार्थ बनते हैं।

साइक्लोहेक्सेन से एथिलीन, ब्युटाडीन, साइक्लोहेक्साडीन, बेंजीन और मेथिल साइक्लोपेण्टेन बनते हैं। यह सम्भव है कि पहली क्रिया विहाइड्रोजनीकरण की होकर साइक्लोहेक्सीन बने, जो पीछे साइक्लोहेक्साडीन और बेंज़ीन में परिणत हो जाय। स्फटिक-नली में ६५०° से० तक गरम करने से ४० प्रतिशत असंतृप्त हाइड्रोकार्बन, २०·६ प्रतिशत ब्युटाडीन और शेष में प्रधानतया एथिलीन प्राप्त होते हैं। पाइरेक्स-नली में ६५०° से० तक गरम करने से प्रायः १० प्रतिशत ब्युटाडीन और बहुत कम बेंज़ीन प्राप्त होता है।

भंजन की प्रतिक्रिया

भंजन में क्या होता है, इसपर बहुत-कुछ विचार-विमर्श हुआ है। सबसे स्पष्ट मत यह है कि भंजन में मूलक मुक्त होते हैं। ये मूलक बड़े सक्रिय होते हैं। इन मूलकों के परस्पर मिलने से फिर अनेक प्रकार के यौगिक बनते हैं, जिनका वर्णन ऊपर में हुआ है। यद्यपि यह मत १९०८ ई० में ही बोन और काउवर्ड (Bone and Coward) द्वारा व्यक्त हुआ था ; पर इसकी पुष्टि सन् १९२९ ई० में हुई, जब मेथिल और एथिल-मूलकों की उपस्थिति स्पष्ट रूप से प्रमाणित हो गई। ऐसा समझा जाता है कि उच्च ताप पर कार्बन-बन्धन टूटकर मूलक बनते हैं। इन मूलकों के मिल जाने से बड़े-बड़े मूलक या हाइड्रोजन के मिल जाने से संतृप्त हाइड्रोकार्बन बनते हैं। इन मूलकों से हाइड्रोजन निकल जाने पर असंतृप्त हाइड्रोकार्बन छोटे या बड़े बनते हैं।

ऐसा मूलक दूसरे मूलकों से हाइड्रोजन लेकर संतृप्त हाइड्रोकार्बन बनता है या स्वयं

हाइड्रोजन खोकर असंतृप्त हाइड्रोकार्बन बनता है। पहली प्रतिक्रिया में न्यूनतम ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है। राइस (Ricc) का मत है कि मेथिल-एथिल-मूलकों को छोड़कर अन्य मूलक स्थायी नहीं होते। वे ज्यों ही बनते हैं, विच्छेदित हो जाते हैं। यदि श्रृंखला बड़ी है तो उनसे छोटे अणु और अन्य मूलक बनते हैं, जो क्रमशः बढ़ते जाते हैं। इससे जो परमाणु अथवा मूलक बनते हैं वे वाहक का काम कर श्रृंखला को बढ़ाते हैं। प्रत्येक चक्र में वाहक स्वयं एक संतृप्त हाइड्रोकार्बन में परिणत हो जाता है।

अन्यंशन से कार्बन-कार्बन-बन्धन टूटकर प्राथमिक विघटन-मूलक बनते हैं। ये मूलक फिर पार्श्ववर्त्ती अणुओं से मिलकर नये-नये पदार्थ बनते हैं। ईथेन के विघटन से एथिलिन और हाइड्रोजन बनते हैं। बड़े-बड़े मूलक अस्थायी होते हैं। वे शीघ्र ही स्थायी मूलक मेथिल, एथिल या हाइड्रोजन और ओलिफीन बनते हैं। इन वाहकों के न-ब्युटेन की टक्कर से न-ब्युटील या आइसो-ब्युटील मूलक बनते हैं, पेण्टेन या हेक्सेन से उत्पादों की संख्या और बढ़ जाती है।

ओलिफीन हाइड्रोकार्बन का विच्छेदन कठिनता से होता है। इन्हें तोड़ने के लिए अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है। मुक्त मूलक के सिद्धान्त से विभिन्न यौगिकों के बनने की व्याख्या सरलता से हो जाती है। बड़े मूलकों से निम्न ताप पर चक्रीय यौगिक बनते हैं। मरकरी डाइहेप्टिल से ३५०° से० पर टेट्राडिकेन के अतिरिक्त साइक्लोहेक्सेन भी बनता है।

उच्च अणुभार के हाइड्रोकार्बनों का भंजन

उच्च अणुभारवाले हाइड्रोकार्बन उच्च ताप पर अधिक अस्थायी होते हैं। असममित अणु अधिक स्थायी होते हैं। नियोपेण्टेन नार्मल पेण्टेन से अधिक स्थायी होता है। युग्म-बन्धन एक-बन्धन से अधिक स्थायी होता है। युग्म-बन्धन के तोड़ने में अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है। युग्म-बन्धन के पार्श्व के एक-बन्धन का तोड़ना अधिक कठिन होता है। प्रोपिलीन के कार्बन-कार्बन-बन्धन प्रोपेन के कार्बन-कार्बन-बन्धन से अधिक स्थायी होते हैं। १–ब्युटीन की अपेक्षा २ ब्युटीन अधिक स्थायी होता है। इससे हम इस सिद्धान्त पर पहुँचते हैं कि C= C1CbCc में Cb और Cc का बन्धन तोड़ना Ca और Cb के बन्धन तोड़ने से अधिक सरल होता है। उस मेथिल-मूलक का निकालना सरल होता है, जो युग्म-बन्धन से बहुत दूर पर है।

औसत पेट्रोलियम में अनेक हाइड्रोकार्बनों के अणु रहते हैं। इनमें कुछ तो पैराफिनीय श्रृंखलाएँ होती हैं, कुछ नेफ्थीनीय और कुछ सौरभिक नाभिक रहते हैं। कुछ में शुद्ध पैराफिनीय, शुद्ध नैफ्थीनीय, शुद्ध सौरभिक, और अधिकांश में सब मिश्रित रहते हैं। सम्भवतः सब पेट्रोलियम में ये सब प्रकार के हाइड्रोकार्बन रहते हैं। इससे पेट्रोलियम का भंजन पेचीदा होता है।

पेट्रोलियम के भंजन में हमें पैराफिनीय, ओलिफिनीय, नैफ्थीनीय और सौरभिक सब प्रकार के हाइड्रोकार्बनों के भंजन का अध्ययन करना होगा।

पैराफिन के बड़े-बड़े अणुओं का टूटना तीन प्रकार से हो सकता है। एक प्रतिक्रिया में

अणु टूटकर संतृप्त हाइड्रोकार्बन और कार्बन बनें। यह प्रतिक्रिया महत्त्व की नहीं है; क्योंकि निम्न ताप पर बहुत-कुछ कार्बन बनता है—

$$R\ CH_2-CH_2-CH_2-CH_2-CH_2\ R = RCH_3 + CH_3CH_2CH_2CH_2R + C$$
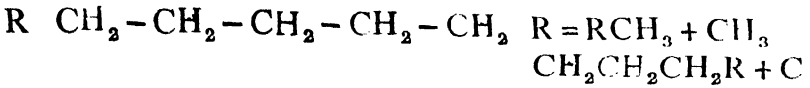
दूसरी प्रतिक्रिया में अणु टूटकर असंतृप्त हाइड्रोकार्बन और हाइड्रोजन बनता है—

$$R\ CH_2-CH_2-CH_2-CH_2-CH_2\ R = R\ CH=CH_2 + CH_2=CH-CH_2\ R + H_2$$
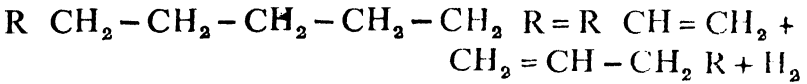
यह भी प्रतिक्रिया महत्त्व की नहीं है ; क्योंकि निम्न ताप पर बहुत कम हाइड्रोजन बनता है।

तीसरी प्रतिक्रिया में अणु टूटकर असंतृप्त और संतृप्त दोनों प्रकार के हाइड्रोकार्बन बनते हैं—

$$R\ CH_2-CH_2-CH_1-CH_2-CH_2\ R = R\ CH=CH_2 + CH_3C_2H\ C_2H\ R$$
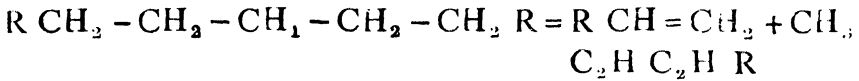
यह प्रतिक्रिया महत्त्व की है ; क्योंकि प्रयोग से देखा गया है कि दबाव में मोम के आसवन से जो द्रव प्राप्त हुआ था, उसमें पेण्टेन और पेण्टीन, हेक्सेन और हेक्सीन, हेप्टेन और हेप्टीन और ऑक्टेन और ऑक्टीन इत्यादि विद्यमान थे। पैराफिन और ओलिफीन लगभग सम मात्रा में विद्यमान थे। हेबर का मत है कि ६०० से ८००° सें० के बीच संतृप्त हाइड्रोकार्बन कम और असंतृप्त हाइड्रोकार्बन अधिक रहते हैं। इससे निम्नतर ताप पर दोनों की मात्रा प्रायः बराबर रहती है।

एक दूसरा मत है कि पैराफिन-श्रृंखला कहीं भी टूटकर असंतृप्त हाइड्रोकार्बन, संतृप्त हाइड्रोकार्बन और हाइड्रोजन बन सकती है। प्रयोग से यह प्रमाणित हुआ है कि ४०० से ४२५° सें० के बीच कहीं भी आइसोपेण्टेन और नार्मल हेक्सेन टूट सकता है। ४२५° सें० पर डाइआइसोएमिल का भी इसी प्रकार का टूटना देखा गया है। अतः यह ठीक मालूम होता है कि पैराफिन हाइड्रोकार्बन टूटकर असंतृप्त और संतृप्त हाइड्रोकार्बन बनते हैं; पर यह टूटना इतना सरल नहीं है, जैसा कि ऊपर बताया गया है। मुक्त मूलक का बनना ऊपर बताया गया है और इन मूलकों के परस्पर संयोग से फिर अनेक यौगिक बनते और बन सकते हैं।

मोम के भंजन का विस्तार से अध्ययन हुआ है। उससे स्पष्ट मालूम होता है कि इसका सरल विच्छेदन होकर गौण प्रतिक्रियाओं से अन्य पदार्थ बनते हैं। निम्नतर ताप पर कोक नहीं बनता। ओलिफीन की गौण प्रतिक्रियाओं से सौरभिक बनते हैं। कोक का बनना भी गौण प्रतिक्रियाओं के कारण होता है। यदि चक्री हाइड्रोकार्बनों के बनते ही हटा लिया जाय तो कोक का बनना ३'४७ प्रतिशत से ०'११ प्रतिशत कम होता हुआ पाया गया है।

बड़े अणुवाले ओलिफीन के भंजन का भी अनेक अन्वेषकों द्वारा बहुत-कुछ अध्ययन हुआ है। हेक्साडीकेन के वाष्प-कला में भंजन से निम्न ताप पर अधिकांश संतृप्त हाइड्रोकार्बन बनते हैं। ऐसा मालूम होता है कि युग्मबन्धन के अन्त में जो संतृप्त मूलक होते हैं, वे टूटकर निकल जाते हैं। ताप के बढ़ने से असंतृप्त हाइड्रोकार्बन और हाइड्रोजन बनते और उनकी मात्रा बढ़ती है। एक ओर से निम्न ताप पर संतृप्त अंश टूटते और उच्च

ताप पर दूसरी ओर से असंतृत अणु टूटकर दूसरे ओलिफीन या डाइओलिफीन बनते हैं। डाइओलिफीम भी फिर टूटकर ब्युटाडीन बनते हैं। ब्युटाडीन ऐसे भंजन से अवश्य बनते हैं। उच्च ताप पर डाइओलिफीन अवश्य बनते हैं।

यदि दबाव ऊँचा है तो ओलिफीन से वलय के बन्द होने के कारण नैफ्थीन भी भंजन में अवश्य बनते हैं। हेक्साडिकेन के अधिक दबाव पर भंजन से चक्री अवयव की मात्रा बढ़ती हुई पाई गई है। नार्मल हेक्सेन से भी उच्च दबाव पर नैफ्थीन और सौरभिक का बनना देखा गया है।

उत्प्रेरकों की उपस्थिति से अग्न्यंशन का ढंग बहुत-कुछ बदल जाता है। सक्रियित मिट्टी और विशेष रीति से तैयार अल्यूमिनियम हाइड्रोसिलिकेट उत्प्रेरक के रूप में उपयुक्त हुए हैं। इनकी क्रियाएँ बहुत तेज नहीं होतीं और भंजन का ताप विशेष रूप से नहीं गिरता है। यह अवश्य है कि उत्प्रेरकों से विहाइड्रोजनीकरण अधिक होता और ओलिफीन अधिक टूटते हैं, पर उनका विशेष प्रभाव यह पड़ता है कि द्विबन्धन क्रमशः अणु के मध्य की ओर बढ़ते जाते हैं। उत्प्रेरक का क्या प्रभाव पड़ता है, वह निम्नांकित आँकड़ों से स्पष्ट हो जाता है। यहाँ नार्मल औक्टेन का भंजन हुआ है और केवल ताप से और ताप तथा उत्प्रेरक की उपस्थिति में जो उत्पाद और जितनी मात्रा में बनते हैं, वे निम्नलिखित हैं—

नार्मल-औक्टेन का भंजन

	उत्प्रेरक और ताप	केवल ताप
ताप, ० सें०	५७०	५७०
स्पर्श-काल, सेकेंड में	१'०	१२'७
प्रतिशत विच्छेदन	११'०	१६'४
प्रति औक्टेन अणु के भंजन से प्राप्त अणुएँ	२'४	३'२
१०० औक्टेन अणुओं के भंजन से प्राप्त उत्पाद		
हाइड्रोजन	१३'०	०'३
मिथेन	६'०	७७'०
एथिलीन	१६'०	८६'०
ईथेन	११'०	५५'०
प्रोपिलीन	५२'०	४६'०
प्रोपेन	१८'०	६'५
ब्युटिलीन	२२'०	१८'०
ब्युटेन	७'०	१'३
पाँच कार्बनवाले हाइड्रोकार्बन	७३'०	१५'०
छह और सात कार्बनवाले हाइड्रोकार्बन	१६'०	२१'०

उत्प्रेरकों से गौण क्रियाओं को भी प्रोत्साहन मिलता है। ओलिफीनों का समावयवीकरण और पुरुभाजन अधिकता से होता है।

नैफ्थीन के भंजन का अध्ययन अपेक्षया कम हुआ है। कुछ थोड़े से कम अणुभारवाले नैफ्थीनों के भंजन का ही अध्ययन हुआ है। छह कार्बन वलयवाले नैफ्थीनों में या तो

विहाइड्रोजनीकरण होता है अथवा वलय टूट जाते हैं। साइक्लोहेक्सेन के ६०० और ७००° से० के भंजन से साइक्लोहेक्सीन के साथ-साथ पर्याप्त मात्रा में बेंज़ीन प्राप्त होता है। ८००° से० पर साइक्लोहेक्सीन प्रायः पूर्णतया ब्युटाडीन और एथिलीन बनता है और ये फिर संयुक्त हो बेंज़ीन बन सकते हैं। साइक्लोहेक्सेन से पैराफीन बनते हैं। इससे ओलिफीन के हाइड्रोजनीकरण का होना भी प्रमाणित होता है। साइक्लोपेण्टेन के ६५०° से० से ऊपर ताप पर भंजन से विहाइड्रोजनीकरण होकर साइक्लोपेण्टाडीन और वलय टूटकर एथिलीन और प्रोपिलीन बनते हैं। भंजित आसुत में बचे नैफ्थीन में प्रधानतया पाँच कार्बनवाले वलय रहते हैं।

उच्चतर नैफ्थीन के विच्छेदन के ढंग का हमें पता नहीं है। ऐसे ही नैफ्थीन पेट्रोलियम में रहते हैं जिनमें ५ या ६ कार्बनवाले वलय होते हैं और जिनमें बड़ी-बड़ी पार्श्व-श्रृंखलाएँ जुटी रहती हैं। इनमें दो या दो से अधिक चक्र भी जुटे रह सकते हैं। ये श्रृंखलाएँ जल्दी टूट जाती हैं अथवा वलय भी शीघ्र टूट जाता है। इस प्रकार टूटने से नैफ्थीन और ओलिफीन दोनों बनते हैं।

भंजन से सौरभिक हाइड्रोकार्बन बनते हैं। कच्चे तेल में सौरभिक हाइड्रोकार्बन बहुत कम रहते हैं। भंजित तेल में इनकी मात्रा बढ़ जाती है। यह सम्भव है कि कच्चे तेल में जो सौरभिक हाइड्रोकार्बन रहते हों, वे बड़े-बड़े अणुभार के हों जो भंजन से टूट कर अपेक्षया अल्प अणुभार के बन जाते हैं। यह ठीक मालूम होता है कि सौरभिक हाइड्रोकार्बनों के साथ नैफ्थीन वलय और पैराफीन श्रृंखलाएँ जुटे रहते हैं जो भंजन के ताप से टूट जाते हैं। इसकी पुष्टि इस बात से होती है कि ब्युटिल बेंज़ीन के भंजन से एथिलबेंजीन, टोल्विन और बेंज़ीन प्राप्त हुए हैं।

सरलतर सौरभिक हाइड्रोकार्बन निम्न ताप पर स्थायी होते हैं। ५००° से० के ऊपर ही वे विच्छेदित होना शुरू होते हैं। इस ताप पर जो क्रियाएँ होती हैं, उनमें पहले केवल दो जलयों का जुटना होता है। इस प्रकार बेंज़ीन से डाइफेनिल बनता है। टोल्विन, नैफ्थीलीन और ज़ाइलिन से भी इसी प्रकार के यौगिक बनते हैं। इस क्रिया के विस्तार से अन्य यौगिक बनते हैं।

अणुभार की वृद्धि से स्थायित्व घटता है। लम्बे-लम्बे श्रृंखलावाले सौरभिकों की श्रृंखलाएँ टूट जाती हैं और ये छोटे-छोटे सौरभिक अधिक स्थायी होते हैं। उच्च ताप पर अधिक अणुभारवाले यौगिक बनते हैं। अधिक ताप से कोक-सा पदार्थ बनते हैं। बहु-वलयवाले यौगिक कोक अधिक शीघ्रता से बनते हैं। भंजन में गैस की पर्याप्त मात्रा भी बनती है। छोटी पार्श्व-श्रृंखलाओं के टूटने से सम्भवतः ये गैसें बनती हैं। यदि श्रृंखला असंतृप्त हो तो उनका पुरुभाजन शीघ्रता से होकर नये-नये पदार्थ बनते हैं।

यदि ताप पर्याप्त ऊँचा हो तो हाइड्रोजन मुक्त होकर कुछ सीमा तक अस्थायी केन्द्रकों का हाइड्रोजनीकरण हो सकता है। अधिक ताप से ये केन्द्रक टूट सकते हैं। इस प्रकार इण्डीन (C_9H_8) से हाइड्रिनडीन (C_9H_{10}) बनता है और हाइड्रिनडीन से ज़ाइलीन और मेथिल एथिल बेंज़ीन बनते हैं। बहुत उच्च ताप पर कोक बनता है। कोक में केवल कार्बन ही नहीं रहता। इसका पर्याप्त अंश कार्बन-डाइसल्फाइड में घुल जाता है। इससे प्रमाणित होता है कि कोक सौरभिक हाइड्रोकार्बनों के संघनन से बनता है।

पेट्रोलियम का भंजन

सन् १९१२ ई० में बर्टन ने देखा कि पेट्रोलियम के भंजन से पट्रोल प्राप्त हो सकता है। उस समय पेट्रोलियम की माँग बहुत बढ़ रही थी। बर्टन ने थोड़ा-थोड़ा पेट्रोलियम लेकर भभके में आसवन किया और उससे पेट्रोल प्राप्त किया। उसके शीघ्र ही बाद देखा गया कि ताप के ऊँचा होने और दबाव की वृद्धि से वाष्प-कला में भंजन से पेट्रोल की मात्रा बढ़ जाती है। इससे सौरभिक हाइड्रोकार्बन भी प्राप्त हुआ। प्रथम विश्वयुद्ध, सन् १९१५ से १९१८ ई०, में युद्ध-सामग्री तैयार करने के लिए सौरभिकों की माँग बहुत अधिक थी और इससे भंजन से सौरभिक प्राप्त करने में सफलता मिली ; पर यह रीति पीछे बहुत दिनों तक न चल सकी ; क्योंकि पेट्रोलियम ऊष्मा के कुचालक होने और इस क्रिया में बहुत अधिक मात्रा में कोक बनने के कारण व्यवसाय की दृष्टि से यह रीति युद्ध के बाद शान्ति-काल में सफल न हो सकी।

क्लार्क ने बर्टन की रीति में सुधार किया। उन्होंने भभके के स्थान में जल-नल किस्म के भभके का उपयोग किया। पेट्रोलियम को इन नलों में पम्प किया जाता था। १९२७ ई० में इस रीति में फिर सुधार हुआ। ताप की कमी और दबाव की वृद्धि से वाष्प-कला में भंजन शुरू हुआ। इससे उच्च कोटि का पेट्रोल प्राप्त हुआ, ऐसा पेट्रोल जिसका प्रति-आघात-गुण बहुत उत्कृष्ट था। आज जो रीति उपयुक्त होती है, वह द्रव और वाष्प दोनों का मिश्रण है।

इस सम्बन्ध में सन् १९१५ से १९३० ई० तक अनेक प्रयोग हुए और उनके फल-स्वरूप भंजन की आधुनिक रीति का आविष्कार हुआ। इस रीति में गरम करने की एक कुण्डली होती है और प्रतिक्रिया के सम्पन्न होने के लिए एक पात्र होता है जिसे प्रतिक्रियाकारक
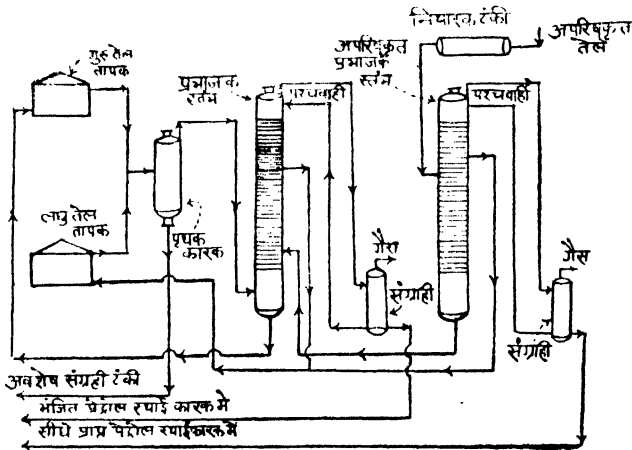
भंजन विधि का बहाव रेखा-चित्र

चित्र ६—इस संयन्त्र में पेट्रोलियम का भंजन होता है।

कहते हैं। पेट्रोलियम को बहुत शीघ्रता से कुण्डली में पम्प किया जाता है। इतनी शीघ्रता से कि पेट्रोलियम का अनावश्यक विच्छेदन न हो सके। प्रतिक्रियाकारक में जो पदार्थ प्रविष्ट करते हैं, वे पर्याप्त समय तक वहाँ रहते हैं, ताकि उनका भंजन ठीक तरह से हो सके।

साधारणतया एक निश्चित समय तक निश्चित ताप पर उच्च दबाव में वहाँ रखते हैं। तब उसका अंशन करते हैं। पहले से उष्ण किये हुए पेट्रोलियम को आधे से तीन मिनट तक शीघ्रता से ८५० से १०००° फ० तक गरम करते हैं। कच्चे पेट्रोलियम के लिए ८२५ से ९२५° फ०, गैस-तेल को ९०० से ९७५° फ० और नैफ्था को ९५० से १०००° फ० तक गरम करते हैं।

इससे जो उष्ण उत्पाद प्राप्त होते हैं, उन्हें उद्वाष्पक में प्रविष्ट कराने के पूर्व अंशतः ठंडा कर लेते हैं ताकि उनका आवश्यकता से अधिक भंजन न हो जाय। इसके लिए जो प्रबन्ध करते हैं, उसका चित्र यहाँ दिया हुआ है।

दबाव के हटाते ही भंजित उष्ण तेल को एक या एक से अधिक पृथक्कारक में ले जाते हैं। यहाँ तारकोल और भारी ईंधन-तेल अन्य उत्पादों से अलग हो जाते हैं। इन्हें तब अंशन-मीनार में ले जाते हैं। पेट्रोल और गैस ऊपर चले जाते और भारी तेल नीचे बैठ जाता है। इस भारी तेल को फिर कुण्डली में ले जाकर भंजन करते हैं। यह चक्र बराबर चलता रहता है। ऐसे भंजन के निम्नलिखित उद्देश्य हो सकते हैं—

(१) भंजन से कच्चा पेट्रोलियम भिन्न-भिन्न अंशों, पेट्रोल, किरासन, ईंधन-तेल इत्यादि में विभक्त हो जाता है।

(२) भारी तेलों, गैस-तेल, स्नेहक तेल से पेट्रोल प्राप्त होता है।

(३) भारी ईंधन-तेल के मन्द भंजन से तेल की श्यानता घट जाती है।

(४) भारी नैफ्था तेल के अथवा पेट्रोल के भंजन से ऑक्टेन-संख्या बढ़ जाती है।

(५) पेट्रोल से अनावश्यक वाष्पशील अंश निकल जाता है।

संयोजन मात्रक के उपयोग से लाभ यह होता है कि इसमें ऊष्मा का ह्रास कम होता और केवल गैस, पेट्रोल, भारी ईन्धन-तेल और कोक प्राप्त होते हैं। यदि ईंधन-तेल की आवश्यकता न हो तो इसमें परिवर्त्तन ऐसा कर सकते हैं, जिससे केवल पेट्रोल और कोक प्राप्त हो सके।

पुनश्चक्रण

केवल एक बार के भंजन से पेट्रोल की मात्रा अधिक नहीं प्राप्त होती। भंजन के बार-बार दुहराने से प्राप्त गैस और ईंधन-तेलों के पुनर्भंजन से अधिक पेट्रोल प्राप्त होता है। केवल एक बार के प्रबल भंजन से गैस और कोक अधिक बनते हैं। सीमित भंजन से और अभंजित अंश के पुनर्भंजन से पेट्रोल अधिक मात्रा में प्राप्त होता है। उच्च क्वथनांकवाले हाइड्रोकार्बनों के भंजन से वे अधिक अभंजक हो जाते हैं और यह अभंजन क्रमशः बढ़ता जाता है। ऐसे पदार्थों के पुनर्भंजन के लिए अधिक समय लगता है। पुनर्भंजन से अभंजित अंश का विशिष्ट भार बढ़ता जाता है। एनिलिन-विन्दु घटता जाता है और संघनन अधिकाधिक चक्री होता जाता है। यह कहना कठिन है कि इस भंजन में कहाँ तक पुरुभाजन और संघनन होता है; पर ये दोनों क्रियाएँ निश्चित रूप से होती हैं।

इस संबंध में जो प्रयोग हुए हैं, उनसे स्पष्टतया मालूम होता है कि पुनश्चक्रण की वृद्धि से गैसों की मात्रा क्रमशः बढ़ती जाती है और उसकी प्रकृति भी बदलती जाती है, हाइड्रोजन और मिथेन की मात्रा बढ़ती जाती, एनिलिन-विन्दु और विशिष्ट भार बदलते जाते हैं।

प्रत्येक उपक्रम के बाद पेट्रोल की मात्रा घटती जाती है और ईंधन-तेल की मात्रा बढ़ती जाती है; पर पेट्रोल की प्रकृति नहीं बदलती। उसके भौतिक गुण और अन्य लक्षण ज्यों-के-त्यों रहते हैं।

पेट्रोलियम की प्रकृति

भंजन कितना होता है और उससे क्या-क्या उत्पाद बनते हैं, यह पेट्रोलियम की प्रकृति पर निर्भर करता है। आवश्यक उत्पाद अच्छी मात्रा में प्राप्त करने के लिए यह बहुत आवश्यक है कि कच्चे पेट्रोलियम की प्रकृति का ज्ञान हो। तब हम ऐसी परिस्थिति को उत्पन्न कर सकते हैं कि उससे आवश्यक उत्पाद हमें पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हो। यह देखा गया है कि तेल की प्रकृति का प्रभाव निम्न ताप पर ही पड़ता है। यदि भंजन वाष्प-कल-ताप पर किया जाय तो उससे प्राप्त उत्पादों की प्रकृति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यदि चक्री यौगिकों की मात्रा अधिक है तो उससे जो पेट्रोल प्राप्त होता है, उसकी ऑक्टेन-संख्या उच्च होती है। कच्चे तेल से सीधे प्राप्त पेट्रोल की भी ऑक्टेन संख्या पर्याप्त मात्रा में बढ़ाने के लिए भंजन की आवश्यकता होती है।

कैसे भंजन किया जाय कि आवश्यक उत्पाद सन्तोषजनक मात्रा में प्राप्त हो सके, इसके लिए तेल की प्रकृति का ज्ञान बहुत आवश्यक है। कच्चे तेल के क्वथनांक से तेल की प्रकृति का बहुत कुछ पता लगता है। यदि गैस-तेल को कच्चे तेल से निकाल लिया जाय तो ऐसे उच्च क्वथनांकवाले अंश का भंजन अधिक शीघ्रता से होता है।

कच्चे तेल की रासायनिक प्रकृति का भी कुछ सीमा तक प्रभाव पड़ता है। पैराफिनीय तेल अधिक सरलता से भंजित होता है और उससे कम कोक बनता है। नैफ्थिनीय तेल से उसी स्थिति में उच्च प्रति-आघातवाला तेल कम प्राप्त होता है। इस तेल से गोंद और कोक बनने की प्रवृत्ति भी अधिक होती है। जिस तेल का एनिलिन-बिन्दु ऊँचा हो, श्यानता ऊँची हो और विशिष्ट भार ऊँचा हो, वह पैराफिनीय समझा जाता है। अस्फाल्टीय पदार्थों की अल्प मात्रा की उपस्थिति से भी कोक की मात्रा अधिक बनती है। कार्बन अवशेष से अस्फाल्टीय अंश का ज्ञान प्राप्त होता है।

कुछ लोगों का कहना है, भंजन से उत्पाद की प्रकृति कच्चे तेल पर उतनी निर्भर नहीं करती जितनी भंजन की परिस्थिति पर निर्भर करती है। यह कथन उच्च ताप के लिए ठीक हो सकता है, पर निम्न ताप के लिए यह ठीक नहीं है। यह देखा गया है कि भारी नैफ्था अंश का, जो पेट्रोल और किरासन के बीच प्राप्त होता है, भंजन वैसा नहीं होता जैसा अन्य अंशों का होता है। २०० से २५०° से० के बीच का अंश ७००° से० पर भी भट्ठी में ले जाने से उसका भंजन ठीक नहीं होता हुआ देखा गया है।

भंजन की परिस्थिति

तेल के भंजन पर ताप, दबाव और समय का प्रभाव पड़ता है। इनमें समय और ताप अधिक महत्त्व के हैं। कला का भी प्रचुर प्रभाव पड़ता है।

ताप

भंजन में ताप का सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है। प्रायः ३००° से० ताप तक तेल का विच्छेदन बहुत ही मन्द होता है। ४००° से० पहुँचते-पहुँचते विच्छेदन की मात्रा अधिक नहीं होती है। ४५०° से० और इससे ऊपर तो विच्छेदन बड़ी शीघ्रता में होता है।

भंजन के वेग पर ताप का प्रभाव बहुत पड़ता है। लेसली और पौटहौफ (Lislie and Potthoff) का कथन है कि ताप ३७० से ४२५° से० के बीच प्रत्येक १४° से० की वृद्धि से विच्छेदन लगभग दुगुना हो जाता है।

कच्चे तेल से प्राप्त नैफ्था का भंजन उतना शीघ्र नहीं होता जितना भंजन से प्राप्त नैफ्था का भंजन होता है। अनेक लोगों का मत है, ओलिफीन विशेषतः पेण्टीन का भंजन पैराफिन की अपेक्षा अधिक शीघ्रता से होता है।

प्रतिक्रिया का वेग समय से घटता है। इसका कारण यह समझा जाता है कि इससे असंतृप्त उत्पादों का पुरुभाजन और संघनन होता है। ताप की वृद्धि से भंजन का वेग दो कारणों से सीमित होता है। एक तो ताप की वृद्धि से पार्श्व-प्रतिक्रियाएँ बढ़ती हैं और उत्पाद की प्रकृति भी बदलती है और न गलनेवाले पदार्थों की मात्रा बढ़ती जाती है।

उच्चतर ताप पर गैस की मात्रा विशेष रूप से बढ़ती है। जहाँ ८६०° फ० पर प्रति वर्ग इंच २०० पाउण्ड दबाव पर गैस की मात्रा १०·२ प्रतिशत है, वहाँ ६००° फ० पर २०० पाउण्ड दबाव पर गैस की मात्रा १६·६ प्रतिशत और १०६८° फ० पर ३० पाउण्ड दबाव पर २६·७ प्रतिशत हो जाती है।

ताप और दबाव का प्रभाव गैस की प्रकृति पर भी पड़ता है। ६००° से० के लगभग असंतृप्त हाइड्रोकार्बनों की मात्रा महत्तम प्रायः ५० प्रतिशत हो जाती है।

भंजन के ताप के परिवर्त्तन से पेट्रोल के गुणों में भी परिवर्त्तन होता है। यह परिवर्त्तन निम्नतर ताप पर बहुत अल्प होता है। १०००° फ० तक औक्टेन-संख्या और असंतृप्त अंश की मात्रा में वृद्धि होती है। इस ताप के ऊपर वृद्धि अधिक स्पष्ट होती है। वाष्पशीलता में भी परिवर्त्तन होता है। उच्च ताप से निम्न क्वथनांकवाले अंश की मात्रा बढ़कर कम पेट्रोल प्राप्त होता है। सरलता से आक्सीकृत होनेवाले अंश की मात्रा भी बढ़ती है। सम्भवतः अधिक चक्रीय ओलिफीन और संबद्ध डाइ-ओलिफीन के बनने से रखने पर गोंद बननेवाले अंश की वृद्धि होती है।

ताप की वृद्धि से सौरभिक अंश की वृद्धि होती है, श्यानता घटती है। पर पेट्रोल के निकल जाने पर तारकोल बहुत गाढ़ा होकर कोक-सा होता है. और तब श्यानता बढ़ जाती है तेल के भंजन में ऐसा ताप चुनना चाहिए जिसपर भंजन का वेग अधिक हो, समय कम लगे, औक्टेन-संख्या की वृद्धि हो और ऐसा न हो कि पेट्रोल के परिष्कार में कठिनता उत्पन्न हो।

समय

भंजन के समय की वृद्धि से भंजित उत्पाद की लब्धि अधिक होती है। यह वृद्धि सामान्य रूप से गैस-तेल, ईंधन-तेल और एक बार भंजित तेल में होती है। यह भी देखा गया है कि समय की वृद्धि से उत्पाद अधिक संतृप्त होते हैं; क्योंकि इससे असंतृप्त हाइड्रोकार्बनों को पुरुभाजन का अवसर मिलता है और चक्रीय यौगिकों के बनने की सम्भावना अधिक रहती है।

समय और ताप का क्या संबंध रहना चाहिए, इसका अध्ययन बहुत विस्तार से हुआ है और इसके फल का उपयोग व्यवसाय में भी हुआ है। यह देखा गया है कि ६००° से० पर वाष्प-कला में २ से १० सेकंड, ४८०° से० पर मिश्र-कला में १ से २ मिनट और ४४०°

से० पर द्रव-कला में १५ से २० मिनट पर्याप्त हैं। यह भी देखा गया है कि पेट्रोल की मात्रा क्रमशः बढ़ती-बढ़ते हुई महत्तम हो जाती है और तब कम होना शुरू होती है। असंतृप्त अंश में क्रमशः बढ़ते महत्तम पहुँचकर फिर कम होता है। समय-ताप की वृद्धि से कोक का बनना और गैस और पेट्रोल का अनुपात भी उच्चतर होता है। इस सम्बन्ध में नेल्सन ने जो आँकड़े दिये हैं, वे महत्त्व के हैं।

ताप ° फ०	महत्तम लब्धि प्रतिशत	महत्तम लब्धि का समय सेकेंड में	कला	तेल
८००	४०	१४,०००	द्रव	गैस-तेल
८४०	४८	७५००	द्रव	पैराफिन मोम
९३२	३१	१०००	वाष्प	गैस-तेल
१०७०	२६	३०	वाष्प	गैस-तेल
११८४	२३	३	वाष्प	गैस-तेल
१०२०	१००	२००	वाष्प	गैस-तेल
१०२०	८५	३००	वाष्प	नैफ्था

इस संबंध में दो बातें स्मरण रखने की हैं। निम्नतर ताप पर अधिक समय से पार्श्व प्रतिक्रियाओं की सम्भावना बढ़ जाती है। निम्नतर और उच्चतर ताप पर उच्च अणुभार और निम्न अणुभारवाले तेलों के भंजन का प्रतिरोध एक-सा नहीं रहता है।

दबाव

पेट्रोल की प्राप्ति के लिए जो भंजन होता है, वह सदा ही उच्च दबाव में होता है। दबाव प्रति वर्गइंच में २०० पाउण्ड से अधिक ही रहता है। वाष्प-कला में इससे कम दबाव में भी भंजन हो सकता है। पर वायुमण्डल के दबाव पर भंजन में सफलता नहीं मिली है। अनुभव से ही पता लगा है कि भंजन के लिए दबाव आवश्यक है।

थॉर्प और यंग ने देखा था कि वायुमण्डल-दबाव पर मोम के आसवन से उसका विच्छेदन नहीं होता, पर अधिक दबाव पर आसवन से विच्छेदन होता है। उन्होंने मोम को बन्द नली में २०० से० पर गरम कर देखा कि उससे भी विच्छेदन नहीं होता है। इससे मालूम होता है कि विच्छेदन के लिए उच्च ताप भी आवश्यक है।

ऐसा मालूम होता है कि प्रारम्भिक भंजन-विच्छेदन पर दबाव का कोई असर नहीं होता है, पर इससे गौण क्रियाओं, पुरुभाजन और संघनन पर असर अवश्य होता है।

उन गौण क्रियाओं पर दबाव का प्रभाव अधिक पड़ता है, जिनमें आयतन की कमी, अर्थात् पुरुभाजन और हाइड्रोजनीकरण होता है। इससे असंतृप्त द्रव और गैसीय हाइड्रोकार्बन अधिक प्रभावित होते हैं। द्रव-कला में भंजन से १०० पाउण्ड दबाव की वृद्धि से जो उत्पाद प्राप्त होते हैं, उनमें सल्फ्यूरिक अम्ल से और आयोडीन से अवशोषण कम होता है, अर्थात् असंतृप्त हाइड्रोकार्बन कम बनते हैं। ४८०° से० पर १५० पाउण्ड दबाव पर मोम के ४० मिनट के भंजन से जो उत्पाद प्राप्त हुआ, उसकी आयोडीन-संख्या १४४'१ थी और १५०० पाउण्ड दबाव पर प्राप्त उत्पाद की आयोडीन-संख्या ५१'२ थी। वाष्पकला-भंजन में

तो यह अन्तर अधिक स्पष्ट हो जाता है। ६००° से० पर एथिलीन और प्रोपिलीन के वायुमण्डल-दबाव पर भंजन से सौरभिक और हाइड्रोजन की मात्रा अधिक थी ; पर दबाव की वृद्धि से सौरभिक की मात्रा स्पष्टतया कम होती जाती है और कुछ हजार पाउण्ड दबाव में तो प्रायः शून्य हो जाती है।

वैगनर ने उच्च दबाव (१०० से ३०० पाउण्ड) और निम्न दबाव (५० पाउण्ड) पर वाष्प-कला-भंजन से जो उत्पाद प्राप्त किये, उनके गुण निम्नलिखित हैं—

	उच्च दबाव पर वाष्प-कला में	निम्न दबाव पर वाष्प-कला में
आयोडीन संख्या	११५	१४६
वर्त्तनांक	१'४२८५	१'४३८०
ओलिफीन	३२'६	४६'५
सौरभिक	२३'५	२६'०
नैफ्थीन	६'२	११'२
पैराफीन	३४'४	१६'३

ओलिफीन और सौरभिक की कमी से ऑक्टेन-संख्या में कमी होती है और वाष्पशील अंश और गैस की मात्रा में कमी होती है। इससे भी ऑक्टेन-संख्या में कमी होती है। गैस की कमी से कोई हानि नहीं है ; पर इसका अन्तिम परिणाम यह होता है कि पेट्रोल की मात्रा कम हो जाती है।

वाष्प-कला

दबाव का एक दूसरा काम आवश्यक कला का उपस्थित करना है। यदि द्रव और वाष्प-कला अलग-अलग हों तो ऐसे तेल का भंजन कुछ कठिन होता है। क्योंकि द्रव और वाष्प में ऊष्मा के हस्तान्तरण में भिन्नता रहती है। अधिक दबाव से वाष्प इतना घना हो जाता है और द्रव में वाष्प की विलेयता इतनी बढ़ जाती है कि द्रव का घनत्व कम होकर दो कलाओं का अन्तर बहुत कम हो जाता है। ४८०° से० से ऊपर ताप पर साधारणतया केवल वाष्प-कला रहती है। ४०० से ४५०° से० पर २०० से १०,००० पाउण्ड दबाव पर केवल द्रव-कला होती है। ४५० से ५४०° से० तक १५० से १५,००० पाउण्ड दबाव पर दोनों कलाएँ होती हैं और ५४० से ६२५° से० तक ५० से २०० पाउण्ड तक केवल वाष्प-कला रहती है।

प्रति बार में कितना भंजन होता है, यह तेल की प्रकृति और समय पर निर्भर करता है। प्रति बार में यदि कम परिवर्त्तन होता है तो उसे पेट्रोल की मात्रा अधिक और कोक तथा गैस की मात्रा कम होती है। प्रति बार में यदि अधिक परिवर्त्तन होता है, तो उससे पैट्रोल की मात्रा कम और कोक और गैस की मात्रा अधिक होती है। पहली दशा में प्राप्त पेट्रोल की ऑक्टेन-संख्या कम, वाष्पशीलता कुछ कम और संतृप्ति अधिक होती है। दूसरी दशा में प्राप्त पेट्रोल की ऑक्टेन-संख्या ऊँची, वाष्पशीलता अधिक और असंतृप्त हाइड्रोकार्बन के कारण पुरुभाजन से कोक और तारकोल या ईंधन-तेल अधिक बनता है। कम या अधिक परिवर्त्तन निम्न या उच्च ताप के कारण होता है।

एक बार भंजन से प्राप्त भारी तेल फिर दुबारा शीघ्रता से भंजित नहीं होता। उसमें

साधारणतया कुछ अभंजित तेल मिलाकर तब दुबारा भंजित किया जाता है। ऐसे तेल में अभंजित और भंजित तेल का अनुपात १ से ४ तक हो सकता है। तेल में अस्फाल्ट का रहना ठीक नहीं है। यह उत्प्रेरक का काम कर तारकोल और कोक बनाने में सहायता करता है। यदि तेल में तीन और चार कार्बनवाली हाइड्रोकार्बन-गैस मिला दी जाय तो कोक का बनना बहुत कुछ रोका जा सकता है; क्योंकि यह मिश्रण के क्रांतिक ताप को घटा कर कुण्डली के ताप पर उतार देता है।

गैस का निर्माण

सैद्धान्तिक रूप से विना गैस बने भी तेल का भंजन हो सकता है; पर साधारणतया कुछ-न-कुछ गैस भंजन में अवश्य बनती। जब बड़े-बड़े अणुवाले हाइड्रोकार्बन टूटते हैं तो जोड़ पर स्थित मूलक टूटकर गैस बनते हैं। भंजन के ताप की वृद्धि से गैसों की मात्रा बढ़ती है। सम्भवतः भंजित उत्पाद पुनर्भंजित हो गैस बनते हैं।

गैसों की प्रकृति बहुत कुछ उत्पादन की परिस्थिति पर निर्भर करती है। यदि तापन तल का ताप ६००°फ० हो जाय तो ऐसे तल पर गैसें बनती हैं। ऐसी गैसों में प्रधानतया हाइड्रोकार्बन होते हैं, यद्यपि बड़ी अल्प मात्रा में हाइड्रोजन, आक्सिजन, हाइड्रोजन-सल्फाइड, कार्बन-मनाक्साइड और कार्बन-डायक्साइड भी रहते हैं। फार्मिक और एसिटिक अम्ल भी पाये गये हैं, इनकी मात्रा बढ़ जाती है, यदि तेल में गन्धक यौगिकों और अस्फाल्टीय पदार्थों की मात्रा अधिक है। गैसों की प्रकृति तेल की प्रकृति और भंजन की परिस्थिति दोनों पर निर्भर करती है। गैसों का औसत संघटन इस प्रकार होता है—

	५१०°से० और ३५० पाउण्ड दबाव		५६५ से ६२०° से० और ५० पाउण्ड दबाव		
	गैस-तेल नमूना १	गैस-तेल नमूना २	गैस-तेल नमूना १	गैस-तेल नमूना २	पुरुभाजित आलिफीन
मिथेन और हाइड्रोजन	३६·२	४४·८	३५·०	३८·८	४८·४
ईथेन	२१·०	१६·२	११·६	१३·२	१२·३
एथिलीन	३·६	४·०	२४·६	२०·३	१४·२
प्रोपेन	१६·२	७·४	२·५	५·७	२·८
प्रोपिलीन	७·४	१४·२	१८·०	१३·१	१२·६
कार्बन-४ अंश	६·१	१०·०	४·७	२·५	७·४
कार्बन-५ अंश	३·२	३·४	३·१	६·४	२·३

भभके में अवशिष्ट अंश का भंजन

इस अंश का संघटन एक-सा नहीं होता। तेल की विभिन्नता से इसका संघटन विभिन्न होता है; पर इसमें विभिन्नता इतनी नहीं होती, जितनी पेट्रोल और मध्य के तेलों में होती है। तेल में जितना रेज़िन या अस्फाल्ट पदार्थ रहते हैं, सम्भव नहीं कि वे सब इस

अंश में रहे ; क्योंकि वे ऊष्मा-अस्थायी होते हैं। इस अंश का विशिष्ट गुरुत्व ऊँचा और श्यानता कम होती है। इसकी प्रकृति बहुत कुछ कोलतार के आसवन में प्राप्त अवशेष से मिलती-जुलती है। इससे ज्ञात होता है कि इनमें संघनित सौरभिक यौगिक रहते हैं। क्या इसमें मोम भी रहता है? ऐसे अवशेष से एक मोम निकाला गया था जिसका गलनांक ५२° से० था; पर यह पैराफिनीय नहीं था। एक ने इससे पैराफिनीय मोम भी निकाला था। कुछ लोगों ने इससे स्युडो-क्यूमीन, मेसिटिलीन, अल्फा-नेफ्थिलीन, बीटा-मेथिल नैफ्थिलीन, ऐसो-नेफ्थिलीन और डाइ-मेथिल-नैफ्थिलीन भी निकाला था।

उच्च ताप-भंजन से जो तारकोल प्राप्त हुआ था, उसमें स्टाइरीन नैफ्थिलीन, एन्थ्रेसीन और फिनैन्थ्रीन भी पाया गया था। इसमें निलम्बित सम्भवतः कलिल दशा में कार्बन भी रहता है। रखने से यह कार्बन अवक्षिप्त हो जाता है। यदि इसमें पाँच प्रतिशत नैफ्थिलीन डालकर केन्द्रापसारित किया जाय तो इससे कोक को निकाल सकते हैं। गरम करने से भी कार्बन का अवक्षेपण शीघ्रता से हो जाता है।

पुरुभाजन से पेट्रोल

पुरुभाजन से असंतृप्त हाइड्रोकार्बन बनते हैं। इन हाइड्रोकार्बनों को पुरुभाजन से द्रव हाइड्रोकार्बनों में परिणत कर उन्हें पेट्रोल के रूप में इस्तेमाल कर सकते हैं। उच्च संतृप्त हाइड्रोकार्बन ओलिफीन में सरलता से परिणत हो जाते हैं और उससे पर्याप्त मात्रा में पेट्रोल प्राप्त हो सकता है। पुरुभाजन के साथ-साथ भंजन भी हो सकता है जिससे पेट्रोल की मात्रा बहुत कुछ बढ़ाई जा सकती है।

असंतृप्त हाइड्रोकार्बन की प्राप्ति के लिए विहाइड्रोजनीकरण आवश्यक है। पैराफीन हाइड्रोकार्बनों का विहाइड्रोजनीकरण अणुभार की वृद्धि से घटता जाता है। पर उत्प्रेरकों की उपस्थिति में विहाइड्रोजनीकरण के वेग को बढ़ाकर अधिक मात्रा में ओलिफिन प्राप्त कर सकते हैं। इससे अपेक्षया कम समय में अधिक ओलिफिन और हाइड्रोजन प्राप्त होते हैं। यह रीति व्यापार के लिए हाइड्रोजन प्राप्त करने में भी उपयुक्त हो सकती है।

अबतक भंजन में जो उत्प्रेरक इस उद्देश्य से उपयुक्त हुए हैं, उनमें सक्रियित अल्यूमिना, क्रोमियम आक्साइड और इसी प्रकार के अन्य पदार्थ प्रमुख हैं। इन उत्प्रेरकों की सक्रियता उनके तैयार करने के ढंग पर बहुत कुछ निर्भर करती है; क्योंकि सक्रियता अवशोषण गुण पर बहुत अधिक निर्भर करती है। प्रोपेन, नार्मल ब्युटेन और आइसो-ब्युटेन का शुद्ध अल्यूमिना, अल्यूमिना और दो प्रतिशत क्रोमिक आक्साइड, अल्यूमिना और १० से १५ प्रतिशत क्रोमिक आक्साइड की उपस्थिति में भंजन हुआ है तथा विभिन्न ताप पर पर्याप्त मात्रा में ओलिफिन प्राप्त हुए हैं। ईथेन से ६००° से० पर, प्रोपेन से ५५०° से० पर और ब्युटेन से ५००° से० पर महत्तम ओलिफिन प्राप्त हुआ है। और भी अनेक धातुओं के आक्साइड और उनके मिश्रणों का उपयोग हुआ है और उनमें कुछ अच्छे उत्प्रेरक निकले हैं।

ओलिफिन पेट्रोल-सदृश द्रव में परिणत होते हैं। इसका अवलोकन अनेक लोगों ने किया है। उच्च दबाव से तारकोल का बनना कम होता है, अल्प वायु की उपस्थिति से पुरुभाजन शीघ्र आरम्भ होता है। हाइड्रोजन के निकाल लेने से अधिक पेट्रोल बनता है

इत्यादि बातें भी देखी गई हैं। यद्यपि एथिलीन का पुरुभाजन अधिक विस्तार से होता है; पर प्रोपिलीन के पुरुभाजन से जो पेट्रोल प्राप्त होता है, वह मात्रा में अधिक उच्च कोटि का और उसकी औक्टेन-संख्या ऊँची होती है।

पुरुभाजन के साथ-साथ अल्कलीकरण भी होता है। पैराफीन अणु में इससे ओलिफिन जुट जाते हैं, पर यह विशेष परिस्थितियों में ही होता है जिसका उल्लेख अन्यत्र हुआ है। सभी दबाव-भंजन में तापीय पुरुभाजन होता है। इसका सर्वश्रेष्ठ प्रमाण यह है कि दबाव की वृद्धि से भंजित उत्पाद की असंतृप्ति घट जाती है और गैस की मात्रा भी स्पष्टतया कम हो जाती है।

ओलिफिन से पैराफिनीय और नैफ्थिनीय पुरुभाजन द्रव अपेक्षया निम्न ताप और उच्च दबाव पर ही बनते हैं। ताप की वृद्धि और दबाव की कमी से सौरभिक अधिक मात्रा में बनते हैं। अन्तिम परिस्थिति में गैसें जो बनती हैं, वे पैराफिनीय होती हैं।

सामान्य दबाव पर निम्नतर ताप पर जो द्रव पदार्थ प्राप्त होते हैं उनका अध्ययन अनेक लोगों ने किया है। सिलिका-नली में जिसमें ५२ सी० सी० मुक्त स्थान था, प्रति सेकंड १ सी० सी० से कुछ ज्यादा हाइड्रोकार्बन के प्रवाह से निम्नलिखित आँकड़े डंस्टन, हेग और वीलर द्वारा प्राप्त हुए हैं—

हाइड्रोकार्बन	ताप °से०	प्रतिशत भार द्रव बनने का	प्रति १००० घनफुट से गैलन	प्रतिशत पेट्रोल (१७०° से०) द्रव
पैराफिन				
मिथेन	१०५०	८·८	०·५३	५६·३
ईथेन	६००	२१·६	२·५	४८·६
प्रोपेन	८५०	२३·१	३·६	४६·२
ब्युटेन	८५०	२४·५५	५·५	५१·२
ओलिफिन				
एथिलीन	८००	३६·१	३·८	५०·६
प्रोपिलीन	८००	४०·६	६·४	४७·०
१-ब्युटिलीन	७५०	३६·६	८·२	५७·६
२-ब्युटिलीन	७५०	३६·६	८·२	५६·८

इन आँकड़ों से स्पष्ट हो जाता है कि उच्च अणुभारवाले हाइड्रोकार्बनों से द्रव की मात्रा महत्तम प्राप्त होती है। यह भी स्पष्ट है कि अणुभार की वृद्धि से महत्तम लब्धि का ताप गिरता जाता है। इससे जो द्रव प्राप्त होता है उसमें मिथेन से प्राप्त द्रव में ८० प्रतिशत और अन्य गैसों से प्राप्त द्रव में ५० से ६० प्रतिशत बेंज़ीन रहता है। ऐसे द्रव में टोल्विन, स्टाइरीन, मिटा-और पारा-ज़ाइलीन भी रहते हैं। २००° से० से ऊपर क्वथनांकवाले द्रव में नेफ्थलीन, एन्थ्रासीन, फिनैन्थ्रीन और क्राइसीन भी रहते हैं। फ्रे और हेप्प ने मिश्र गैसों पर प्रयोग किया था। ऐसी गैसों में मिथेन, प्रोपेन और ब्युटेन के क्रमशः १८·६, ४४·७

और ३६'७ प्रतिशत थे। ऐसी मिश्र गैस से निम्न लिखित परिस्थितियों में १२ से १४ प्रतिशत वाष्पशील तेल प्राप्त हुआ था—

ताप—सेन्टीग्रेड डिग्री में	समय—मिनट में
१०५०	०'०००५
६५०	०'००४
८५०	०'०५
७५०	१'०
७००	४'०

८५०° से० पर ताप-शोषक अन्त्यंशन ०'००२५ मिनट में समाप्त हो जाता है और इस बीच प्रोपेन और ब्युटेन लुप्त हो जाते और प्रोपिलीन तथा ब्युटिलीन की मात्रा महत्तम होती है। इसके बाद ताप-क्षेपक पुरुभाजन शुरू होकर प्रोपिलीन और ब्युटिलीन द्रव में परिणत हो जाते हैं और एथिलीन की मात्रा क्रमशः कम होती जाती है। इसका पूर्णतया लोप नहीं होता। क्योंकि एथिलीन और हाइड्रोजन एक ओर और ईथेन दूसरी ओर के बीच साम्य स्थापित हो जाता है।

$$\text{ईथेन} \rightleftharpoons \text{एथिलीन} + \text{हाइड्रोजन}$$

समय की वृद्धि से वाष्पशील उत्पाद की मात्रा घटती और तारकोल की मात्रा बढ़ती है। दबाव में पुरुभाजन का वेग बढ़ जाता है, पर साथ-ही-साथ ओलिफीन का हाइड्रोजनीकरण भी होता है। इससे अन्तिम परिणाम में अधिक फर्क नहीं पड़ता। दबाव से सौरभीकरण की मात्रा भी बढ़ जाती है।

अनेक पैराफिनों के द्वारा प्रमाणित हुआ है कि उत्प्रेरकों की उपस्थिति में हाइड्रोजन निकलता और उससे चक्र बनते हैं। यह परिवर्त्तन वायुमण्डल के दबाव पर ३००° से० से ऊपर ताप पर होता है। पर इस ताप पर भंजन भी हो सकता है। ऐसे उत्प्रेरकों में अनेक धातु और धातुओं के आक्साइड हैं। क्रोमियम और वेनेडियम आक्साइड, नवजात अलूमिनियम क्लोराइड, अलूमिना पर अवकृत निकेल अच्छे उत्प्रेरक सिद्ध हुए हैं। एक बार में १८ से २० सेकंड में नार्मल हेक्सेन, हेप्टेन और आक्टेन से ५० से ६० प्रतिशत बेंज़ीन, टोल्विन और ज़ाइलिन क्रमशः प्राप्त हुए हैं। पुनश्चक्रण से ६० प्रतिशत तक प्राप्त हो सकता है। इस क्रिया में हाइड्रोजन भी शुद्ध रूप में प्राप्त होता है।

ओलिफिनों का भी सौरभीकरण होता है। ऐसे परिवर्त्तन का वेग कम होता है और उत्प्रेरकों का जीवन अल्प होता है। इसके लिए उच्च अधिशोषण-क्षमता आवश्यक है। भंजन से कुछ तारकोल बनने के कारण उत्प्रेरकों पर तारकोल का अच्छादन पड़ जाता है। यदि गैसों में हाइड्रोजन का बाहुल्य हो तो उत्प्रेरकों को कुछ सीमा तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

पुरुभाजन

केवल ऊष्मा से ओलिफिन का पुरुभाजन हो जाता है; पर सामान्य गैसों में ओलिफिन इतना कम रहता है कि उससे पुरुभाज अधिक नहीं बनता और इससे ऐसी गैसों से पेट्रोल बनाना सस्ता नहीं पड़ता। भंजन से संतृप्त हाइड्रोकार्बनों को ओलिफिन में परिणत कर सकें

तो उससे पेट्रोल की मात्रा बहुत कुछ बढ़ाई जा सकती है और तब इस विधि को सस्ता बनाया जा सकता है।

इसके लिए दो कार्यों की आवश्यकता होती है। एक भंजन और दूसरा पुरुभाजन। दोनों कार्य अलग-अलग चल सकते हैं अथवा साथ-साथ। दोनों का साथ-साथ चलना अधिक सुविधाजनक होता है। बड़ी मात्रा में भी इस कार्य को सरलता से सम्पन्न किया जा सकता है। इसके लिए दो से चार कार्बनवाली गैसों की, जिनमें असंतृप्त अथवा संतृप्त दोनों प्रकार के हाइड्रोकार्बन हों, आवश्यकता होती है। इस कार्य का सम्पादन ९५० से ११००° फ० पर और १००० से ३००० पाउण्ड दबाव पर होता है। साधारणतया यह कार्य ६० सेकेंड में सम्पन्न होता है। अधिक उपयुक्त गैसें तीन और चार कार्बनवाली गैसें हैं। इसका ६० प्रतिशत तक परिवर्त्तित हो जाता है। इससे जो पेट्रोल प्राप्त होता है, उसकी ऑक्टेन-संख्या ८० तक रह सकती है। यदि गैसों में ओलिफिन की मात्रा कम हो तो उससे प्राप्त पेट्रोल में पैराफिन की मात्रा अधिक रहती है। सम्भवतः इससे अल्कलीकरण अधिक होने से पुरुभाजन कम होता है।

पुरुभाजन और भंजन अलग-अलग भी हो सकता है। तीन और चार कार्बनवाली गैसों को एक कुण्डली में पम्प करते हैं। कुण्डली का ताप १०००° फ० रहता है। गैसों का दबाव ६०० से ८०० पाउण्ड रहता है। ऐसी दशा में ओलिफिन द्रव पुरुभाज में परिणत हो जाता है। यहाँ ६० से ७० प्रतिशत गैसें परिवर्त्तित हो जाती हैं। कुण्डली से निकले उत्पाद को ठंडी गैसों से ठंडा करते हैं। बची गैसों को फिर ५० से ७० पाउण्ड दबाव और लगभग १३००° फ० पर भंजित करते हैं। इससे ऐसा द्रव प्राप्त होता है जिसमें सौरभिकों की मात्रा अधिक रहती है। इससे निकली गैसों में ओलिफिन की मात्रा अधिक रहती है। इस गैस को एक तीसरी कुण्डली में ले जाकर उसका पुरुभाजन करते हैं।

द्रव की मात्रा गैस की प्रकृति और कार्य की परिस्थिति पर निर्भर करती है। प्रति १००० घन फुट गैसों से २ से १२ गैलन द्रव प्राप्त होता है। इसमें कुछ तारकोल भी बनता है। इसमें कुछ ऐसी भी गैसें बनती हैं, जिनका अणुभार बहुत नीचा होता है और जिनका पुरुभाजन नहीं होता। प्रत्येक कारखाने में इन छोटे अणुभारवाली गैसों के निकालने का प्रबन्ध रहता है।

उत्प्रेरकों की उपस्थिति में पुरुभाजन निम्न ताप पर होता है। इसमें कम दबाव से भी काम चल जाता है; पर इससे द्रव की मात्रा कम प्राप्त होती है; क्योंकि इसमें केवल ओलिफिन नहीं उपयुक्त होते हैं। इस काम के लिए जो उत्प्रेरक महत्त्व के हैं, उनमें फास्फरिक अम्ल और सलफ्यूरिक अम्ल प्रमुख हैं। साधारणतया यही उपयुक्त होते हैं। पहले की क्रिया मन्द होती है; पर इसमें गौण क्रियाएँ बड़ी अल्प होती हैं। इसके लिए झाँवें पर अर्थो-फास्फरिक अम्ल डाल कर २५०° से० पर पकाते हैं। इसका क्षय कम होता है, पर यदि क्षय हो तो फिर जलाकर उसको पुनर्जीवित कर सकते हैं। इस काम के लिए यदि गैसों में ईथेन, प्रोपेन, ब्युटेन और एथिलीन, प्रोपिलीन और ब्युटीन हो तो अच्छा होता है। ऐसे मिश्रण के लिए ४०० से ४५०° फ० और १५० से २०० पाउण्ड दबाव पर्याप्त है।

सलफ्यूरिक अम्ल से भी मन्दतर परिस्थिति और नियंत्रण के साथ पुरुभाजन होता है। इस विधि का व्यापार में उपयोग होता है। यहाँ ६० से ६५ प्रतिशत सलफ्यूरिक अम्ल में

सामान्य ताप पर आइसोब्युटीन अवशोषित हो जाता है। इसी परिस्थिति में नार्मल ब्युटीन अवशोषित नहीं होता। इस अवशोषित आइसोब्युटीन को गरम करनेवाली कुण्डली में पम्प करते हैं। इससे इसका ताप लगभग १००° से० तक उठ जाता है। इससे ४ से १ के अनुपात में द्विभाज और त्रिभाज का मिश्रण प्राप्त होता है। यदि कोई आइसो-ब्युटीन बच जाय तो उसे फिर अम्ल में अवशोषित कर उसका पुरुभाजन करते हैं। द्विभाज की ऑक्टेन-संख्या ८६ है और हाइड्रोजनीकरण से यह आइसो-ऑक्टेन में परिणत हो जाता है। त्रिभाज के हाइड्रोजनीकरण से सशाख डोडिकेन बनता है।

यदि अवशोषण उसी ताप पर किया जाय जिस पर पुरुभाजन होता है, तो एक साथ ही पुरुभाज प्राप्त होता है। पर ऐसे पुरुभाज की ऑक्टेन-संख्या अपेक्षया कम होती है।

कोक

कच्चे तेल के आसवन से कोक भी प्राप्त हो सकता है। कोक की प्राप्ति के लिए जब आसवन किया जाता है, तब कोक के अतिरिक्त गैस और द्रव तेल भी प्राप्त होते हैं। ये गैसें वैसी ही होती हैं जैसी सामान्य भंजन से प्राप्त होती हैं। इसमें १० से १५ प्रतिशत ओलिफिन और कच्चे तेल में गन्धक की मात्रा के अनुकूल हाइड्रोजन सल्फाइड बनते हैं। द्रव तेल में अल्प पेट्रोल होता है और शेष गैस-तेल और स्नेहक तेल होते हैं। इन तेलों का भी भंजन हो सकता है। इसमें कुछ और पदार्थ प्राप्त होते हैं जो बड़े चिपकनेवाले, बहुत श्याम और ठंडे में अर्द्ध ठोस होते हैं। इसे कोयले के चूर्ण को बाँधकर छोटी-छोटी ईंटें—इष्टिकाएँ—बनाने में उपयुक्त कर सकते हैं। इसमें क्या रहता है, इसका ठीक-ठीक पता नहीं; पर ऐसा समझा जाता है कि क्राइसीन और पिसीन सदृश सौरभिक पदार्थ इसमें रहते हैं। यह अंश आसवन में अन्त में निकलता है। इसके आसुत होने के समय गैस निकलने की मात्रा बढ़ जाती है और गैस में हाइड्रोजन सल्फाइड, कार्बन मनाक्साइड और कार्बन डायक्साइड की मात्रा में भी वृद्धि होती है। ऐसा समझा जाता है कि इस दशा में बड़े उच्च अणुभारवाले हाइड्रोकार्बनों के साथ-साथ रेज़िन और अस्फाल्ट पदार्थों का भी विच्छेदन होता है। यहाँ कितना भंजन होता है, उसका ज्ञान हमें नहीं है; पर अवश्य ही भंजन बहुत अल्प होता है। भभके के कुछ इंचों की दूरी पर उसका ताप ४५०° से० के लगभग देखा गया है। ऐसे कच्चे तेल के अवशेष के एक नमूने के आसवन से निम्नलिखित अंश प्राप्त हुए थे। इस नमूने का विशिष्ट भार ०·६४ था।

गैस	५ प्रतिशत
पेट्रोल	२० ,,
गैस-तेल	६० से ७० ,,
कोक	१० से १५ ,,

भंजित अवशेष से पेट्रोल की मात्रा कम प्राप्त होती है, यद्यपि कोक की मात्रा प्रायः इसी के बराबर प्राप्त होती है। कुण्डली से निकले उत्पाद का ताप ६००° फ० और वाष्प का ताप ७५० से ८००° फ० रहता है। कोक में राख नहीं रहती। वाष्पशील अंश की मात्रा १० प्रतिशत के लगभग रहती है।

गैस-उत्पादन

पेट्रोलियम तेल से गैसें बनती हैं। जहाँ कोयला प्राप्त न हो और अधिक गैस की आवश्यकता न हो वहाँ तेल से गैसें प्राप्त होती हैं। रसायनशाला में इसी रीति से गैस प्राप्त

होकर गरम करने के लिए उपयुक्त होती है। तेल से गैस प्राप्त करने की रीति सरल और प्रायः एक-सी है। एक कक्ष या भभके को ७००° से० तक गरम कर उसपर तेल टपकाते या छिड़कते हैं। ऊष्मा से तेल का विच्छेदन हो, उसका प्रायः ८५ प्रतिशत गैसों में परिणत हो जाता है। ऐसी बनी गैस एक दूसरे कक्ष या भभके में जाती है जहाँ उसका ताप कुछ और बढ़ जाता है और गैस वहाँ अधिक समय तक रहती है। इस रीति को 'स्थायीकरण' विधि कहते हैं, और इससे भंजन परिपूर्ण हो जाता है। इससे कम अणुभार के द्रव हाइड्रो-कार्बन गैस-हाइड्रोकार्बन में बदल जाते हैं। इस प्रकार की बनी गैसों को निम्नलिखित वर्गों में विभक्त कर सकते हैं—

(१) शुद्ध तेल-गैस,
(२) तेल-उत्पादक गैस,
(३) कारब्युरेटेड जल-गैस,
(४) समस्त-तेल जल-गैस।

शुद्ध तेल-गैस तैयार करने में बाहर से गरम किये ढालुवें लोहे के भभके में तेल को छिड़कते हैं। इससे भंजन और अति-तापन दोनों होते हैं। गैस को घर्ष-धावन और शोधन कर बेलन में दबाव में रखकर काम में लाते हैं। ऐसी गैस का औसत-संघटन इस प्रकार होता है—

हाइड्रोजन	१२·५ प्रतिशत
असंतृप्त हाइड्रोकार्बन	३५·५ ,,
संतृप्त हाइड्रोकार्बन	४५·५ ,,
कार्बन डायक्साइड	०·७ ,,
कार्बन मनाक्साइड	०·६ ,,
ऑक्सिजन	२·० ,,
नाइट्रोजन	३·२ ,,

ऐसी गैस का ऊष्मा-मान प्रति घनफुट १४०० से १५०० ब्रिटिश ऊष्मा-मात्रक है। १०० गैलन गैस-तेल से ७००० से ८००० घनफुट गैस, २० से २५ गैलन भारी तारकोल, १५ से २० गैलन हलका तारकोल और ३·५ गैलन हलका पेट्रोल प्राप्त होते हैं।

तेल-उत्पादक गैस में गैस के साथ वायु का तथा नाइट्रोजन और दहन का उत्पाद मिला रहता है। यह गैस ऊष्मासह-अन्तर्लिप्त भभके में तैयार होता है। तेल इसमें छिड़का जाता है और साथ-साथ वायु प्रविष्ट करती है। पर्याप्त तेल जलाकर भभके को गरम रखा जाता है और शेष तेल गैस में भंजित होता है। इससे ८० प्रतिशत गैस में और ६ प्रतिशत तारकोल में तेल परिणत हो जाता है। गैस का ब्रिटिश-ऊष्मा-मात्रक ३०० से ५०० रहता है। ३·७ गैलन तेल से ४५० ब्रिटिश-ऊष्मा-मात्रक वाली १००० घनफुट गैस प्राप्त होती है। तेल का गंधक सल्फर डायक्साइड के रूप में निकलता है। ऐसी गैस में विभिन्न गैसें इस प्रकार रहती हैं—

	प्रतिशत
असंतृप्त हाइड्रोकार्बन	१४·७
संतृप्त हाइड्रोकार्बन	७·८

	प्रतिशत
कार्बन डायक्साइड	६.१
कार्बन मनाक्साइड	४.६
हाइड्रोजन	१.७
ऑक्सिजन	०.१
नाइट्रोजन	६३.२

ये आँकड़े डेटन (Dayton)-विधि से प्राप्त गैस के हैं। हैकोल-ज़िविस्की (Hakol-Zwicky)-विधि से प्राप्त गैस इससे कुछ भिन्न होती है, उसका ब्रिटिश ऊष्मा-मात्रक कम, १५० से २००, होता है; पर प्रति गैलन तेल से ६४० घनफुट गैस प्राप्त होती है। इस गैस का संघटन इस प्रकार रहता है—

	प्रतिशत
मिथेन	५.०
असंतृप्त हाइड्रोकार्बन	२.७
हाइड्रोजन	९.३
कार्बन डायक्साइड	३.८
कार्बन मनाक्साइड	१७.०
नाइट्रोजन	६२.२

उत्तापदीप्त कोक पर भाप के प्रवाह से जल-गैस बनती है। यहाँ उच्च ताप पर कार्बन पर जल-वाष्प की क्रिया से कार्बन मनॉक्साइड और हाइड्रोजन बनते हैं। यह गैस अदीप्त ज्वाला के साथ जलती है और इसका ब्रिटिश

$$C + H_2O = CO + H_2$$
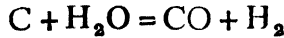
ऊष्मा-मात्रक ३०० होता है। इस गैस का तापन-मान बढ़ाने और दीप्ति के साथ जलाने के लिए इसमें थोड़ी तेल-गैस मिला देते हैं। ऐसा करने के लिए जनित्र से जल-गैस को एक कारब्युरेटर या ईंट से भरे कक्ष में ले जाते हैं। यह कारब्युरेटर या कक्ष गरम रखा जाता है। जो वायु जनित्र को गरम करती है, वही वायु इसे भी गरम करती है। गैस के प्रवाह में कारब्युरेटर के शिखर से गैस-तेल छिड़का जाता है। तैल-वाष्प और जल-गैस तब एक दूसरे कक्ष में प्रविष्ट करती है, जहाँ ईंटें भरी रहती हैं। यह गैसों का 'स्थायीकरण' होकर गैस प्राप्त होती है। जल-गैस जनित्र का ताप ६४०° से०, कारब्युरेटर का ताप ७१०° से० और स्थायीकरण कक्ष का ताप ७३५° से० रहता है।

ऐसी गैस का ब्रिटिश उष्मा-मात्रक ६०० के लगभग रहता है और इसके औसत संघटन निम्नलिखित हैं—

	प्रतिशत
हाइड्रोजन	३१.४
मिथेन	१६.८
ईथेन	०.३
कार्बन डायक्साइड	३.७
कार्बन मनॉक्साइड	३०.६

	प्रतिशत
ऑक्सिजन	०.३
नाइट्रोजन	२.१
प्रभासक	१४.८

गैस-तेल के स्थान में आज ईंधन-तेल और भंजन-तारकोल उपयुक्त होते हैं। इससे गैस के संघटन में थोड़ा अन्तर अवश्य आ जाता है।

समस्त तेल जल-गैस के उत्पादन में दो कार्य एक साथ होते हैं। गैस-तेल को ईंट भरे उष्ण कक्ष में भाप द्वारा कणीकरण करते हैं। यह कक्ष तेल बर्नर द्वारा गरम किया जाता है। उष्ण कक्ष के ताप पर भाप का ऑक्सिजन तेल के कार्बन द्वारा मिलकर कार्बन मनॉक्साइड बनता है और हाइड्रोजन मुक्त होता है। इस गैस को एक दूसरे जनित्र में ले जाकर उसपर तेल छिड़कते हैं। इससे गैस में दाह्य पदार्थों की मात्रा बढ़ जाती है। कक्ष और जनित्र को गरम रखने में समस्त तेल का प्रायः १७ प्रतिशत जल जाता है। इस गैस का ब्रिटिश ऊष्मा-मात्रक प्रतिघन फुट ५०० से ७०० होता है।

ऐसी गैस का संघटन इस प्रकार रहता है—

हाइड्रोजन	३६.७८
मिथेन	३४.६४
कार्बन मनॉक्साइड	९.२१
कार्बन डायक्साइड	२.६२
ऑक्सिजन	०.१६
नाइट्रोजन	६.५८
प्रभासक	७.०१

यहाँ भारी तेल भी उपयुक्त हो सकता है। ६ गैलन ईंधन-तेल से ५०० ब्रिटिश उष्मा-मात्रक की १००० घनफुट गैस प्राप्त होती है।

पेट्रोलियम तेल में कुछ-न-कुछ गंधक रहता है। अतः यह गंधक गैसों में भी चला जाता है। कुछ गैसों में गन्धक हाइड्रोजन सल्फाइड और कार्बन बाइ-सल्फाइड के रूप में रहता है और कुछ में यह सल्फर डायक्साइड के रूप में रहता है। इस गंधक को गैस से निकाल डालना आवश्यक है। हाइड्रोजन सल्फाइड की मात्रा १००० लिटर में ०.४ से ४.४ भाग, कार्बन बाइ-सल्फाइड की मात्रा १००० लिटर में ०.०४ से ०.१५ भाग रहती है।

गैस बनाने के लिए जो ताप उपयुक्त होता है, वह भंजन के ताप से उच्चतर होता है। इसमें गैसीय हाइड्रोकार्बन वैसे ही बनते हैं जैसे भंजन में बनते हैं। ताप की वृद्धि और दबाव की कमी से पेट्रोल की मात्रा में विभिन्नता होती है। गैस निर्माण में तेल का ८० प्रतिशत गैस में परिणत हो जाता है जब कि भंजन से पेट्रोल के निर्माण में तेल का केवल १० से १५ प्रतिशत गैस में परिणत होता है। दोनों में एक ही प्रकार के पदार्थ बनते हैं; पर उनकी मात्रा विभिन्न होती है। कौन तेल गैस बनाने के लिए अधिक उपयुक्त है, इसका अनुसन्धान बहुत कुछ हुआ है। तेल के संघटन का ज्ञान प्राप्त कर और गैस बनाकर ही निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि कौन तेल इसके लिए अधिक उपयुक्त है। तेल के घनत्व, क्वथनांक और वर्तन-पृथक्करण से भी इसका ज्ञान हो सकता है।

तेरहवाँ अध्याय

पेट्रोलियम का परीक्षण

जब किसी वस्तु की परीक्षा करनी होती है तब उसका सारा-का-सारा पदार्थ परीक्षा के लिए नहीं इस्तेमाल हो सकता। उसका बहुत थोड़ा अंश ही निकालकर उसकी परीक्षा होती है और उसके परिणाम से सारे पदार्थ की प्रकृति का अनुमान लगाया जाता है। इस प्रकार की परीक्षा के लिए हमें पदार्थों के ढेर से नमूना निकालना पड़ता है। नमूना निकालने में बड़ी सावधानी की आवश्यकता होती है; क्योंकि यदि नमूना ठीक-ठीक नहीं निकाला गया है तो वह सारे पदार्थ की प्रकृति का ठीक-ठीक पता नहीं बता सकता।

नमूना निकालने के लिए पेट्रोलियम को निम्नलिखित चार श्रेणियों में विभक्त कर सकते हैं—

१. द्रव पेट्रोलियम

२. अर्ध-द्रव पेट्रोलियम

३. कोमल, ठोस और अर्ध-ठोस पेट्रोलियम

४. ठोस पेट्रोलियम

पेट्रोलियम भिन्न-भिन्न पात्रों में रखे जाते हैं। पेट्रोलियम रखने के लिए साधारणतया जो पात्र उपयुक्त होते हैं, उनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं।

१. टिन या कनस्टर

२. पीपा या बैरेल

३. टैंक गाड़ी या टैंक ट्रक

४. बोझ ढोनेवाली जहाज-टंकियाँ

५. नल

६. थैला

७. छोटी-छोटी टिकिया

८. पिंड या बड़े-बड़े टुकड़े

इन पात्रों से पदार्थ का औसत नमूना निकालना चाहिए। औसत नमूना निकालना सरल नहीं है। यह कुछ कठिन काम है। इसमें अनुभव की आवश्यकता पड़ती है। अनुभवी व्यक्ति ही औसत नमूना निकालने में समर्थ होता है।

यदि पदार्थ द्रव है तो उसे खूब हिला-डुलाकर स्थिर होने से पहले बोतल डालकर ऊपर-नीचे कई बार करके नमूना निकालना चाहिए। यदि द्रव को ऐसा हिलाना-डुलाना सम्भव न हो तो पात्र के तीन तल को गहराई से नमूना निकालकर परीक्षण के लिए उपयुक्त करना चाहिए।

यहाँ एक नमूना ऊपर के तल से निकालना चाहिए। ऊपर का तल प्रायः १० प्रतिशत तल की गहराई का तल होता है। दूसरा नमूना मध्य भाग से निकालना चाहिए और तीसरा नमूना पेंदे से १० प्रतिशत की ऊँचाई के भाग से लेना चाहिए। इन तीन नमूनों में ऊपर के तल के नमूने का एक भाग, मध्य के तल के नमूने का ३ भाग और निचले तल के नमूने का एक भाग मिलाकर उसकी जाँच करनी चाहिए।

जिस पात्र में नमूना रखा जाय, वह पात्र बिलकुल साफ होना चाहिए। यदि नमूने को हाथ से छूना पड़े तो हाथ बिलकुल साफ होना चाहिए। यदि आवश्यक हो तो साफ दस्ताने का उपयोग कर सकते हैं।

नमूना निकालने के बाद पात्र पर नमूने की संख्या, जिसका नमूना निकाला उसका नाम, नमूना निकालने का समय, जिस पात्र से नमूना निकला है उसका वर्णन और उल्लेख-चिह्न अथवा संख्या स्पष्टतया लिखी रहनी चाहिए। नमूना ले लेने के बाद पात्र को तुरत बन्द कर देना चाहिए, ताकि उसमें अन्य कोई पदार्थ प्रविष्ट कर उसे दूषित न कर सके। बोतल का काग साफ रहना चाहिए। उसमें छेद न रहना चाहिए। काग पर मोम नहीं डालना चाहिए। यदि नमूने पर प्रकाश का प्रभाव पड़ने की सम्भावना हो तो उसे रंगीन बोतल में रखना आवश्यक है। बोतल को कागज या कपड़े से लपेटकर भी प्रकाश से बचाया जा सकता है।

यदि नमूना वाष्पशील है तो उसे ऐसे पात्र में रखना चाहिए जो तुरत वायुरुद्ध हो सके।

यदि पात्रों अथवा गठरी की संख्या बहुत अधिक है, तो कितना नमूना निकालना चाहिए, इसका ज्ञान निम्नलिखित तालिका से होता है—

पात्र या गठरी की संख्या	नमूने की संख्या
१ से २५	१
२६ से ५०	२
५१ से ७५	३
७६ से १००	४
१०१ से २००	५-६
२०१ से ३००	७-८
३०१ से ४००	९-१०
४०१ से ५००	११-१२
५०१ से ६००	१३
६०१ से ७००	१४
७०१ से ८००	१५
८०१ से ९००	१६
९०१ से १०००	१७
१००१ से २०००	१८-२५
२००१ से ३०००	२६-३२

पात्र या गठरी की संख्या	नमूने की संख्या
३००१ से ४०००	३३-४०
४००१ से ५०००	४१-४७
५००१ से ६०००	४८-५२
६००१ से ७०००	५३-५७
७००१ से ८०००	५८-६२
८००१ से ९०००	६३-६७
९००१ से १०,०००	६८-७२

यदि गठरी में मोम रखा है तो चार विभिन्न गठरियों से चार पूरा टिकिया लीजिए। प्रत्येक टिकिया को चार भागों में काट दीजिए। प्रत्येक टिकिया के एक-एक भाग को पिघलाकर मिला दीजिए और नमूना प्राप्त कर उसका परीक्षण कीजिए।

यदि पेट्रोलियम द्रव है और किसी पात्र में रखा हुआ है तो 'बोतल-रीति' से नमूना निकालकर उसका परीक्षण करना चाहिए। यह रीति टैंक-कारों, तट-टैंकों और जहाज-टैंकों से नमूना निकालने में उपयुक्त होती है।

इसके लिए बोतल काँच या धातु की होनी चाहिए। उसके मुँह का व्यास १½ इञ्च से बड़ा न रहना चाहिए। बोतल के लिए स्वच्छ काग इस्तेमाल करना चाहिए। बोतल को टैंक में लटकाने के लिए डोरी रहनी चाहिए। ऐसा प्रबन्ध रहना चाहिए कि डोरी की सहायता से बोतल को आवश्यक गहराई तक डालकर काग को निकाल सकें। ऐसी बोतल को पेट्रोलियम के पात्र की आवश्यक गहराई तक डालकर और काग को निकालकर भर लेना चाहिए।

यदि पेट्रोलियम किसी नल में बह रहा है, तो उसके नमूने को प्राप्त करने के लिए एक विशेष प्रकार का उपकरण उपयुक्त होता है। इसको 'ब्लीडर रीति' कहते हैं। इसमें तीन रोधनी टोटियाँ (plug cocks) होती हैं। इन टोटियों को ऐसे खोलते हैं कि प्रत्येक रोधनी से ०'१ प्रतिशत पेट्रोलियम निकलकर इकट्ठा होता है। ऐसे नमूने की मात्रा ४० गैलन से अधिक नहीं होनी चाहिए।

कलछुल-रीति से भी नमूना निकाला जा सकता है। कलछुल-रीति में एक प्याला होता है, जिसमें लम्बी मूठ लगी रहती है। प्याले में प्रायः एक लिटर द्रव अँट सकता है। कलछुल को पेट्रोलियम की धार में डुबाकर समय-समय पर नमूना निकालकर एक साफ पात्र में इकट्ठा करते हैं। इस पात्र को बन्द रखते हैं, उससे समय-समय पर पेट्रोलियम निकालकर उसकी परीक्षा करते हैं।

एक दूसरी रीति से भी नमूना निकाल सकते हैं। इस रीति को 'चौर-रीति' कहते हैं। इससे कनस्टर से, पीपे या बैरेल से अथवा टैंक-कार से नमूना निकाल सकते हैं।

इस रीति से नमूना निकालने के लिए जो पात्र उपयुक्त होता है, उसे 'चौर' कहते हैं। यह एक धातु का बना होता है। इसकी लम्बाई ३६ इंच की और व्यास सवा इंच (१¼) का

होता है। इसके ऊपर दोनों किनारे पर शंक्वाकार ढक्कन होते हैं। छोरों पर ३/८ इंच व्यास का सूराख होता है। नीचे के छोर पर बराबर की दूरी पर ३ पाद होते हैं। ये इतने लम्बे होते हैं कि नीचे का छोर पेंदे से १/८ इंच ऊपर उठा रहता है। ऊपर के छोर की बगल में दो ओर दो वलय होते हैं। इनके द्वारा 'चौर' को पकड़कर उठा सकते हैं।
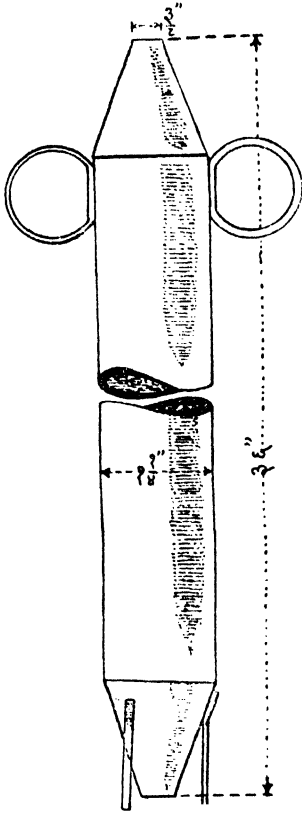
चित्र १०—यह वह उपकरण है, जिससे पेट्रोलियम का नमूना निकालते हैं। इसका नाम 'चौर' है।

धातु के चौर के स्थान में काँच का चौर भी उपयुक्त हो सकता है। अन्य प्रकार के चौर भी बने हैं और उपयुक्त हो सकते हैं। चौर के स्थान में काँच की बोतल का भी इस्तेमाल हो सकता है। जो नली बोतल में आती है, वह छोटी होती है और जो बाहर रहती है और पीपे के पेंदे तक जाती है, वह काफी लम्बी होती है। ये नलियाँ अकलुष इस्पात की अथवा काँच की हो सकती हैं। पात्र की वायु को मुँह से नहीं खींचना चाहिए। उसे पम्प से ही खींचना ठीक होता है। इस उपकरण के द्वारा जिस गहराई से चाहें द्रव को खींचकर निकाल सकते हैं।

नमूने को काँच की सूखी और साफ बोतलों में रखना अच्छा होता है, क्योंकि इससे देख सकते हैं कि द्रव साफ है अथवा मैला, उसमें कोई ठोस अपद्रव्य है अथवा नहीं, इसमें कोई रंग है कि नहीं।

नमूने की बोतलों को अँधेरे में रखना चाहिए। बोतलों में रखकर काग नहीं इस्तेमाल करना चाहिए। यदि सामान्य काग को इस्तेमाल करना हो तो वह नया और अच्छे किस्म का होना चाहिए। यदि सम्भव हो तो काग को टिन या अल्यूमिनियम के पत्तर से मढ़ देना चाहिए ताकि पेट्रोलियम काग के स्पर्श में न आवे। बोतल में नमूना रखने के पहले बोतल को पेट्रोलियम से धो लेना चाहिए। यदि बोतल बिलकुल सूखा हुआ है तो उसे धोने की आवश्यकता नहीं होती।

नमूना निकालने की रीति

चौर के ऊपर के सूराख को खोलकर पात्र में डालना चाहिए। जब चौर भर जाय तब ऊपर के सूराख को बन्द कर चौर को उठा लेना चाहिए और नमूने को बोतल में रखना चाहिए। जब किसी विशिष्ट गहराई से नमूना निकालना होता है, तब चौर के ऊपर के सूराख को बन्द कर पात्र में डुबाते हैं और जब वह आवश्यक गहराई पर आ जाता है तब ऊपर के सूराख को खोलकर चौर को भरकर धीरे-धीरे उठा लेते हैं।

यदि नमूना अर्द्ध-द्रव पदार्थ से निकालना हो तो द्रव को गरम कर अर्द्ध-द्रव को पूर्ण द्रव में बनाकर तब उससे नमूना निकालना चाहिए। यदि अर्द्ध-ठोस पदार्थ से निकालना हो तो उसे पिघलाकर पूर्ण द्रव बनाकर तब नमूना निकालना चाहिए।

यदि मोम से अथवा मोम से कठोर पदार्थ से नमूना निकालना है और यदि वह मोटी तह में रखा हुआ है तो उसे छेदकर मोम के नमूने निकालते हैं। इसके लिए जिस उपकरण का उपयोग करते हैं, उसे औगर (auger) कहते हैं। इसकी लंबाई इस बात पर निर्भर करती है कि तह की मुटाई कितनी है। साधारणतया औगर १६$\frac{3}{4}$ इंच का होता है। इसका आकार इस प्रकार का होता है—

चित्र ११ —इस उपकरण का नाम 'औगर' (auger) है। मोम को इसी उपकरण द्वारा छेदकर विभिन्न गहराई से नमूना निकाला जाता है।

यदि मोम के ऊपर कोई कागज, कपड़ा, टाट या ढक्कन हो तो उसे हटाकर नमूना निकालते हैं। साधारणतः तीन स्थलों से नमूना निकालते हैं—एक बीच से, एक दाएँ से और एक बाएँ से। इस प्रकार प्राप्त नमूने को पूर्णतया मिलाकर तब परीक्षण करना चाहिए।

जल की मात्रा का निर्धारण

सबसे पहले पेट्रोलियम में जल की मात्रा निकालनी चाहिए। साधारणतया पेट्रोलियम में जल की मात्रा अधिक नहीं रहती।

१. जल की मात्रा निकालने के पूर्व पेट्रोलियम के नमूने को स्थिर होने के लिए रख छोड़ना चाहिए अथवा केन्द्रापसारक में रखकर जल को अलग कर लेना चाहिए। जिस ताप पर यह कार्य सम्पन्न हुआ है, उस ताप को लिख लेना चाहिए। यह ताप ऊँचा नहीं रहना चाहिए।

२. नमूने को ठंडे में वायुमण्डल के दबाव से या वायुमण्डल के अधिक दबाव में शुष्क कैलसियम क्लोराइड, अजल सोडियम सल्फेट अथवा प्लास्टर ऑफ पेरिस से बन्द पात्र में छान लेना चाहिए।

३. इस्पात के किसी बन्द पात्र में २००° से० ताप तक अथवा १०० पाउण्ड दबाव तक में गरम करना चाहिए। जितना पेट्रोलियम सुखाना है, उसकी धारिता का प्रायः ३० प्रतिशत अधिक धारिता उस पात्र की रहनी चाहिए जिसमें पेट्रोलियम सुखाना है। इस पात्र में तापमापी और वायुदबावमापी लगा रहना चाहिए। गरम करने के बाद ठंडाकर ऊपर से पेट्रोलियम निकाल लेना चाहिए।

४. यदि जल पायस-रूप में है तो वैद्युत रीति से उसके जल को निकाल सकते हैं। इस रीति में जो उपकरण उपयुक्त होता है, वह काँच का एक लंबा बीकर होता है। बीकर में पीतल का एक प्रमापी बेलन (gauge cylinder) लगा रहता है। यह बीकर की दीवार से ठीक-ठीक सटा हुआ रहता है। इस प्रमापी को फ्लानेल से ढँके रहते हैं। फ्लानेल को पानी से भिंगाकर पानी को निचोड़ कर निकाल देते हैं। फ्लानेल केवल भींगा रहता है। बीकर में तेल डालते हैं और एक एलेक्ट्रोड (विद्युदग्र) रखते हैं। यह

विद्युदग्र पीतल जाली का रम्भाकार बना होता है। प्रेरण-कुंडली (Induction coil) से अंतिम सिरा जोड़कर विद्युत् को प्रवाहित करते हैं। बीच का विद्युदग्र ३० घूर्णन प्रति मिनट की चाल से घूमता रहता है। इसका ताप ४०° से० से ऊपर नहीं जाने देना चाहिए। यदि ताप ऊपर उठे तो विद्युत् का प्रवाह बन्द कर ठंढे होने को छोड़ देना चाहिए। इससे जल के कण जुटकर फ्लानेल से नीचे उतर आते हैं।

अम्लता का निर्धारण

समस्त अम्लता—पेट्रोलियम का कम-से-कम १० ग्राम लेकर उसमें उदासीन ६५ प्रतिशत अल्कोहल की ५० सी० सी० डालते हैं। अब इसे जल-उष्मक पर उबलते विन्दु तक गरम करते हैं। पाँच मिनट तक उबलने के बाद खूब हिला-डुलाकर हटा लेते हैं। इससे पेट्रोलियम का अम्ल अल्कोहल में घुल जाता है।

इसे ४० से ५०° से० तक ठंडाकर उसमें फीनोल्फ्थिलीन के ०·५ प्रतिशत विलयन की एक सी० सी० डालकर दशमांश नार्मल (N/10) पोटैसियम हाइड्राक्साइड के विलयन से शीघ्रता से अनुमापन करते हैं।

इससे जो आँकड़े प्राप्त होते हैं, उनसे नमूने के एक ग्राम में अम्ल के उदासीन करने के लिए पोटैसियम हाइड्राक्साइड के जितने मिलीग्राम की आवश्यकता पड़ती है, वही अंक पेट्रोलियम की समस्त अम्लता है। कभी-कभी तेल के १०० ग्राम में कितना मिलीग्राम पोटैसियम हाइड्राक्साइड लगता है, यह भी निकालते हैं।

अकार्बनिक अम्लता

पेट्रोलियम के १०० ग्राम को एक मिनट तक पृथक्कारी कीप में रखकर उतने ही ग्राम आसुत उदासीन जल के साथ जोरों से हिला-डुलाकर पानी को अलग होने के लिए रख देते हैं। जब पानी बैठ जाता है, तब उसे किसी साफ फ्लास्क में निकालकर मिथाइल औरेंज-सूचक डालकर दशमांश (N/10) पोटैसियम हाइड्राक्साइड से अनुमापन करते हैं। यहाँ भी नमूने के एक ग्राम में अथवा १०० ग्राम में जितना मिलीग्राम पोटैसियम हाइड्राक्साइड लगता है, वही उसकी अकार्बनिक अम्लता होती है।

कार्बनिक अम्लता

समस्त अम्लता से अकार्बनिक अम्लता निकाल लेने पर जो शेष बच जाता है, वह नमूने की कार्बनिक अम्लता है।

एनिलीन विन्दु

एनिलीन विन्दु वह निम्नतम ताप है, जिस ताप पर पेट्रोलियम एनिलीन में सब अनुपात में मिश्र्य है। जल की उपस्थिति से एनिलीन-विन्दु प्रभावित होता है। इस कारण एनिलीन-विन्दु निकालने में पेट्रोलियम पूर्णतया सूखा होना चाहिए।

इसके लिए जो उपकरण उपयुक्त होता है, उसमें एक अन्दर की परख-नली रहती है। वह १५० मिलीमीटर लम्बी और २५ मिलीमीटर चौड़ी रहती है। उसमें काग लगा हुआ

रहता है। काग में तापमापी और विलोडक का एक तार लगा रहता है। यह परखनली एक दूसरी परखनली में रखी रहती है। दूसरी परखनली की लम्बाई १५० मिलीमीटर और चौड़ाई ३० मिली- लीटर रहती है। इसमें जो थर्मामीटर लगा हुआ रहता है, वह एक विशेष प्रकार का थर्मामीटर होता है, जो सीस-काँच का बना और पारे से भरा रहता है। इसका बल्ब एक विशेष प्रकार के काँच का बना होता है। इसपर चिह्न बहुत स्पष्टता से खुदे होते हैं।

इसमें जो एनिलीन उपयुक्त होता है, वह बिलकुल शुद्ध होता है। इसे रात-भर ठोस पोटैसियम हाइड्राक्साइड पर सुखाकर छान लेते हैं और आसुत करके रंगीन (काले या कपिल वर्ण की) बोतल में रखते हैं। आसवन के बाद एक सप्ताह तक इसे इस्तेमाल कर सकते हैं। इसे पोटैसियम हाइड्रोक्साइड पर २४ घण्टे से अधिक समय तक नहीं रखते।

पेट्रोलियम को इस प्रकार सुखाते हैं—चौड़े मुँह की काँच ठेपी की सूखी बोतल में १०० ग्राम सूखा हुआ दानेदार कैलसियम क्लोराइड रखते हैं। उसमें तब २५० सी० सी० पेट्रोलियम डालते हैं। उसमें फिर ठेपी लगाकर बोतल को खूब हिलाकर पानी-भरे पात्र में रखते हैं। बोतल में तेल की ऊँचाई का प्रायः $\frac{3}{4}$ भाग पानी में डूबा रहता है। अब पानी में ५०° से० तक गरम करके इसी ताप पर ७ घण्टे रखते हैं। एक-एक घण्टे पर बोतल को हिलाते रहते हैं। इसके बाद बोतल और उसके पेट्रोलियम को वायुमण्डल के ताप पर ठंढा करते हैं। तब बोतल को खोलकर बुकनर कीप में तेल को छानकर उसकी परीक्षा करते हैं।

एनिलीन-विन्दु निकालने की रीति

इस तेल का ५ सी० सी०, ५ सी० सी० एनिलीन से मिलाकर भीतर की परखनली में रखते हैं। बाहर की परखनली को गैस-ज्वाला से गरम करते हैं। ज्योंही दोनों द्रव पूर्णतया मिल जायँ, उपकरण को ठंढा होने को छोड़ देते हैं और उसे बराबर हिलाते रहते हैं। जिस ताप पर अस्पष्ट (धुँधला) होना शुरू होता है, वही उसका सन्निकट एनिलीन-विन्दु है। एक दूसरे प्रयोग से वास्तविक एनिलीन-विन्दु निकालते हैं।

राख निकालना

पेट्रोलियम की २५० सी० सी० या इससे अधिक मात्रा लेकर उसका प्लैटिनम या सिलिका के पात्र में उद्वाष्पन करते हैं। जो अवशेष बच जाता है, उसे पूर्णतया जलाकर राख बना लेते हैं। गरम कर राख का भार स्थायी बनाते हैं। जब भार स्थायी हो जाय तब वही राख की मात्रा होती है।

पेट्रोलियम का रंग

पेट्रोलियम का रंग जिस उपकरण में निकालते हैं, उसे लोवीबौण्ड टिंटोमीटर या लोवीबौण्ड रंगमापी (Lovibond Tintometer) कहते हैं। यह एक विशेष प्रकार की काँच का बना उपकरण होता है। यहाँ काँच भी विभिन्न आभा की होती है। साधारणतया ये काँच चार प्रकार की होती हैं—१. जल-श्वेत, २. सर्वोत्कृष्ट श्वेत (superfine white), ३. उत्तम श्वेत (prime white) और ४ प्रामाणिक श्वेत (standard white)।

काँच के पात्र को तेल से पूर्णतया भरकर उसका प्रभासन (Illumination) करते हैं। प्रभासन के लिए विशेष प्रकार का एक लम्प उपयुक्त होता है। इस लम्प के प्रकाश में ही पेट्रोलियम के रंग की प्रामाणिक रंगों से तुलना कर पेट्रोलियम के रंग के बारे में निश्चय करते हैं। यदि जल-श्वेत को एक मानते, तो सर्वोत्कृष्ट श्वेत को १'५ और २'०, उत्तम श्वेत को २'२५ से ३'० और प्रामाणिक श्वेत को ३'५ और ४'० मानते हैं।

मोम का रंग निकालने के लिए मोम को गरम जल में पिघलाकर उसे छान लेते हैं। ऐसे मोम को एक कोशा में पूर्णरूप से भरकर तब उसकी परीक्षा करते हैं।
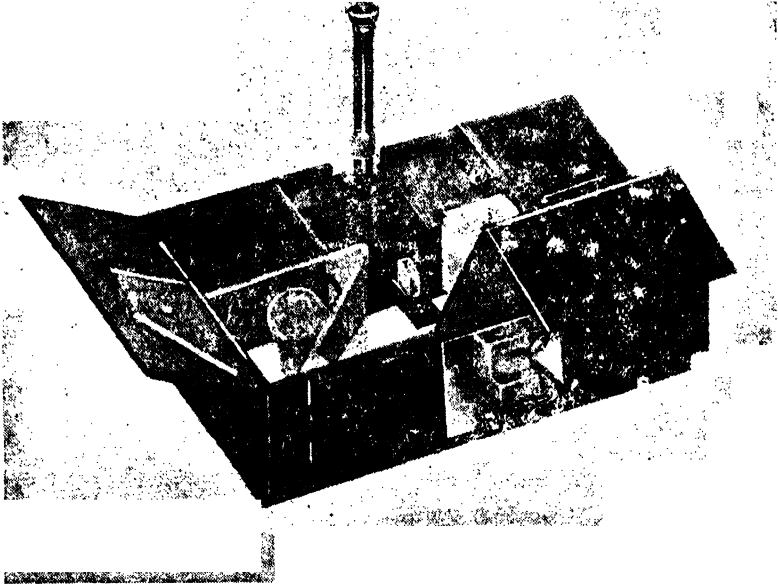
चित्र १२—लार्वाबौण्ड रंगमापी, जिसमें पेट्रोलियम का रंग मापा जाता है। यह रंगमापी वी० डी० एफ० किस्म का है और रंग की गहराई नापने में सामान्यतः उपयुक्त होता है।

स्नेहन तेल के लिए छोटे-छोटे कोशा उपयुक्त होते हैं। ये कोशा $\frac{1}{16}$ इंच से लेकर २ इंच तक के हो सकते हैं। रंगीन काँच भी—लाल, नीला और पीला—उपयुक्त हो सकता है।

श्यानता

श्यानता पेट्रोलियम का एक महत्त्वपूर्ण गुण है। श्यानता की माप के लिए जो उपकरण उपयुक्त होते हैं, उन्हें रेडवूड विस्कोमीटर न० १ और रेडवूड विस्कोमीटर न० २ कहते हैं।

रेडवूड विस्कोमीटर न० १ ऐसे तेल के लिए उपयुक्त होता है, जिसके ५० सी० सी० बहाव का समय २००० सेंकड से अधिक नहीं होता। २००० सेंकड से अधिक समय के बहाव के लिए रेडवूड विस्कोमीटर न० २ का इस्तेमाल होता है। यदि बहाव का समय ३० सेंकेंड से कम है तो ऐसे तेल के लिए रेडवूड विस्कोमीटर का उपयोग नहीं हो सकता। साधारणतया श्यान की माप ७०° फ०, १००° फ०, १४०° फ०, २००° या २५०° फ० पर होती है। जो तेल बहुत गाढ़ा होता है, उसके लिए ही २००° या २५०° फ० का ताप अच्छा होता है।

रेडवूड विस्कोमीटर न० १

इस उपकरण के निम्नांकित भाग होते हैं—१. तेल-कुप्पी (oil-cup), २. जिप (jet), ३. उष्मक (bath), ४. विलोडक (stirrer), ५. वाल्व, ६. तेल-कुप्पी का ढक्कन, ७. स्तम्भ (stand), ८. परदा, ९. लेवल (level), १० तापमापक और ११. फ्लास्क।

तेल-कुप्पी

तेल-कुप्पी एक बेलनाकार पीतल का पात्र है। इसकी दीवार की मुटाई २ से ३ मिलीमीटर रहती है। इसका पेंदा कुछ उभरा हुआ रहता है। कुप्पी के ऊपर का छोर खुला हुआ रहता है। उसका किनारा (rim) समतल होता है। कुप्पी का पेंदा अन्दर से अवतल (concave) होता है, ताकि उसका तेल पूर्णतया सरलता से बहाकर निकाला जा सके। पेंदे और पार्श्व दीवार का जोड़ बिलकुल चिकना और मण्डलाकार रहना चाहिए। उभरे हुए किनारे में चूरी (thread) रहती है और उसका व्यास ४४ मिलीमीटर
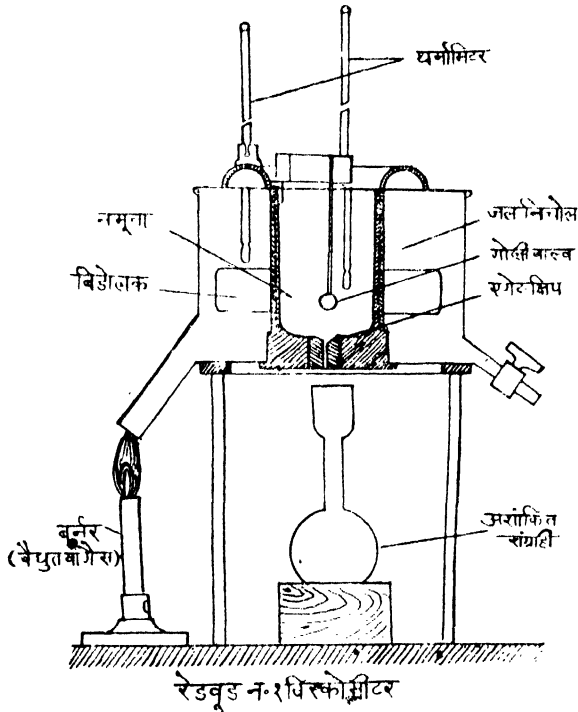
चित्र १३—रेडवूड विस्कोमीटर न० १

का होता है। इसी के सहारे तेल-कुप्पी जल-ऊष्मक पर इस प्रकार रखी जाती है कि जिप के सूराख का ऊपरी भाग ऊष्मक के पेंदे के ऊपरी तल से ४ मिलीमीटर से कम दूरी पर न रहे।

कुप्पी का पेंदा बीच के सूराख की ओर गोपुच्छाकार होता है। किस तल तक कुप्पी में तेल भरा रहना चाहिए, यह एक मजबूत तार से सूचित होता है। यह तार कुप्पी के

पार्श्व में जुटा रहता है। यह तार समकोण में ऊपर उठा रहता है और उसका छोर बहुत पतला होता है। इसका पतला छोर कुप्पी के आभ्यन्तर दीवार से ७ मिलीमीटर की दूरी पर रहता है। इस तेल-कुप्पी का आभ्यन्तर भाग चाँदी से मुलम्मा किया रहता है, ताकि वह तेल से आक्रान्त न हो।

तेल-कुप्पी का आभ्यन्तर व्यास	४६'५	मिलीमीटर
किनारे (rim) से सूराख के शिखर की लम्ब (vertical) दूरी	६६'०	,,
तेल-कुप्पी के बेलनाकार अंश की ऊँचाई	८६'०	,,
सूराख के ऊपर छोर से तेल भरने तक विन्दु की दूरी	८२'६	,,

जिप

जिप एगेट पत्थर का बना रहता है। इसके मध्य का सूराख बहुत यथार्थता से बना होता है और उसपर उच्च कोटि की पालिश चढ़ी हुई रहती है। जिप के ऊपर के छोर में अवतल गड्ढा रहता है, जिसमें एक वाल्व रखा होता है। यह वाल्व तेल के बहाव को बन्द या चालू कर सकता है। इसका निचला छोर उथला होता है, ताकि तेल निकलने के समय तेल उसमें फैले नहीं। जिप का निचला छोर चिपटा होता है। उसका व्यास ३ मिलीमीटर से अधिक नहीं होता। जिप की आभ्यन्तर लंबाई १० मिलीमीटर की और उसका आभ्यन्तर व्यास कम-से-कम १'६२ मिलीमीटर का होता है।

ऊष्मक

ऊष्मक ताँबे की चादर का लगभग १५ सेन्टीमीटर व्यास का और ६'५ मिलीमीटर गहराई का बेलनाकार होता है। यह तेल-कुप्पी को घेरे रहता है, जिसमें पानी निकालने के लिए टोंटी लगी रहती है और गरम करने के लिए पार्श्व-नली। पार्श्व-नली प्रायः ३ सेंटीमीटर व्यास की होती है। यह ऊष्मक में अच्छी तरह जुड़ी रहती है। इसका जोड़ बड़ी सावधानी से चिकनाया गया रहता है। पार्श्वनली के सब जोड़ पक्के जुड़े रहते हैं। ऊष्मक में एक मजबूत पीतल का वलय रहता है जो पेंदे में पक्का जुड़ा हुआ रहता है। इसी पर तेल-कुप्पी रखी रहती है। तेल-कुप्पी और पीतल-वलय उपयुक्त वलयक (वाशर) द्वारा जुटे रहते हैं। बिजली से ऊष्मक के गरम करने का भी प्रबन्ध हो सकता है।

विलोडक

ऊष्मक को प्रक्षुब्ध करने के लिए तेल-कुप्पी के चारों ओर एक बेलनाकार विलोडक रहता है, जिसमें चार फल (vanes) लगे रहते हैं। इसके ऊपर और नीचे के भाग विभिन्न दिशाओं में चक्कर काटते हैं।

वाल्व

तेल-कुप्पी से तेल के बहाव को चालू करने या बन्द करने के लिए धातु की गेंद के वाल्व होते हैं। इस गेंद का व्यास प्रायः ११ मिलीमीटर होता है। यह एक मजबूत तार से जुड़ी रहती है। तार और गेंद दोनों पर चाँदी का मजबूत मुलम्मा किया रहता है। तार का ऊपरी छोर मुड़ा हुआ रहता है। इससे यह एक अंकुश बन जाता है। इस अंकुश से तापमापक स्तम्भ पर एक तार को लटका देता है। इसके लटकने से तेल के बहाव में कोई रुकावट नहीं होती। यह गेंद कूप में ऐसा बैठ जाना चाहिए कि जब कुप्पी में ३००—४०० सेकंड श्यानता का तेल हो तो प्रति मिनट दो बूँद से अधिक तेल नहीं निकले।

तापमापक स्तम्भ

तेल-कुप्पी में तापमापक को लटकाने के लिए एक स्प्रिंगदार स्वज (clip) रहता है। यह स्वज एक लम्ब छड़ पर रखा रहता है।

तेल-कुप्पी का ढक्कन

तेल-कुप्पी को ढकने के लिए पीतल का एक ढक्कन रहता है, जिसमें पकड़ने के लिए एक मूठ लगी रहती है। ढक्कन में तापमापक और तार के लिए आवश्यक छेद रहते हैं।

स्तम्भ

आवश्यक ऊँचाई के लोहे का एक त्रिपाद स्तम्भ रहता है, जिसके तल को ठीक करने के लिए पेंच रहता है। इसी पर ऊष्मक रखा जाता है।

परदा

स्तम्भ में एक परदा लगा रहता है। यह ऊष्मक के नीचे के पार्श्व को ठंडा होने से बचाता है। इसकी उसी समय आवश्यकता होती है जब ऊष्मक का ताप १००° फ० से ऊपर रखने की आवश्यकता होती है। इस परदे के आभ्यन्तर तल पर सफेद पेंट चढ़ा रहता है।

लेवल

पीतल के पट्ट पर मढ़ा हुआ एक वृत्ताकार लेवल आवश्यक होता है।

तापमापक

तेल-कुप्पी के लिए निम्नलिखित प्रकार के तापमापक उपयुक्त हो सकते हैं—
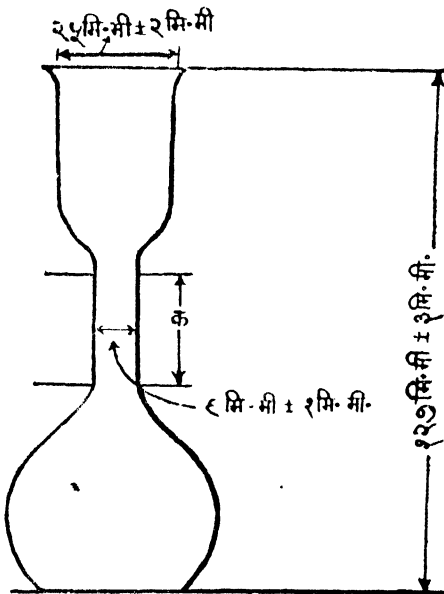
(क) ५८° फ०—७४° फ०
(ख) ९२° फ०— १०८° फ०
(ग) १३०° फ०—१४६° फ०
(घ) १६४° फ०—२१०° फ०
(ङ) २४०° फ०—२५६° फ०
(च) ३०° फ०—१५०° फ०
(छ) १३०° फ०—२६०° फ०

२६०° फ० से ऊपर ताप के लिए कोई भी उपयुक्त तापमापक इस्तेमाल हो सकता है।

फ्लास्क

तेल रखने के लिए ५० सी० सी० का कोलराश फ्लास्क उपयुक्त हो सकता है। इस फ्लास्क का चित्र (चित्र १४) यहाँ दिया हुआ है। इसके विभिन्न अङ्गों की लम्बाई यहाँ दी हुई है।

चित्र १४—कोलराश फ्लास्क

रेडवूड विस्कोमीटर न० २

इसके विभिन्न भाग रेडवूड विस्कोमीटर न० १ से बहुत मिलते-जुलते हैं। इसका आकार न० १ से विभिन्न होता है। इसका चित्र (चित्र १५) यहाँ दिया हुआ है।

विधि

उबलते जल के ऊष्मक में डुबाकर किसी पात्र में पूरा भरकर प्रायः २०० सी० सी० तेल को २१२° फ० पर एक घण्टे तक गरम करते हैं। पात्र में ढीली ठेपी लगी होनी चाहिए। जिस ताप पर श्यानता का निर्धारण करना है, उस ताप से थोड़ा ऊपर के ताप पर तेल को कर देना चाहिए। जब तेल का उपयुक्त ताप पहुँच जाय, तब एक घण्टे के अन्दर उसकी श्यानता का निर्धारण कर लेना चाहिए।

विस्कोमीटर की तेल-कुप्पी को किसी उपयुक्त विलायक, ईथर-बेंजीन, पेट्रोलियम-ईथर
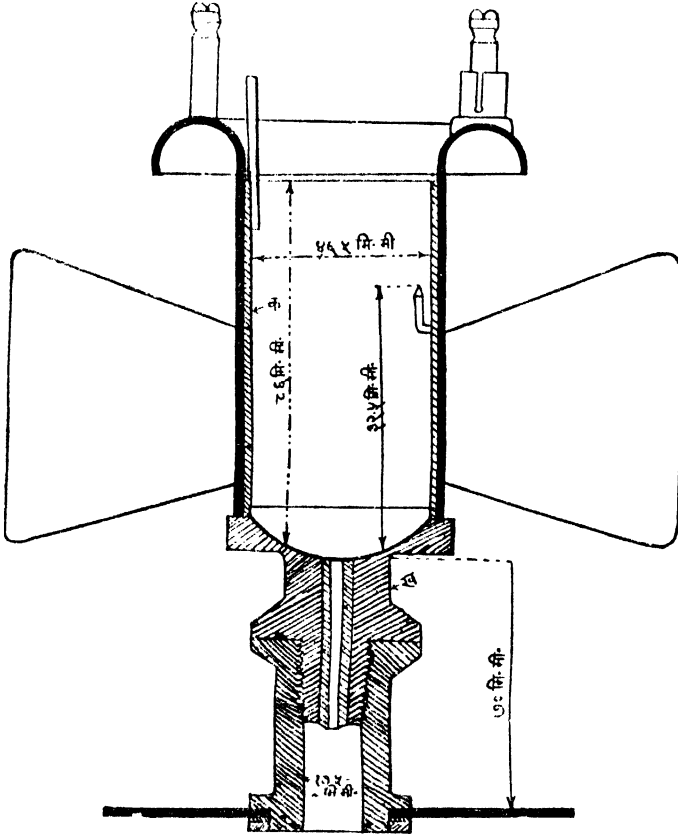
चित्र १५—रेडवूड विस्कोमीटर न० २

इत्यादि में धोकर पूरा सुखा लेना चाहिए ताकि विलायक पूर्णतया दूर हो जाय। तब फ्लास्क में तेल रखकर तल को समतल करके ठीक कर लेना चाहिए।

विस्कोमीटर के ऊष्मक का ताप जिस ताप पर श्यानता निकालनी है, उसके कुछ डिग्री ऊपर रखना चाहिए। २००° फ० तक के लिए जल-ऊष्मक इस्तेमाल हो सकता है। इससे ऊपर के ताप के लिए किसी तेल का उपयोग करना चाहिए, पर ऐसे तेल की श्यानता जितनी कम हो सके, होनी चाहिए।

कुप्पी के सिरे (rim) से कम-से-कम १० मिलीमीटर तक ऊष्मक को जल या तेल से भरना चाहिए और ऊष्मक का ताप ठीक कर लेना चाहिए। कुछ-कुछ समय के अन्तर पर

विलोडक को बहुत धीरे-धीरे घुमाना चाहिए। यदि विलोडक को बराबर घुमाते रहें तो अच्छा होगा।

वाल्व के द्वारा शुरू में तेल को प्रक्षुब्ध करते हैं ; पर परीक्षण के समय तेल को प्रक्षुब्ध करने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

जब तेल का ताप स्थायी हो जाता है, तब तेल के तल को ठीक कर लेते हैं। अधिक तेल को तब तक बहाते हैं, जब तक तेल का समतल विन्दु को ठीक-ठीक छूने न लगे। अब ढक्कन को थोड़ा गरम करके कुप्पी पर रख देते हैं और तब परीक्षण शुरू करते हैं।

स्वच्छ शुष्क प्रामाणिक ५० सी० सी० फ़्लास्क को क्षिप के नीचे रखते हैं। अब वाल्व को उठा लेते और तब घड़ी से समय मापते हैं। घड़ी ऐसी होनी चाहिए कि उससे ०'२ सेकंड की यथार्थ माप की जा सके। फ़्लास्क के अंकित चिह्न तक ज्योंही तेल का तल पहुँचे, घड़ी को बन्द कर लेते हैं और तब तापमापक के ताप को पढ़ते हैं। यदि ताप का परिवर्त्तन १४०° फ० के लिए ±०'२ से अधिक न हो, २००° फ० के लिए ±०'५ से अधिक न हो और २५०° फ० के लिए ±१° से अधिक न हो, तो परिणाम ठीक समझना चाहिए।

परिणाम को इस प्रकार व्यक्त करते हैं—यदि तेल की श्यानता 'श्य' है, 'स', ५० सी० सी० तेल के बहाव का समय (सेकंड में) और 'क' और 'ख' उपकरण के स्थिरांक हैं, तो—

$$\text{श्य} = \text{क स} - \frac{\text{ख}}{\text{स}}$$

यदि स = ४० से ८५ सेकंड, तो क = ०'२६४
ख = १८०
और स = ८५ से २०० सेकंड, तो क = ०'२४७
ख = ६५

ये स्थिरांक ७०° फ० पर परीक्षण से प्राप्त हुए हैं।

सामान्य रीतियों से भी पेट्रोलियम की श्यानता निकाली जा सकती है। इसके लिए सामान्य विस्कोमीटर उपयुक्त हो सकता है। विस्कोमीटर विभिन्न विस्तार के हो सकते हैं। साधारणतया (चित्र न० १६) न१, न२, न३, न४ विस्कोमीटर इस्तेमाल होते हैं। इनके विभिन्न अंग निम्नलिखित विस्तार के होते हैं—

नली	न०	न१	न२	न३	न४
लंबाई सेंटीमीटर	६'०	६'०	७'०	७'०	७'०
आभ्यन्तर व्यास सेंटीमीटर	०'५	०'५	०'४	०'७	०'७
केशिका-नली (ग घ)					
लंबाई सेंटीमीटर	१२'०		१२'०	१०'०	१०'०
आभ्यन्तर व्यास सेंटीमीटर	०'०३७ से ०,०४०		०'०५७ से ०'०६२	०'११० से ०'१२०	० २२ से ०'२४

	नं०	नं१	नं२	नं३	नं४
बल्ब					
आभ्यन्तर व्यास सेंटीमीटर	२'०	२'०	१'६	२'६	३'२
समावेशन सी० सी०	६'५	६'५	५'५	१६'०	२६'०
बल्ब					
समावेशन सी० सी०	०'४	०'४	०'४	१'२	१'४
मुड़ी नली					
आभ्यन्तर व्यास, न्यूनतम सेंटीमीटर	०'५	०'५	०'५	०'७	०'८
नली					
आभ्यन्तर व्यास, सी० सी०	०'५	०'५	०'५	०'७	०'८
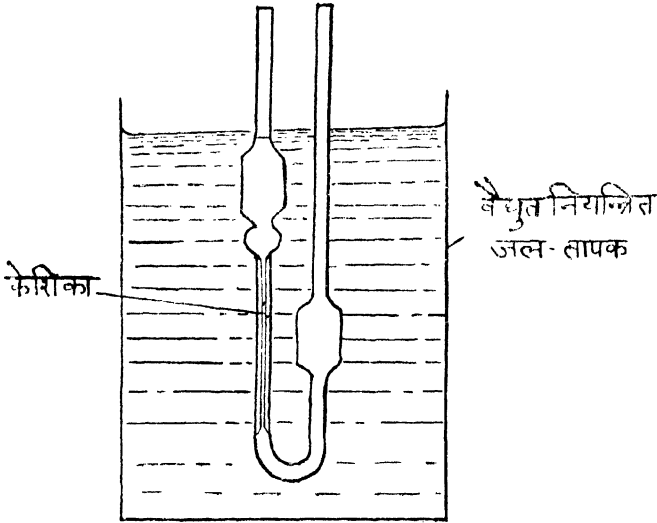
चित्र १६—सामान्य विस्कोमीटर

बल्ब					
न्यूनतम आभ्यन्तर व्यास, सेंटीमीटर	२'०	२'०	१'६	२'६	३'२
न्यूनतम समावेशन, सी० सी०	७'०	७'०	६'०	१८'०	२८'०
लम्ब-दूरी मध्य से	८'०	८'०	५'५	५'५	७'१
लम्ब अंतों के बीच दूरी सेंटीमीटर	१'७ से १'८	१'७ से १'८	१'५	२'०	२'३
G से ऊपर की लंबी दूरी	२'५	२'५	०'३	०'१२	०'१

विधि

प्रयोग के पूर्व विस्कोमीटर को पूर्णतया साफ कर लेना चाहिए। इससे धूल-कण निकल जाते हैं। यदि विस्कोमीटर में कोई द्रव हो तो उसे उपयुक्त विलायक से धोकर दूर कर लेते हैं। अब विस्कोमीटर को पोटैसियम डाइक्रोमेट के ठण्डे संतृप्त विलयन और सान्द्र

सलफ्यूरिक अम्ल के सम आयतन के मिश्रण से भरकर रात-भर रख देते हैं। उसके बाद विस्कोमीटर को धोकर पूर्ण रूप से सुखा लेते हैं।

ताप का नियंत्रण

विस्कोमीटर को किसी द्रव-ऊष्मक में ऐसा निमज्जित करते हैं कि विस्कोमीटर के द्रव का ऊँचा तल द्रव-ऊष्मक के द्रव के तल से न्यूनतम एक सेंटीमीटर की गहराई में हो। ऊष्मक के द्रव को पूर्णतया प्रक्षुब्ध करते रहते हैं। ताप को पर्याप्त समय तक एक निश्चित ताप पर रखते हैं। द्रव के बहाव के समय में ताप का परिवर्त्तन एक प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए। न० 0 विस्कोमीटर के लिए समय १० मिनट से अधिक नहीं लगता और न०४ विस्कोमीटर के लिए प्रायः ३० मिनट से अधिक नहीं लगता। अधिक श्यान द्रव के लिए ताप के नियंत्रण में अधिक यथार्थता की आवश्यकता होती है।

यह आवश्यक है कि जो तापमापक उपयुक्त हो, वह प्रामाणिक हो और उसके संशोधन की ठीक-ठीक जानकारी हो। इसके लिए साधारणतया रेडवुड तेल-कुप्पी तापमापक उपयुक्त होती है।

विस्कोमीटर में तेल भरना

जिस तेल को विस्कोमीटर में भरना होता है, उसमें पानी और निलम्बित पदार्थ नहीं रहना चाहिए। यू-नली विस्कोमीटर को ऐसा भरना चाहिए कि उसमें वायु के बुलबुले न रहें। किसी विशिष्ट ताप पर कम-से-कम १० मिनट और अधिक श्यान द्रवों के लिए ३० मिनट रखने पर उसके तल चिह्न से ०'२ मिलीमीटर से अधिक दूरी पर न रहे।

विस्कोमीटर का तल

विस्कोमीटर की केशिका का तल सीधा खड़ा रहना चाहिए। किसी भी दशा में 1° से अधिक विचलन नहीं होना चाहिए।

प्रेक्षण

द्रव को खींचकर अथवा फूँककर ऊपर चिह्न से प्रायः एक सेंटीमीटर ऊपर कर देना चाहिए। देखना चाहिए कि नली में कोई बाह्य पदार्थ न घुस जाय। अब द्रव को स्वच्छन्दता से बहने देना चाहिए। ऊपर चिह्न से नीचे चिह्न तक अर्धचन्द्राकार तल के गिरने में जितना समय लगे, उसे सावधानी से अंकित कर लेना चाहिए। इसमें सेकंड के पञ्चमांश (१/५) के यथार्थ अंकन का प्रबन्ध रहना चाहिए। तीन पाठ्यांक लेकर उसका औसत अंक निकाल लेना चाहिए। इन पाठ्यांकों में एक प्रतिशत से अधिक का अन्तर नहीं रहना चाहिए।

यदि परिणाम एक न हो तो इसका कारण ताप का अपर्याप्त नियंत्रण, समय का अशुद्ध अंकन या उपकरण की अपर्याप्त सफाई हो सकता है।

विस्कोमीटर के 'के' का निर्धारण

प्रत्येक विस्कोमीटर का अपना-अपना 'के' होता है $K = Vs/t$, जहाँ t, सेकंड में बहाव का समय और Vs सेंटीस्टोक में द्रव की चल-श्यानता (Kinematic viscosity) है। यहाँ 'के' का मान प्रति सेकंड सेंटीस्टोक में निकलता है।

प्रामाणिक पदार्थों की श्यानता के लिए आसुत जल अथवा शर्करा का ४० या ६० प्रतिशत विलयन उपयुक्त करते हैं। न० 0 से न० १ विस्कोमीटर के लिए आसुत जल, न० २ विस्कोमीटर के लिए ४० प्रतिशत चीनी का विलयन और न० ३ विस्कोमीटर के लिए ६०

प्रतिशत चीनी का विलयन और न० ४ विस्कोमीटर के लिए रेंड़ी का तेल उपयुक्त करते हैं।

श्यानता का निर्धारण

यदि बहाव का समय 't' है और विस्कोमीटर का नियतांक 'K' है और चल-श्यानता v है, तो $v = Kt$

और (dynamic) गति श्यानता 'n' निकालने के लिए $n = Vp$ जहाँ V सेंटीस्टोक और p द्रव का घनत्व किसी विशिष्ट ताप पर प्रति सी० सी० ग्राम है। n का मान सेन्टीपायज में होता है।

सारिणी

0° से० से ३०° तक आसुत जल की श्यानता (सेंटी-स्टोक में)

ताप t° से०	घनत्व (ग्राम/सी० सी०)	श्यानता (सेंटी-स्टोक में)
०	०'९९९८६७	१'७९२३
१	०'९९९९२६	१'७३१४
२	०'९९९९६७	१'६७२८
३	०'९९९९९२	१'६१९१
४	१'००००००	१'५६७४
५	०'९९९९९१	१'५१८८
६	०'९९९९६८	१'४७२८
७	०'९९९९२९	१'४२८५
८	०'९९९८७६	१'३८६२
९	०'९९९८०८	१'३४६५
१०	०'९९९७२७	१'३०८१
११	०'९९९६३२	१'२७१८
१२	०'९९९५२४	१'२३६९
१३	०'९९९४०४	१'२०३५
१४	०'९९९२७१	१'१७१७
१५	०'९९९१२६	१'१४१४
१६	०'९९८९७०	१'११२२
१७	०'९९८८०२	१'०८४१
१८	०'९९८६२	१'०५७४
१९	०'९९८४३	१'०३१५
२०	०'९९८२३	१'००६८
२१	०'९९८०२	०'९८२९
२२	०'९९७७९	०'९६००
२३	०'९९७५६	०'९३८१

ताप t° से०	घनत्व (ग्राम/सी० सी०)	श्यानता (सेंटी-स्टोक में)
२४	०'९९७३२	०'९१६७
२५	०'९९७०७	०'८९६३
२६	०'९९६८१	०'८७७५
२७	०'९९६५४	०'८५७५
२८	०'९९६२६	०'८३९१
२९	०'९९५९७	०'८२१३
३०	०'९९५६७	०'८०४२

४० प्रतिशत चीनी का विलयन

(इसके लिए ४० या ६० ग्राम शुद्ध सूखी चीनी को पर्याप्त गरम जल में घुलाकर १०० ग्राम विलयन तैयार कर लेते हैं। अब विलयन को छानकर २५° से० पर उसका घनत्व निर्धारित करते हैं और उत्प्लावित का संशोधन कर लेते हैं।)

२५° से० पर चीनी के विलयन का सेंटी-स्टोक में श्यानता निकालते हैं।

४० प्रतिशत विलयन

घनत्व	श्यानता सेंटी-स्टोक में	घनत्व	श्यानता सेंटी-स्टोक में
१'१७३१५	४'३४२	१'१७४१०	४'४००
१'१७३२०	४'३४५	१'१७४१५	४'४०२
१'१७३२५	४'३४८	१'१७४२०	४'४०५
१'१७३३०	४'३५१	१'१७४२५	४'४०९
१'१७३३५	४'३५४	१'१७४३०	४'४१२
१'१७३४०	४'३५७	१'१७४३५	४'४१५
१'१७३४५	४'३६०	१'१७४४०	४'४१७
१'१७३५०	४'३६३	१'१७४४५	४'४२१
१'१७३५५	४'३६६	१'१७४५०	४'४२४
१'१७३६०	४'३६९	१'१७४५५	४'४२७
१'१७३६५	४'३७२	१'१७४६०	४'४३०
१'१७३७०	४'३७५	१'१७४६५	४'४३३
१'१७३७५	४'३७८	१'१७४७०	४'४३६
१'१७३८०	४'३८१	१'१७४७५	४'४३९
१'१७३८५	४'३८४	१'१७४८०	४'४४२
१'१७३९०	४'३८७	१'१७४८५	४'४४५
१'१७३९५	४'३९०	१'१७४९०	४'४४९
१'१७४००	४'३९३	१'१७४९५	४'४५२
१'१७४०५	४'३९६	१'१७५००	४'४५५

घनत्व	श्यानता	घनत्व	श्यानता
१'१७५०५	४'४५८	१'१७५४०	४'४८०
१'१७५१०	४'४६१	१'१७५४५	४'४८३
१'१७५१५	४'४६४	१'१७५५०	४'४८६
१'१७५२०	४'४६७	१'१७५५५	४'४८९
१'१७५२५	४'४७०	१'१७५६०	४'४९२
१'१७५३०	४'४७४	१'१७५६५	४'४९५
१'१७५३५	४'४७७		

६० प्रतिशत चीनी का विलयन

घनत्व	श्यानता सेंटी-स्टोक में	घनत्व	श्यानता सेंटी-स्टोक में
१'२८२७५	३३'१८	१'२८४००	३४'१८
१'२८२८०	३३'२२	१'२८४०५	३४'२२
१'२८२८५	३३'२५	१'२८४१०	३४'२६
१'२८२९०	३३'२९	१'२८४१५	३४'३१
१'२८२९५	३३'३४	१'२८४२०	३४'३५
१'२८३००	३३'३७	१'२८४२५	३४'३९
१'२८३०५	३३'४१	१'२८४३०	३४'४३
१'२८३१०	३३'४५	१'२८४३५	३४'४८
१'२८३१५	३३'५०	१'२८४४०	३४'५१
१'२८३२०	३३'५३	१'२८४४५	३४'५६
१'२८३२५	३३'५८	१'२८४५०	३४'६०
१'२८३३०	३३'६२	१'२८४५५	३४'६५
१'२८३३५	३३'६६	१'२८४६०	३४'६९
१'२८३४०	३३'७०	१'२८४६५	३४'७३
१'२८३४५	३३'७५	१'२८४७०	३४'७७
१'२८३५०	३३'७७	१'२८४७५	३४'८१
१'२८३५५	३३'८२	१'२८४८०	३४'८५
१'२८३६०	३३'८६	१'२८४८५	३४ ९०
१'२८३६५	३३.९०	१'२८४९०	३४'९५
१'२८३७०	३३'९४	१'२८५००	३५'०३
१'२८३७५	३३'९९	१'२८५०५	३५'०७
१'२८३८०	३४'०२	१'२८५१०	३५'११
१'२८३८५	३४'०७	१'२८५१५	३५'१५
१'२८३९०	३४'११	१'२८५२०	३५'१९
१'२८३९५	३४'१४	१'२८५२५	३५ २४

पेट्रोलियम का ज्वलन-परीक्षण

लम्प और बर्नर—इस परीक्षण के लिए एक विशेष प्रकार का दीप उपयुक्त होता है। इसे 'वेल्श-लम्प' कहते हैं। यह पीतल का बना होता है और शंकु के आकार का होता है। 'ऐडलेक' सेमाफोर लम्प भी इसके लिए उपयुक्त होता है।

बत्ती—इन दीपों के लिए विशेष प्रकार की बत्तियाँ उपयुक्त होती हैं। ये बत्तियाँ सूत की बनी होती हैं। प्रत्येक परीक्षण के लिए नई बत्ती उपयुक्त होती है। उपयुक्त होने के पहले बत्ती को आधा घण्टा १००° से १०५° से० तक सुखा लेते हैं और तब उसे तेल में डुबा लेते हैं।

प्रमापी—ज्वालक की ऊँचाई को यथार्थता से नापने के लिए एक उपयुक्त प्रमापी की आवश्यकता होती है। इसकी चौड़ाई ०·५ इंच होनी चाहिए। यह ज्वाला से प्रायः आधा इंच की दूरी पर रहनी चाहिए। इस प्रमापी का अंशांकन दशांश इंच पर होना चाहिए। प्रमापी का शून्य-चिह्न ज्वालक (बर्नर) के शिखर पर रहना चाहिए। इसे ऐसा रखना चाहिए कि देखकर प्रमापी का अंशांकन पढ़ा जा सके।

विधि—यह परीक्षण ऐसे कमरे में करना चाहिए जिसमें हवा ठीक तरह से आती-जाती हो। वायु के झोंके उसमें नहीं आने चाहिए। दीप को समतल पर रखना चाहिए। इसे दीवार अथवा दूसरे लम्पों से कम-से-कम एक फुट की दूरी पर रहना चाहिए।

परीक्षण शुरू करने के पहले लम्प और बर्नर को पूरा साफ कर लेना चाहिए। उसमें पूर्व के परीक्षण से कजली का लेश भी न लगा रहना चाहिए। तेल की कुप्पी स्वच्छ और सूखी रहनी चाहिए। बत्ती को कैंची से समतल काटना चाहिए, ताकि ज्वाला संमित रहे। लम्प (वेल्श-लम्प) में प्रायः ४४ औंस तेल रहना चाहिए। ऐडलेक-लम्प में ३२ औंस तेल रहता है।

अब बत्ती को जलाते हैं और इतना उठाते हैं कि उससे बड़ी-से-बड़ी ज्वाला प्राप्त हो सके। एक घण्टा जलने के बाद ज्वाला के विस्तार को ०·७ इंच की ऊँचाई पर समंजित करते हैं। यह परीक्षण ७ दिनों तक चलता है। प्रति २४ घण्टे पर प्रेक्षित अंक इस प्रकार लिख लेते हैं—

ज्वाला की ऊँचाई
ज्वाला की स्थिति
बत्ती और बर्नर की स्थिति
कजली की बनावट

परीक्षण के अन्त में कितना तेल जला, औंस में अथवा ग्राम में, लिख लेते हैं। लम्प को प्रयोग के पूर्व और बाद में तौलने से इसका ज्ञान हो जाता है।

ऊष्मीय मान

पेट्रोलियम का ऊष्मीयमान बंब कलरी-मापी में निकालते हैं। इस कलरी-मापी में ऑक्सिजन इस्तेमाल होता है। उसका दबाव ३० वायुमण्डल तक का हो सकता है। इसमें जो तापमापक उपयुक्त होता है, उसका अंशांकन डिग्री का शतांश ($\frac{1}{100}$) भाग का होना चाहिए। ऐसे तापमापक में केवल १२° से ३०° से० रहता है। इसका सबसे निम्नतम

अंक बल्ब से ७५-८० मिलीमीटर की दूरी पर रहना चाहिए। तापमापक की समस्त लंबाई ६५ सेंटीमीटर की रहती है। यह तापमापक विशेष प्रकार से जाँचा हुआ होना चाहिए।

बंब-कलरी-मापी का प्रज्वलन-तार प्लैटिनम का रहता है। उसका व्यास ०'१५ मिलीमीटर का होता है। यदि प्लैटिनम के स्थान में लोहे का तार उपयुक्त हो, तो उसका भार मालूम रहना चाहिए ताकि उससे उसके दहन की ऊष्मा निकाली जा सके।

कलरी-मापी का जल-तुल्यांक—कलरी-मापी का जल-तुल्यांक निकालने के लिए १'५ ग्राम बेंजोइक अम्ल को जलाते हैं। बेंजोइक अम्ल का ऊष्मीय मान प्रतिग्राम ६३३० कलरी मान लेते हैं। यह जल-तुल्यांक निकालने के पूर्व कलरी-मापी में १० सी० सी० जल रखते हैं और प्रत्येक प्रयोग में जल की यह मात्रा रहती है।

साधारणतया डीज़ेल तेल और भारी ईंधन तेल के लिए एक ग्राम तेल इस्तेमाल करते हैं। पेट्रोल के लिए विशेष सावधानी की आवश्यकता पड़ती है; क्योंकि पेट्रोल में असावधानी से विस्फोट का भय रहता है। पेट्रोल का केवल ०'३ ग्राम उपयुक्त होता है। इसको काँच के मजबूत कैपस्यूल में रखते हैं, ताकि ऑक्सिजन के दाब से वह टूट न जाय। कैपस्यूल को किसी ईंधन-तेल के ०'१ से ०'२ ग्राम के साथ कलरी-मापी में रखते हैं। इस ईंधन-तेल का ऊष्मीय मान मालूम रहना चाहिए। इसके जलाने से काँच का कैपस्यूल टूटता है। इस ईंधन-तेल से उत्पन्न ऊष्मा का संशोधन कर लेते हैं।

कलरी-मापी में आवश्यक मात्रा में तौलकर पानी रखना चाहिए। पानी का ताप कमरे के ताप के बराबर होना चाहिए। १० सी०सी० पानी कलरी-मापी में रखते हैं। प्रज्वलन के लिए रूई अथवा रूई के सूत या छन्ना-कागज के टुकड़े इस्तेमाल करते हैं। रूई या कागज का भार बड़ी यथार्थता से निर्धारित होना चाहिए। बंब-कलरी-मापी में ऑक्सिजन भरा रहना चाहिए। ऑक्सिजन का दबाव २५ वायुमण्डल से कम नहीं रहना चाहिए।

जलाने के बाद तापमापक का पाठ्यांक आधा-आधा मिनट पर लेना चाहिए। यह पाठ्यांक तब तक लेना चाहिए जब तक तापमापक का ताप महत्तम न हो जाय। इन पाठ्यांकों के अन्तिम दस पाठों से विकिरण की हानि निकालनी चाहिए।

जो परिणाम निकले, उसमें निम्नलिखित संशोधन की आवश्यकता होती है—

१. विकिरण से हानि

२. रूई या कागज के प्रज्वलन से ऊष्मा की उत्पत्ति

३. यदि लोहे का तार उपयुक्त हुआ है तो उसके दहन से ऊष्मा की उत्पत्ति

कलरी-मापी में जल के भार, जल-तुल्यांक और ताप के संशोधित उन्नयन से समस्त कलरी का निर्धारण करते हैं। इस समस्त कलरी से प्रज्वलन-कागज के कारण कलरी के मान को, लोहे के तार के कारण लोहे की दहन-ऊष्मा को, निकाल देते हैं। प्रज्वलन-कागज के प्रत्येक ग्राम भार के लिए ४११० कलरी, लोहे के तार के लिए प्रतिग्राम १६०० कलरी निकाल देने से जो शेष कलरी बच जाती है, वह तेल की कलरी है। प्रतिग्राम तेल के लिए कलरी की मात्रा निर्धारित करते हैं। यदि इस मान को ब्रिटिश तापीय एकांक में (B. Th. U.) देना चाहें, तो प्रतिग्राम कलरी का १'८ से गुना करने से वह मान प्राप्त होता है।

कार्बन-अवशेष

किसी विशिष्ट दशा में पेट्रोलियम-तेल के उद्वाष्पन पर जो अवशिष्ट अंश बच जाता है, उसे 'कार्बन-अवशेष' कहते हैं। इससे पता लगता है कि किसी तेल में कार्बन बनने की प्रवृत्ति कितनी है। इस परीक्षण से उन तेलों के संबंध में बहुत-सी बातें मालूम होती हैं, जो तेल आभ्यन्तर दहन-इंजन में, घरेलू तेल-ईंधन के लिए अथवा गैस-निर्माण में उपयुक्त होते हैं। इस कार्बन-अवशेष के निर्धारण की दो विधियाँ हैं। एक विधि को 'कोनरैडसन' (Conradson)-विधि और दूसरे को 'राम्सबौटम'-विधि कहते हैं। दोनों विधियों से प्राप्त परिणाम एक-से नहीं होते। इस कारण जिस विधि से कार्बन-अवशेष का निर्धारण हुआ है, उसका उल्लेख अवश्य करना चाहिए।

कोनरैडसन-विधि

इस विधि में एक चौड़ी पोरसीलेन की मूषा 'क'-उपयुक्त होती है। सिलिका की मूषा भी उपयुक्त हो सकती है। पोरसीलेन की मूषा पर लुक फेरा हुआ रहना चाहिए। मूषा की धारिता २६ से ३१ सी० सी० रहनी चाहिए, उसके कोर का व्यास ४६ से ४६ मिलीमीटर रहना चाहिए। इस मूषा को एक दूसरे लोहे की मूषा में रखा जाता है। इसका कोर उभड़ा हुआ और वलय के साथ होता है। इसकी धारिता ६५ से ८२ सी० सी० और आभ्यन्तर व्यास ५३ से ५७ मिलीमीटर और उभड़ा हुआ बाह्य व्यास ६० से ६७ मिलीमीटर होता है। ढक्कन के साथ इसकी ऊँचाई ३७ से ३६ मिलीमीटर होती है। चिपटे पेंदे का बाह्य व्यास ३० से ३२ मिलीमीटर रहता है।

इसमें एक लोहे की चादर की ढक्कन के साथ 'ग'-मूषा होती है। इसका बाह्य व्यास शिखर पर ७८ से ८२ मिलीमीटर, ऊँचाई ५८ से ६० मीलीमीटर और मुटाई प्रायः ०'८ मिलीमीटर रहती है। इस मूषा के पेंदे में प्रायः २५ सी० सी० सूखी बालू रखी रहती है। बालू के इस स्तार पर ढकन के साथ 'ख'-मूषा रखते हैं। लोहे की चादर की मूषा नाइक्रोम तार पर रखी रहती है।
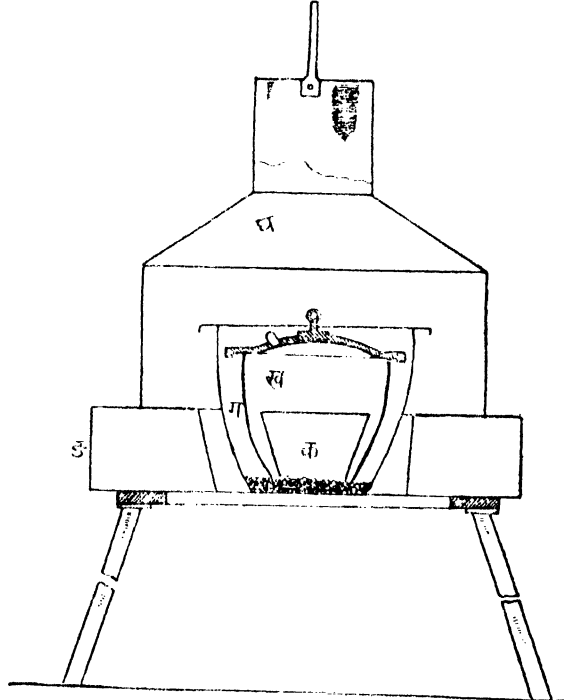
चित्र—१७

ये सब मूषाएँ वृत्ताकार स्तार-लोहे के ढकन 'घ' से ढकी रहती है। इस ढकन का व्यास १२० से १३० मिलीमीटर और ऊँचाई ५० से

५३ मिलीमीटर रहती है। इसके ऊपर एक चिमनी लगी रहती है। चिमनी की ऊँचाई ५० से ६० मिलीमीटर रहती है।

उद्वाष्पन के लिए जो बर्नर उपयुक्त होता है, वह 'मेकर' किस्म का होता है। उसका व्यास २४ मिलीमीटर और ऊँचाई १५५ मिलीमीटर होती है।

पोरसीलेन अथवा सिलिका की मूषा में काँच की दो गोलियाँ रखते हैं। ऐसी गोलियों का व्यास ०'१ इंच रहना चाहिए। इन गोलियों के भार को मूषा के भार में जोड़ देते हैं। अब मूषा में बड़ी यथार्थता से १० ग्राम तेल तौलते हैं। इस तेल में जल अथवा निलम्बित पदार्थ नहीं रहना चाहिए।

यदि पेट्रोलियम-तेल गाढ़ा हो और उससे ०'४ ग्राम से अधिक कार्बन रह जाय तो तेल इतना इस्तेमाल करना चाहिए कि उससे ०'४ ग्राम से अधिक कार्बन न रहे। दस ग्राम से अधिक तेल भी नहीं इस्तेमाल करना चाहिए। यदि तेल में अस्फाल्टवाला विटुमिन है तो उसकी मात्रा १ ग्राम से अधिक नहीं रहनी चाहिए।

इस मूषा को दूसरी मूषा-'ख' के बीच में रखते हैं। इस दूसरी मूषा को स्तार-लोहे की मूषा की बालू-तह के ठीक मध्य में रखते हैं। अब दोनों मूषाओं को ढक्कन से ढक देते हैं। ढक्कन ऐसा ढीला रहना चाहिए कि वाष्प उससे स्वच्छन्दता से निकल सके।

किसी उपयुक्त स्तम्भ अथवा वलय पर नाइक्रोम-तार के त्रिभुज को रखते हैं। उसके ऊपर अस्बेस्टस का कुंदा रखते हैं। कुंदे के बीच में स्तार-लोहे की मूषा को ऐसा रखते हैं कि उसका पेंदा त्रिभुज पर रहे। अब सबको ढाँप से ढक देते हैं, ताकि गरम करने पर उसकी सारी ऊष्मा एक-सी चारों ओर फैलती रहे।

अब 'मेकर'-किस्म के बर्नर की ऊँची प्रबल ज्वाला से सबको ऐसे तपाते हैं कि १० से १२ मिनटों में प्रज्वलन-विन्दु पहुँच जाय। जब चिमनी से धुआँ निकलने लगे तब शीघ्र ही बर्नर को घुमाकर ऐसा कर देना चाहिए कि उसकी ज्वाला मूषा के पार्श्व में जाकर वाष्प को प्रज्वलित कर दे। अब कुछ देर के लिए ज्वाला को हटा लें और देखें कि वाष्प एक-सी ज्वाला के साथ चिमनी के ऊपर जलता है या नहीं। यदि ज्वाला चिमनी के ऊपर देखनी पड़े तो गरम करना तेज कर देना चाहिए। सारा वाष्प १३ से १४ मिनटों में जल जाना चाहिए।

जब वाष्प का जलना बन्द हो जाय और नीली ज्वाला न दीख पड़े तब बर्नर को ऐसा रखना चाहिए कि मूषा का पेंदा और निचला भाग लाल हो जाय और ठीक ७ मिनट तक उसी दशा में रहे। गरम करने का सारा समय ३० से ३२ मिनट तक होना चाहिए। साधारणतया बर्नर में गैस इस्तेमाल होती है।

जब प्रयोग समाप्त हो जाय, तब उपकरण को ठंडा होने को छोड़ देना चाहिए। जब धुओं का निकलना बन्द हो जाय तब 'ख'-मूषा को निकाल लेना चाहिए। अब चिमटे से सिलिका-मूषा को निकालकर शोषित्र में रखकर ठंडा कर तौलना चाहिए। उससे कार्बन-अवशेष की मात्रा निकालनी चाहिए।

तेल का भार यथार्थता से मालूम होना चाहिए। उसमें ५ मिलीग्राम से अधिक की अशुद्धि नहीं रहनी चाहिए। दो प्रयोग साथ-साथ करने चाहिए। दोनों प्रयोगों के परिणाम में औसत १० प्रतिशत से अधिक का अन्तर नहीं रहना चाहिए।

मेघ-विन्दु

पेट्रोलियम का मेघ-विन्दु वह ताप है, जिसपर ठंडा करने से पैराफिन-मोम अथवा अन्य ठोस पदार्थ विलयन से निकलना शुरू करते हैं। विलयन को एक विशिष्ट दशा में ठंडा करते हैं। यह परीक्षण उन्हीं तेलों के साथ किया जाता है जिनकी 1½ इंच मुटाई के स्तर पारदर्शक होते हैं।

उपकरण—इस परीक्षण के लिए एक जार की आवश्यकता होती है। यह जार स्वच्छ काँच का बेलनाकार होता है। उसका पेंदा चिपटा, आभ्यन्तर व्यास लगभग ३० मिलीमीटर का और ऊँचाई ११५ से १२५ मिलीमीटर की होनी चाहिए। यदि ऐसा जार
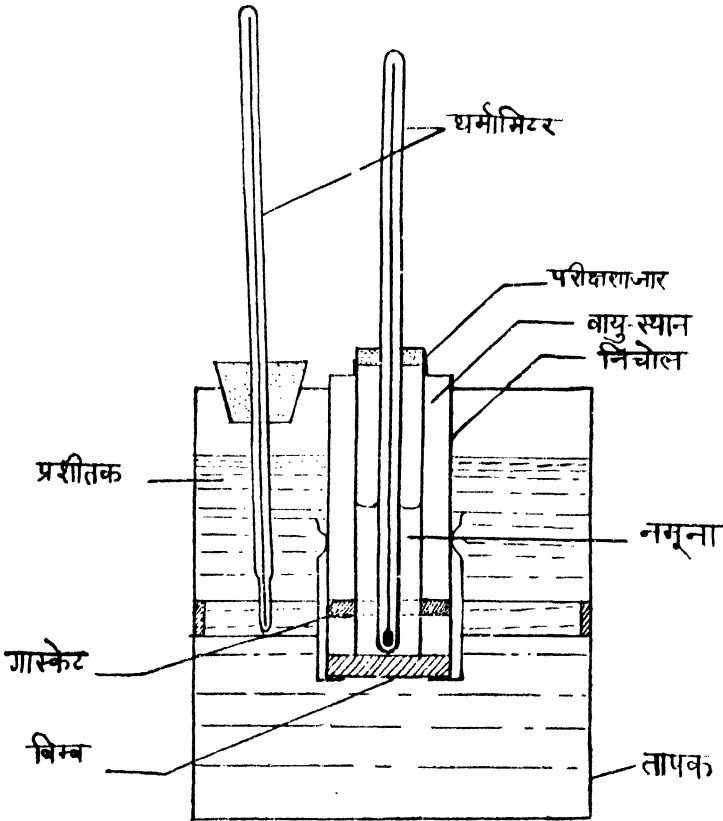
चित्र १८—मेघ-विन्दु और बहाव-रेखा-परीक्षण उपकरण

प्राप्त न हो सके तो ४ औंस की एक सामान्य काँच की बोतल भी उपयुक्त हो सकती है। इसमें एक विशेष प्रकार का तापमापक उपयुक्त होता है। जार में रबर का काग लगा रहता है। इस काग के मध्य भाग में छेद करके उसमें तापमापक रखा जाता है।

यह जार एक बड़ा निचोल में रखा रहता है। यह निचोल धातु का अथवा काँच का हो सकता है। यह बेलनाकार, चिपटे पेंदे का, लगभग ४½ इंच गहरा और ¼ से ½ इंच आभ्यन्तर व्यास का होना चाहिए।

काग वा फेल्ट का एक बिम्ब निचोल के पेंदे में रहता है। यह $\frac{१}{४}$ इंच मोटा और निचोल के आभ्यन्तर व्यास का होता है।

डोरी का एक वलय लगभग $\frac{३}{१६}$ इंच मोटा रहता है। यह ऐसा बना होता है कि जार के बाह्य भाग में और निचोल के अभ्यन्तर भाग में सरलता से अँट जाय। निचोल के २५ मिलीमीटर की ऊँचाई पर यह रखा रहता है। यह फेल्ट या इसी प्रकार के पदार्थ का बना होता है। यह ऐसा प्रत्यास्थ हो कि जार में चिपका रहे और अपना आकार बनाये रखे।

ये सब एक शीतक ऊष्मक में ऐसे ऊर्ध्वाधार रखे रहते हैं कि वे दृढ़ता से चिपके रहें। इस शीतक ऊष्मक को हिमीकरण-मिश्रण से उपयुक्त ताप पर रखते हैं। हिमीकरण-मिश्रण इस प्रकार का होता है—

५०° फ० के लिए बर्फ और जल,

१०° फ० के लिए बर्फ के छोटे-छोटे टुकड़े और नमक,

–१५° फ० के लिए बर्फ के छोटे-छोटे टुकड़े और कैलसियम क्लोराइड के मणिभ तथा

–७०° फ० के लिए ठोस कार्बन डायक्साइड और एसीटोन अथवा पेट्रोल।

ठोस कार्बन डायक्साइड और एसीटोन या पेट्रोल का मिश्रण इस प्रकार तैयार करते हैं। एसीटोन या पेट्रोल को पहले बर्फ और नमक द्वारा १०° फ० पर ठंडा कर लेते हैं। अब द्रव कार्बन डायक्साइड के बेलन से सावधानी से कार्बन डायक्साइड को कैमायस चमड़े की थैली में ले लेते हैं। शीघ्र उद्वाष्पन से द्रव कार्बन डायक्साइड ठोस हो जाता है। अब इसे ठंडे एसीटोन या पेट्रोल से मिलाकर आवश्यक तापवाला हिमीकरण-मिश्रण प्राप्त करते हैं।

विधि—जिस तेल का परीक्षण करना होता है, उसका ताप मेघ-विन्दु से प्रायः २५° फ० ऊपर कर लेते हैं। यदि तेल में जल है तो उसे छानकर अथवा सूखे छन्ना-कागज से दूर कर साफ कर लेते हैं। यदि तेल को छानना पड़े, तो मेघ-विन्दु के प्रायः २५° फ० ऊपर के ताप पर ही छानते हैं। अब स्वच्छ तेल को जार में डालते हैं। तेल की ऊँचाई ५१ से ५७ मिलीमीटर के बीच रहनी चाहिए। तेल के तल की ऊँचाई पर चिह्न लगा देते हैं।

अब जार को काग से कसकर बन्द कर देते हैं। इसी काग में जार के बीच में खड़ा तापमापक रखा जाता है। तापमापक का बल्ब जार के पेंदे पर रहता है।

निचोल के पेंदे में बिम्ब रखा जाता है और डोरी-वलय के साथ जार रखा जाता है। वलय को निचोल के पेंदे से २५ मिलीमीटर की ऊँचाई पर रहना चाहिए। निचोल और बिम्ब सब साफ और सूखा रहना चाहिए।

शीतक ऊष्मक का ताप ३०° और ३५° फ० के बीच रहना चाहिए। निचोल को सीधा खड़ा रखना चाहिए।

२° फ० के अन्तर पर जार को विना हिलाये-डुलाये निकालकर परीक्षा करनी चाहिए। यदि मेघ नहीं बना है, तो फिर उसे रख देना चाहिए। ऐसा करने में ३ सेकंड से ज्यादा समय नहीं लगना चाहिए। यदि ५०° फ० तक ठंडा करने में मेघ नहीं देख पड़ता

तो जार को ०° से ५° फ० के ऊष्मक में रखना चाहिए। यदि अब भी मेघ नहीं बने तो उसे—२५° से—३०° फ० के बीच ऊष्मक में रखना चाहिए। ज्योंही जार में मेघ बनना शुरू हो, तापमापक का ताप लिख लेना चाहिए।

प्रवाह-विन्दु

पेट्रोलियम का प्रवाह-विन्दु वह निम्नतम ताप है, जिस पर वह बहता है। उससे निम्नतर ताप पर तेल नहीं बहता है।

उपकरण—इस प्रवाह-विन्दु के निर्धारण में ठीक वैसा ही उपकरण उपयुक्त होता है जैसा मेघ-विन्दु के निर्धारण में उपयुक्त होता है।

विधि—निर्धारण की विधि भी प्रायः वही है, जो मेघ-विन्दु के निर्धारण में उपयुक्त होती है। समय-समय पर जार को निकालकर झुकाकर देखते हैं कि तेल बहता है कि नहीं। यहाँ
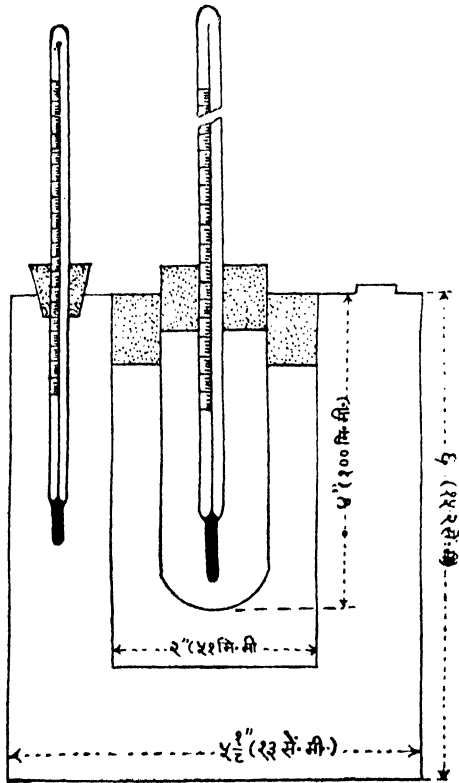
चित्र १६—बहाव-विन्दु निकालने का उपकरण

भी इस कार्य में ३ सेकंड से अधिक समय नहीं लगना चाहिए। यहाँ भी जार को विभिन्न ताप के ऊष्मक में रखकर परीक्षा करते हैं। ज्योंही जार के झुकाने पर तेल का बहना बन्द हो जाता है, जार को ठीक ५ सेकंड तक रखकर देखना चाहिए। यदि पाँच सेकंड के बाद

तेल में कोई गति हो तो जार को तुरन्त निचोल में रखकर उस ताप से ५° नीचे के ताप पर रखकर परीक्षा करनी चाहिए।

जब ठीक ५ सेकंड रखने पर भी तेल में कोई गति न हो, तब उस ताप को सावधानी से लिख लेना चाहिए। इस ताप के ५° के ऊपर का ताप तेल का प्रवाह-विन्दु है।

डाक्टर-परीक्षण

डाक्टर-परीक्षण से रंग की परीक्षा होती है। डाक्टर-परीक्षणके लिए डाक्टर-विलयन की आवश्यकता होती है। डाक्टर-विलयन इस प्रकार तैयार होता है।

प्रायः १२५ ग्राम सोडियम हाइड्रॉक्साइड को एक लिटर आसुत जल में घुलाते हैं। इसमें १०० अक्षि-चलनी में चला हुआ ६० ग्राम मुर्दासंख (PbO) को डालकर आधा घंटा उबालते हैं। उसके बाद स्थिर होने को रख देते और स्वच्छ विलयन को ढाल लेते हैं अथवा साइफन से निकाल लेते हैं। यदि विलयन स्वच्छ नहीं है तो उसे अस्बेस्टस पर छान लेते हैं। इस विलयन को कसकर काग-लगी बोतल में रखते हैं। यदि उपयुक्त करने के समय में स्वच्छ न हो तो उसे फिर छान लेते हैं।

एक दूसरी रीति से भी डाक्टर-विलयन तैयार हो सकता है। २५ ग्राम लेड एसीटेट के मणिभ को २०० सी० सी० जल में घुलाकर उसमें १०० सी० सी० में घुला हुआ ६० ग्राम क्षारक सोडा डालते हैं। वाष्प-ऊष्मक पर उसे ३० मिनट तक गरम करके एक लिटर बना लेते हैं। इस प्रयोग में शुद्ध सूखा गन्धक का पुष्प भी उपयुक्त होता है।

रीति—तेल के नमूने का १० सी० सी० लेकर उसमें डाक्टर-विलयन का ५ सी० सी० डालकर ५० सी० सी० धारिता और लगभग २५ मिलीमीटर आभ्यन्तर व्यास के सिलिण्डर में लेकर १५ सेकंड तक जोरों से हिलाना चाहिए। अब थोड़ी मात्रा में गन्धक डालना चाहिए। गन्धक डालकर १५ सेकंड तक फिर जोरों से हिलाना चाहिए। अब द्रव को अलग स्तर में होने के लिए छोड़ देना चाहिए। जब वे दो स्तरों में अलग-अलग हो जायँ तब उनका परीक्षण करना चाहिए।

यदि तेल और प्लम्बाइट के रंगों में कोई परिवर्त्तन न हो और गन्धक बिलकुल पीला रहे तो परीक्षण 'ऋणात्मक' हुआ और तब नमूना 'उत्तीर्ण' हुआ। यदि तेल और प्लम्बाइट के रंग में परिवर्त्तन हो अथवा गन्धक का पीला रंग छिप गया हो तो परीक्षण 'धनात्मक' हुआ और तब नमूना 'अनुत्तीर्ण' हुआ। यदि दोनों द्रवों के रंगों में बहुत अल्प परिवर्त्तन हो तो परीक्षण 'अल्प धनात्मक' हुआ और नमूना 'उत्तीर्ण नहीं हुआ', पर अल्प रंगीन।

गन्धक डालने के पहले रंग के उपलभीय और पीछे धुँधला होने से मरकैप्टन और मुक्त गन्धक दोनों की उपस्थिति सूचित होती है।

यदि नमूने में हाइड्रोजन सल्फाइड है तो प्लम्बाइट का विलयन तुरन्त काला अवक्षेप देगा। ऑक्सीकृत पेट्रोल से पेराक्साइड बनेगा, जिससे कपिल अवक्षेप प्राप्त होता है। यह अवक्षेप मरकैप्टन के कारण नहीं होता।

गन्धक की मात्रा का निर्धारण

'बम्ब'-रीति

दो विधियों से गन्धक का निर्धारण होता है। एक 'बम्ब'-रीति और दूसरी 'लम्प'-रीति। बम्ब-रीति अधिक सामान्य रीति है और सब प्रकार के तेलों के लिए उपयुक्त हो सकती है। लम्प-रीति केवल हलके तेलों, जो लम्पों में पूर्णतया जल जाते हैं, में उपयुक्त होती है। इस कारण बम्ब-रीति का ही यहाँ वर्णन किया जा रहा है।

बम्ब-रीति में जो प्रतीकारक उपयुक्त होते हैं, उन्हें गन्धक-मुक्त रहना चाहिए। यदि किसी प्रतीकारक में गन्धक पाया जाय तो उसके लिए रिक्त प्रयोग करके परिणाम का संशोधन कर लेना चाहिए।

बेरियम-क्लोराइड शुद्ध और मणिभीय होना चाहिए। इसके मणिभ में जल के दो अणु रहते हैं। १०० ग्राम ऐसे बेरियम-क्लोराइड के मणिभ ($BaCl_2, 2H_2O$) को एक लिटर जल में घुलाकर इस्तेमाल करना चाहिए।

तेल को एक छोटे बल्ब में रखकर तौलते हैं। उस बल्ब को एक बड़ी नली में रखकर और उसमें प्रायः १० सी० सी० सधूम नाइट्रिक अम्ल और बेरियम-क्लोराइड के कुछ मणिभ रखकर नली को संमुद्रित कर लेते हैं। अब नली को बम्ब-भट्ठी में रखकर प्रायः २ से ३ घण्टा २५०° सें० तक गरम करते हैं। इसके बाद भट्ठी को ठंडा कर १० मिनट के लिए छोड़ देते हैं। इसके बाद नली को खोलकर गैस को धीरे-धीरे निकाल देते हैं।

अब नली के अवक्षेप को सावधानी से निकाल, धोकर बीकर में हस्तान्तरित कर लेते हैं। अवक्षेप और धोवन ३५० सी० सी० से अधिक नहीं रहना चाहिए। २ सी० सी० प्रबल हाइड्रोक्लोरिक अम्ल और १० सी० सी० ब्रोमीन-जल डालकर उबालते हैं। अवक्षेप को अब छन्ना-कागज पर रखकर सुखाकर मूषा में रखकर जोर से तपाकर और ठंडा कर तौलते हैं। इस तौल में मूषा की तौल निकाल लेने से बेरियम-सल्फेट की मात्रा मालूम हो जाती है। बेरियम-सल्फेट से गन्धक की प्रतिशत मात्रा निकालते हैं।

विशिष्ट गुरुत्व

किसी पदार्थ का विशिष्ट गुरुत्व वह अनुपात है जो उस पदार्थ के एक नियत आयतन की मात्रा का होता है और जल के सम आयतन की मात्रा की तुलना से प्राप्त होता है। उस पदार्थ के ताप और जल के ताप का उल्लेख होना बहुत आवश्यक है; क्योंकि ताप के परिवर्त्तन से आयतन में परिवर्त्तन होता है। साधारणतया पेट्रोलियम के परीक्षण में ६०° फ० का ताप प्रामाणिक ताप माना जाता है। यदि गुरुत्व के लिए हम 'गु' उपयुक्त करें तो $गु\frac{६०°फ०}{६०°फ०}$ से सूचित होता है कि किसी पदार्थ का विशिष्ट गुरुत्व ६०°फ० पर उसके आयतन की ६०° फ० के आयतन के जल से तुलना की गई है।

यदि विशिष्ट गुरुत्व को अधिक यथार्थता से चार दशमलव स्थान तक निर्धारित करना है, तो वायु के प्लवन-प्रभाव के लिए भी संशोधन की आवश्यकता होती है।

विशिष्ट गुरुत्व का निर्धारण गुरुत्व बोतल अथवा पिकनोमीटर के द्वारा होता है। द्रवमापी का भी उपयोग हो सकता है। यदि ताप ६०° फ० है तो ठीक है; पर यदि ६०° फ०

नहीं है, कुछ आगे-पीछे है, तो उसके लिए संशोधन की आवश्यकता पड़ती है। प्रति डिग्री फाइरेनहाइट के लिए निम्नलिखित अंक जोड़े अथवा घटाये जाते हैं।

किरासन-से हल्के तेल के लिए यदि गुरुत्व ०'७४० से नीचे है तो	०'०००४८
यदि गुरुत्व ०'७४० से ऊपर है तो	०'०००४४
सफेद तेल के लिए	०'०००४२
किरासन के लिए	०'०००४०
गैस-तेल के लिए	०'०००३६
डीज़ेल इंजन-तेल के लिए	०'०००३५
स्नेहक तेल के लिए	०'०००३४
भारी ईंधन-तेल के लिए	० ०००३४
पिघले स्फाल्टीय विटुमिन के लिए	०'०००३०

उपकरण—विशिष्ट गुरुत्व बोतल साधारण किस्म का होता है। उसका आयतन ६०° फ० जल के साथ निर्धारित होता है। पिक्नोमीटर भी सामान्य किस्म का होता है। ये दोनों ही गाढ़े तेल के लिए ठीक नहीं हैं। गाढ़े तेलों के लिए या तारकोल के लिए अंशांकित फ्लास्क उपयुक्त होता है। ऐसे फ्लास्क की धारिता २०० या २५० सी० सी० रहती है। फ्लास्क में तेल भरने के लिए तेल को गरम कर लेते हैं, और फ्लास्क को तेल से भरकर अंशांकित चिह्न तक डुबाकर गरम जल में रखते हैं ताकि वायु के बुलबुले उससे निकल जायँ। अब फ्लास्क को ठंडा कर ६०° फ० पर लाकर तेल का संतल चिह्न तक ठीक कर लेते हैं।

द्रवमापी जो इस काम के लिए उपयुक्त होता है, काँच का बना होता है। उसका बाह्य तल बिलकुल साफ रहना चाहिए। काँच भी उसका स्वच्छ रहना चाहिए। काँच की किस्म वैसी ही रहनी चाहिए जैसी तापमापक बनाने में उपयुक्त होती है और उसपर रासायनिक द्रव्यों की कोई क्रिया न हो।

उसपर अंकों के अंकित करने के पहले ठीक प्रकार से मृदुकृत रहना चाहिए। उसका बल्ब बेलनाकार और स्तम्भ वृत्ताकार रहना चाहिए। ऐसा बना रहना चाहिए कि उसका स्तम्भ ऊर्ध्वाधार खड़ा रहकर तैरता रहे। उसपर ताप उच्च कोटि के कागज पर बना और अंक साफ-साफ और यथार्थता से लिखा रहना चाहिए। द्रवमापी पर अंक ०'६५० से १'१००० के बीच रहना चाहिए। प्रत्येक चिह्न का मान ०'०५ रहना चाहिए।

अंशांकित चिह्न की लम्बाई विभिन्न रह सकती है; पर सबसे छोटे अंशांकित चिह्न कम-से-कम २ मिलीमीटर की लंबाई में रहना चाहिए।

द्रवमापी के स्तम्भ पर एक पतला क्षैतिज लकीर खिंची रहनी चाहिए। यह चिह्न द्रवमापी के निर्देशक-चिह्न पर ही रहना चाहिए। द्रवमापी प्रामाणिक रहना चाहिए।

दमकांक

पेट्रोलियम-कानून के अनुसार पेट्रोलियम के सब उत्पादों का दमकांक निकालना आवश्यक है; विशेषतः ऐसे उत्पादों का, जिसका दमकांक ८०° फ० से नीचा है।

जिन तेलों का दमकांक ८०° फ० और १२०° फ० के बीच होता है, उनका दमकांक 'आबेल' उपकरण से निकाला जाता है। जिन तेलों का दमकांक १२०° फ० से ऊपर होता

है, उनका दमकांक 'पेंस्की-मार्टेन' उपकरण से निकाला जाता है। 'आबेल' उपकरण और
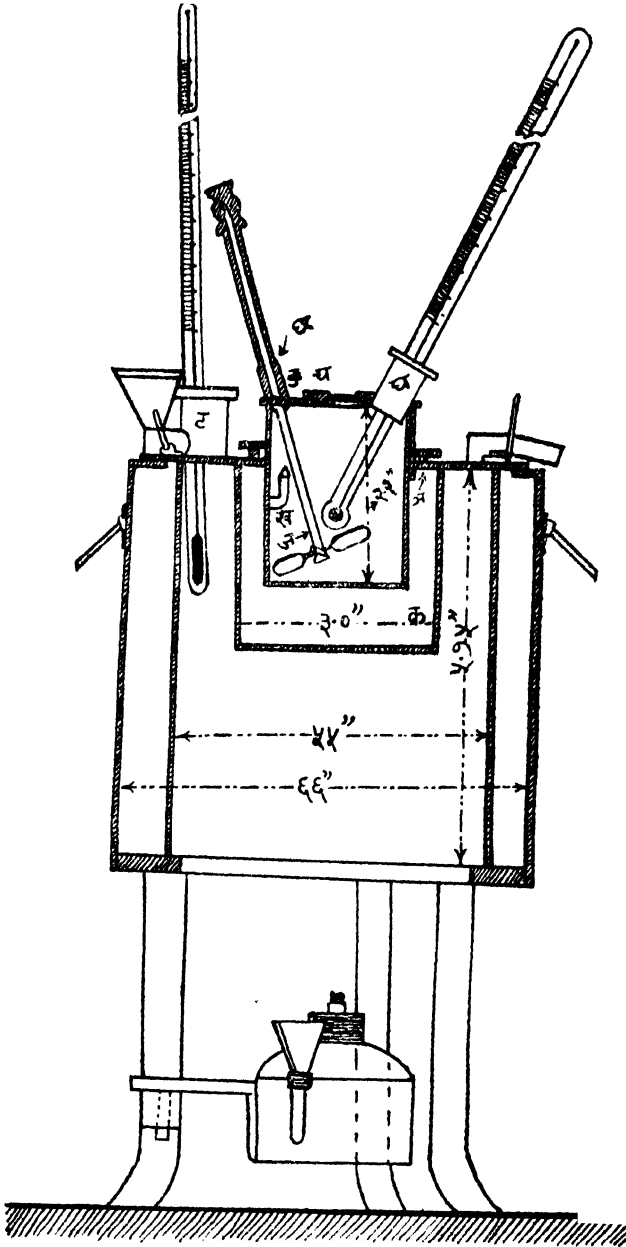
चित्र २०—आबेल का दमकांकउ-पकरण

उसमें उपयुक्त होनेवाले तापमापक प्रामाणिक होना चाहिए। ऐसा प्रमाण-पत्र बोर्ड आफ ट्रेड के द्वारा दिया जाता है।

'आबेल' - उपकरण

आबेल-उपकरण प्रामाणिक रहना चाहिए। इसके विभिन्न अङ्ग नियमित विस्तार के होने चाहिए। उसके तेल की कुप्पी, विडोलक—सब प्रामाणिक रहना चाहिए।

तेल-कुप्पी

इसकी तेल-कुप्पी एक बेलनाकार पात्र 'क' होती है, जो ऊपर से तो खुली रहती है, पर चिपटे वृत्ताकार निकले हुए किनारेवाले ढक्कन से ढकी रहती है। इस कुप्पी के पार्श्व की दीवार में एक मापी 'ख' होती है। यह एक तार के टुकड़े की होती है और इसका अन्तिम छोर एक विन्दु होता है। यह पीतल या गन-मेटल का बना होता है।

कुप्पी का ढक्कन 'ग' कुप्पी पर कसा हुआ होता है। इसका किनारा बाहर निकला हुआ और कुप्पी के किनारे के ठीक ऊपर होता है। इसी ढक्कन में तापमापक रखने का छेद होता है और तेल-लैम्प लटकाने का आधार होता है। ढक्कन के शिखर पर तीन छेद होते हैं, एक बीच में और दो ढक्कन-कोर के सन्निकट में। सृप द्वारा इन छेदों को बन्द या खुला रख सकते हैं। सृप में दो छेद होते हैं। एक छेद ढक्कन के बीच के छेद के ठीक बराबर होता है और दूसरा छेद ढक्कन के किनारे के छेद के बराबर होता है।

सृप का संचालन उपयुक्त रोधन (stopcock) से नियंत्रित होता है। इसकी लम्बाई और विस्तार ऐसा होता है कि सृप के बाह्य संचालन पर ढक्कन का छेद बिलकुल खुल जाता है और आभ्यन्तर संचालन पर बिलकुल बन्द हो जाता है।

जिस आधार पर लैम्प रखा रहता है, वह आधार ऐसा होता है कि उसपर वह स्वतंत्रता से दोलित हो सके। लैम्प में एक क्षिप्र होता है, जिसमें बत्ती लगी रहती है। यह ऐसा बना होता है कि ढक्कन के हटाने पर वह छेद के मध्य भाग में चला आवे।

लैम्प के स्थान में गैस का एक क्षिप्र भी उपयुक्त हो सकता है। तापमापक को छेद में इस प्रकार रखते हैं कि तापमापक का बल्ब ढक्कन के ठीक मध्य में और उपयुक्त दूरी पर रहे। उपकरण के प्रायः सब भाग पीतल या गन-मेटल के बने रहते हैं।

ढक्कन में विलोडक रखने का भी प्रबन्ध रहता है। यह विलोडक तेल-कुप्पी के अन्दर चला जाता है और केवल श्यान तेलों के लिए उपयुक्त होता है। विलोडक का स्तम्भ गोला होता है और चार पंखे या फल (vane) रहते हैं तथा स्तम्भ के अन्त में टाँके से जुड़े रहते हैं। स्तम्भ पर एक ग्रवेय स्थित रहता है, जिससे स्तम्भ को आवश्यक दूरी तक ही कुप्पी में डाल सकें। स्तम्भ के ऊपर का भाग पतला होता है। ढक्कन पीतल या गन-मेटल का बना होता है।

तापन-पात्र

तापन-पात्र ताँबे का बेलनाकार चिपटे पेंदे का पात्र होता है, जो एक-दूसरे के अन्दर रखा होता है। दोनों पात्रों के बीच का स्थान पूर्णतया बन्द रहता है। इसमें जल रह सकता है। इस तापन-पात्र के शिखर पर एक चिपटा वलय रहता है, जिसके मध्य में एक सूराख रहता है। वलय एबोनाइट या सूत का होता है। इसी वलय पर तेल-कुप्पी स्थित रहती है। छह पेंच द्वारा वलय बँधा हुआ रहता है। यह पात्र ढालुए लोहे के त्रिपाद पर रखा रहता है।

पात्र को स्पिरिट-लैम्प से अथवा गैस से गरम करते हैं। उपकरण में दो तापमापक होते हैं। एक से ऊष्मक का ताप मालूम होता है और दूसरे से दमकांक मालूम होता है।

९०° फ० से नीचे के दमकांक निकालने की रीति

उपकरण के सब भागों को यथास्थान रखते हैं। उपकरण को ऐसे स्थान पर रखते हैं, जहाँ हवा के झोंके न हों।

जल-ऊष्मक में इतना पानी भरते हैं कि पानी टोंटी से निकलने लगे। पानी का ताप प्रारम्भ में १३०° फ० रहना चाहिए। जब परीक्षण समाप्त हो जाय तब दूसरे परीक्षण के लिए जल-ऊष्मक का ताप १३०° फ० कर लेना चाहिए। यदि जल के गरम करने के लिए तेल का लैम्प उपयुक्त हो तो उसमें चोटी-सी गुँथी हुई पट्टित चिपटी बत्ती रहती है। बत्ती ऐसी कटी हुई रहती है कि जलाने पर उससे प्रायः ०·१५ इंच व्यास की ज्वाला बन सके। बत्ती को समय-समय पर काटने का प्रबंध रहता है, ताकि उसी विस्तारक ी ज्वाला प्रयोग के समय रखी जा सके।

ऊष्मक को उचित ताप पर पहुँचाकर उसमें कुप्पी रखते और फिर कुप्पी में तेल डालते हैं। इतना तेल डालते हैं कि कुप्पी के मापी-विन्दु तक ठीक-ठीक तेल भर जाय। प्रयोग आरम्भ करने के पूर्व तेल का ताप देख लेते हैं। उसका ताप प्रायः ६०° फ० रहना चाहिए। अब स्रुप के साथ ढक्कन को लगाकर कुप्पी में कस देते हैं।

कुप्पी को ऐसी सावधानी से रखते हैं कि कुप्पी का पार्श्व तेल से भींगने न पावे। कुप्पी के ढक्कन में तापमापक रखकर उचित गहराई तक उसे लगा देते हैं। जब कुप्पी को यथास्थान रख देते हैं तब तापमापक का चिह्न विश्लेषक की ओर रहता है।

अब लैम्प को कुप्पी के ढक्कन पर यथास्थान रखते हैं। जब ताप ६६° फ० पर पहुँच जाय तब ज्वाला को प्रति एक डिग्री उन्नयन पर डालते हैं और देखते हैं, कि कितना ताप पर वाष्प में आग लग जाती है। वायुमण्डल का दबाव भी लिख लेते हैं।

९०° फ० और १२०° फ० के बीच दमकांक

यहाँ तेल-कुप्पी के पार्श्व के वायु-कक्ष को ठंढे जल से १·५ इञ्च गहराई तक भर देते हैं और जल-ऊष्मक को भी ठंड पानी से भर देते हैं। अब लैम्प को नीचे रखकर प्रति मिनट दो डिग्री फाइरेनहाइट की गति से ताप उठाते हैं और तब ऊपर के वर्णन के अनुसार दमकांक को निकालते हैं।

ठोस पेट्रोलियम-मिश्रण का दमकांक

पेट्रोलियम-मिश्रण को १·५ इञ्च लम्बे और ०·२५ इञ्च व्यास के टुकड़ों में काटकर पेट्रोलियम-कुप्पी में ऊर्ध्वाधार स्थिति में रखकर कुप्पी को भर देते हैं। इन टुकड़ों को एक-दूसरे के संस्पर्श में रखते हैं, पर ऐसे कसकर नहीं रखते कि उनका रूप कुरूप हो जाय। मिश्रण के पाँच-छह टुकड़े ऐसे रहने चाहिए कि कुप्पी के ०·५ इञ्च स्थान में ही अँट जायँ और तापमापक के बल्ब के लिए स्थान बचा रहे।

वायु-ऊष्मक को १ ५ इञ्च तक जल से भरकर जल का ताप प्रायः ७५° फ० तक उठाकर उसी ताप पर रखना चाहिए। बाद में कुप्पी को वायु-ऊष्मक में रखकर ऊष्मक का ताप ७२° फ० तक जाने देना चाहिए।

यदि दमकांक नहीं प्राप्त होता है तो उसी ताप पर तेल-कुप्पी को एक घण्टे तक रखना चाहिए और उसके बाद ज्वाला से गरम करना चाहिए।

पेंस्की-मारटेन्स-उपकरण

पेंस्की-मारटेन्स-उपकरण से उन तेलों का दमकांक निकाला जाता है, जिनका दमकांक २०° फ० से ऊपर है। यह एक विशेष प्रकार का उपकरण है। इसमें गैस-तेल, ईन्धन-तेल
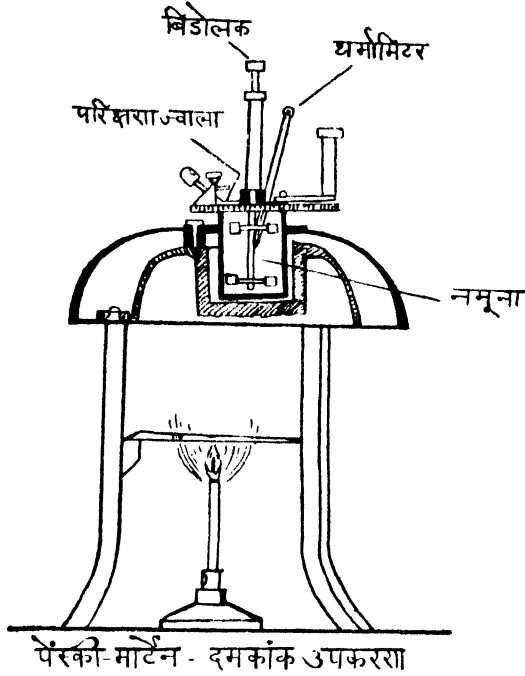
चित्र २१—पेंस्की-मारटेन्स दमकांक-उपकरण

इत्यादि का दमकांक निकाला जाता है। इसके विभिन्न अंग प्रामाणिक माप के होते हैं और इससे पर्याप्त यथार्थ फल प्राप्त होता है।

कच्चे पेट्रोलियम का प्रारम्भिक आसवन

उपकरण

फ्लास्क—इस काम के लिए एक प्रामाणिक फ्लास्क रहता है। उस फ्लास्क की धारिता १०० सी० सी० होती है। उसके विभिन्न अंशों का विस्तार फ्लास्क के चित्र में दिया हुआ है।

संघनक—संघनक एक-सी बनी काँच का होता है। उसकी लम्बाई ५६० मिमी० और आभ्यन्तर व्यास १२·५ मिमी० का होता है। संघनित्र में एक उपयोग (adapter) जुड़ा रहता है। वह उपयोग ऐसा मुड़ा रहता है कि इसका सबसे नीचे का भाग ग्राहक को छूता रहता है। संघनित्र को बाह्य जल-निचोल से ठंडा करते हैं और बरफ से ठंडा किया जल उसमें बहाया जाता है। कभी-कभी ठंडे जल के स्थान में उष्ण जल का उपयोग होता है।

फ्लास्क-रक्षी—फ्लास्क की सुरक्षा के लिए लोहे की एक तार-जाली रहती है, जिसके मध्य में अस्बेस्टस चढ़ा होता है। इसी जाली पर फ्लास्क रखा रहता है।

वर्म—वायु के झोंकों से फ्लास्क और ज्वाला की रक्षा के लिए एक वर्म रहना आवश्यक है। इससे फ्लास्क और ज्वाला को घेर देते हैं।

संग्राही—संग्राही के लिए १०० सी० सी० का एक फ्लास्क इस्तेमाल होता है। यह अंशांकित रहता है।

तापमापक—इसके लिए प्रामाणिक तापमापक उपयुक्त होता है।

विधि—फ्लास्क को पहले खाली तौलते हैं। फिर उसमें १०० सी० सी० तेल डालकर तौलते हैं। कमरे के ताप पर यह तौलना होता है। संघनित्र जोड़ने के पहले उसकी आभ्यन्तर नली को साफ कर सुखा लेते हैं। अब फ्लास्क में तापमापक लगा देते हैं। तापमापक का बल्ब पार्श्व-नली के निकास-मार्ग के ठीक बीच में रहता है। आसुत को शुष्क ग्राहक में इकट्ठा करते हैं। ग्राहक को छाननेवाले कागज से ढके रखते हैं, ताकि द्रव का उद्वाष्पन न्यूनतम हो।

तेल का आसवन इस गति से होना चाहिए कि प्रति मिनट में २ से २½ सी० सी० से अधिक का आसवन न हो। उसके बाद आसवन की गति प्रति सेकंड एक बूँद होनी चाहिए (२ से २½ सी० सी० प्रति मिनट)। आसवन एक-सा बिना रुकावट के तबतक करना चाहिए जबतक तापमापक ३००° से० तक न उठ जाय। प्रत्येक २५° से० पर जितना आसुत इकट्ठा हो, उसका आयतन अलग नाप लेना चाहिए। जितना द्रव ३००° से० तक आसुत हो, उसको भी नाप लेना चाहिए। आसुत का विशिष्ट गुरुत्व निकाल लेना चाहिए।

अब फ्लास्क में बचे अवशिष्ट अंश को ठंडा कर फ्लास्क के साथ तौल लेना चाहिए। इस अवशिष्ट अंश का आयतन और विशिष्ट गुरुत्व निकालकर १०० सी० सी० और अवशिष्ट अंश और आसुत के सी० सी० के अन्तर को 'हानि' के नाम से लिखना चाहिए। भार-मापक से दबाव लिख लेना चाहिए।

कच्चे पेट्रोलियम का बड़ी मात्रा में आसवन

यहाँ आसवन कम-से-कम एक लिटर का होना चाहिए। काँच या सिलिका के दो लिटर फ्लास्क का उपयोग हो सकता है। यदि इससे अधिक मात्रा का आसवन करना हो तो किसी धातु का फ्लास्क या भभका इस्तेमाल हो सकता है। यह भभका ऐसा हो कि वह एक-सा तपाया जा सके, ऊष्मा का संचालन शीघ्रता से और ताप का नियंत्रण सरलता से किया जा सके। उसमें स्थानीय अति-तापन किसी स्थान पर न होना चाहिए।

आसवन के प्रारम्भ में एक दक्ष स्वासवक लगा होना चाहिए। यह काँच या धातु का बना हो सकता है। इसमें राशिग वलय (Raschig) धातु या काँच की गेंद रखी जा सकती है। उसकी बनावट, विस्तार और धारिता आसुत होनेवाले तेल की मात्रा और आसवन की गति पर निर्भर करती है।

इसका संघनित्र ऐसी प्ररचना और धारिता का रहना चाहिए कि महत्तम गति से आसवन होने पर भी उसका सारा वाष्प पूर्णतया संघनित हो सके। यह ऐसा बना रहना चाहिए कि उसमें बरफ का चूरा और ठंडा अथवा गरम जल आवश्यकतानुसार डाला जा सके।

पहले वायुमण्डल के दबाव पर २७५° से० तक जितना आसुत हो सके, कर लेना चाहिए। उसके बाद या तो उच्च निर्वात में अथवा भाप में आसुत करना चाहिए। उपकरण ऐसा रहना चाहिए कि उसके निर्वात की डिग्री स्थायी रखी जा सके और उसका अंकन भी होता रहे। यदि भाप का उपयोग हो तो उसके अति-तापन की डिग्री और प्रति प्रभाग में भाप की मात्रा भी मापी और अंकित की जा सके। ऐसी दशा में यदि आवश्यकता पड़े तो स्वासवक को हटाकर उसके स्थान में भाप-नली का भी उपयोग किया जा सके।

तेल के आसवन के समय उसका ताप और स्वासवक अथवा भाप-नली की भाप को बीच-बीच में मापने और अंकित करने का प्रबंध रहना चाहिए। तापमापक में स्तम्भ के लिए यदि संशोधन की आवश्यकता पड़े और भार-मापक में संशोधन की आवश्यकता पड़े तो कर लेना चाहिए।

विधि—२५° से० के अन्तर पर जितना प्रभाग आसुत हो, उसका आयतन अथवा भार लिख लेना चाहिए अथवा कच्चे तेल का ५ या १० प्रतिशत आसुत होने पर आसवन का ताप लिख लेना चाहिए। पहली रीति का उपयोग हुआ है तब कच्चे तेल के
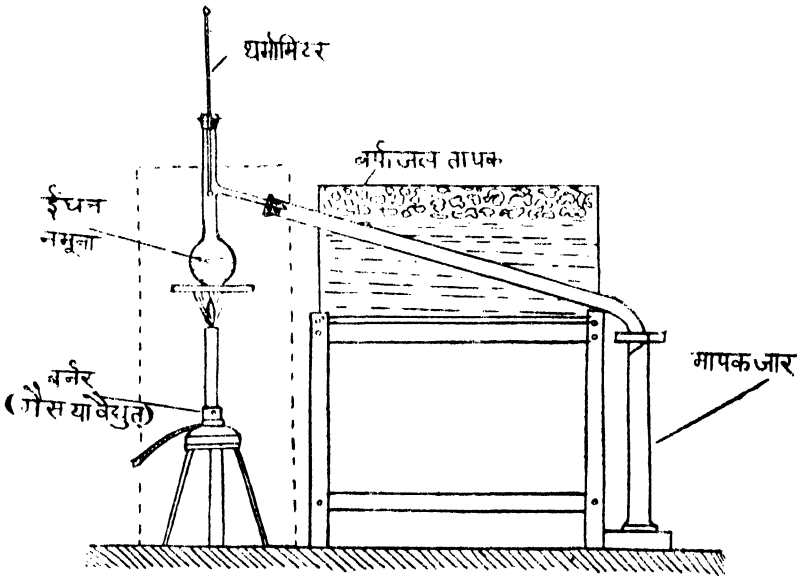
चित्र २२- आसवन-उपकरण

आयतन और ५०° से०, ७५° से०, १००° से० इत्यादि पर आसुत होनेवाले अंश का आयतन लिख लेना चाहिए। जो प्रभाग २७५° से० तक आसुत हो, उसका विशिष्ट गुरुत्व निर्धारित कर लिख लेना चाहिए। यदि आवश्यकता हो तो रंग, दमकांक, गन्धक की मात्रा इत्यादि का भी निर्धारण कर लेना चाहिए।

यदि स्वासवक दक्ष है तो हलके प्रभागों के फिर अंशन की आवश्यकता नहीं होती। यदि उच्च निर्वात या वाष्प में प्रभागों का संग्रह हुआ है तो भार या आयतन में उसका प्रतिशत निकाल लेना चाहिए। यदि सम्भव हो तो अवशिष्ट अंश का भार भी मालूम कर लेना चाहिए।

पेट्रोल और किरासन का आसवन

फ्लास्क—इसके लिए १०० सी० सी० धारिता का फ्लास्क उपयुक्त होता है। इसका चित्र पृष्ठ १४७ पर दिया हुआ है।

संघनित्र—यहाँ संघनित्र पीतल की एक नलिका रहता है। इस नलिका की लंबाई २२ इञ्च और बाह्य व्यास ७/१६ इंच का रहता है। यह लम्ब के ७५° पर स्थित रहता है। इसको शीतल करने का ऊष्मक १५ इंच लंबा, ४ इंच चौड़ा और ६ इंच ऊँचा होता है। संघनित्र-नलिका के नीचे का भाग न्यूनकोण पर मुड़ा रहता है और प्रायः ३ इंच नीचे की ओर मुड़ा रहता है। इसका अन्तिम छोर पीछे की ओर मुड़ा रहता है, ताकि ग्राहक के संस्पर्श में वह आ सके। यह संस्पर्श ग्राहक के शिखर से १$\frac{५}{८}$ इंच की गहराई में होता है। ग्राहक अंशांकित होता है।

वर्म—फ्लास्क और आसवन को वायु के झोंके से सुरक्षित रखने के लिए वर्म का उपयोग होता है। यह वर्म धातु की चादर का बना, १९ इंच ऊँचा, ११ इंच लम्बा और ८ इंच चौड़ा होता है। एक सँकरे पार्श्व में एक इंच व्यास के दो छेद रहते हैं। वाष्प-नली के दो पार्श्वों में एक-एक दरार कटी रहती है। इन छेदों का केन्द्र वर्म के शिखर से ८$\frac{१}{२}$ इंच की दूरी पर रहता है। वर्म के आधार के एक इंच ऊपर चारों पार्श्व में चार छेद होते हैं। ऊष्मक के संभंजन के लिए अभ्रक के दो कपाट रहते हैं।

वलय-आधार—फ्लास्क का आधार एक वलय होता है, जिसका व्यास ४ इंच या इससे कुछ अधिक रहता है। यह एक स्तम्भ पर रखा रहता है। अस्बेस्टस की दो सख्त दफ्तियाँ रहती हैं। एक ६ इंच लम्बी, ६ इंच चौड़ी और $\frac{१}{४}$ इंच मोटी होती है, जिसके केन्द्र में १$\frac{१}{४}$ इंच व्यास का गोल छेद होता है। दूसरी दफ्ती वर्म के अन्दर कसी हुई रहती है। इसमें भी ४ इंच व्यास का एक छेद होता है। वलय पर पहले दूसरी अस्बेस्टस दफ्ती रहती है और उसके ऊपर पहली दफ्ती और उसके ऊपर फ्लास्क रखा जाता है। १$\frac{१}{८}$ इंचवाली दफ्ती के छेद द्वारा ही फ्लास्क को तपाते हैं।

गैस-बर्नर अथवा वैद्युत तापक—गैस-बर्नर ऐसा रहना चाहिए कि उसके द्वारा अविरत रूप से तेल का आसवन एक गति से होता रहे। उसकी ज्वाला इतनी बड़ी नहीं रहनी चाहिए कि अस्बेस्टस दफ्ती पर ३$\frac{१}{२}$ इंच से अधिक व्यास तक फैली रहे। ज्वाला के विस्तार के नियंत्रण का प्रबन्ध रहना चाहिए।

यदि वैद्युत तापक का उपयोग हो, तो वह ऐसा होना चाहिए कि उससे आसवन एक गति से होता रहे। तापक पर अस्बेस्टस दफ्ती ऐसी रहनी चाहिए जिसकी मुटाई $\frac{१}{८}$ से $\frac{१}{४}$ इंच की हो और केन्द्र का सूराख १$\frac{१}{४}$ इंच से १$\frac{१}{२}$ व्यास का हो।

तापमापक—तापमापक प्रामाणिक रहना चाहिए।

संग्राही—१०० सी० सी० धारिता का अंशांकित संग्राही रहना चाहिए।

विधि—संघनित्र को बरफ के टुकड़ों या अन्य किसी सुविधाजनक शीतकारक पदार्थ से भरना चाहिए। उसमें संघनित्र-नली को भरने के लिए पूरा पानी रहना चाहिए। संघनित्र का ताप ०° और ४° से० के बीच रहना चाहिए। इस्तेमाल करने के पहले संघनित्र-नली को पोंछ लेना चाहिए।

नापकर १०० सी० सी० तेल को सावधानी से फ्लास्क में रखना चाहिए। तापमापक को फ्लास्क में कसकर ऐसा लगा देना चाहिए कि वह फ्लास्क की गर्दन के मध्य में रहे और निचला भाग वाष्प-नली तक रहे। अब फ्लास्क को अस्बेस्टस दफ्ती के खुले सूराख पर ऐसा रहना चाहिए कि सूराख उससे पूर्णतया बन्द हो जाय। फ्लास्क की वाष्प-नली संघनित्र-नलिका में ऐसा प्रविष्ट करे कि वह कम-से-कम एक इंच और अधिक-से-अधिक दो इंच उसमें अन्दर रहे।

संग्राही को संघनित्र-नलिका के नीचे के छोर पर रखना चाहिए। वह अंशांकित होना चाहिए। संघनित्र-नलिका का एक ही इंच संग्राही में रहे ; पर १०० सी० सी० चिह्न के नीचे न जाय। यदि वायु का ताप १२° और १८° से० के बीच है, तो उसे कमरे के ताप पर ही रखना चाहिए ; पर जब ताप इसके विभिन्न है तब उसको किसी पारदर्श ऊष्मक में रखकर उसका ताप १२° और १८° से० के बीच रखना चाहिए। संग्राही के ऊपर एक छन्ना-कागज का टुकडा काट और भिगाकर ऐसा रखना चाहिए कि संघनित्र-नलिका उसमें ठीक कसकर लगी हुई हो।

इस प्रकार जब उपकरण ठीक हो जाय तब फ्लास्क को गरम करना चाहिए। गरम ऐसा करना चाहिए कि गरम करने के समय से कम-से-कम ५ मिनट और अधिक-से-अधिक १० मिनट में आसुत की पहली बूँद टपके। गरम करना शुरू करने के २ मिनट के बाद ताप को पढ़ना चाहिए और उसे 'संशोधन-ताप' करके लिख लेना चाहिए। संघनित्र-नली से जब पहली बूँद संग्राही में टपके तब ताप को देखकर 'प्रारम्भिक क्वथनांक' लिख लेना चाहिए। अब संग्राही को ऐसा हटाकर रख देना चाहिए कि संघनित्र-नलिका संग्राही को छूती रहे। अब ऊष्मा का नियंत्रण ऐसा होना चाहिए कि प्रति मिनट में ४ से ५ सी० सी० तेल संग्राही में इकट्ठा हो। पचीस-पचीस डिग्री पर ५०° से०, ७५° से०, १००° से०, १२५° से० जितना आसुत संग्राही में इकट्ठा हो, उसका आयतन लिखते जाना चाहिए। अच्छा होगा जब-जब १० सी० सी० आसुत इकट्ठा हो तब-तब ताप को लिखते जायँ।

जब फ्लास्क में लगभग ५ सी० सी० अवशेष रह जाय तब गरम करना तेज कर देना चाहिए, ताकि अपेक्षया उच्च क्वथनांकवाले भाग भी आसुत हो जायँ। इसके बाद फिर आँच तेज करने की आवश्यकता नहीं होती। तब तक गरम करते रहना चाहिए जब तक तापमापक का ताप महत्तम न पहुँच जाय और फिर गिरने लगे। इस 'महत्तम ताप' या 'अन्तिम ताप' को लिख लेना चाहिए। यह महत्तम ताप तभी प्राप्त होता है जब फ्लास्क सूख जाता है। समस्त आसुत को 'प्रत्यादान' नाम से लिख लेना चाहिए।

फ्लास्क में जो कुछ बच जाय, उसे अंशांकित सिलिंडर में ढालकर उसका आयतन 'अवशेष' के नाम से लिख लेना चाहिए।

१०० सी० सी० में प्रत्यादान और अवशेष के योग को घटा लेने पर जो बच जाय, उसे आसवन-हानि में लिख लेना चाहिए।

यदि प्रयोग सावधानी और यथार्थता से किया गया है तो दो प्रयोगों के फलों में ३^{0} से० से अधिक फर्क नहीं पड़ना चाहिए। दो प्रयोगों के आसुत फलों में २ सी० सी० से अधिक का फर्क नहीं पड़ना चाहिए।

जिस वायु-भार पर आसवन हुआ है, उसको लिख लेना चाहिए और यदि आवश्यकता पड़े तो उसका संशोधन कर लेना चाहिए। संशोधन सिडनी यंग (Sydney Young) के समीकरण द्वारा होता है। निम्न सारिणी उसी के आधार पर बनी है—

ताप° सें०	दबाव में १०० मिली० के अन्तर के लिए संशोधन	ताप° सें०	दबाव में १०० मिमी० के अन्तर के लिए संशोधन
१०—३०	०.३५		
३०—५०	०.३८		
५०—७०	०.४०	२३०—२५०	०.६२
७०—९०	०.४२	२५०—२७०	०.६४
९०—११०	०.४५	२७०—२९०	०.६६
११०—१३०	०.४७	२९०—३१०	०.६९
१३०—१५०	०.५०	३१०—३३०	०.७१
१५०—१७०	०.५२	३३०—३५०	०.७४
१७०—१९०	०.५४	३५०—३७०	०.७६
१९०—२१०	०.५७	३७०—३९०	०.७८
२१०—२३०	०.५९	३९०—४१०	०.८१

प्राकृत पेट्रोल का आसवन

प्राकृत पेट्रोल का आसवन भी उसी प्रकार होता है, जैसा ऊपर दिया हुआ है।

गैस-तेल का आसवन

फ्लास्क—इसके लिए २५० सी० सी० धारिता का फ्लास्क उपयुक्त होता है।

संघनित्र—संघनित्र-नली २२ इञ्च लम्बी पीतल की होती है। इसका बाह्य व्यास ५/१६ इञ्च का होता है। फ्लास्क के साथ संघनित्र ७५^{0} कोण पर जुड़ा रहता है। संघनित्र-नली १५ इञ्च लम्बे, ४ इञ्च चौड़े और ६ इञ्च ऊँचे ऊष्मक से घिरी रहती है। इस ऊष्मक में पानी के बहाव के लिए नलियाँ लगी रहती हैं। संघनित्र-नली का निचला छोर ३ इञ्च ऐसा मुड़ा रहता है कि वह संग्राही के संस्पर्श में ऊपर से सवा इञ्च पर आवे।

वर्म—इसके वर्म १९ इञ्च ऊँचे, ११ इञ्च लम्बे और ८ इञ्च चौड़े होते हैं। एक सँकरे पार्श्व में केवाट होता है, जिसमें दो छोटे-छोटे एक इञ्च व्यास के छेद समान दूरी पर होते हैं। वाष्प-नली के लिए एक-एक पार्श्व में सूराख कटा रहता है। इन छेदों के केन्द्र वर्म

के शिखर से ८½ इञ्च नीचे होते हैं। वर्म के आधार के एक इञ्च ऊपर चारों पार्श्व में १/२ इञ्च सूराख के तीन-तीन छेद होते हैं।

वलय-आधार—फ्लास्क को रखने के लिए जो वलय उपयुक्त होता है, वह सामान्य किस्म का होता है, जैसा रसायनशाला में साधारणतया उपयुक्त होता है। इसके ऊपर भी अस्बेस्टस की दफ्ती रहती है, जिसके बीच में छेद होते हैं।

गैस-बर्नर—यह उसी प्रकार का होता है जिसका वर्णन ऊपर हुआ है।

तापमापक—प्रामाणिक तापमापक उपयुक्त होता है।

संग्राही—संग्राही १०० सी० सी० का अंशांकित सिलिंडर होता है।

विधि—इसके निकालने की विधि भी वही है जैसा ऊपर वर्णन हुआ है।

चौदहवाँ अध्याय

किरासन

किरासन पेट्रोलियम का वह परिष्कृत अंश है जो लैम्पों और लालटेनों में प्रकाश उत्पन्न करने के लिए और चूल्हों और स्टोवों में गरमी उत्पन्न करने के लिए उपयुक्त होता है। इसके उपयोग अपेक्षया सीमित हैं। इस कारण इसकी प्रकृति और इसके गुण भी सीमित हैं। किरासन की श्यानता नीची होनी चाहिए, इसका दमकांक पेट्रोल से ऊँचा, इसका रंग हलका और प्रायः स्थायी और इसे दुर्गंधरहित रहना चाहिए। इसमें कोई ऐसा हाइड्रोकार्बन नहीं रहना चाहिए जो धुएँ के साथ जले। इसमें गन्धक की मात्रा अल्पतम रहनी चाहिए। इसमें बत्ती में स्वच्छन्दता से ऊपर उठने की क्षमता होनी चाहिए।

ये सब गुण पेट्रोलियम के उस अंश में रहते हैं जिसका आसवन पेट्रोल के बाद होता है। साधारणतया यह अंश १७५ से २७५° से० पर आसुत होता है। इसका विशिष्ट गुरुत्व लगभग ०·८० होता है। इसकी श्यानता प्रायः २ सेन्टीपायज़ होती है और ०° फ० शी० तक यह स्वच्छ रहता है और २०° फ० तक द्रव रहता है।

पहले-पहल किरासन के लिए ही पेट्रोलियम का उद्योग शुरू हुआ। चट्टानों से निकले तेलों का उपयोग लैम्पों में सन् १८३४ ई० से शुरू हुआ है। ऐसे तेलों को काठ-कोयले पर छानने से जलने में उससे दुर्गंध नहीं निकलती। पेट्रोलियम का आसवन तो पहले-पहल सैम्युएल कीर द्वारा सन् १८५४ ई० में शुरू हुआ। रसायनतः पेट्रोलियम के परिष्कार का श्रेय तो बेंजामिन सिलिमैन को है।

निर्माण

किरासन का निर्माण सरल है। कच्चे पेट्रोलियम का आसवन कर जो अंश १७५° और २७५° से० के बीच आसुत होता है, उसको अलग इकट्ठाकर उसका परिष्कार कर अनावश्यक पदार्थों को निकाल लेते हैं। एक समय पाराफीन किस्म के कच्चे तेल से ही किरासन प्राप्त करते थे। इसका हल्के सलफ्यूरिक अम्ल के साथ उपचार कर परिष्कार करते थे। समस्त तेल का केवल एक प्रतिशत आयतन सलफ्यूरिक अम्ल का डालकर परिष्कार करते थे।

इसके बाद उसे अलकली से धोते थे अथवा डाक्टर-उपचार करते थे। उसके बाद उसका आसवन करते थे अथवा फुलर्स मिट्टी के साथ अधिशोषण-उपचार करते थे। विभिन्न विशिष्ट गुरुत्व और विभिन्न दमकांक के अंशों को अलग-अलग इकट्ठा करते थे। किरासन में हाइड्रोकार्बन के सिवा अल्पमात्रा में फीनोल, असंतृप्त चक्रिक हाइड्रोकार्बन,नाइट्रोजन-यौगिक,

नैफ्थीनिक अम्ल भी रहते हैं, इससे किरासन का तेल स्थायी रंग का नहीं होता। उसके रंग में कुछ परिवर्तन होता रहता है। सलफ्यूरिक अम्ल के उपचार से चक्रिक यौगिक बहुत कुछ निकल जाते हैं। इस उपचार से अन्य पदार्थ भी उसमें निकलते हैं या वे नष्ट हो जाते हैं। असंतृप्त हाइड्रोकार्बन, सौरभिक हाइड्रोकार्बन और रंग को अस्थायी बनानेवाले अन्य पदार्थ दूर हो जाते हैं। इस उपचार के बाद किरासन को पूर्णतया धो लेते हैं जिससे सारा सलफोनिक अम्ल निकल जाय, नहीं तो बत्ती या बर्नर में जलने पर उससे निक्षेप बन सकता है।

किरासन का रसायन

किरासन का प्रधान उपयोग जलाने में होता है। जलने की परिस्थिति भिन्न-भिन्न होती हैं। किरासन लैम्पों में जलता है, चूल्हों में जलता है और इंजनों में जलता है। कुछ ट्रैक्टरों में भी यह उपयुक्त होता है। इस कारण इसे ट्रैक्टर-ईंधन भी कहते हैं। इसे शक्ति-ईंधन भी कहते हैं।

किरासन के जलाने पर ज्वाला कैसी बनेगी और जलाने के बाद अवाष्पशील और अदाह्य ठोस अवशेष कितना रह जायगा, यह किरासन के रासायनिक संघटन पर निर्भर करता है। कुछ स्थलों से प्राप्त किरासन में नैफ्थीनिक हाइड्रोकार्बन ६० प्रतिशत तक रहते हैं और कुछ स्थलों से प्राप्त किरासन में पैराफीन का समानुपात अधिक होता है। इस कारण किरासन में पैराफीन और नैफ्थीन हाइड्रोकार्बनों के मिश्रण रहते हैं। इन दोनों ही हाइड्रोकार्बनों में हाइड्रोजन की मात्रा ऊँची होती है और ये श्वेत धूम्ररहित ज्वाला से जलते हैं।

यदि किरासन में ऐसे हाइड्रोकार्बन हों जिनमें कार्बन की मात्रा अधिक है तो ऐसे किरासन के जलने से अधिक लाल और धूम्रमय ज्वाला बनती है। रौम्प (Romp) ने छह लैम्पों में निम्नलिखित छह पदार्थों को रखकर जलाया था।

१. टेट्राहाइड्रोनैफ्थलीन, $C_{10} H_{12}$
२. मेसिटिलीन $C_9 H_{12}$
३. किरासन-आसुत से सौरभिक निष्कर्ष
४. परिष्कृत किरासन
५. सिटीन $C_{16} H_{32}$
६. सिटेन $C_{16} H_{34}$

इन पदार्थों में कार्बन की मात्रा क्रमशः कम होती जाती है। यदि लैम्प की बत्ती उतनी पूरी उठा दी जाय जितनी वह विना धुएँ के जल सके तो पहले पदार्थ के साथ बहुत छोटी ज्वाला पर ही धुआँ निकलना शुरू हो जाता है और उसके बाद ज्वाला की लम्बाई सिटेन तक क्रमशः बढ़ती जाती है। पहले लोगों का विचार था कि सौरभिक हाइड्रोकार्बनों से तेल की प्रदीप्ति-शक्ति कम हो जाती है; पर अब ऐसा मालूम हुआ है कि ऐसे हाइड्रोकार्बनों के २० या ३० प्रतिशत रहने से कोई क्षति नहीं होती, बल्कि उससे लाभ होता है।

सौरभिक हाइड्रोकार्बनों के संबंध में विभिन्न मत हैं। कुछ लोगों की सम्मति है कि उसके २० प्रतिशत के रहने से ज्वाला की लंबाई और प्रदीप्ति-शक्ति में कोई अन्तर नहीं होता। कुछ लोगों की सम्मति है कि उससे ज्वाला की लंबाई और अतः कैण्डलशक्ति कम

हो जाती है। किरासन में केवल स्थायी पैराफीन और नेफ्थीन के रहने से उसके जलने का गुण अवश्य बढ़ जाता है। असंतृप्त रेज़िन बननेवाले पदार्थ, गन्धक यौगिक, सल्फोनिक अम्लों के लवणों की अनुपस्थिति इस कारण हितकर है कि उनसे अहितकर पदार्थ जलने के बाद नहीं बनते।

ऐसा क्यों होता है, इसकी व्याख्या अनेक लोगों ने की है। सामान्य दहन में दो काम साथ-साथ होते हैं—तेल का भंजन और हाइड्रोकार्बनों का ऑक्सीकरण। पैराफीन और नेफ्थीन में हाइड्रोजन की मात्रा अधिक रहने से अधिक शीघ्रता से आक्सीकरण और दहन होता है। यहाँ छोटे-छोटे हाइड्रोकार्बनों और मुक्त कार्बन में विच्छेदन कम होता है। ऐसे यौगिक नीली ज्वाला के साथ जलते हैं। सामान्य लैम्पों में भी बहुत ऊँची ज्वाला के साथ ये जलते हैं। पर यदि किरासन में सौरभिक हाइड्रोकार्बन हैं तो बड़ी ज्वाला में धुएँ बनते हैं। धुएँ बनने का तात्पर्य है, अपूर्ण दहन। पैराफीन-नेफ्थीन किस्म के हाइड्रोकार्बन ऊष्मा-विच्छेदन के अधिक प्रतिरोधक होते हैं। दोनों का भंजन प्रायः एक ही गति से होता है; पर सौरभिक हाइड्रोकार्बनों के भंजन से ठोस कार्बन-अवशेष अधिक प्राप्त होता है और पैराफीन-नेफ्थीन हाइड्रोकार्बनों से कजली-सदृश पदार्थ कम बनते हैं।

जलने के प्रश्न से हाइड्रोजन-मात्रा का घनिष्ठ संबंध है। हाइड्रोकार्बन जलकर जल-वाष्प बनता है। यह जल-वाष्प ज्वाला के कार्बन के साथ मिलकर कार्बन मनॉक्साइड

$$C + H_2O \rightleftharpoons CO + H_2$$
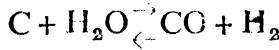
और हाइड्रोजन बनते हैं जो फिर जलकर बिना धुएँ की ज्वाला उत्पन्न करते हैं। रॉम्प का कथन है कि धूमवाली ज्वाला में जलनेवाली वायु को यदि जल-वाष्प से संतृप्त कर दिया जाय तो वह ज्वाला धूम्रहीन ज्वाला में जलने लगेगी।

यह समझना भूल है कि पैराफीन-नेफ्थीन किरासन में कजली नहीं बनती। यदि ऐसी लैम्प-ज्वाला का अविरत वर्णपट लिया जाय तो उसमें तापदीप्त कार्बन का होना सिद्ध होता है। वस्तुतः अच्छे किरासन के जलने में निम्नलिखित कार्य होते हैं—

१. किरासन का अधिक अंश धूम्रहीन दहन से जलकर बहुत उच्च ताप उत्पन्न करता है।

२. किरासन की सीमित मात्रा का भंजन होकर गैसीय हाइड्रोकार्बन और कोक बनते हैं।

३. कोक का कुछ अंश जल-वाष्प से प्रतिक्रियित हो दाह्य गैस बनता है।

४. कोक का कुछ अंश तापदीप्त हो प्रकाश उत्पन्न करता है।

५. कोक का सारा अंश जलकर अन्त में कार्बन डायक्साइड बनता है।

बैंक्रोफ्ट का मत है कि ज्वाला की दीप्ति का कारण गैसीय माध्यम में कार्बन का कोलायडल निलम्बन है। इस कार्बन का निक्षेप विद्युत्-क्रम के ऋणात्मक तत्त्व पर हो सकता है। इससे ज्ञात होता है कि कोलायडल कार्बन के कण धनाविष्ट हैं। ज्वाला के ऊपरी भाग पर निक्षेप की मात्रा अधिक रहती है। इससे मालूम होता है कि ऊपर के भाग में कार्बन की मात्रा अधिक रहती है। कार्बन के ये कण जुटकर बड़ा होना शुरू करते हैं। जब ये बहुत बड़े हो जाते हैं, तब धुआँ बनकर निकलते हैं।

ऐसा समझा जाता है कि अपद्रव्यों के लेश से दहन में विशेष क्षति नहीं होती। उनकी उपस्थिति से कुछ कष्ट अवश्य होता है, जो उनकी अनुपस्थिति में नहीं होता। इनमें सबसे अधिक कष्ट गन्धक-यौगिकों, असंतृप्त और चक्रिक हाइड्रो-कार्बन के कारण होता है। यदि अल्प मात्रा में भी गन्धक के यौगिक हों तो चिमनी पर पारभासक श्वेत निक्षेप बनता है। यह निक्षेप सोडियम सल्फेट, अमोनियम सल्फेट, पोटैशियम और कैलसियम सल्फेट के बनने के कारण होता है। ये धातुएँ या तो बत्ती से आती हैं अथवा ये लवण-काँच पर सलफ्यूरस अथवा सलफ्यूरिक अम्लों की क्रिया से बनती हैं। ये काँच की चिमनी से भी बनती हैं। इसकी पुष्टि में कहा जाता है कि नये लम्प की चिमनी में निक्षेप बड़ी शीघ्रता से बनता है। जैसे-जैसे लम्प पुराना होता जाता है, निक्षेप का बनना कम होता जाता है।

सौरभिक और असंतृप्त चक्रिक हाइड्रो-कार्बन इस कारण अवांछनीय हैं कि ये बत्ती पर कोक के निक्षेप बनते हैं। इससे तेल के बहाव पर प्रभाव पड़ता है और ज्वाला के आकार पर भी, तेल में विलेय धातुओं के सल्फोनेट या नैफ्थीनेट बनते हैं, जो बत्ती पर अकार्बनिक आक्साइड, सल्फोनेट या कार्बोनेट का निक्षेप बनाकर तेल के बहाव और ज्वाला की बनावट में क्षति पहुँचाते हैं।

भौतिक गुण

किरासन के जलने और भौतिक गुणों में सम्बन्ध स्थापित करने की व्यर्थ चेष्टाएँ हुई हैं। लम्पों में जब तेल जलता है, तब केशिकत्व के द्वारा तेल बत्ती में चढ़ता है। तेल के खिंचाव की गति तल-तनाव और श्यानता पर निर्भर करती है। तल-तनाव ताप की वृद्धि से कुछ सीमा तक घटता है और क्वथनांक की वृद्धि से थोड़ा बढ़ता है; पर यह परिवर्त्तन महत्त्व का नहीं है। स्टिवर्ट ने देखा कि बिलकुल विभिन्न विशिष्ट गुरुत्ववाले दो तेलों के तल-तनाव से केवल २ प्रतिशत का अन्तर था।

श्यानता अधिक महत्त्व की है। लैम्प के जलाने पर ज्वाला पूरी रहती है; क्योंकि सारी बत्ती तेल से संतृप्त रहती है; पर यदि तेल बहुत श्यान है तो ज्वाला छोटी हो जाती है; क्योंकि श्यान होने के कारण जिस गति से तेल जलता है, उस गति से तेल बत्ती में उठता नहीं है। ज्वाला को बड़ी रखने के लिए बत्ती को ऊपर उठाना पड़ता है; पर ऐसा करने से बत्ती जल्दी खत्म हो जाती है। तेल की श्यानता साधारणतया २ सेन्टीपायज् के लगभग रहनी चाहिए। यदि ०° से० पर १·७५ से ३·० और ३०° से० पर १·० से १·६ रहे तो अच्छा समझा जाता है।

परीक्षण

किरासन उपयुक्त है अथवा अनुपयुक्त, इसका ज्ञान हमें किरासन के परीक्षण से होता है। परीक्षण में विशिष्ट गुरुत्व, आसवन-विस्तार, गन्धक की मात्रा, रंग और दमकांक का ज्ञान आवश्यक होता है। मेघ-विन्दु, डाक्टर-परीक्षण और ताँबे की पट्टी के क्षारण (Corrosion) से भी बहुत कुछ पता लगता है। दमकांक का निर्धारण अनेक वर्षों तक एक महत्त्व का परीक्षण था। इससे पता लगता था कि किरासन में निम्न ताप पर उबलनेवाला अंश कम है या अधिक। निम्न ताप पर उबलनेवाले अंश के अधिक रहने से लैम्पों में विस्फोट होने की सम्भावना बढ़ जाती है। दमकांक पर वाष्पशील अपद्रव्यों का भी पर्याप्त प्रभाव पड़ता है।

किरासन तेल की प्रदीप्ति और ज्वलन-शक्ति का भी निर्धारण होता है। विना प्रदीप्ति कम हुए कितने समय तक तेल जल सकता है, इसका भी परीक्षण होता है। विना धुआँ दिये कितनी बड़ी ज्वाला से लैम्प जल सकता है, इसका भी निर्धारण होता है। ऐसे निर्धारण की विधियों का वर्णन परीक्षण-प्रकरण में हुआ है ; जिस किरासन में सौरभिक हाइड्रो-कार्बन रहते हैं, उसकी विना धुआँ दिये ज्वाला बड़ी छोटी होती है। उसी परिस्थिति में पैराफीन हाइड्रो-कार्बनवाले किरासन की ज्वाला ४ से ८ गुना बड़ी होती है।

अन्य उपयोग

ऊपर कहा गया है कि किरासन का सबसे अधिक उपयोग जलाने में होता है। इसके जलाने से रोशनी उत्पन्न होती है और गरमी भी। इन दोनों कामों के लिए इसका उपयोग होता है।

इंजन में जलाने के लिए भी किरासन का उपयोग होता है। ट्रैक्टरों और आटा पीसने की कलों में किरासन लगता है, उत्ताप-प्रावारवाले (incandescent mantle) लम्पों में अब किरासन का उपयोग अधिकाधिक हो रहा है। ऐसे लम्पों के लिए अधिक कलारी-वाला तेल अच्छा होता है। स्टोवों में भी किरासन जलता है। किरासन के महत्त्व का उपयोग विलायक के रूप में होता है। यदि किरासन की गन्ध दूर की जाय तो अनेक औषधों और कान्तिवर्द्धक पदार्थों के निर्माण में भी यह उपयुक्त हो सकता है। कीड़ों, मक्खियों और मच्छड़ों के मारने की औषधियों के घुलाने में किरासन का व्यवहार होता है। पीरेथ्रम और डी० डी० टी० इसमें घुलाकर छिड़के जाते हैं। ऐसा अनुमान है कि प्रतिवर्ष प्रायः ६०००० लाख गैलन किरासन खपता है।

किरासन के गुण निम्नलिखित प्रकार के होते हैं—

	पेन्सीलवेनिया	मध्य-यूरोप
विशिष्ट गुरुत्व	० ७६७२	०'८०८६
गन्धक	०'०३	०'०४
रंग	२६	२५
मेघ-विन्दु	−५°फ०	−३८° फ०
डाक्टर-परीक्षण	मीठा	अच्छा
दमकांक	१२०° फ०	१३१° फ०

पन्द्रहवाँ अध्याय

पेट्रोल या गैसोलिन

मोटर-गाड़ियों में जलाने के लिए जो तेल उपयुक्त होता है, वह पेट्रोलियम का एक अंश होता है। इस अंश को भारत और इङ्गलैण्ड में 'पेट्रोल' कहते और अमेरिका में इसे 'गैसोलिन' कहते हैं। मोटर-गाड़ियों के इंजन ऐसे बने होते हैं कि वे इस तेल के जलने से चल सकते हैं। पहले-पहल ऐसे इंजन बनते थे कि जिनमें सब प्रकार के तेल जल सकते थे, पर अब ऐसा नहीं होता। अब प्राप्य तेल के अनुकूल इंजन नहीं बनते, वरन् इंजन के अनुकूल तेल तैयार होता है। पेट्रोल की माँग आज बहुत बढ़ गई है। माँग बढ़ जाने से पेट्रोलियम के प्रभंजन द्वारा अधिक से अधिक पेट्रोल प्राप्त करने की सफल चेष्टाएँ हुई हैं। पेट्रोलियम-कूपों से निकली प्राकृतिक गैस में जो द्रव निकलता है, उससे भी पेट्रोल प्राप्त करने की सफल चेष्टाएँ हुई हैं। ऐसे पेट्रोल को 'प्राकृतिक पेट्रोल' कहते हैं। आजकल पेट्रोल के साथ कुछ बेंज़ीन और कुछ अल्कोहल भी मिलाया जाता है। मेथिल अल्कोहल भी पहले बहुत मिलाया जाता था। मोटर-इंजन के स्थान में अब डीज़ेल-इंजन का भी व्यवहार अधिकाधिक होने लगा है। ऐसे इंजन में पेट्रोलियम का एक विशिष्ट अंश, गैस-तेल, का उपयोग होता है।

पेट्रोल में हाइड्रोकार्बन रहते हैं। अनेक हाइड्रोकार्बनों का पेट्रोल-मिश्रण होता है। मिश्रण में जो हाइड्रोकार्बन रहते हैं, उनका क्वथनांक ४० से २२०° सें० रहता है। ये हाइड्रोकार्बन पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस में रहते हैं। पेट्रोलियम से सीधे प्राप्त पेट्रोल-अंश का संघटन पेट्रोलियम की प्रकृति पर निर्भर करता है। कुछ पेट्रोल में अधिक अंश पैराफिनीय होते हैं और कुछ में नैफ्थिनीय होते हैं। कुछ पेट्रोल में सौरभिक भी रहते हैं। उच्च ताप पर भंजन से जो पेट्रोल प्राप्त होता है, उसका संघटन कच्चे तेल की प्रकृति पर नहीं निर्भर करता।

पेट्रोल में चार कार्बन से बारह कार्बनवाले हाइड्रोकार्बन रहते हैं। इस कारण इसका संघटन बड़ा जटिल है। ४ से १२ कार्बन-परमाणुओं के ६६१ पैराफिन और ३८३७ ओलिफिन होते हैं। इनके अतिरिक्त सौरभिक और नैफ्थिनीय हाइड्रोकार्बन भी रह सकते हैं। सौरभिक हाइड्रोकार्बनों की संख्या १० से १९ है, पर नैफ्थिनीय हाइड्रोकार्बनों की ८०० से ऊपर है। इन हाइड्रोकार्बनों में वास्तव में कितने हाइड्रोकार्बन विद्यमान हैं, यह कहना असम्भव है; पर ऐसा मालूम होता है कि इनकी संख्या बड़ी नहीं है।

किस स्थान के पेट्रोल में किस हाइड्रोकार्बन की प्रमुखता रहती है, इसका अन्वेषण बहुत विस्तार से हुआ है। ईरानी पेट्रोल में सशाख पैराफिन अधिकतर मात्रा में, सुमात्रा के

पेट्रोल में सशाख पैराफिन और नैफ्था प्रधानतया, बोर्नियो के पेट्रोल में सौरभिक और नैफ्थीन अधिक रहते हैं। सुराखांस्क (रूस) के पेट्रोल में नैफ्थीन अधिक और नार्मल पैराफिन कम मात्रा में रहते हैं। पेन्सिल्वेनिया के पेट्रोल में नार्मल पैराफिन अधिक मात्रा में और कुछ सौरभिक रहते हैं। पश्चिमी टेक्सास के पेट्रोल में पैराफिन और नैफ्थीन रहते हैं, सौरभिक नहीं होता। भंजित पेट्रोल में ओलिफिन और सौरभिक प्रचुर मात्रा में रहते हैं।

गार्नर ने पेट्रोल के विश्लेषण की एक रीति निकाली है, जिससे भौतिक गुणों के परिवर्त्तन से विशिष्ट समूहों का पता लगता है। उससे अमेरिका के पेट्रोल का विश्लेषण हुआ है और निम्नलिखित आँकड़े प्राप्त हुए हैं।

तेल से सीधे प्राप्त पेट्रोल

	पैराफिन	नैफ्थीन	ओलिफिन	सौरभिक
मेक्सिको	८२.३	१०.६	१.५	५.३
पेन्सिल्वेनिया	८२.५	१५.३	२.१	लेश
मिचिगन	८५.२	७.४	२.६	४.५
वेनेजुएला	७१.०	२०.४	०	८.६
मध्य-अमेरिका	७२.६	२२.०	१.६	३.२
मिश्र-कैलिफोर्निया	५८.६	३१.६	२.२	७.३
भंजित पेट्रोल				
पेन्सिल्वेनिया	६५.८	६.०	११.६	१७.४

केवल ओक्लाहोमा तेल के पेट्रोल का विस्तार से अध्ययन हुआ है। १८०° से० तक उबलनेवाले अंश से ४५ हाइड्रोकार्बन निकाले गये हैं। इनमें २४ पैराफिन थे, ११ नैफ्थीन थे और १० सौरभिक थे। इनका तृतीयांश नार्मल हाइड्रोकार्बन था। रोसिनी (Rossini) ने देखा कि ५५ से १४५° से० पर उबलनेवाले पेट्रोल में ७५ प्रतिशत में केवल ३१ हाइड्रोकार्बन थे और शेष २५ प्रतिशत में ६६ हाइड्रोकार्बन रह गये थे।

हाइड्रोकार्बनों के अतिरिक्त पेट्रोल में अल्प मात्रा में गन्धक के भी यौगिक रहते हैं। कुछ तो गन्धक के यौगिक परिष्कार में निकल जाते, पर कुछ रह ही जाते हैं।

पेट्रोलियम के आसवन से जो अंश पहले निकलता है, वह अधिकतम वाष्पशील होता है। यही अंश पेट्रोल है। इसके पुनरासवन से बहुत हल्का अंश निकल जाता है। इस रीति को 'स्थायीकरण' कहते हैं। यदि इसे नहीं निकाला जाय तो रखने में और उपयोग में भी कठिनता होती है। भंजन से भी पेट्रोल प्राप्त होता है। पेट्रोल से अपद्रव्यों को निकाल डालना बहुत आवश्यक है।

पेट्रोल में साधारणतया रंग, गन्धक, गोंद और गोंद बननेवाले पदार्थ रहते हैं। पहले इन अपद्रव्यों को सलफ्यूरिक अम्ल, जलीय क्षार और क्षारीय प्लम्बाइट से दूर करते थे। सलफ्यूरिक अम्ल से अनेक अपद्रव्य निकल जाते हैं; पर अब अधिक सुदक्ष और सस्ते पदार्थों के प्राप्त होने के कारण सलफ्यूरिक अम्ल का उपयोग अनावश्यक समझा जाता है। भंजित पेट्रोल को सलफ्यूरिक अम्ल के उपचार से कुछ पुरुभाजन होकर उच्च क्वथनांकवाले

पदार्थ बनते हैं। अतः ऐसे उत्पाद को फिर से आसवन की आवश्यकता पड़ती है। आजकल उसी पेट्रोल का सलफ्यूरिक अम्ल के साथ उपचार करते हैं, जिसमें गन्धक की मात्रा अधिक रहती है।

पेट्रोलियम से सीधे प्राप्त पेट्रोल को आजकल केवल क्षार से धोते हैं या उसका मृदुकरण करते हैं। पेट्रोल में प्रति-आक्सीकारक डालकर गोंद का बनना रोकते हैं। आजकल पेट्रोल रंगकर बेचा जाता है। इससे अब रंग दूर करने की आवश्यकता नहीं रह गई है।

पेट्रोल वाष्पशील होना चाहिए। पिस्टल से वायु खींची जाकर कारब्युरेटर में शीकर के रूप में पेट्रोल से मिलती है। वहाँ पेट्रोल का शीकर वाष्पीभूत होकर वायु से मिलकर सिलिंडर में जाता है। यहाँ सारे पेट्रोल का वाष्पीभवन होना चाहिए; पर वास्तव में इसके कुछ अंश का ही वाष्पीभवन होता है। अधिकांश पेट्रोल छोटी-छोटी बूँदों के रूप में रहता है। वाष्पीभवन की मात्रा वायु के अधिक काल के संसर्ग से बढ़ाई जा सकती है। पेट्रोल या मिश्रण के ताप की वृद्धि से अथवा पेट्रोल के अधिक वाष्पशील होने से वाष्पशीलता बढ़ाई जा सकती है, अधिक काल तक के संसर्ग के लिए विशेष प्रकार का मोटर रहना चाहिए। ताप की वृद्धि के लिए विशेष प्रकार की उष्ण स्थान–युक्ति होनी चाहिए। मोटर-ईन्धन की वाष्पशीलता से उसका मूल्य निर्धारित होता है।

मोटरकार में कारब्युरेटर का कार्य है—पेट्रोल-वायु का मिश्रण तैयार करना, जिसका विस्फोट सरलता से हो सके। जल्दी विस्फुटित होनेवाले मिश्रण में वायु ६ भाग और पेट्रोल १ भाग रहता है। अन्य मिश्रण में वायु २० भाग और पेट्रोल १ भाग रहता है। यदि हम मोटर-ईंधन का औसत अणुभार, औक्टेन का अणुभार, ११४ मान लें तो पूर्ण दहन के लिए वायु और ईंधन का अनुपात १५·७ से १ होना चाहिए। साधारणतया १४·५ से १ का अनुपात बहुत मितव्ययी होता है, पर १२·५ से १ का अनुपात सर्वश्रेष्ठ समझा जाता है। यद्यपि इसमें २५ प्रतिशत ईंधन अधिक खर्च हो जाता है। सैद्धान्तिक रूप से महत्तम दक्षता के लिए कार्बन-डायक्साइड की मात्रा मोटर से निकली गैस में १४·७ प्रतिशत रहनी चाहिए; पर साधारणतया महत्तम मितव्ययिता के लिए केवल १३·८ प्रतिशत रहती है। इसका कारण यह है कि पेट्रोल का केवल ९४ से ९५ प्रतिशत ही जलता है। शेष कार्बन मनौक्साइड और जल के साथ सक्रियित हो कार्बन-डायक्साइड और हाइड्रोजन बनता है—

$$CO + H_2O \rightleftarrows CO_2 + H_2$$
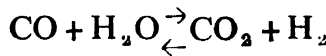
पूर्ण दहन के लिए वायु की मात्रा अधिक रहनी चाहिए; पर ऐसा मिश्रण उपयुक्त नहीं होता; क्योंकि ऐसा मिश्रण बहुत धीरे-धीरे जलता और उत्स्राव कपाट को अतितप्त कर देता है।

कारब्युरेटर में ऐसी अनेक युक्तियाँ बनी हैं, जिनसे वायु का मिश्रण बदला और उस पर नियंत्रण रखा जा सकता है। ऐसा समझा जाता है कि सामान्य प्रकार्य में पेट्रोल के ७५ से ९० प्रतिशत का उद्वाष्पन होता है। शेष शीकर के रूप में द्रव फिलम में रहता है। इन्हें वाष्पीभूत करने के लिए उत्स्राव ऊष्मा का उपयोग होता है। यह ज्ञात नहीं है कि सम्पीडन दबाव में और सिलिंडर ताप पर सिलिंडर में पेट्रोल वाष्प के रूप में रहता है अथवा कुहेसा के रूप में।

जब इंजन ठण्डा रहता है तब मिश्रण से पेट्रोल की मात्रा अल्प मात्रा में खींची जाती है। चोक कपाट के द्वारा अधिक पेट्रोल को खींचकर ऐसा वायु-पेट्रोल-वाष्प मिश्रण प्राप्त करते हैं, जो जल्द विस्फुटित हो सके।

लेड-टेट्राएथिलवाले पेट्रोल का उद्वाष्पन महत्त्व का है। लेड-टेट्राएथिल उच्च ताप पर उबलनेवाला द्रव है। इसकी अधिक मात्रा अवशिष्ट अ-उद्वाष्पित भाग में रह जाती है। विभिन्न सिलिंडरों में भी सम्भवतः इसकी मात्रा एक-सी नहीं रहती। कुछ सिलिंडर में इसकी मात्रा अधिक रहती है और कुछ में कम। यही कारण है कि पेट्रोल की ऑक्टेन-संख्या चलती मोटर की ऑक्टेन-संख्या से विभिन्न रहती है।

कारब्युरेटर के ताप और समय के एक रहते हुए पेट्रोल का काम बहुत कुछ वाष्पशीलता पर निर्भर करता है। इस कारण पेट्रोल की वाष्पशीलता महत्त्व की है। किस ताप पर कितना अंश आसुत होता है, इससे वाष्पशीलता का ज्ञान होता है, यद्यपि फ्लास्क के उद्वाष्पन और कारब्युरेटर के उद्वाष्पन में बहुत अन्तर है; क्योंकि दोनों की परिस्थितियों में विभिन्नता है। फ्लास्क में द्रव पेट्रोल और वाष्प के साथ साम्य रहता है; पर कारब्युरेटर में वाष्प और अपूर्ण दहन से वाष्प के साथ द्रव ईंधन के कारण ईंधन की छोटी-छोटी बूँदों के कारण मिश्रण भींगा रहता है।

वायु की उपस्थिति में पेट्रोल की वाष्पशीलता की माप उसका ओसांक है। ओसांक वह ताप है, जिस ताप पर पेट्रोल और वायु के बिलकुल शुष्क मिश्रण का संघनन प्रारम्भ होता है। ओसांक का विचार विल्सन और बर्नार्ड ने पहले-पहल सन् १९२१ई० में रखा था। उन्होंने ओसांक निकालने की एक परोक्ष विधि भी बतलाई है। पीछे अन्य लोगों ने ओसांक निकालने की प्रत्यक्ष विधियाँ भी निकालीं। पेट्रोल और वायु के मिश्रण का जिसमें वायु और पेट्रोल का भार-अनुपात १५:१ रहता है, ओसांक ५०° से १४०° फ० के बीच होता है। सामान्य पेट्रोल का ओसांक विशेष बदलता नहीं है। पेट्रोल में निम्न क्वथनांकवाले अंशों और पेट्रोल के पूर्व गरम करने से ओसांक का महत्त्व अब कम हो गया है।

पेट्रोल-वायु मिश्रण का उद्वाष्पन विभिन्न ताप पर विभिन्न हो सकता है। ऐसे किसी मिश्रण का ओसांक वह ताप है, जिसपर १०० प्रतिशत उद्वाष्पन हो जाता है। यदि शुद्ध पेट्रोल हो तो यह ताप वस्तुतः उसका क्वथनांक है। साधारणतया किसी विशिष्ट ताप पर पेट्रोल का कुछ ही अंश उद्वाष्पित हो वायु के साथ मिश्रण बनता है। इंजन में पेट्रोल और वायु का मिश्रण जले, इसके लिए आवश्यक है कि वायु और पेट्रोल का अनुपात अधिक-से-अधिक २०:१ हो। इससे अधिक होने पर और साधारणतया ३०:१ होने पर तो ऐसा मिश्रण इंजन में जल ही नहीं सकता है।

चूँकि मोटर के इंजन में शून्यक होता है, यह आवश्यक है कि न्यून दबाव पर पेट्रोल का उद्वाष्पन कितना होता है, इसका ज्ञान हमें हो। ताप के स्थायी होने पर वायु का आयतन दबाव के प्रतिलोमानुपात में होता है। इस कारण अर्ध-वायुमण्डल दबाव में जिस मिश्रण का भार-अनुपात ३:१ होता है, वह एक वायुमण्डल के दबाव पर ६:१ अनुपात में होगा।

पेट्रोल का प्रति-अभिघात गुण बहुत ऊँचा होना चाहिए। इस कारण पेट्रोल में जितना ही कम अवयव रहें, उतना ही अच्छा होता है। पेट्रोल में प्रायः ४० प्रतिशत-आइसो पेण्टेन

और आइसो-ऑक्टेन के रहने से ऐसे ईंधन की ऑक्टेन-संख्या १०० होती है। नार्मल ऑक्टेन का वायुमण्डल के दबाव और वायु के विभिन्न अनुपात के मिश्रण में उद्वाष्पन जो होता है, वह चित्र २३ से प्रकट होता है। २०° ताप पर २० भाग वायु और १ भाग पेट्रोल-मिश्रण का ७० प्रतिशत उद्वाष्पन होता है। १४° सें० पर उद्वाष्पन केवल ५० प्रतिशत होता है।

वाष्प-पाश

कभी-कभी मोटरकार के इंजन का कार्य रुक जाता है। यह कभी बहुत अधिक वाष्पशील अवयव के कारण होता है और कभी उच्च ताप के कारण। इंजन के रुकने का कारण
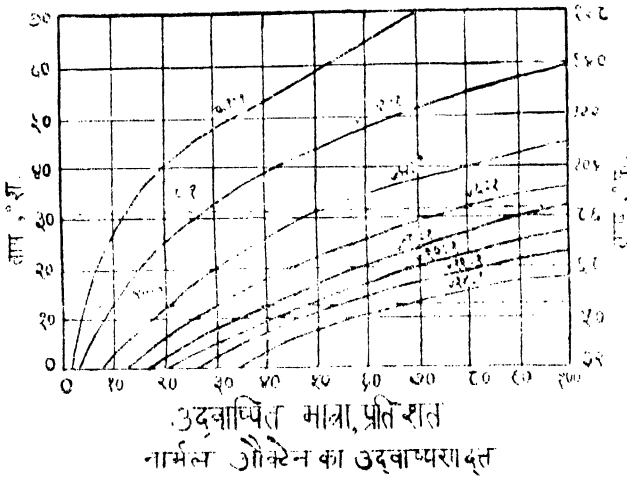
चित्र २३—उद्वाष्पन-मात्रा

पेट्रोल के प्रवहण का रुक जाना है। इसका कारण यह होता है कि वाष्प के बुलबुले या तो प्रवेश-नली में या कारब्युटेर में बनते हैं। इससे इंजन रुक-रुककर चलता है अथवा चलने के बाद जल्द स्टार्ट नहीं होता। बहता पेट्रोल बुलबुला-अंक से ऊपर गरम हो जाता है। इससे या तो बहुत गाढ़ा या बहुत पतला मिश्रण उत्पन्न होता है। यदि प्रवेश-नली में कोई रुद्ध या उपसंकोच हो तो पेट्रोल का बहना बिल्कुल रुक जाता है। इस कठिनता को कुछ तो इंजन के सुधार से और बहुत कुछ वाष्पशील अंशों के निकाल देने से दूर कर सकते हैं।

ईंधन के बुलबुलांक से वाष्प-पाश का घनिष्ठ सम्बन्ध है। परिष्करणी में ईंधन के वाष्प-दबाव से वाष्प-पाश का ज्ञान प्राप्त करते हैं। पेट्रोल-इंजन का आरम्भन सिलिंडर में वायु-वाष्प के मिश्रण पर निर्भर करता है। ठंडे इंजन से पेट्रोल का उद्वाष्पन सीमित होता है और वायु-पेट्रोल का मिश्रण ऐसा नहीं होता कि विस्फोट के लिए उसका अनुपात ४:१ से लेकर २०:१ के अन्दर पड़े। ऐसे मिश्रण में ईंधन के वाष्प की मात्रा अधिक हो, उसके लिए पेट्रोल-धनी मिश्रण होना चाहिए। इसके लिए 'चोक' बल्ब का उपयोग होता है। यदि वायु-पेट्रोल वाष्प-मिश्रण में २०:१ अनुपात हो जो इंजन आरम्भ के लिए अन्तिम सीमा है अथवा १२:१ अनुपात हो जो सन्तोषजनक इंजन आरम्भन के लिए आवश्यक है तो ऐसा

पेट्रोल रहना चाहिए, जिसकी वाष्पशीलता निश्चित हो। १:१ वायु-पेट्रोल मिश्रण 'चोक' के लिए ईंधन का ५ प्रतिशत उद्वाष्पन पर्याप्त है। इससे वायु-पेट्रोल का २०:१ मिश्रण प्राप्त होता है। यदि उद्वाष्पन १० प्रतिशत हो तो १२:१ मिश्रण प्राप्त होता है और १६:१ प्रतिशत उद्वाष्पन से २:१ मिश्रण प्राप्त होता है। ५ प्रतिशत और १६'७ प्रतिशत क्वथन-ताप अधिक महत्त्व के हैं। साधारणतया पेट्रोल के आरम्भन गुण की परीक्षा के लिए १० प्रतिशत क्वथन-ताप लिया जाता है। यह ताप १५८° फ० से कुछ नीचे का ही होता है। इससे अधिक नीचे होने से लाभ नहीं होता, क्योंकि उससे बहुत सरलता से उद्वाष्पन होने के कारण वाष्प-पाश की सम्भावना बनी रहती है।

पेट्रोल की वाष्पशीलता का महत्त्व एक दूसरे दृष्टिकोण से भी है। अधिक वाष्पशील होने के कारण उद्वाष्पन में ऊर्जा का अवशोषण अधिक होता है। इससे वायु में उपस्थित भाप की कारब्युरेटर में बर्फ बन सकती है। यद्यपि बर्फ का बनना मोटरगाड़ियों के लिए उतना कष्टदायक नहीं है; पर वायु-यानों के लिए बड़े महत्त्व का है और उससे वायुयान-संचालन में अनेक कष्ट हो सकते हैं। इन कष्टों से बचने के लिए पेट्रोल में नीचे लिखे गुणों का होना बड़ा आवश्यक है। मोटरगाड़ियों और वायुयानों में उपयुक्त होनेवाले पेट्रोल के निम्नलिखित गुण रहना चाहिए—

	मोटर पेट्रोल		वायुयान-पेट्रोल
	मोटरकार, ट्रक और ट्रैक्टर	एम्बुलेंसकार	
गोंद, मिलिग्राम	—	—	१०
गन्धक प्रतिशत	०'१०	०'१०	०'१०
औक्टेन-संख्या	—	६५	९२ से १००
आसवन, °फ०			
१० प्रतिशत	१६७	१४९	१६७
५० प्रतिशत	२८४	२५७	२१२
९० प्रतिशत	३९२	३५६	२७५
अवशेष प्रतिशत	२'०	२'०	२'०
हिमांक °से०	—	—	—७६

अभिघात

नलियों में गैस-मिश्रण के विस्फुटित होने से प्रस्फोटन होता है। इसमें ज्वलन का वेग एक-ब-एक बढ़ जाता है। इससे तरङ्ग-गति उत्पन्न होती है जिसका वेग ध्वनि के वेग से तीव्रतर होता है। दबाव की वृद्धि का वेग भी बहुत ही ऊँचा हो जाता है। प्रस्फोटन के साथ-साथ अभिघात होता है। दोनों का क्या सम्बन्ध है और उनमें क्या अन्तर है, यह ठीक-ठीक मालूम नहीं है। ऐसा समझा जाता है कि अभिघात में ज्वाला का संचारण बहुत धीमा

हो जाता और दबाव की वृद्धि भी बहुत कम हो जाती है। अभिघात में ध्वनि उत्पन्न होती, शक्ति का ह्रास होता, और इंजन अति-तप्त हो जाता है। पूर्व-प्रज्वलन में भी ऐसे ही लक्षण देखे जाते हैं। अतः अभिघात को पूर्व-प्रज्वलन समझ लेना सामान्य बात है। पर दोनों में अन्तर है। पूर्व-प्रज्वलन स्फुलिंग के पूर्व में होता है जब कि अभिघात स्फुलिंग के बाद होता है। पूर्व-प्रज्वलन तापदीप्त कार्बन अथवा बहुत तप्त स्फुलिंग नग पोरसीलेन के कारण होता है। यहाँ स्फुलिंग बनने के पूर्व ही मिश्रण जल उठता है। यह आत्म-प्रज्वलन एक विशिष्ट घटना है। इंजन की चाल की वृद्धि से आत्म-प्रज्वलन बढ़ता है जब कि इंजन की चाल की वृद्धि से अभिघात घटता है। इंजन की चाल की वृद्धि से पूर्व-प्रज्वलन भी बढ़ता है ; पर पूर्व-प्रज्वलन से इंजन की चाल में कमी भी आती है।

रिकार्डो ने पहले-पहले प्रतिपादित किया था कि विना जली गैसों के कुछ अंश के स्वतः प्रज्वलन से जो गौण विस्फोट होता है उसीसे अभिघात उत्पन्न होता है। पीछे अन्य कई लोगों ने भी इस सिद्धान्त की पुष्टि की। ऐसा समझा जाता है कि ताप की वृद्धि और विना जली गैसों के घनत्व की वृद्धि से स्वतः प्रज्वलन होता है। यदि यह बात सच हो तो निम्न-प्रज्वलन तापवाले ईंधन और हाइड्रो-कार्बनों में बडी सरलता से अभिघात होना चाहिए। जो हाइड्रो-कार्बन कठिनता से अभिघात उत्पन्न करते हैं, उनका प्रज्वलन-ताप निम्न होता है। जो पदार्थ अभिघात को कम करते हैं, वे निम्न-ताप आक्सीकरण के वेग को कम करते और वायु में प्रज्वलन-ताप को उठाते हैं। अभिघात उत्पन्न करनेवाले ठीक इसके प्रतिकूल कार्य करते हैं।

हाइड्रो-कार्बनों का प्रज्वलन-ताप किस प्रकार लेड टेट्राएथिल से बढ़ता है, यह निम्न-लिखित सारिणी से मालूम होता है—

हाइड्रो-कार्बन	प्रज्वलन-ताप °से०	०·२५ प्रतिशत लेड टेट्राएथिल से प्रज्वलन-ताप में वृद्धि °से०
बेंज़ीन	६६०	१८
साइक्लोहेक्सेन	५३५	२७
पेण्टेन	५१५	७५
मेथिलसाइक्लोहेक्सेन	४७०	६२
आइसोहेक्सेन	५२५	४६
हेप्टेन	४३०	८३
पेट्रोल	४६०	८२

हाइड्रोकार्बनों का अभिघात—भिन्न-भिन्न हाइड्रोकार्बनों के अभिघात-गुण का अध्ययन बहुत विस्तार से हुआ है। ऐसे १८० हाइड्रोकार्बनों के अभिघात का इंजनों में परीक्षा हुई है। ऐसे हाइड्रोकार्बनों में पैराफिनीय, ओलिफिनीय नैफ्थिनीय और सौरभिक हाइड्रोकार्बन हैं जिनमें अधिकांश पेट्रोल में पाये जाते हैं। इससे जो परिणाम प्राप्त हुए हैं, उन्हें अनीलिन तुल्यांक में प्रकट किया गया है। यह अनीलिन तुल्यांक अनीलिन के सिएटीग्राम-अणु की संख्या है जो किसी पेट्रोल के एक लिटर में उतना ही अभिघात उत्पन्न करता है, जितना अभिघात उस पेट्रोल में हाइड्रोकार्बन का ग्राम-अणु विलयन करता है। जिस पेट्रोल को इस तुलना के लिए चुना गया था, उसकी औक्टेन-संख्या ५५ थी। अनीलिन-तुल्यांक निकालना सरल नहीं है। विशेषकर उस दशा में जब वह इंजन में जलता है। आइसो-औक्टेन का

अनीलिन-तुल्यांक १६ और ऑक्टेन-संख्या १०० है जब कि नार्मल हेप्टेन का अनीलिन तुल्यांक १४ और ऑक्टेन-संख्या ० है।

पैराफिनीय हाइड्रोकार्बन—इन हाइड्रोकार्बनों का झुकाव उनके अणु के विस्तार और बनावट पर निर्भर करता है। इनमें निम्नलिखित विशेषताएँ देखी गई हैं—

१. अणु में अशाख कार्बन-श्रृंखला की लंबाई की वृद्धि से अभिघात के झुकाव की नियमित रूप से वृद्धि होती है।

२. अणु में मेथिलमूलक की संख्या की वृद्धि से अभिघात झुकाव कम होती है। २-मेथिल ब्युटेन की अपेक्षा २,२,३,३-टेट्रामेथिल ब्युटेन में कम अभिघात होता है।

३. अणु में यदि मूलक केन्द्रीभूत हो तो अभिघात का झुकाव कम होता है।

ओलिफिनीय हाइड्रोकार्बन—इन हाइड्रोकार्बनों का अभिघात नार्मल और सशाख श्रृंखलावाले पैराफिन का मध्यम होता है। सशाख और अशाख श्रृंखलावाले ओलिफिन का अनीलिन तुल्यांक पैराफिन की अपेक्षा उच्चतर होता है।

१. कार्बन-श्रृंखला की लम्बाई से अनीलिन तुल्यांक में कमी होती है।

२. डाइ-ओलिफिन का अनीलिन तुल्यांक पैराफिन और मोनो-ओलिफिन से उच्चतर होता है।

नैफथिनीय हाइड्रोकार्बन—साइक्लोपेण्टेन और तृतीयक ब्युटिलसाइक्लोहेक्सेन को छोड़कर अन्य संतृप्त नैफ्थनीय हाइड्रोकार्बन के अनीलिन तुल्यांक उसी कार्बन-संख्या के ऋजु-श्रृंखला पैराफिन के तुल्यांक से थोड़ा उच्चतर और ओलिफिन समावयवों के तुल्यांक से बहुत निम्न होता है। अनेक नैफथिनीय हाइड्रोकार्बन के अनीलिन तुल्यांक ऋणात्मक होते हैं। इन हाइड्रोकार्बनों का इंजन में व्यवहार इस प्रकार होता है।

१. वलय के विस्तार की वृद्धि से अनीलिन तुल्यांक घटते हैं। ऋजुशाख पैराफिन से इनके तुल्यांक उच्चतर होते हैं। केवल साइक्लोपेण्टेन का तुल्यांक तदनुकूल ओलिफिन से कम होता है।

२. ऋजु श्रृंखला हाइड्रोकार्बन में एल्कील मूलक उपादेय नहीं है। श्रृंखला की लम्बाई की वृद्धि से अनीलिन तुल्यांक नियमित रूप से घटता है।

३. एल्कील मूलकवाले सौरभिक यौगिकों का अनभिघात गुण उच्चतम होता है। इनमें पैराफिन या ओलिफिन मूलकों का रहना हानिकारक नहीं है।

४. पार्श्वश्रृंखला में शाखों की वृद्धि से अनीलिन तुल्यांक नियमित रूप से प्रभावित होता है।

५. चक्रिक ओलिफिन का अनीलिन तुल्यांक संतृप्त नैफ्थीनों से सदा ही उच्चतर होता है।

सौरभिक हाइड्रोकार्बन—सौरभिक हाइड्रोकार्बन के अनीलिन तुल्यांक उच्चतर होते हैं। पार्श्वश्रृंखला की लम्बाई के तीन कार्बन परमाणु तक की वृद्धि से तुल्यांक नियमित रूप से बढ़ता है। तीन से अधिक कार्बन परमाणु की वृद्धि से तुल्यांक घटता है। यदि श्रृंखला में ७ कार्बन परमाणु हो तो, तुल्यांक ऋणात्मक होता है।

चक्र में मेथिल मूलक की वृद्धि से अनीलिन तुल्यांक की वृद्धि होती है।

पार्श्वमूलकों की दूरी से अनीलिन तुल्यांक में वृद्धि होती है। अर्थो से मिटा का और इन दोनों से पारा का तुल्यांक ऊँचा होता है।

यहाँ भी पार्श्वश्रृंखला में शाख की वृद्धि उपादेय है।

सौरभिक चक्र के शाख में ओलिफिन के कारण अनीलिन तुल्यांक ऊँचा होता है।

पर यदि पार्श्वशाखा में त्रिबन्ध हो तो अनीलिन तुल्यांक स्पष्टतया कम हो जाता है। डाइओलिफिन से तुल्यांक ऊँचा हो जाता है।

डाइसाइक्लोपेण्टाडीन, डाइमेथिल फलवीन और साइक्लोहेक्साडीन के अनीलिन तुल्यांक क्रमशः ६५,६१ और ३६ हैं। इनके प्रति-अभिघात मान सबसे ऊँचा होता है। किन्तु गोंद बनने के कारण पेट्रोल में इनका रहना अच्छा नहीं है।

ऊपर जो कुछ लिखा गया है उससे स्पष्ट हो जाता है कि अभिघात झुकाव की वृद्धि का क्रम इस प्रकार है—सौरभिक, सशाख शृंखला ओलिफिन, सशाख शृंखला पैराफिन, असंतृप्त पार्श्व शृंखलावाले नैफ्थीन, ऋजुशृंखला पैराफिन। युग्मबन्ध और सशाख वसा-शृंखला सदा ही अच्छे होते हैं। रसायनशाला और इंजन में अनीलिन तुल्यांक के निर्धारण से जो आँकड़े प्राप्त होते हैं, वे एक-से नहीं हैं। इनमें कुछ विभिन्नता पाई गई है जो निम्नलिखित सारिणी से स्पष्ट हो जाती है—

यौगिक	अनीलिन तुल्यांक	
	रसायनशाला	इंजन
सौरभिक		
बेंज़ीन	१०	६
टोल्विन	१५	८
अर्थो-जाइलिन	१७	११
मिटा-जाइलिन	२३	१३
पारा-जाइलिन	२६	१३
एथिलबेंज़ीन	१६	११
मेसिटिलीन	३१	१६
१,३–डाइएथिलबेंजीन	३०	२४
नैफ्थीन		
साइक्लोपेण्टीन	१६	१४
साइक्लोपेण्टेन	१४	१२
साइक्लोहेक्सीन	१०	६
साइक्लोहेक्सेन	७	६
मेथिल साइक्लोहेक्सेन	६	२
ओलिफिन		
२–पेण्टीन	१६	१३
२–मेथिल २–ब्युटीन	२३	१५
डाइआइसो-ब्युटिलीन	३१	२७
पैराफिन		
नार्मल-हेक्सेन	–६	–६
नार्मल-हेप्टेन	–१४	–१३
२,२,४–ट्राइमेथिल पेण्टेन	१६	१३

शुद्ध यौगिकों के अभिघात मान—साधारणतया पेट्रोल में पाये जानेवाले प्रायः सौ हाइड्रोकार्बनों के अनीलिन तुल्यांक का निर्धारण हुआ है। यह निर्धारण रसायनशाला के इंजन में हुआ है। क्रांतिक सम्पीडन-अनुपात का निर्धारण भी हुआ है। यह अनुपात हाइड्रोकार्बनों को जलाकर निकाला गया है। हाइड्रोकार्बनों को पहले ऐसी परिस्थिति में जलाते हैं कि उनसे अभिघात उत्पन्न न हो। धीरे-धीरे सम्पीडन-अनुपात की वृद्धि करते हैं। सम्पीडन की वृद्धि से एक समय ऐसा आता है, जब अभिघात सुना जा सकता है। जब अभिघात सुना जा सके तब उस अनुपात को लिख लेते हैं। यही क्रांतिक सम्पीडन-अनुपात है। इस सम्पीडन अनुपात और अनीलिन तुल्यांक के आँकड़े निम्नलिखित हैं—

	अनीलिन तुल्यांक	क्रांतिक सम्पीडन अनुपात
पैराफिन		
नार्मल पेण्टेन	१	३·८
आइसो-पेण्टेन	६	५ ७
नार्मल हेप्टेन	−१४	२·८
२,२,३ट्र-इमेथिल ब्युटेन	१६	१३·०
२,२,३-ट्राइमेथिल पेण्टेन	१७	१२·०
२,२,४-ट्राइमेथिल पेण्टेन	१६	७·७
ओलिफिन		
१-पेण्टीन	१०	५·८
१-हेक्सीन	८	४·६
१-हेप्टीन	०	३ ७
३-एथिल-२-पेण्टीन	२०	६ ६
२,२,३-ट्राइमेथिल ३-ब्युटीन	२३	१२ ६
१-ऑक्टीन	−८	२·४
२,२,४-ट्राइमेथिल ४-पेण्टीन	३२	११ ३
नैफ्थीन		
साइक्लोपेण्टीन	१४	१० ८
साइक्लोहेक्सेन	७	४·५
नार्मल-ब्युटिल साइक्लोहेक्सेन	−१६	३·३
सौरभिक		
बेंज़ीन	१०	१५·०
टोल्विन	१५	१३ ६
पारा-जाइलिन	२६	१४ २
मेसिटिलीन	२१	१४ ८
एथिल-बेंज़ीन	१६	१० ५
१,४-डाइएथिल बेंज़ीन	३४	६ ३
नार्मल प्रोपिल बेंज़ीन	२४	१०·१

सामान्य पेट्रोल का क्रांतिक सम्पीडन-अनुपात ४ से ५ होता है। ऐसे पेट्रोल की औक्टेन-संख्या ५० से ८० होती है।

व्यामिश्रण मान—डाइआइसो-ब्युटिलिन की औक्टेन-संख्या ८२ है। आइसो-औक्टेन की औक्टेन-संख्या १०० है; पर डाइआइसो-ब्युटिलीन का अनीलिन तुल्यांक आइसो-औक्टेन के अनीलिन तुल्यांक से बहुत ऊँचा है। डाइआइसो-ब्युटिलिन का व्यामिश्रण मान उच्चतर है। एक लिटर पेट्रोल में यदि ११२ ग्राम डाइ-आइसो-ब्युटिलिन डाला जाय तो उसका अनीलिन तुल्यांक, उतने ही पेट्रोल में ११४ ग्राम आइसोऔक्टेन डालने से प्राप्त पेट्रोल के अनीलिन तुल्यांक से बहुत ऊँचा हो जाता है। इसका कारण यह है कि डाइआइसोब्युटिलिन का व्यामिश्रण-मान अधिक है। प्रत्येक हाइड्रोकार्बन का व्यामिश्रण मान अलग-अलग होता है। यह मान विभिन्न पेट्रोल की प्रकृति से घटता-बढ़ता रहता है। नार्मल हेप्टेन में विभिन्न हाइड्रोकार्बन के डालने से उसकी औक्टेन संख्या कैसे बढ़ती-घटती है, उसका ज्ञान चित्र-सं० २४ से होता है। नार्मल हेप्टेन और २,२,४—ट्राइमेथिलपेण्टेन का मान नियमित रूप से बढ़ता है जो वक्र से मालूम होता है; पर ओलिफिन और डाइओलिफिन का प्रभाव निम्न संकेन्द्रण पर विशेष रूप से पड़ता है।
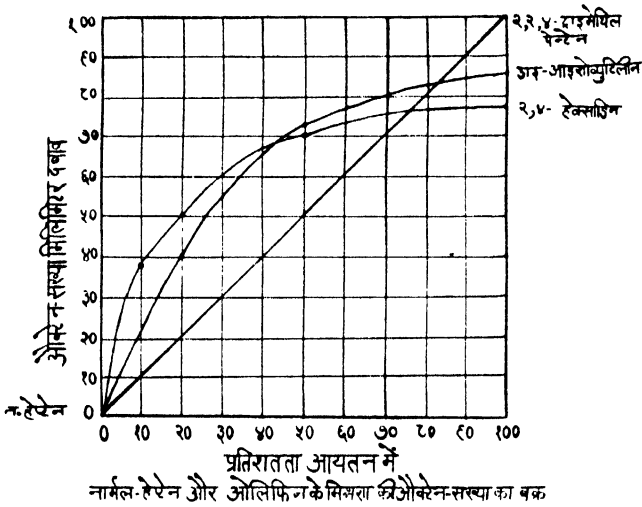
चित्र २४—नार्मलहेप्टेन और ओलिफिन के मिश्रण की औक्टेन-संख्या

इस संबंध में जो अन्वेषण हुए हैं, उनसे पता लगता है कि यदि पेट्रोल को २५ प्रतिशत से कम सौरभिक हाइड्रोकार्बनों से व्यामिश्रित किया जाय तो उससे औक्टेन-संख्या कम हो जाती है और ओलिफिन हाइड्रोकार्बनों के व्यामिश्रण से औक्टेन-संख्या बढ़ जाती है—जब हम किसी विशिष्ट हाइड्रोकार्बन की औक्टेन संख्या से तुलना करते हैं। पैराफिन के व्यामिश्रण से औक्टेन-संख्या में कोई विभिन्नता नहीं होती। नैफथीन के व्यामिश्रण से अनियमित रूप से औक्टेन-संख्या में परिवर्त्तन होता है। किसी हाइड्रोकार्बन का व्यामिश्रण मान किसी प्रामाणिक पेट्रोल में हाइड्रोकार्बनों को मिलाकर उसकी औक्टेन-संख्या के निर्धारण से

निकाला जाता है। विभिन्न हाइड्रोकर्बनों की व्यामिश्रण औक्टेन-संख्या इस प्रकार पाई गई है—

	व्यामिश्रण औक्टेन-संख्या
पैराफिन	
२,२–डाइमेथिल प्रोपेन	११६
२,३–डाइमेथिल ब्युटेन	१२४
२–मेथिल पेण्टेन	६९
२,२,१–ट्राइमेथिल ब्युटेन	११६
ओलिफिन	
२–पेण्टीन	१२८
१–हेप्टीन	५९·५
३–हेप्टीन	११३·५
२–मेथिल–२–ब्युटीन	१५०
डाइआइसोब्युटिलिन	१३७
नैफथीन	
साइक्लोपेण्टेन	१२२
एथिल-साइक्लोपेण्टेन	५७
साइक्लोहेक्सेन	९७·५
तृतीयक–ब्युटिल साइक्लोहेक्सेन	९८·५
सौरभिक	
बेंज़ीन	१०१
एथिलबेंज़ीन	१२०·५
नार्मल-प्रोपिलबेंज़ीन	१२०
नार्मल-ब्युटिलबेंज़ीन	११०·५
पारा-जाइलिन	१२८
मेसिटिलिन	१३१

साइक्लोपेण्टीन और सौरभिकों के मान ऊँचे हैं। यह उपर्युक्त आँकड़ों से स्पष्ट है।

अभिघात झुकाव की माप

साधारणतया सम्पीडन-अनुपात से किसी ईंधन का अभिघात झुकाव मालूम होता है, पर इसके लिए इंजन में परीक्षा करने की आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए किसी प्रामाणिक पदार्थ का मानक होना आवश्यक है। इसके लिए २,२, ४–ट्राइमेथिलपेण्टेन (आइसो-औक्टेन) और नार्मल हेप्टेन उपयुक्त होते हैं। शुद्ध आइसो-औक्टेन की औक्टेन-संख्या १०० और नार्मल हेप्टेन की औक्टेन-संख्या शून्य मानी गई है। नार्मल हेप्टेन में महत्तम अभिघात होना माना गया है। यदि किसी पेट्रोल का अभिघात मापना होता है तो उसका परीक्षण इंजन में करते और किसी ज्ञात संघटन के मिश्रण से तुलना करते हैं। यदि पेट्रोल का अभिघात ऐसे मिश्रण के अभिघात के बराबर है, जिस मिश्रण में २० प्रतिशत नार्मल हेप्टेन और ८० प्रतिशत आइसो-औक्टेन है तो ऐसे पेट्रोल की औक्टेन संख्या ८० मानी जाती है।

यह परीक्षण एक विशेष प्रकार के इंजनों में होता है। इसको सहकारी ईंधन-शोध-(Co-operative Fuel Research) इंजन कहते हैं। चलाने की कई विधियाँ है। एक विधि में निम्नलिखित परिस्थितियाँ रहती हैं। इस विधि को 'अनुसन्धान-विधि' कहते हैं—

इंजन-चाल	६०० परिक्रमण प्रति मिनट
निचोल-ताप	२१२° फ०
स्फुलिंग-वर्धन	महत्तम शक्ति के लिए
मिश्रण-अनुपात	महत्तम अभिघात के लिए

इस परिस्थिति में आजकल कुछ सुधार हुआ है। इस नई विधि को 'मोटर-विधि' कहते हैं।

इंजन-चाल	६०० परिक्रमण प्रति मिनट
अन्तर्ग्रहण-ताप	३००° फ०
स्फुलिंग-वर्धन	सम्पीडन अनुपात के लिए
मिश्रण-अनुपात	महत्तम अभिघात के लिए

वायुयान में इस्तेमाल होनेवाले पेट्रोल के लिए अमेरिकी सेना में 'वायुकोर' की विधि उपयुक्त होती है। इसमें इंजन दूसरे प्रकार की होती है, इसका परिक्रमण प्रति मिनट १२०० होता है और निचोल-ताप ३३०° फ०। इसमें अभिघात नहीं नापा जाता है। अभिघात से ताप की जो वृद्धि होती है, वही नापी जाती है। उसमें तापमापक लगा रहता है। सी० एफ० आर० इंजन में भी अभिघात नापने का सुझाव रखा गया है। ऐसी इंजन का परिक्रमण प्रति मिनट १२००, निचोल-ताप ३७४° फ०, भींगी वायु का ताप १२५° फ० रहता और मिश्रण २२०° फ० तक गरम होता है। वायुयान पेट्रोल की ऑक्टेन-संख्या १०० रहनी चाहिए। पेट्रोल में आइसो-ऑक्टेन, आइसो पेण्टेन और लेड टेट्राएथिल डालकर ऑक्टेन-संख्या बढ़ाई जाती हैं।

लेड टेट्राएथिल

पेट्रोल में लेड टेट्राएथिल डालकर ऑक्टेन-संख्या बढ़ाई जाती है।

लेड टेट्राएथिल का प्रति-अभिघात गुण भिन्न-भिन्न हाइड्रो-कार्बनों पर एक-सा नहीं होता।

इससे हाइड्रोकार्बनों पर क्रांतिक संम्पीडन-अनुपात बढ़ जाता है। ऐसा क्यों होता है, यह ठीक-ठीक मालूम नहीं। कुछ हाइड्रोकार्बनों पर इसका प्रतिकूल प्रभाव भी पड़ता है। इससे अभिघात बढ़ जाता है। ऐसे हाइड्रोकार्बनों में चक्रिक डाइओलिफिन और सौरभिक एसिटिलीन यौगिक हैं। कुछ हाइड्रोकार्बनों पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। पेट्रोल कहाँ से प्राप्त होता है, कैसे भंजन से प्राप्त होता है, उसका परिष्कार कैसे और कितना हुआ है और उसमें गन्धक यौगिक घुला है अथवा नहीं। इन सबका प्रभाव लेड टेट्राएथिल की क्रिया पर पड़ता है। आक्सिजन यौगिकों से लेड टेट्राएथिल का प्रति-अभिघात गुण बढ़ जाता है। गन्धक यौगिकों से कम हो जाता है।

नैफ्थीनीय पेट्रोलियम से प्राप्त पेट्रोल अच्छा समझा जाता है। ऐसे पेट्रोल का ऑक्टेन-मान ७० से ७६ होता है। लेड टेट्राएथिल के डालने से यह ८७ तक या इससे ऊपर बढ़ाया जा सकता है।

पेट्रोल में बेंज़ीन डाला जाता है। यदि पेट्रोल में ४० प्रतिशत बेंज़ीन रहे तो अभिघात-अवरोध उच्च कोटि का होता है। जहाँ पेट्रोलियम महँगा है और बेंज़ीन सस्ता है, वहाँ बेंज़ीन बिना किसी हानि के डाला जा सकता है।

पेट्रोलियम-कमी देशों में पेट्रोल के साथ एथिल अल्कोहल अथवा एथिल और मेथिल दोनों अल्कोहल मिलाया जा सकता है। इसके लिए एथिल अल्कोहल में पानी नहीं रहना चाहिए। विशेष विधियों से आजकल मोटर-अल्कोहल तैयार होता है, जिसमें जल की मात्रा बहुत अल्प रहती है। पर ऐसे शुद्ध अल्कोहल में पानी-शोषण की क्षमता रहती है। यह इसका दोष है। पेट्रोल और अजल अल्कोहल सब अनुपात में मिल जाते हैं। ऐसे स्थायी क्वथनांक मिश्रण में १२०° फ० से नीचे ९५ प्रतिशत शुद्ध अल्कोहल का केवल १० प्रतिशत और १००° फ० के नीचे केवल २० प्रतिशत मिलता है। इससे अल्कोहल से जल का निकल जाना बहुत आवश्यक है। बेंज़ीन अथवा टोलिवन के रहने से, जलीय अल्कोहल की मात्रा कम रहने से भी, वे अलग हो जाते हैं।

एथिल अल्कोहल का दहन-ताप पेट्रोल से कम होता है। इस मिश्रण के जलने से शक्ति कम उत्पन्न होती है अथवा अधिक ईंधन जलता है। एथिल अल्कोहल के दहन के लिए वायु-ईंधन का अनुपात प्रायः ९ से १ होना चाहिए, जहाँ पेट्रोल के जलने के लिए १५:१ अनुपात लगता है।

इस कारण जो कारब्युरेटर पेट्रोल के लिए महत्तम शक्ति देता है, वह इस मिश्रण के लिए उपयुक्त नहीं है। पेट्रोल-अल्कोहल-मिश्रण से यद्यपि मोटर-कार अधिक मील चल सकती है, पर उसका कार्य और शक्ति कम हो जाती है। यदि कार्य और शक्ति बढ़ाने की चेष्टा की जाय, तो मिश्रण अधिक खर्च होता है।

प्रति-अभिघात की दृष्टि से अल्कोहल अच्छा है। बेंज़ीन से यह दुगुना प्रभावकारी होता है। लेड-टेट्राएथिल की तुलना में यह उतना लाभकारी नहीं है। प्रति गैलन पेट्रोल में १ या २ सी० सी० लेड-टेट्राएथिल १० या २० प्रतिशत अल्कोहल के बराबर होता है।

अल्कोहल की वाष्पायन ऊष्मा अच्छी होने से पेट्रोल में १० प्रतिशत अल्कोहल से दहन ताप ११° फ० बढ़ जाता है, पर इससे अभिघात कम हो जाता है और इंजन की आयतन-दक्षता बढ़ जाती है। १० प्रतिशत से अधिक अल्कोहल के लिए कारब्युरेटर के ईंधन-वाष्पायन में परिवर्त्तन की आवश्यकता होती है। इससे कारब्युरेटर के इंजन के बदलने की आवश्यकता पड़ती है।

वायुयान-इंजनों के लिए जो पेट्रोल इस्तेमाल होता है, उसकी ऑक्टेन-संख्या ऊँची होनी चाहिए। पेट्रोल की ऑक्टेन-संख्या को ऊँचा करने के लिए अनेक कार्बनिक पदार्थों का निर्माण हुआ है। ऐसे पदार्थों में एक आइसो-प्रोपिल ईथर है। इसकी ऑक्टेन-संख्या ऊँची होती है, पर दहन-ऊष्मा कुछ कम होती है, इससे इसका उपयोग बड़ी मात्रा में नहीं होता है।

बेंजीन अच्छा प्रति-अभिघातवाला पदार्थ है, पर इसमें दोष यह है कि ऊँचे इंजन-ताप पर इसकी ऑक्टेन-संख्या का ह्रास होता और इसका हिमांक ऊँचा होता है, जिससे पेट्रोल के जम जाने की सम्भावना रहती है। पेट्रोल के साथ मिलाकर आइसो-ऑक्टेन और आइसो-पेण्टेन का उपयोग प्रचुरता से होता है। नियो-हेक्सेन-२,२—डाइमेथिल ब्युटेन—

का निर्माण आज अधिकता से हो रहा है। ऐसा कहा गया है कि संश्लिष्ट डीकेन की ऑक्टेन-संख्या ऊँची होती है।

पेट्रोल यदि अधिक वाष्पशील हो, तो इसका उपयोग वायुयान में विपद्ग्रस्त समझा जाता है। इसमें उच्च क्वथनांकवाले पेट्रोल के उपयोग का सुझाव रखा गया है, पर ऐसे पेट्रोल को पम्प द्वारा इंजनों में ले जाने की आवश्यकता पड़ती है।

ट्रैक्टर-ईंधन

ट्रैक्टरों में पेट्रोल जलता है, पर ट्रैक्टरों का इंजन कुछ भिन्न होता है। उसका सम्पीडन-अनुपात कम होता है। इससे इसमें अ-वाष्पशील तेल भी जल सकता है। ३०० से ५००° फ० का किरासन भी इसमें जलता है। ऐसे तेल को वाष्पायन के लिए गरम करने की आवश्यता पड़ती है। ऐसे इंजन के प्रथम संचालन में कुछ कठिनाई होती है। ऐसे इंजन में दहन भी पूर्ण रूप से नहीं होता, जिससे पर्याप्त कजली बनती है। इससे अभिघात और पूर्व-प्रज्वलन उत्पन्न होता है। ऐसे ईंधन के लिए ३० से ऊपर ऑक्टेन-संख्या से काम चल जाता है।

डीज़ेल-ईंधन

डीज़ेल-इंजन में अभ्यन्तर दहन होता है। यह दहन उस ऊष्मा की वृद्धि के कारण होता है, जो वायु के सम्पीडन से उत्पन्न होकर उसमें प्रविष्ट ईंधन को प्रज्वलित करता है। ६०° फ० पर शुष्क वायु को समोष्ण दशा में उसके दशांश आयतन में सम्पीडित करें, तो उसका ताप ८२५° फ० और पन्द्रहवाँ अंश में सम्पीडित करें, तो ताप १०५०° फ० हो जाता है। डीज़ेल-चक्र स्थायी दबाव पर होता है, पर वास्तव में यह स्थिति नहीं होती। दहन के समय दबाव कुछ-न-कुछ अवश्य बढ़ जाता है। ओटो (Otto)-चक्र पेट्रोल-इंजन में दबाव स्थायी होता है। इस दशा में स्फुलिंग-प्रज्वालन के समय दहन तात्क्षणिक होकर तप्त गैसों के प्रसार से शक्ति की वृद्धि होती है। व्यवहारतः तात्क्षणिक दहन नहीं होता। एक तरंगाग्र बनकर अदाह्य गैसों में प्रसारित होता है। पेट्रोल-इंजन में महत्त्व की बात सम्पीडन-दबाव है। सम्पीडन-दबाव की वृद्धि से सम्पीडित गैसों का प्रज्वालन-ताप बढ़ता है और उससे अभिघात-झुकाव बढ़ जाता है। पेट्रोल-ईंधन में आजकल सम्पीडन-अनुपात ७ के लगभग रह सकता है। डीज़ेल-इंजन में औसत प्राप्य ईंधन के व्यवहार से सम्पीडन-अनुपात १२ या १३ से १ से नीचे नहीं जाना चाहिए, नहीं तो वायु के सम्पीडन के समय ईंधन को प्रज्वलित करने के लिए पर्याप्त ऊष्मा नहीं बढ़ती है। सम्पीडन-अनुपात डीज़ेल-इंजन में १५ से १ रहता है।

यदि प्रज्वलन देर से हो, तो दहन-कक्ष में ईंधन इकट्ठा होकर इतना गरम हो जाता है कि वह शीघ्रता से जल उठे। इससे दबाव में अकस्मात् वृद्धि होती है और उससे इंजन में अभिघात उत्पन्न होता है। इस अभिघात से दक्षता घट जाती है, धुआँ अधिक बनता, कूर्परधान (crankcase) तेल तनु हो जाता और पिस्टन-वलय में कार्बन निक्षिप्त होता है। यदि कोई भी यत्न, जो ऑक्सीकरण को बढ़ावे, जैसे-पूर्व-तापन, उन्नत वितरण या उन्नत सम्पीडन-अनुपात, तो वह प्रज्वलन विलंबन (delay) को कम करता है और अभिघात को भी। उच्च बोझ का भी ऐसा ही प्रभाव होता है; क्योंकि इसका प्रभाव ताप पर पड़ता है। ईंधन के प्रज्वलन-पाश्चायन (lag) की वृद्धि से अभिघात की चण्डता में भी वृद्धि होती है। यदि डीज़ेल-इंजन ठीक प्रकार से काम करता हो, तो ऐसे इंजन से निकली गैस में कार्बन मनॉक्साइड की मात्रा बड़ी अल्प रहती है।

डीज़ेल-इंजन में जो तेल उपयुक्त होता है, वह पेट्रोल-इंजन के तेल से भिन्न होता है। पेट्रोल-इंजन में निम्न क्वथनांकवाले हाइड्रोकार्बन की आवश्यकता होती है, जिसका आत्म-प्रज्वलन-ताप अपेक्षाकृत ऊँचा हो। डीज़ेल-इंजन में आत्म-प्रज्वलन-ताप नीचा होना चाहिए। इस कारण निम्न क्वथनांक यौगिक ठीक नहीं है। इसके इंजन में सारा ईंधन विस्फोट के समय उपस्थित नहीं रहता। यहाँ ईंधन का भंजन भी होता है। अतः ऐसे यौगिक अधिक उपयुक्त होते हैं, जिनका भंजन शीघ्रता से हो सके। उच्च हाइड्रोकार्बन इसके लिए अधिक उपयुक्त हैं। अणुभार की वृद्धि से प्रज्वलन-ताप का ह्रास होता है; क्योंकि बड़े अणु के भंजन में सक्रियण की कम ऊर्जा की आवश्यकता होती है।

डीज़ेल-इंजन के लिए तेल अधिक साफ होना चाहिए। तेल की श्यानता, बहाव-विन्दु, कार्बन-अवशेष-मान, दमकांक महत्त्व के हैं। इसका क्वथनांक ४०० से ७००° फ० के बीच रहना चाहिए। दमकांक १००° फ० के लगभग रहना चाहिए। अधिक श्यान होने से दहन की चाल धीमी होती और कज्जल बनता है। इंजन के बहाव पर भी इसका प्रभाव पड़ता है। अधिक श्यानता से बहाव में कमी आ जाती है। कभी-कभी अधिक श्यान तेल को गरम करने की आवश्यकता पड़ती है।

डीज़ेल-ईंधन का प्रज्वलन-गुण सीटेन-संख्या से प्रकट होता है। सीटेन एक हाइड्रोकार्बन है। यह नार्मल-हेक्साडीकेन है। इस हाइड्रोकार्बन को धीरे-धीरे जलानेवाला सौरभिक हाइड्रोकार्बन अल्फामेथिल-नेफ्थिलीन के साथ मिलाकर मिश्रण तैयार कर एक प्रामाणिक परीक्षण-इंजन में जलाकर उसकी परीक्षा करते हैं। जो तेल इस मिश्रण के साथ एक-सा जलता है, उस मिश्रण में रहनेवाले सीटेन से उसकी सूचना मिलती है। यदि किसी तेल का जलना ऐसा ही होता है, जैसा ऐसे मिश्रण का जलना, जिसमें सीटेन की मात्रा ६० प्रतिशत है, तो ऐसे तेल की सीटेन-संख्या ६० हुई। साधारणतया डीज़ेल तेल की सीटेन-संख्या ३२ से ७० तक रहती है।

तेल के अनीलिन विन्दु, विशिष्ट भार, श्यानता, औसत क्वथनांक और हाइड्रोजन की मात्रा से डीज़ेल-इंजन के लिए तेल की उपयुक्तता अथवा अनुपयुक्तता का अनुमान लगाया जा सकता है।

यदि तेल का अनीलिन-विन्दु ऊँचा है तो उससे उसमें पैराफिन-हाइड्रोकार्बन के होने का पता लगता है; क्योंकि पैराफिन-हाइड्रोकार्बन अनीलिन से गरम करने पर ही मिश्र्य होते हैं। अनीलिन-विन्दु और ६०° फ० पर विशिष्ट भार के गुणनफल को १०० से भाग देने पर जो अंक प्राप्त होता है, वह तेल का डीज़ेल घातांक है। सीटेन-संख्या की वृद्धि से डीज़ेल-घातांक बढ़ता है—

$$\text{डीज़ेल-घातांक} = \frac{\text{अनीलिन विन्दु } ०^{\circ}\text{फ०} \times \text{विशिष्ट भार } (६०^{\circ} \text{ फ०})}{१००}$$

श्यानता—विशिष्टभार अचर—तेल के पैराफिन हाइड्रोकार्बन का ज्ञान इस अचर से विदित होता है। सीटेन-संख्या की वृद्धि से इसमें कमी होती है।

डीज़ेल-तेल कैसा होना चाहिए, वह निम्नलिखित सारणी से प्रकट होता है—

इंजन उच्च चालवाले, मध्यम चालवाले और निम्न चालवाले होते हैं।

	उच्च चाल	मध्यम चाल	निम्न चाल
१००° फ० पर सेबोल्ट श्यानता सेकंड में—			
अल्पतम	३२	३२	—
महत्तम	५०	७०	२५०
गन्धक, प्रतिशत	१.५	१.५	२.०
कोनराडसन कार्बन	७.२	०.५	३.०
राख	०.०२	०.०२	०.०४
जल और तलछट	०.०५	०.१	०.६
दमकांक ०°फ०	—	१५०	१५०
बहाव-बिन्दु ० फ०	३५	३५	३५
प्रज्वलन-गुण—			
सीटेन-संख्या	५०	४०	३०
डीज़ेल-घातांक	४५	३०	२०
श्यानता-विशिष्ट भार अचर (महत्तम)	०.८६	०.८६	०.६१
क्वथनांक-विशिष्ट भार-संख्या (महत्तम)	१८८	१६५	२००

ऐसा तेल प्रधानतया पेट्रोलियम से सीधे प्राप्त होता है और अच्छा समझा जाता है। जहाँ पेट्रोलियम नहीं होता, वहाँ अलकतरे से प्राप्त तेल भी उपयुक्त होता है। भंजन से प्राप्त तेल भी उपयुक्त हो सकता है। डीज़ेल-तेल की सीटेन-संख्या भी बढ़ाई जा सकती है। एल्कील नाइट्राइट और नाइट्रेट इसके लिए बहुत अच्छा समझा जाता है।

सोलहवाँ अध्याय

स्नेहन

जब एक तल दूसरे तल के संसर्ग में आता है, तब इन तलों की गति में कुछ रुकावटें होती हैं। इस रुकावट का कारण घर्षण है। साधारणतया घर्षण अनुपात में प्रकट किया जाता है। यह अनुपात है :

$$= \frac{\text{स्पर्शरेखीय गति में प्रतिरोध}}{\text{तल पर अभिलंब बल}}$$

इस अनुपात को घर्षण-गुणक कहते हैं। यदि तल स्थिर है, तो गति के प्रारम्भ होने में प्रतिरोध होता है। ऐसी स्थिति में अनुपात को 'स्थिर गुणक' और यदि तलों में गति है, तो इस अनुपात को 'गतिज गुणक' कहते हैं।

हमें अपने जीवन में प्रतिदिन घर्षण से काम पड़ता है। साधारणतया यह घर्षण कोमल रुखड़े तलों के बीच होता है। कठोर चिकने तलों के घर्षण से हमें काम नहीं पड़ता। ऐसा घर्षण हमें शक्ति-प्रेषित यंत्रों में ही मिलता है। जब हम चमड़े के तलवेवाले जूते को पहनकर पत्थर के गच पर खड़े होते हैं तब हम इस कारण फिसलकर नहीं गिरते कि गच की रुखड़ी तहें चमड़े की कोमल तहों में प्रविष्ट कर बँध जाती हैं। यहाँ घर्षण दो तलों के रुखड़ापन के कारण होता है। एक के नुकीले भाग दूसरे तल के महीन गड्ढे में प्रविष्ट कर जाते हैं। ऐसे तलों में समय के बढ़ने से 'स्थिर घर्षण गुणक' में वृद्धि होती है। ऐसा घर्षण स्थिर होता है। पर, यदि दो तल गति में हों, तो घर्षण का गतिज गुणक स्थायी नहीं होता। वह घटता-बढ़ता रहता है। गति के वेग के परिवर्त्तन से गुणक बदलता रहता है।

स्थिर और गतिज गुणक एक मान के नहीं होते। यदि तल चिकने और कठोर हों, तो 'स्थिर गुणक' शीघ्र ही स्थायी हो जाता है; पर 'गतिज गुणक' स्थायी नहीं होता। वह बदलता रहता है।

सामान्य स्वच्छता के चिकने कड़े तलों को यदि उपयुक्त करें, तो उन तलों के बीच जो घर्षण होता है, उसके नियम इस प्रकार हैं—

१. स्पर्श-तल के अभिलंब पर घर्षण समस्त बल के अनुक्रमानुपात में होता है।

२. स्पर्श-तल के क्षेत्रफल का घर्षण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। तल के क्षेत्रफल का घर्षण स्वतंत्र होता है।

३. कुछ अल्पतम गति के बाद घर्षण पर गति का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। घर्षण गति का प्रायः स्वतंत्र होता है और गति की अतिवृद्धि से घर्षण में बड़ी अल्प मात्रा में कमी आती है।

साधारण साफ की गई धातु के तल का घर्षण-गुणक ०'१ से ०'३ होता है। यदि इस्पात का तल विशेष रूप से धोकर साफ किया हुआ हो, तो घर्षण गुणक ०'७४ तक पहुँच जाता है। बिल्कुल स्वच्छ काँच का घर्षण गुणक ०'९४ होता है।

घर्षण क्यों होता है, इस संबंध में दो मत हैं—एक मत के अनुसार घर्षण का कारण तल का रुखड़ापन है और दूसरे मत से घर्षण का कारण तलों के अणुओं के बीच का आकर्षण है।

देखने में तल कितना ही पॉलिश किया हुआ क्यों न हो, उसका तल बिल्कुल चिकना नहीं होता। उसमें रुखड़ापन अवश्य रहता है। इस रुखड़ापन को हम अपनी आँखों से देख नहीं सकते। यह रुखड़ापन इतना सूक्ष्म होता है कि उसपर प्रकाश की किरणों भी परावर्त्तित हो जाती हैं। इस रुखड़ापन के कारण ही तलों पर घर्षण होता है।

घर्षण के उपयुक्त नियमों से ऐसे तल के घर्षण की व्याख्या इस प्रकार की जाती है—बहुत चिकने दो तलों के संसर्ग से एक का तल दूसरे के तल से कुछ सीमित विन्दुओं पर ही संस्पर्श में आता है। तल के अभिलंब पर दबाव की वृद्धि से अधिक विन्दुओं पर संस्पर्श होकर दो तल परस्पर अधिक सन्निकट आ जाते हैं। इससे घर्षण बढ़ जाता है। तल का रुखड़ापन तल पर एक-सा बिखरा रहता है और एक-से विस्तार का होता है। इससे यह सरलता से समझा जा सकता है कि तल के अभिलंब पर दबाव की वृद्धि से संस्पर्श-विन्दुओं की संख्या उसी अनुपात में बढ़ेगी। दूसरे शब्दों में घर्षण दबाव के अनुक्रमानुपात में होगा।

यह सिद्ध करने के लिए कि घर्षण क्षेत्रफल पर निर्भर नहीं करता, यह मान लेना पड़ेगा कि किसी तल की विषमता एक विस्तार की और एक-सी फैली हुई होती है। इससे दस पाउण्ड बोझ से एक वर्गफुट पर जो प्रतिरोध होगा, वही प्रतिरोध दस वर्गफुट पर प्रति वर्गफुट दस-दस पाउण्ड के बोझ से होगा।

यदि दो तल बहुत उच्च वेग से चलते हों, तो तल एक-दूसरे के संसर्ग में उतने नहीं आते। वे कुछ अलग-अलग हो जाते हैं। तलों के रुखड़ापन को एक-दूसरे को पकड़ने का समय नहीं मिलता। ऐसी गति में कुछ सीमित विन्दुओं पर ही तल एक-दूसरे का संस्पर्श करते हैं। इससे घर्षण-अवरोध कम हो जाता है। इससे घर्षण का तीसरा नियम, कि दो तलों की गति की वृद्धि से घर्षण कुछ कम हो जाता है, प्रमाणित हो जाता है।

घर्षण का यह सिद्धान्त सर्वमान्य नहीं है। विभिन्न धातुओं के तलों पर एक-सी पॉलिश किये जाने पर घर्षण एक-सा नहीं होता। धातुओं की विभिन्नता के कारण घर्षण में विभिन्नता हो जाती है। इस कारण, कुछ लोगों का मत है कि दो तलों के अणुओं के बीच आकर्षण के कारण घर्षण होता है। तल के अणुओं के बीच आसंजन-बल रहता है। उसी से घर्षण उत्पन्न होता है। इस सिद्धान्त से भी घर्षण के नियमों की व्याख्या सरलता से हो जाती है। यहाँ यह स्मरण रखने की बात है कि घर्षण के नियमों की जाँच बहुत यथार्थता से अभी तक नहीं हुई है।

भारुओं में घर्षण

यदि दो तल बहुत सावधानी से साफ किये हुए हों, तो ऐसे तलों का घर्षण, गुणक ०'७ से ०'९ तक होता है। यदि तल पर स्नेह लगा हो, तो ऐसे तल का घर्षण-गुणक केवल ०'१ से ०'३ होता है। स्नेहन के दो और क्रम होते हैं—एक को महीन फिल्म अथवा सीमा-स्नेहन और दूसरे को तरल-फिल्म-स्नेहन कहते हैं।

स्वच्छ तलों का शुष्क घर्षण साधारणतया नहीं देखा जाता। यह प्रयोग में ही पाया जाता है। यहाँ घर्षण-प्रतिरोध बहुत अधिक होता है और एक तल का दूसरे से पकड़ना बहुत शीघ्रता से होता है। स्वच्छ तलों की अपेक्षा सामान्य तलों का शुष्क घर्षण जीवन में बहुत पाया जाता है। यहाँ तलों को एक-दूसरे से पकड़ना बहुत जल्द होता है। वस्तुतः, ऐसी ही घटनाओं से घर्षण के उपर्युक्त नियम निकले हैं।

महीन फिल्म-घर्षण शुष्क घर्षण के बाद की अवस्था है। शुष्क घर्षण और मोटे फिल्म-घर्षण के बीच की यह अवस्था है। यह अवस्था अस्थायी होती है। यहाँ धातु-तल और स्नेहक के बीच कुछ रासायनिक संयोजकता अथवा इसी प्रकार की कोई अन्य संयोजकता होती है। जब स्नेहन की मात्रा कम रहती है, तभी यह स्थिति पैदा होती है। यहाँ स्नेहन अवश्य ही कम रहता है, विशेषतः उस दशा में, जब विभिन्न अंगों की चाल कम रहती है, जैसे—चाल प्रारम्भ होने अथवा चाल बन्द करने के समय होता है।

स्नेहन के लिए कैसा तेल उपयुक्त है, इसपर बहुत-कुछ खोजें हुई हैं। स्नेहन पर जिन बातों का प्रभाव पड़ता है, उनमें निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं—

(१) तेल की श्यानता
(२) तलों की चाल
(३) तलों पर दबाव
(४) तलों की स्वच्छता
(५) तलों की प्रकृति और स्थिति
(६) स्नेहक देने की रीति
(७) स्नेहक की प्रकृति

रेनोल्ड्स का मत है कि भारुओं का घर्षण द्रवगतिज होता है। अतः यह द्रव के नियमों से शासित होता है। ऐसे तलों का घर्षण-गुणक है—

$$= \frac{\text{तेल की श्यानता} \times \text{चाल}}{\text{भारु पर दबाव या बोझ}}$$

स्निग्धता—स्नेहक का एक विशेष गुण उसकी स्निग्धता है। स्नेहक में स्निग्धता ऊँची रहनी चाहिए। स्निग्धता कई अर्थों में उपयुक्त होती हैं। स्निग्धता के महत्त्व का अर्थ घर्षण में कमी है। स्नेहक घर्षण को कम करता है। भारी बोझ, उबड़-खाबड़ तलों और तलों के कम नत होने पर भी घर्षण में स्निग्धता से कमी होती है। एक ही स्थिति में एक ही ताप पर एक ही श्यान के स्नेहकों के घर्षण में विभिन्नता हो सकती है। हर्शेल (Herschel) का मत है कि स्निग्धता स्नेहक और धातु का संयुक्त गुण है। दूसरे लोगों का मत है कि स्निग्धता स्नेहक का गुप्त गुण है। यह तल की सन्निकटता, विरूपता (shear) और दबाव पर निर्भर करती है।

ऐसी दशा में विभिन्न श्यान के स्नेहकों की तुलना कठिन है। ऐसी तुलना के लिए हार्डी (Hardy) ने स्थिर घर्षण-गुणक का उपयोग किया था; क्योंकि शून्य चाल पर श्यानता प्रभावहीन हो जाती है।

काँच पर पानी, अल्कोहल, बेंजीन और अमोनिया उदासीन रहते हैं। अधिक श्यानता रहने पर ग्लिसरीन का स्नेहन-मान बहुत अल्प होता है। बहुत अल्प श्यान होने पर भी ऐसिटिक अम्ल और ट्राइप्रोपिलिन अच्छे स्नेहक हैं। विस्मथ के लिए ये सभी द्रव अच्छे स्नेहक हैं। चक्रक यौगिक अच्छे स्नेहक नहीं होते। सब पेट्रोलियम में कुछ चक्रक यौगिक रहते हैं।

तलों के बीच आकर्षण के कारण घर्षण होता है। अतः ठोस के तल-बलों को स्नेहक संतृप्त करता है। ताँबे के ऑक्साइड अथवा सल्फाइड का फिल्म भी स्नेहक का कार्य करता है। यह फिल्म इतना पतला हो सकता है कि तल पर उसकी तरलता नष्ट हो जाती है। ध्रुवीय अणुओं के लिए एक गुप्त काल की आवश्यकता पड़ती है। अ-ध्रुवीय हाइड्रोकार्बनों के लिए यह गुप्त काल नहीं देखा गया है। अणुभार की वृद्धि से स्थिर घर्षण-गुणक में कमी होती है। यदि पदार्थ के संघटन में परिवर्त्तन हो, तो स्थिर घर्षण गुणक में कमी अनियमित होती है।

हार्डी का मत है कि तेल में कुछ सक्रिय अंश रहता है, जो तल पर अधिशोपित हो जाता है। ऐसे पदार्थों के फिल्म की मुटाई ०·१ मिलिमीटर की होती है। ऐसे पदार्थों को बहुत महीन लोहे के उपचार से बहुत-कुछ निकाल सकते हैं। कुछ लोगों का मत इसके विरुद्ध है। ट्रिलाट (Trillat) का मत है कि ऐसा फिल्म १०० से २०० अणुओं की मुटाई का होता है। एक्स-रे-परीक्षण से ऐसे फिल्म की मुटाई अणु की मुटाई से बहुत अधिक मालूम होती है। एलेक्ट्रन-व्याभंग-माप से फिल्म का होना प्रमाणित होता है, पर उसकी मुटाई का पता नहीं लगता।

फिल्म-सामर्थ्य

स्निग्धता से घर्षण कम हो जाता है। फिल्म के सामर्थ्य से मालूम होता है कि दबाव से अथवा गरम करने से फिल्म के निकलने में कितनी रुकावट होती है और घिसाई से कितना संरक्षण होता है। फिल्म-सामर्थ्य बढ़ाने के लिए अनेक पदार्थों को डाला जा सकता है। पैराफिन तेल में अल्प ऑक्सीकरण से अथवा वसा-अम्लों के डालने से सामर्थ्य बढ़ जाता है। फास्फरस अम्लों के कार्बनिक एस्टर से भी ऐसा ही पाया गया है। सल्फुरित वसा-अम्लों से भी कुछ सामर्थ्य बढ़ जाता है। यदि खनिज-तेलों में कुछ सीस-साबुन और सक्रिय गन्धक या क्लोरीन यौगिक हो तो उससे भी फिल्म-सामर्थ्य की वृद्धि होती है।

सत्रहवाँ अध्याय

पेट्रोलियम स्नेहक

कुछ कार्यों के लिए ऐसा स्नेहक चाहिए, जिसकी श्यानता कम और रासायनिक स्थायीपन अधिक हो। कुछ कार्यों के लिए अधिक स्निग्धता और ऊँची श्यानता की आवश्यकता पड़ती है। कुछ कार्यों के लिए ऐसा स्नेहक चाहिए, जो बहुत नीचे ताप पर भी द्रव-दशा में रहे।

आजकल कृत्रिम रीति से भी स्नेहक तैयार होते हैं। कुछ कार्यों के लिए ये बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। पर पेट्रोलियम तेल स्नेहक के लिए बहुत लाभकारी सिद्ध हुए हैं। इस तेल में सब आवश्यक गुण होते हैं। इसकी पर्याप्त मात्रा भी प्राप्य है और यह सस्ता भी होता है।

शुद्ध द्रवों की श्यानता पदार्थों के रासायनिक संघटन पर निर्भर करती है। आजकल के स्नेहक शुद्ध यौगिक नहीं होते। वे अनेक यौगिकों के मिश्रण होते हैं। अच्छे स्नेहक की श्यानता ऊँची होती है। हाइड्रोजन की मात्रा की कमी से स्नेहन-गुण बढ़ा हुआ बताया जाता है। पेट्रोलियम में पैराफिन, नैफ्थीन, सौरभिक और असंतृप्त हाइड्रोकार्बन रहते हैं।

पैराफिन मोम में स्नेहन गुण अच्छा नहीं होता। इनसे श्यानता भी बढ़ती नहीं है। ये वस्तुतः श्यानता को कम करते हैं। स्नेहक में इनकी मात्रा अधिक नहीं रहती।

आइसो-पैराफिन अच्छे स्नेहक होते हैं। पर पेट्रोलियम स्नेहक में इनका रहना संदिग्ध है। असंतृप्त हाइड्रोकार्बन भी स्नेहक में नहीं रहते। तेल के परिष्कार में ये निस्सन्देह निकल जाते हैं। अब स्नेहक में सौरभिक और नैफ्थीन रह जाते हैं। स्नेहक में प्रधानतया नैफ्थीन रहता है। यह अनेक अन्वेषकों के अन्वेषण से सिद्ध होता है कि उसमें सौरभिक भी रहता है, यह निश्चित है। प्रधानतया इन दोनों किस्मों के पदार्थों से ही स्नेहक बना होता है। इस प्रकार के कुछ यौगिकों का संश्लेषण हुआ है। इनमें कुछ के स्नेहन-गुण प्राकृतिक पेट्रोलियम के गुण से मिलते हैं।

ऐसा समझा जाता है कि स्नेहन-तेल में चक्रक केन्द्रक रहते हैं और उनमें अनेक एल्कीलमूलक जुटे रहते हैं। उनमें वास्तविक यौगिक क्या है, इसका ठीक-ठीक पता हमें नहीं है। किन पदार्थों से स्नेहक की स्निग्धता बढ़ती है, इसका भी ज्ञान हमें नहीं है। स्नेहक में यदि कोई ऐसा पदार्थ हो, जिसका अल्प-ऑक्सीकरण हुआ हो, तो स्नेहन-गुण उससे बढ़ जाता है, पर अधिक आक्सीकरण से विपरीत प्रभाव पड़ता है।

प्रतिवर्ष २,०००० लाख गैलन से अधिक पेट्रोलियम स्नेहक के रूप में उपयुक्त होता

है। यह पेट्रोलियम आसुत हो सकता है अथवा अनासुत। दोनों की प्रकृति एक-सी नहीं होती। प्राकृतिक पेट्रोलियम के शोधन की आवश्यकता होती है। कुछ पेट्रोलियम में मोम रहता है और कुछ में नहीं। मोम का रहना आवश्यक नहीं है। मोम के रहने से ठोस रूप में उसके निकल आने का भय रहता है। उसमें स्नेहन गुण है कि नहीं, यह भी संदिग्ध है। पर, मोम निकालना उतना सरल नहीं है। इसमें खर्च पड़ता है। कुछ कच्चे पेट्रोलियम ऐसे होते हैं, जिनसे मोम निकालने की आवश्यकता नहीं पड़ती और कुछ में तो मोम होता ही नहीं है। अधिकांश पेट्रोलियम में कुछ-न-कुछ मोम अवश्य रहता है। पेट्रोलियम के मोमवाले आसुत अंश से ही स्नेहक तैयार होता है। ऐसे अंश में गन्धक यौगिक नहीं रहना चाहिए। स्नेहक में गन्धक यौगिक बहुत हानिकारक होते हैं। स्नेहन के लिए वे ही पेट्रोलियम उपयुक्त हो सकते हैं, जो भूगर्भ-विज्ञान की दृष्टि से बहुत प्राचीन हैं।

पेट्रोलियम के जो अंश स्नेहक के लिए उपयुक्त हो सकते हैं, वे निम्नलिखित हैं--

१. मोम आसुत, जिनसे फिल्टर में दबाकर मोम निकाला गया है। ऐसे अंश से पैराफिन तेल और उदासीन तेल प्राप्त होते हैं।

२. ऐसे आसुत, जिनसे फिल्टर में दबाकर मोम नहीं निकाला जा सकता, पर न जिससे केन्द्रापसारित्र द्वारा मोम निकाला जा सकता है। विलायकों के द्वारा भी इनसे मोम नहीं निकाला जा सकता है।

३. कच्चे तेल के वे अंश, जो उच्च क्वथनांक के होते हैं और अनासुत होते हैं। इसमें अस्फाल्ट नहीं रहना चाहिए। ऐसे अंश से नैफ्था-विलयन के केन्द्रापसारण से मोम निकाला जा सकता है।

ऐसे अनासुत पदार्थ दो प्रकार के होते हैं--

१. वे अंश, जिनसे मोम आसुत निकाल लेने पर शेष बच जाता है।

२. सिलिंडर-अंश, जिनसे सम्पीडित न होनेवाला आसुत-अंश निकाल लिया गया है।

दोनों ही अंशों से केन्द्रापसारण द्वारा अथवा विशेष विलायकों के द्वारा फिल्टर में दबाकर मोम निकाल लिया गया है।

मोम आसुत ऐसे होते हैं कि उन्हें शीतल करके और फिल्टर में दबाकर उनका मोम निकाला जा सकता है। ऐसे आसुत की श्यानता १००° फ० पर ७·५ से १५ सेकण्ड होती है। ४०° से ०° फ० पर एक या अनेक क्रमों में फिल्टर में सम्पीडित कर मोम निकाल लिया जाता है। फिल्टर-प्रेस में प्रति वर्गइंच पर ४०० पाउण्ड दबाव रहता है। ऐसे प्राप्त तेल की श्यानता १००° फ० पर ६० सेकण्ड होती है। ऐसा तेल आजकल सावधान भंजन से प्राप्त होता है।

मोम आसुत के मोम निकालने पर जो अंश बच जाता है, उसके पुनरासवन से जो तेल प्राप्त होता है उसे 'पैराफिन' तेल कहते हैं। ऐसे तेल की श्यानता १००° फ० पर ७ से ७·५ सेकण्ड होती है। एक दूसरे प्रकार के तेल को 'उदासीन' तेल कहते हैं। ऐसे तेल की श्यानता कुछ ऊँची होती है। पर, आजकल यह भेद नहीं है। आजकल 'उदासीन' तेल उस तेल को कहते हैं, जिसमें नैफ्थीनीय उत्पाद है और जिसमें मोम कभी था ही नहीं।

सिलिंडर-तेल ऊँची श्यानता, बहुत ही ऊँचे क्वथनांक और ऊँचे अणु-भार के होते

हैं। इनकी श्यानता २१० फ० पर २८ सेकण्ड होती है। कुछ तेल की श्यानता ६५ सेकण्ड तक पाई गयी है।

विभिन्न अंशों के संमिश्रण से अनेक प्रकार के स्नेहक-तेल प्राप्त होते हैं। ऐसे पतले तेल को, जो तकुं में उपयुक्त होते और किरासन-सा होते हैं, तकुं या स्पिंडल-तेल कहते हैं, ये ऐसे तेल हैं, जो वायुयान के इंजन में उपयुक्त होने अथवा ऐसे ताप-प्रतिरोधक तेल हैं, जो भाप-सिलिंडर में उपयुक्त होते हैं। ऐसे तेल का शोधन भी होता है। शोधन में क्षार, सल्फ्युरिक अम्ल, अजल अल्युमिनियम क्लोराइड, फुलर मिट्टी अथवा विभिन्न विलायक उपयुक्त होते हैं। इनसे वे अपद्रव्य निकल जाते हैं, जो अस्थायी होते, जिनसे रंग बनता, श्यानता बढ़ती और जो जल से पायस बनते हैं। कुछ दशाओं में तो केवल मोम के निकाल लेने से तेल उन्नत हो जाता है, पर कुछ दशाओं में उसे फुलर मिट्टी के संसर्ग में लाकर उन्नत करना पड़ता है। इससे कार्बन-अवशेष-अंश कम हो जाता और मोम निकाल लेने से मेघ और बहाव-विन्दु कम हो जाते हैं और ऐसा तेल मोटर और अन्य कार्यों के लिए अच्छा स्नेहक बनता है।

जो विलायक मोम निकालने में उपयुक्त होते हैं, उनमें प्रोपेन, एसिटोन-बेंज़ीन, एथिलीन क्लोराइड-मिश्रण अथवा ट्राइक्लोर-एथिलीन महत्त्व के हैं; सिलिका-छन्ना से मोम निकल जाता है।

पूर्णतया मोम निकालने में खर्च अधिक पड़ता है। इस कारण इतना ही मोम निकालते हैं, जिससे बहाव-विन्दु कुछ कम हो जाय, तब उसमें ऐसे पदार्थ डालते हैं, जो मोम के निकलने में रुकावट पैदा करे अथवा इतने सूक्ष्म रूप में निकले कि उससे तेल के ठोस हो जाने का भय न रहे।

मोम-रहित तेल से स्नेहक

मोम-रहित तेल में नैफ्थीन रहते हैं। ऐसे तेल का विशिष्ट भार बहुत ऊँचा, क्वथनांक नीचा और अणुभार कम होता है। पर इसमें अस्फाल्ट अधिक रहता है। आसवन से अस्फाल्ट रह जाता है। अस्फाल्ट अम्लीय होता है। नैफ्थीनीय अम्ल भी रहते हैं। क्षार के आधिक्य में आसवन से ये निकल जाते हैं। अम्ल साबुन के रूप में पात्र में रह जाते हैं।

यदि मोम-रहित तेल रहे, तो उससे स्नेहक बनाना सरल है। आसवन से इन्हें विभिन्न अंशों में प्रभाजित करते हैं। फिर विलायक की सहायता से तेल के श्यानता-ताप, रंग और ऑक्सीकरण के प्रति स्थायीपन को अनुकूल बनाते हैं। रंग को हलका करने और विभिन्न अंशों को अलग-अलग करने में कभी-कभी पुनरासवन भी करते हैं। यदि ऐसे स्नेहक की आवश्यकता हो, जिसमें रंग और हल्का हो, तो उसे फुलर मिट्टी पर छानकर रंग को दूर कर लेते हैं। ऐसा ही तेल टरबाइन और परिवर्त्तक (transformer) में उपयुक्त होता है।

ऐसा तेल सब प्रकार के स्नेहक में उपयुक्त हो सकता है। ऐसे तेल की श्यानता १००° फ० पर ७ सेकण्ड से २१०° फ० पर ३२ सेकण्ड तक हो सकती है। ऐसे तेल में कार्बन-अवशेष कम होता और कोक बनने का झुकाव भी कम होता है।

इस प्रकार स्नेहक के लिए जो तेल उपयुक्त होता है, उसे क्षार अथवा सल्फ्युरिक अम्ल अथवा फुलर मिट्टी से अथवा विभिन्न विलायकों से शोधन की आवश्यकता पड़ती है।

शोधन से वे पदार्थ भी निकल जाते हैं, जिनसे रंग बढ़ता और ऑक्सीकरण से ठोस अथवा पायस बनने की सम्भावना रहती है। ऐसे तेलों में हाइड्रोकार्बन रह सकते हैं अथवा अस्फाल्ट पदार्थ रह सकते हैं।

तेल का स्थायीपन विशेष रूप से उपादेय है। तर्कु-तेल बहुत हलका होता है और उच्च-चाल मशीन में उपयुक्त होता है। इस तेल में ऑक्सीकृत होनेवाला पदार्थ रहने से वह गोंद-सा पदार्थ बनकर श्यानता को बढ़ा देता है। भाप-टरबाइन में उपयुक्त होनेवाला तेल उच्च-चाल और कभी-कभी उच्च ताप पर उपयुक्त होता है। वह भाप और वायु के संस्पर्श में आता है। ऐसी स्थिति ऑक्सीकरण और पायसीकरण के लिए अनुकूल होती है। इस कारण ऐसे तेल में ऑक्सीकृत होनेवाले अंश का बिल्कुल न रहना बहुत आवश्यक है।

आभ्यन्तर दहन इंजन में स्नेहक का काम केवल चिकनाना ही नहीं हैं, वरन् उसका काम ठंडक उत्पन्न करना भी है। उच्च चाल और उच्च उत्पाद (output)-वाले मोटरों के लिए यह आवश्यक है कि स्नेहक ऊष्मा-ऊर्जा को बड़ी मात्रा में निकाल सके।

स्नेहक के रखने से उसका ह्रास हो जाता है। ह्रास होने का कारण उसका ऑक्सीकरण है। अतः इस ह्रास को रोकने के अनेक प्रयत्न हुए हैं। एक ऐसा प्रयत्न ऐसे पदार्थों को डालना है, जिससे स्नेहक का गुण ज्यों-का-त्यों बना रहे। स्निग्धता बढ़ाने के लिए जो पदार्थ उपयुक्त होते हैं, उनका वर्णन ऊपर हो चुका है। फिल्म का सामर्थ्य कैसे बढ़ता है, इसका भी उल्लेख पहले हो चुका है। प्रति-ऑक्सीकारक के डालने से ऑक्सीकरण भी रोका जा सकता है। स्नेहक में अम्लता के रोकने के लिए सौरभिक एमिन और एमिनो-फीनोल डाले जाते हैं। कुछ नाइट्रो-यौगिकों से भी अवक्षेप रुकता है। कुछ गन्धक यौगिकों और फास्फरस अम्लों के सौरभिक एस्टरों से भी आक्सीकरण रोका जा सकता है। ये पदार्थ ऐसे होने चाहिए कि वे संक्षारण (corrosion) को रोके और मिश्र-धातुओं पर उनका कोई असर न पड़े और कुछ अवपंक (sludge) बने भी, तो वह निलम्बित रहे। गन्धक-यौगिकों और फास्फरस-यौगिकों से धातुओं का संक्षारण रुकता है। धातुओं के साबुन से अवपंक निलम्बित रहता है। अल्फा-नैफ्थोल से अम्लता का बढ़ना रुकता है।

आदर्श तेल

स्नेहक के लिए आदर्श तेल कैसा होना चाहिए, इस सम्बन्ध में सर्वसम्मत मत नहीं दिया जा सकता। अनेक वर्षों के प्रयत्न और अनुभव से ही पता लगता है कि किस काम के लिए कैसा तेल अच्छा हो सकता है। साधारणतया मोटरगाड़ियों और औद्योगिक कार्यों के लिए तेल में निम्नलिखित प्रकार का गुण रहना चाहिए—

टरबाइन-तेल

गुण	पेन्सिल्वेनिया शोधित तेल	नैफ्थीन तेल अम्ल से साधित
विशिष्टभार O. A. p. I.	३२.५	२७.२
बहाव	०	–४०
दमकांक °फ०	३६५	३५०
अग्न्यंक °फ०	४६०	४०५

गुण	पेन्सिल्वेनिया शोधित तेल	नैफ्थीन तेल अम्ल से साधित
श्यानता, सेबोल्ट °फ० पर		
०	७,०००	१४२००
७०	३३५	३८५
१००	१५०	१५२
१३०	८५	८४
२१०	४३	४१
श्यानतांक	६५	२२
रंग	१	१
कार्बन-अवशेष	लेश	०'०१
उदासीन-संख्या	उदासीन	०'०१
भाप पायस-संख्या	३०	३५
ऑक्सीकरण-संख्या	४	१४

इंजन और मशीन-तेल

विशिष्ट भार	३२'३	२३'०
बहाव	०	−२५
दमकांक °फ०	४१५	३४०
अग्न्यंक °फ०	४८०	३६०
श्यानता, सेबोल्ट °फ० पर		
०	१०,५००	३०,०००
७०	४७०	५६२
१००	२००	२०५
१३०	१०५	६६
२१०	४७	४३
श्यानतांक	१०५	८
रंग	१	३'५
कार्बन-अवशेष	०'०१	०'०४
उदासीन-संख्या	०'०१	०'०८

अवमिश्रित तेल

	सामान्य तेल	नैफ्थीन
विशिष्ट भार	२७	२३'४
बहाव	५	५
दमकांक °फ०	४५५	४५५
अग्न्यंक °फ०	५१५	५२५

	सामान्य तेल	नैफ्थीन
श्यानता, सेबोल्ट °फ० पर		
०	१८०,०००	८००,०००
७०	२८१५	४६६०
१००	६२२	१,२५०
१३०	३८१	४४६
२१०	८३	८१
श्यानतांक	६२	४६
रंग	५.५	३.७५
कार्बन-अवशेष	०.४०	०.२१
उदासीन-संख्या	०.०२	०.०३

विशिष्ट भार—तेल के विशिष्ट भार से स्नेहक के लिए उपयुक्तता अथवा अनुपयुक्तता का कुछ पता नहीं लगता।

बहावांक और मेघांक—ये ताप हैं, जिन पर तेल जम जाता, अथवा ठोस होकर तेल को परान्ध कर देता है। सामान्य स्नेहक के लिए ये अंक आवश्यक नहीं हैं, पर यदि स्नेहक को बहुत निम्न ताप पर उपयुक्त करना है, तो ये महत्त्व के हो जाते हैं। इन अंकों के नीचे ताप पर स्नेहक उपयुक्त नहीं हो सकता।

रंग—स्नेहक के रंग भी महत्त्व के नहीं है। जहाँ उन्हें वस्त्र के कारखानों में इस्तेमाल करना है, बहाव कुछ महत्त्व के हो सकते हैं। रंग से शोधन की डिगरी का कुछ पता लगता है। पर कुछ तेलों में नैफ्था, सफेद तेल और मोम के कारण भी उनका रंग हल्का होता है।

पायसीकरण—कुछ तेल सरलता से पायस बनते हैं और कुछ कठिनता से। पायस बनने से तेल के स्थायीपन का कुछ पता लगता है। भाप-टरबाइन तेल में पायसीकरण में कठिनता रहनी चाहिए। कुछ इंजन-तेल में पायसीकरण सरलता से होना चाहिए।

दमकांक और अग्न्यंक—तेल के दमकांक और अग्न्यंक के बीच ३० से ६०° फ० से अधिक का अन्तर नहीं रहना चाहिए। यदि अन्तर अधिक है तो मालूम होता है कि उसमें वाष्पशील अंश विद्यमान हैं। यदि दोनों कम हैं, तो वाष्पायन से उसमें क्षति हो सकती है। इनसे स्नेहक के गुणों का कुछ पता लगता है।

उदासीन-संख्या—उदासीन-संख्या से असंयुक्त कार्बनिक अम्ल का पता लगता है। उसमें वसा-तेल है कि नहीं, इसका भी पता लगता है। तेल का ऑक्सीकरण हुआ है कि नहीं, इसका भी कुछ ज्ञान होता है।

श्यानता—तेल की श्यानता बड़े महत्त्व की है। किसी विशिष्ट काम के लिए तेल उपयुक्त है अथवा नहीं, इसका पता उसकी श्यानता से लगता है। ताप के परिवर्त्तन से श्यानता में कैसे परिवर्त्तन होता है, इससे तेल के सम्बन्ध में बहुत कुछ पता लगता है।

कार्बन-अवशेष—तेल में अवाष्पशील और कोक बननेवाला अंश, अस्फाल्ट, रेज़िन इत्यादि का कार्बन-अवशेष से पता लगता है। जिस तेल में पैराफिन अधिक रहता है, उसमें कार्बन-अवशेष कम होता है। तेल के ऑक्सीकरण से कार्बन-अवशेष की वृद्धि होती है।

अवमिश्रित स्नेहक – पेट्रोलियम तेल को वानस्पतिक तेल से मिलाकर अवमिश्रित स्नेहक तैयार करते हैं। ऐसे तेल का स्नेहन-गुण बढ़ जाता है, ऐसे तेलों में ५ से ७ प्रतिशत चर्बी इस्तेमाल होती है। राजिका-तेल भी समुद्री भाप-इंजन के तेल में उपयुक्त होता है। तेल में रबर भी मिलाया जाता है। इससे तेल की श्यानता और चिपचिपाहट बढ़ जाती है। ऐसा तेल गीयर (gear) पर अधिक ठहरता है। तेल में निःशब्द विद्युतीय विसर्ग से भी तेल मोटा हो जाता है। वानस्पतिक तेल के स्थान में वसा-अम्लों का भी उपयोग हुआ है।

सूत्र काटने, सूराख करने, तार खींचने और खराद तथा मशीन में जो स्नेहक उपयुक्त होता है, वह ऐसा होना चाहिए कि काम करने में उत्पन्न ऊष्मा को चारों ओर बिखेरता रहे और स्नेहक का फिल्म सदा बना रहे। जहाँ ठंडक की आवश्यकता हो, वहाँ जल अथवा क्षारीय विलयन इस्तेमाल हो सकता है। जहाँ अल्प स्नेहन आवश्यक हो, वहाँ हल्का पायस ६० भाग जल में १ भाग तेल इस्तेमाल हो सकता है। आवश्यकतानुसार तेल की मात्रा क्रमशः बढ़ाई जा सकती है। इसमें मध्यम श्यानता का तेल उपयुक्त होता है। भारी काम में उच्च स्निग्धता की आवश्यकता होती है। ऐसे स्नेहक में वानस्पतिक तेल, सल्फुरित तेल या टरपीन इस्तेमाल हो सकता है।

जहाँ उच्च ताप हो, वहाँ ठोस या अर्ध-ठोस स्नेहक उपयुक्त होता है, ऐसे स्नेहक को ग्रीज़ कहते हैं। ऐसे ग्रीज़ पेट्रोलियम तेल में धातुओं के साबुन के प्रक्षेपण (dispersion) से बनते हैं। साबुन में कैलसियम, सोडियम, अलयूमिनियम और सीस धातु होते हैं और तेल में बिनौले के तेल और पशुओं की चर्बी होती है। पेट्रोलियम तेल हल्के और भारी दोनों होते हैं।

एक विशेष प्रकार का ग्रीज़ कम श्यान तेल और वसा-अम्लों के कैलसियम साबुन से प्राप्त होता है। उसका गाढ़ापन साबुन की मात्रा पर निर्भर करता है। सामान्य ग्रीज़ में ५ से २० प्रतिशत साबुन रहता है। ऐसे ग्रीज़ के गलनांक निम्न होते हैं, साधारणतया १००° से० के ऊपर नहीं। ये उच्च ताप पर अधिक गाढ़ा नहीं होते। सोडियम साबुन के व्यवहार से उच्च गलनांक के ग्रीज़ प्राप्त होते हैं। यदि उच्च श्यानता के पेट्रोलियम उपयुक्त हों तो और भी उच्च ताप पर ग्रीज़ गाढ़ा रह सकता है। बहुत उच्च ताप के लिए रेज़िन के साबुन और भारी पिच के मिश्रण का व्यवहार होता है।

अलूमिनियम साबुन से बना ग्रीज़ उच्च ताप पर भी गाढ़ा रहता और पारदर्शक होता है। ऐसा ग्रीज़ मोटरगाड़ियों के न्याधार (chassis) के स्नेहन के लिए इस्तेमाल होता है। ऐसे ग्रीज़ में आसंजन (adhesenecness) कुछ कम होता है, पर उसमें चिपचिपा कृत्रिम रेज़िन अथवा रबर डालकर आसंजन बढ़ाया जा सकता है

अक्षदण्ड (axle) ग्रीज़ पेट्रोलियम तेल और रेज़िन में विद्यमान एजियेबेटिक अम्ल के कैलसियम साबुन से बनता है। इसमें चूने का आधिक्य पूरक के रूप में रह सकता है, यद्यपि उच्च कोटि के ग्रीज़ के लिए ग्रेफाइट या टालक इस्तेमाल हो सकता है। बिना गरम किये एजियेबेटिक अम्ल का साबुन बन सकता है। अतः ऐसे ग्रीज़ को ठण्ड में बने ग्रीज़ कहते हैं।

ग्रीज़ों का अध्ययन इधर बहुत विस्तार से हुआ है। उनकी स्निग्धता कैसे घटती-बढ़ती है, उसका बहाव कैसा रहता है, उसका प्रवेशन कैसे होता है, उसका ऑक्सीकरण

किस वेग से होता है और ऑक्सीकरण से उसके गुणों में क्या परिवर्त्तन होता है, उसके संस्नारक गुण कैसे घटते-बढ़ते हैं, इत्यादि बातों का अधुना विस्तार से अध्ययन हुआ है। उच्च दबाव पर कैसा ग्रीज़ उपयुक्त होना चाहिए, इस पर भी बहुत काम हुआ है। स्निग्धता को बढ़ाने के लिए ग्रेफाइट का उपयोग बहुत पुराना है। उसका क्या महत्त्व है, इस पर भी खोजें हुई हैं।

स्नेहन-तेल के पुनर्ग्रहण की चेष्टाएँ भी हुई हैं। उपयोग से उनमें दूषण आ जाता और उनका ह्रास हो जाता है। उन्हें फिर कैसे उन्नत कर काम में ला सकते हैं, इसके प्रयत्न हुए हैं। भार-टरबाइन-तेल में कार्बनिक अम्लता आ जाती है और कुछ दशा में उसमें अवपंक (sludge) निकल आता है। यह जल, कार्बनिक अम्लों और टरबाइन की धातुओं के कारण होता है। कुछ तेलों में धूल और मैल के कारण, विना जली ईंधन के कारण अथवा गैसों से जल के कारण ऐसा होता है। कुछ दशा में केन्द्रापसारण से अपद्रव्यों को दूर कर सकने और कुछ दशाओं में आसवन की आवश्यकता होती है। कुछ अपद्रव्यों को स्कंधित या अवशोषित कर निकाल सकते हैं। अम्लता को धोकर और उदासीन कर दूर कर सकते हैं। कुछ लोगों का कहना है कि ऐसा पुनर्गृहीत तेल नये तेल से श्रेष्ठ होता है, पर ऐसी बात नहीं है। पुनर्गृहीत तेल साधारणतया नये तेल से अच्छा नहीं हो सकता, क्योंकि इनमें किसी उपाय से सारी-की-सारी अशुद्धियाँ दूर नहीं की जा सकती हैं। ऐसे तेल का रंग अवश्य ही गाढ़ा होता है और कार्बन-अवशेष की मात्रा अधिक रहती है। पुनर्गृहीत तेल से उच्च कोटि का ग्रीज़ तैयार करना अवश्य ही कठिन है। यदि ग्रीज़ कीमती है और मिलता नहीं है तो ऐसी दशा में पुनर्ग्रहण अवश्य ही उपादेय है और उसका प्रयत्न होना चाहिए, अन्यथा पुनर्ग्रहण से विशेष लाभ नहीं होता।

अठारहवाँ अध्याय

पैराफिन मोम

पैराफिन मोम पूर्णतया ऐसे पैराफिन-हाइड्रोकार्बनों से बने होते हैं, जो सामान्य ताप पर ठोस होते हैं। सम्भवतः इनमें प्रधानतया नार्मल ऋजु-श्रृंखला हाइड्रोकार्बन रहते हैं। भिन्न-भिन्न पेट्रोलियम से प्राप्त मोम एक-से संघटन के नहीं होते। मोम कैसे बनते हैं, इसका भी ज्ञान हमें नहीं है। पेट्रोलियम के अतिरिक्ति कुछ पौधों में भी मोम पाये गये हैं। गुलाब-तेल में जो मोम रहता है, उसका ५० प्रतिशत पैराफिन मोम होता है। तम्बाकू, सेव और नासपाती के वल्क और चीड़ पेड़ के तेल-रेज़िन में भी मोम रहता है। कुछ पशुओं में भी मोम पाया गया है। मधुमक्खी के मोम में पैराफिन रहता है। ग्राह के यकृत् में भी मोम पाया गया है।

मोम के गुण और संघटन

पैराफिन हाइड्रोकार्बन का पन्द्रह कार्बनवाला यौगिक पहला ठोस पैराफिन है, जो १०° से० पर पिघलता है। सामान्य मोम का गलनांक ४८° से० होता है। ऐसे मोम में २३ से २६ कार्बनवाले पैराफिन रहते हैं। पीछे देखा गया है कि मोम में ३५ कार्बनवाले पैराफिन भी रह सकते हैं। इस पैराफिन का गलनांक ७६-७७° से० है। कुछ ऐसे हाइड्रोकार्बन का संश्लेषण भी हुआ है। ऐसे हाइड्रोकार्बन भी तैयार हुए हैं, जिनका गलनांक ९३° से० है और जिनमें ४८ से ५० कार्बन परमाणु रहते हैं। बरमा के मोम में २१ से ३४ कार्बनवाले पैराफिन पाये गये हैं। एक नमूने में ५७ कार्बनवाला हाइड्रोकार्बन, जिसका गलनांक ९६'५° था, पाया गया था। मोम के भिन्न-भिन्न नमूनों को पूर्ण रूप से शुद्ध कर उनका गलनांक निकाला गया था। उनके गलनांक इस प्रकार पाये गये थे।

पैराफिन मोम	८०'५ से १५६°फ०
विना दबाये उच्च श्यानता के आसुत से प्राप्त मोम	१२८'५ से १७२'२
वेसलिन मोम	१५९'७ से १७६'५
शलाका-मोम	१६३'० से १७८'५

इन मोमों के विश्लेषण के संबंध में अणुभार इत्यादि से पता लगता है कि ये नार्मल

हाइड्रोकार्बन से बने हैं। इन मोम-हाइड्रोकार्बनों के गुणों का विस्तार से अध्ययन हुआ है। विभिन्न प्रभागों के गुण इस प्रकार हैं—

प्रभाग	क	ख	ग	घ	च	छ
गलनांक °से०	५९'९	५५'२	४७'१	४०'५	३५'२	२९'४
वर्त्तनांक, ८०° से०	१'४३०३	१'४३०६	१'४३३०	१'४३५०	१'४३५९	१'४३८०
विशिष्ट भार ८०° से०	०'७७०	०'७७३	०'७७९	०'७८३	०'७८६	०'७९२
अणुभार	३६६	३६७	३७९	३८९	३८५	३७७
कार्बन-परमाणु-संख्या	२६	२६	२७	२७'६	२७'४	२६'८

अणु-वर्त्तन से सब प्रभागों का संतृप्त संघटन होना प्रकट होता है। सम्भव है, उसमें सौरभिक भी हो। ऐसा मालूम होता है कि मोम में अधिकांश नार्मल हाइड्रोकार्बन होते हैं। कुछ आइसोहाइड्रोकार्बन और कुछ सौरभिक हाइड्रोकार्बन भी रहते हैं। एक्स-किरण से मोम के संघटन के सम्बन्ध में कुछ निश्चित पता नहीं लगता।

ठोस पैराफिन का संश्लेषण हुआ है। २० कार्बनवाले हाइड्रोकार्बन से ६४ कार्बनवाले हाइड्रोकार्बन तैयार हुए हैं। विभिन्न कार्यकर्त्ताओं के हाइड्रोकार्बनों के गलनांक एक नहीं पाये गये हैं। रूथेनियम उत्प्रेरक से जो पैराफिन प्राप्त हुए हैं, उनके गलनांक और औसत अणुभार और कार्बन-परमाणु-संख्या इस प्रकार पाये गये हैं—

गलनांक° से०	औसत अणुभार	कार्बन-संख्या
१२३'५	२१००	१७०
१२७'०	२५००	२१०
१२८'५	४०००	३३०
१३०'०	५०००	४२०
१३१'५	८०००	६७०

आइसो-पैराफिनों का भी संश्लेषण हुआ है। इनके गलनांक अपेक्षया बहुत निम्न होते हैं।

मोम का मणिभीकरण

मोम के मणिभीय रूप छोटे-छोटे सूई-से लेकर चतुर्नीक पट्टिका-से होते हैं। यह अमणिभीय रूप में भी रहता है। अमणिभीय रूप में रहने से छानना कुछ कठिन होता है। ऐसा क्यों होता है, इसका अध्ययन अनेक लोगों के द्वारा हुआ है। एमिल अल्कोहल के विलयन के मणिभीकरण से मणिभीय और अमणिभीय दोनों प्रकार के मोम प्राप्त हुए हैं। एक का मत है कि नार्मल पैराफिन मणिभीय होता है और आइसो अथवा सशाख पैराफिन अमणिभीय होते हैं। अमणिभीय मोम के प्रभंजन से नार्मल पैराफिन और कम अणुभारवाले ओलिफिन प्राप्त होते हैं। मोम का आसवन कर ठंडा करने और प्रेस में छानने से यह

पट्टिका रूप में प्राप्त होता है। यदि विलायकों से मणिभ बनाया जाय, तो यह सूच्याकार रूप में प्राप्त होता है। पट्टिका से सूच्याकार रूप में आने में निम्नलिखित बातों का प्रभाव पड़ता है—

१. संकेन्द्रण

२. श्यानता

३. मोम की शुद्धता

४. ताप

५. ठंडक का वेग

कम संकेन्द्रण से पट्टिका प्राप्त होती है। निम्न या मध्यम श्यानता से पट्टिका प्राप्त होती है। अपद्रव्यों से सूच्याकार मणिभ प्राप्त होते हैं। एक विशिष्ट ताप होता है, जिसके ऊपर सूच्याकार और नीचे पट्टिका के मणिभ बनते हैं। यह ताप विलायक पर भी निर्भर करता है। जल्दी ठंडा करने से सूच्याकार मणिभ बनते हैं।

स्नेहन तेल से मोम को पूर्ण रूप से निकाल डालना आवश्यक है, नहीं तो ठंडक से मोम के निकल आने की सम्भावना रहती है। कितना मोम निकला है, वह उसके बहाव-अंक से पता लगता है। मोम के निकालने में खर्च पड़ता है और क्रिया भी कठिन होती है। कुछ पदार्थ ऐसे पाये गये हैं, जिनसे मणिभ का निकलना रोका जा सकता है।

मोम का पृथक्करण

आसवन से मोम का पृथक्करण सम्भव नहीं है, क्योंकि स्नेहन-तेल और मोम के क्वथनांक सन्निकट होते हैं। वाष्प अथवा शून्यक में आसवन से कुछ सीमा तक कभी-कभी मोम को पृथक् कर सकते हैं, इस दशा में जो होता है, वह यह है कि उच्च गलनांकवाला मोम अवशिष्ट भाग से अधिक वाष्पशील होता है और आसवन से अवशिष्ट भाग में मोम की मात्रा कम हो जाती है। जो पदार्थ आसवन से निकल जाता है, उससे मोम प्राप्त करते हैं। मोम का निकलना कुछ कठिन होता है।

आसवन से जो अंश निकल जाता है, उसकी श्यानता १००°फ० पर ६५ से ८५ होती है और उसका क्वथनांक १० मिली० दबाव पर ३०० से ६००°फ० होता है। इससे व्यापार का मोम अधिकांश में प्राप्त होता है। आसुत को शीतल कर और प्रेस में दबा कर मोम को अलग करते हैं।

अस्फाल्ट-रहित कच्चे तेल के आसवन से जो अंश बच जाता है, उसके हल्के अंश को आसवन द्वारा निकाल लेते हैं और तब अवशिष्ट भाग में अमणिभीय मोम रह जाता है। इसके नैफ्था-विलयन के शीतल करने और केन्द्रापसारण से अथवा एसिटोन-बेंज़ील-मिश्रण-सदृश विलायक में घुलाकर उसके विलयन को प्रेस में छानने से उससे मोम निकल आता है।

जिस तेल से सारा वाष्पशील अंश निकाल दिया गया है, उसको नैफ्था में घुला कर विलयन के शीतल करने से मोम निकल आता है। मणिभीय मोम की प्राप्ति में चार क्रम होते हैं—

पहला क्रम होता है कि आसवन से वह अंश प्राप्त करना, जिसमें मोम रहता है।

दूसरे क्रम में मोमवाले प्रभाग को शीतल करते हैं।

तीसरे क्रम में अलग हुए मोम को प्रेस में छानते हैं।

चौथे क्रम में उत्स्वेदन करते हैं।

कच्चे तेल के सावधान आसवन से मोमवाला अंश प्राप्त करते हैं। श्यानता और क्वथनांक से पता लगता है कि किस प्रभाग में अधिक मोम है। उस प्रभाग को अलग करते हैं। इस अंश के पुनरासवन से कुछ तापीय भंजन द्वारा मोम-आसुत की श्यानता कम हो जाती है। इससे उच्च अणुभारवाला अंश निम्न अणुभारवाले अंश में, जो अधिक मणिभीय होता है, परिणत हो जाता है। इससे मणिभीकरण रोकनेवाला भाग भी नष्ट हो जाता है। साधारणतया कच्चे तेल से १० से १५ प्रतिशत मोम प्राप्त होता है।

मोमवाले अंश को ऐसी नली में ले जाते हैं, जिसको ठंडे नमक-विलयन से शीतल रखते हैं। इससे मोम मणिभीय रूप में पृथक् हो जाता है। उसे फिर फिल्टर-प्रेस में डालकर छानते हैं। यह छानना भी निम्न ताप पर होता है। कहीं-कहीं एक ही ताप १५°फ० पर होता है और कहीं-कहीं दो ताप ०° और ३५°फ० पर होता है। मोम निकाल लेने पर स्नेहन तेल का बहाव-अंक विभिन्न होता है। यदि २०°फ० पर मोम निकाला गया है, तो स्नेहन तेल का बहाव-अंक ३५ और यदि ०°फ० पर निकाला गया है, तो बहाव-अंक १५ होता है।

इस प्रकार से निकले मोम को पिघलाकर तब ठोस बनाते हैं। ऐसा मोम सामान्य ताप पर भंगुर होता है। इसमें २५ से ५० प्रतिशत द्रव तेल और उच्च और निम्न क्वथनांक-वाला मोम प्रायः सम मात्रा में रहता है। इसको तोड़कर प्रायः सारा तेल बहा कर निकाल सकते हैं। इनमें कुछ भी तेल मोम के साथ ठोस विलयन में नहीं रहता। इस कारण ठंडे में एसिटोन से धोने से सारा तेल निकलकर तेल-रहित मोम प्राप्त होता है। यह स्मरण रखने की बात है कि मोम एसिटोन में बहुत अल्प विलेय है, पर तेल एसिटोन में पर्याप्त विलेय है।

मोम के कोमल और कठोर मोम में पृथक्करण को 'उत्स्वेदन' या 'प्रभाजक द्रवण' कहते हैं। कोमल मोम को पिघला कर विभिन्न मुटाई के स्तरों में परिणत कर उत्स्वेदन-कक्ष में रखते हैं, जिसका ताप बहुत धीरे-धीरे प्रति घण्टा केवल एक से दो डिग्री उठाते हैं। इससे द्रव तेल और निम्न गलनांकवाला मोम पिघलकर निकल जाता है। ताप की वृद्धि से विभिन्न गलनांकवाला मोम प्राप्त कर सकते हैं। अन्तिम अंश कठोर मोम का होता है। उसका गलनांक १३२ से १३५° फ० होता है। एक उत्स्वेदन से सारा तेल और कोमल मोम नहीं निकल जाता। अवशेष अंश को मिलाकर फिर उत्स्वेदन कर सकते हैं। घरेलू कामों के लिए जो मोम उपयुक्त होता है, उसका गलनांक १२४ से १२६° फ० रहता है। उसमें प्रायः ०·०५ प्रतिशत तेल और जल रहता है। इसमें कम तेल होना, सफेद रंग होना और स्वाद और गंध का अभाव होना उत्स्वेदन के बाद छानने की क्रिया पर निर्भर करता है। पिघले मोम को फुलर मिट्टी के कई छन्ने पर छानकर तब उसे फिर पिघलाकर तब पटिया (slate) में परिणत करते हैं।

उत्स्वेदन-क्रिया का सम्पादन बड़े-बड़े पात्रों में होता है, जिसमें ४०,००० गैलन तक मोम अँट सकता है। गरम करना भाप या उष्ण जल से ऊर्ध्वाधार नालियों द्वारा होता है। छेदवाले पट्ट पर मोम रखा जाता है, जिसमें तार लगा रहता है। उत्स्वेदन द्वारा मोम के पृथक्करण में बड़ी सावधानी की आवश्यकता होती है। छानने में मोम के मणिभ का पर्याप्त

प्रभाव पड़ता है। यदि मणिभ बड़े-बड़े हों, तो द्रव के बह जाने में सरलता होती है। धीरे-धीरे ठंडा करना सुविधाजनक होता है। कभी-कभी मोम का सल्फ़ुरिक अम्ल के साथ उपचार करते हैं। इससे मोम का रंग उन्नत हो जाता है और रेज़िन के निकल जाने से मोम स्थायी हो जाता है। इससे मणिभीकरण में, बड़े-बड़े मणिभ बनने में, सहायता मिलती है। इससे फुलर मिट्टी पर छानने में कम मिट्टी से गंध, स्वाद और रंग उन्नत हो जाते हैं। न्यून दबाव पर प्रभाजक आसवन से भी मोम को पृथक् कर सकते हैं।

भारी तेल से मोम निकालना

हल्के तेल से छान और दबाकर मोम निकाल लेते हैं। भारी तेल से मोम निकालने के लिए तेल को नैफथा में घुलाकर ४०° फ० तक ठंडा करते हैं। मोम के साथ बहुत गाढ़ा, श्यान तेल और अर्ध-ठोस रेज़िन भी निकल आते हैं। यदि इसमें गंध को निकाल डालें, तो उससे शुद्ध वेसलिन प्राप्त होता है। तेल और रेज़िन के निकाल लेने पर मोम बच जाता है। इस मोम के भंजन से पेट्रोल प्राप्त होता है।

मोम निकालने के लिए विलायकों का भी उपयोग हो सकता है। विलायकों में एसिटोन और बेंज़ीन-एल्कोहल-मिश्रण उपयुक्त हुए हैं। कुछ लोगों ने बेंज़ीन-एसिटोन अथवा टोलिवन और मेथिल-एथिल कीटोन-मिश्रण उपयुक्त किया है। विलायकों से मोम का पृथक्करण उतना सरल नहीं है। इसमें अनेक कठिनाइयाँ हैं। कुछ लोगों ने एथिलिन डाइक्लोराइड और मेथिलिन क्लोराइड भी विलायक के रूप में उपयुक्त किया है।

मोम के उपयोग

बरमा-पेट्रोलियम से सन् १८४६ ई० में पहले-पहल मोम निकला था। उस समय मोम २०० पाउण्ड में एक टन बिकता था। जलन, जल के प्रति प्रतिरोधकता, रासायनिक प्रतिकारकों के प्रति निष्क्रियता और रासायनिक गुणों में सर्वोत्कृष्टता आदि विशेषताओं के कारण मोम की उपयोगिता बढ़ी हुई है।

इसका सबसे प्राचीन उपयोग मोमबत्ती बनाने में है। मोमबत्ती के लिए अब भी उत्तम इसलिए समझा जाता है कि इसमें दीपित-क्षमता ऊँची होती, जलने का गुण अच्छा होता, जलने पर राख नहीं बनता और ऐसा कोमल होता है कि सरलता से इच्छानुकूल मोड़ा जा सकता है। इसमें दोष है तो यही कि उष्ण स्थान में रखे रहने से टेढ़ा हो जाता है, पर इस दोष का निराकरण मोम में स्टियरिन और कार्नोबा मोम डालकर कर दिया गया है। मोमबत्ती के ऊपर कठोरतर मोम का एक स्तर चढ़ाकर टेढ़ा होने का दोष बहुत कुछ कम किया जा सका है। मोम के कुछ और छोटे-छोटे दोषों का भी निराकरण इसी प्रकार कुछ-न-कुछ पदार्थों को डालकर कर दिया गया है। नैफ्थोल डालने से पारान्धता बहुत कुछ उन्नत हो जाती है। स्टियरेट डालने से चिपकना दूर हो जाता है। उसमें तेल, वायु और मणिभ के कारण विभिन्न रंग आ जाता है। मणिभ के आने से ही पारदर्शिता में कमी हो जाती है। ठंडा होने के समय वायु के बुलबुले से रंग कुछ सीमा तक दूर किया जा सकता है। गलनांक के नीचे ताप पर गरम करने से रंग बढ़ जाता है। इससे घनता और विद्युतीय प्रतिरोध भी बढ़ जाता है। मोमबत्ती को रँगा भी जाता है। रँगने के लिए स्टिअरिक अम्ल में रंग को घुलाकर उसमें मोमबत्ती डुबा दी जाती है अथवा मोम को ही रँग कर उसकी मोमबत्ती बनाई जाती है।

मोम का दूसरा उपयोग मोमजामा नामक कागज तैयार करने में होता है। यह कागज खाद्य-पदार्थों के लपेटने और बाँधने के लिए उपयुक्त होता है। पावरोटी लपेटने के लिए जो मोम-कागज उपयुक्त होता है, उस कागज में, भार में ४५ प्रतिशत मोम रहता है। मोम इतना मोटा होना चाहिए कि वह कागज पर चिपका रहे और पानी उसमें प्रविष्ट न कर सके। ऐसा मोम मणिभीय होता और १२८ से १३२° फ० पर पिघलता है। इसकी वितान-क्षमता (tensile strength) ऊँची होनी चाहिए। जहाँ कागज पर अच्छा छाप देना पड़ता है, वहाँ उच्च गलनांकवाला मोम इस्तेमाल होता है। दूध की बोतलों के ढक्कन पर जो मोम रहता है उसका गलनांक १२२° फ० रहता है। ऐसे मोम में तेल भी रह सकता है, पर ऐसे तेलों में स्वाद नहीं रहना चाहिए।

लकड़ी पर भी मोम चढ़ाया जाता है। ऐसी मोम-चढ़ी लकड़ी पर अम्ल और क्षारों की कोई क्रिया नहीं होती। पत्थर और गचों को जल-अभेद्य बनाने में भी मोम उपयुक्त होता है। रसायनशाला के बेंचों पर मोम के आवरण चढ़ाने से उस पर अम्लों और क्षारों से क्षति नहीं होती। हफ्ते में एक बार ऐसा करना अच्छा होता है

दियासलाई की लकड़ी पर ११०°-११२° फ० गलनांक का मोम चढ़ाया जाता है। ऐसे मोम को बहुत शुद्ध होने की आवश्यकता नहीं है। इसमें तेल भी पर्याप्त मात्रा में रह सकता है। अल्प मात्रा में मोम औषधियों और शृंगार-पदार्थों के निर्माण में भी उपयुक्त होता है। आजकल फलों के संरक्षण के लिए उन पर मोम का आवरण चढ़ाया जाता है। इससे फलों के गुण और दिखावट अच्छी रहती है। संतरा, नींबू, आम और सेव में ऐसा किया जाता है। चुकन्दर को भी मोम से सुरक्षित रख सकते हैं।

वस्त्रों और चमड़ों पर भी मोम चढ़ाया जाता है। सूतों पर मोम के आवरण से उसमें जल प्रविष्ट नहीं करता। उसमें भाप भी प्रविष्ट न कर सके, इसके लिए आवश्यक है कि सूत की तन्तुओं के छेदों को पूर्ण रूप से मोम से भर दिया जाय। मक्खन और मदिरा के पीपे को, काष्ठ-पात्रों को भी मोम से ढँका जाता है। चमड़ों पर मोम के आवरण से उसमें जल नहीं प्रविष्ट करता।

विद्युत्-यंत्रों में भी मोम का उपयोग होता है, क्योंकि यह विद्युत् का प्रतिरोधक है। कागज-धातु संघनित्र (foil condensers) पर यह प्रतिरोध का काम करता है। समुद्री तार के जोड़ों और बिजली-पेटियों, ट्रांसफार्मरों (transformers) और कुंडलियों में भी मोम उपयुक्त होता है। इसमें उच्च क्वथनांकवाला मोम इस्तेमाल होता है, नहीं तो उसके पिघल जाने का भय रह सकता है।

मोम के परीक्षण में तेल में मोम और मोम में तेल की मात्रा निर्धारित करते हैं। किसी पेट्रोलियम तेल में कितना मोम है, इसके निकालने के लिए तेल को किसी विलायक में घुलाकर उससे मोम निकालकर उसकी मात्रा मालूम करते हैं। इसके लिए ठंडे में अलकोहल, एथिल-ईथर-मिश्रण, पिरिडीन, मेथिल-एथिल कीटोन, एसिटोन, नाइट्रो-बेंज़ीन, एथिलीन-क्लोराइड इत्यादि विलायक उपयुक्त करते हैं। एसिटोन-मेथिलिन क्लोराइड मिश्रण भी उपयुक्त हुआ है। विभिन्न नमूने के लिए एक ही विधि नहीं उपयुक्त हो सकती। नमूने के अनुकूल विलायक को चुनकर इस्तेमाल करने की आवश्यकता है।

तेल में मोम के घुलने से तेल के गुणों में विभिन्नता आ जाती है। इससे श्यानता बदल जाती है। यदि तेल भारी है, तो श्यानता कम हो जाती है और हल्का है, तो श्यानता बढ़ जाती है। तेल का विशिष्टभार मोम के कारण कम हो जाता है। उसका हिमांक बढ़ जाता है। मणिभीय मोम के गुणों में अल्प मात्रा में विभिन्नता रहती है।

गलनांक °फ०	१२३	१२६	१३२
विशिष्ट भार	०'६०७	०'६१०	०'६१७
श्यानता सेबोल्ट २१० फ०	३७	३७	३८
दमकांक °फ०	३६०	३६५	४१५

अमणिभीय मोम के गुणों में अधिक विभिन्नता देखी जाती है—

	क	ख	ग
गलनांक	१५५	१६०	१६६
श्यानता, २१०°फ० सेबोल्ट	७५	६३	६६
दमकांक °फ०	५२५	५२०	५५०
प्रवेशन			
२५° से०	४४	२०	१५
३५° से०	७५	३०	२०
४०° से०	१२२	३६	२८

वेसलिन

वेसलिन को 'पेट्रोलेटम' भी कहते हैं। पेट्रोलियम का यह वह अंश है, जो अर्ध-ठोस होता है। इसका रंग हल्के पीले से अम्बर के रंग तक का होता है। यह बहुत स्निग्ध होता है। इसमें अल्प मात्रा में प्रतिदीप्ति रहती है। पतले स्तरों में यह पारदर्शक होता है। यह अमणिभीय, गंधहीन और स्वादहीन होता है। आजकल कृत्रिम वेसलिन भी बनने लगा है। कृत्रिम वेसलिन बनाने में उच्च गलनांक मोम को पेट्रोलियम तेल अथवा तारकोल में घुलाते हैं।

वेसलिन तैयार करने के लिए पेट्रोलियम अवशेष को शून्यक में आसुत करते थे और उसे कोयले पर छान कर उसका रंग दूर करते थे। फुलर मिट्टी और जान्तव कोयले पर भी कभी-कभी छानते हैं। उसकी गन्ध हटाने के लिए भाप से भी उपचार करते हैं।

आजकल कम बहाव के भारी स्नेहन तेल तैयार करने में वेसलिन प्राप्त करते हैं। ऐसे तेल में मोम निकाला हुआ रहता है। इसका बहाव अंक + १५ से ०° फ० होता है और श्यानता २१०° फ० पर १२५ सेकण्ड सेबोल्ट रहती है।

पेट्रोलियम तेल से अस्फाल्ट को निकाल डालते हैं। फिर उसको नैफ्था में घुलाकर उसका मोम केन्द्रापसारण द्वारा निकाल लेते हैं। मोम के साथ-साथ रेज़िन और कुछ अमणिभीय अंश भी निकल जाते हैं। वेसलिन में वस्तुतः एक भाग मोम, एक भाग तेल

और एक भाग रेजिन रहता है। केन्द्रापसारण से कभी-कभी वेसलिन बिलकुल सूख कर कड़ा हो जाता है। ऐसी दशा में उसमें तेल डालकर आवश्यकतानुसार कोमल बना लेते हैं।

कभी-कभी वेसलिन को फुलर मिट्टी द्वारा छानकर उसका शोधन कर लेते हैं। इससे उसका रंग उन्नत हो जाता और स्वाद और गंध निकल जाते हैं। सम्भवतः कुछ रेजिन पदार्थों के कारण वेसलिन में रंग, स्वाद और गंध होते हैं। हल्के रंग का वेसलिन उत्तम समझा जाता है।

वेसलिन में हाइड्रोकार्बन रहते हैं। नार्मल और आइसो दोनों प्रकार के हाइड्रोकार्बन रहते हैं। अल्प मात्रा में ठोस सौरभिक हाइड्रोकार्बन भी रहते हैं। ये कुछ तो घुले हुए और कुछ निलम्बित रहते हैं। ये ऐसी दशा में रहते हैं कि मणिभीय रूप में पृथक् नहीं हो सकते। संशोधन करने पर भी वेसलिन में कुछ पदार्थ रह जाते हैं, जो धीरे-धीरे ऑक्सीकृत होते हैं। इससे वेसलिन का रंग रखने पर गाढ़ा हो जाता है और स्वाद और गंध भी बढ़ते जाते हैं। प्रकाश में यह काम कुछ शीघ्रता से होता है।

वेसलिन की उपयोगिता इसकी स्निग्धता पर है। यह अमणिभीय गाढ़ा अर्ध-ठोस होता है, जिसकी प्रकृति जल्दी बदलती नहीं। इसकी श्यानता भी जल्दी नहीं बदलती। कृत्रिम वेसलिन की श्यानता शीघ्रता से बदल जाती है।

वेसलिन का उपयोग प्रधानतया औषधियों में होता है। इससे अनेक प्रकार के मलहम बनते हैं। मलहम के लिए यह बहुत उपयुक्त पदार्थ है। इसमें और पदार्थों को मिलाकर जल के साथ स्थायी पायस भी तैयार करते हैं, जो औषधियों में काम आता है। कुछ सीमा तक यह धातुओं को मोरचा लगने से बचाने के लिए उपयुक्त होता है। कुछ विस्फोटक चूर्ण तैयार करने और कागज-मढ़ं समुद्री तारों के पृथग्न्यासन (insulation) में भी काम आता है।

उन्नीसवाँ अध्याय

इंधन-तल

ईंधन के लिए तेल का उपयोग बहुत पुराना है। इधर २०-२५ वर्षों से इसका उपयोग और भी बढ़ गया है। आज तेल-ईंधन केवल घरों में ही नहीं उपयुक्त होता, वरन् जहाजों और उद्योग-धन्धों में भी उपयुक्त होता है। पोरसीलेन के भट्ठे आज तेल से जलते हैं। तेल-ईंधन से रेलगाड़ियाँ भी एक समय चलती थीं। रूस में रेलगाड़ियाँ पहले-पहल तेल से चली थीं। अब तो प्रायः सभी देशों, जैसे—इंगलैंड, फ्रांस और अमेरिका, में रेलगाड़ियाँ तेल-ईंधन से चलती हैं। युद्ध-पोतों में भी तेल-ईंधन इटली, इंगलैंड और अमेरिका के संयुक्तराज्य में उपयुक्त होता था। आज स्टोव में जलाने के लिए तेल-ईंधन प्रचुरता से उपयुक्त होता है।

तेल-बर्नर

तेल-ईंधन को जलाने के लिए विशेष प्रकार के बर्नर उपयुक्त होते हैं। ऐसे बर्नरों, में तेल नियमित रूप से और नियंत्रित भाव से प्रविष्ट करता रहता है। वायु और तेल के बीच स्पर्श-क्षेत्र के विस्तृत होने से दहन शीघ्रता से होता है। यह क्षेत्र ऐसा होना चाहिए कि उस क्षेत्र की ऊष्मा का ठीक प्रकार से उपयोग हो सके। इस दृष्टि से अनेक प्रकार के बर्नर बने हैं। तेल रखने के लिए टंकी भी आवश्यक है। यदि तेल भारी है और उसमें मोम की मात्रा अधिक है, तो उसको गरम करने के लिए भाप-कुण्डली की आवश्यकता पड़ती है। कभी-कभी तेल को छानने की भी आवश्यकता होती है। पम्प द्वारा भी टंकी से बर्नर में तेल ले जाया जाता है। बर्नर कई प्रकार के होते हैं। उनमें निम्नलिखित बर्नर उल्लेखनीय हैं—

१. वाष्पायन-बर्नर

२. यांत्रिक शीकर बर्नर

३. भाप-शीकर बर्नर

४. वायु-शीकर बर्नर

वाष्पायन-बर्नर छोटे-छोटे कारखानों और घरों में उपयुक्त होते हैं। इनमें साधारणतया किरासन या गैस-तेल उपयुक्त होता है, जिसको पहले से गरम करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। ये शीघ्रता से वाष्प बनते और सरलता से कार्बन का निक्षेप देकर बर्नर के सूराख को बन्द नहीं करते।

तेल को बहुत महीन सूराख से दबाव में निकालकर यांत्रिक शीकर बनाया जा सकता

है। केन्द्रापसारक शक्ति से भी शीकर बन सकता है। ऐसे बर्नर को 'घूर्णक बर्नर' कहते हैं। भाप से भी तेल का शीकर बन सकता है, पर भाप में अधिक खर्च पड़ने से इसका उपयोग नहीं होता। न्यून दबाव पर वायु-शीकर सस्ता पड़ता है। यही रीति अधिकता से उपयुक्त होती है।

तेल का दहन

उच्च अणुभार के हाइड्रोकार्बन जब वायु में जलते हैं, तो उनके जलने के लिए अधिक आक्सिजन की आवश्यकता होती है। उच्च अणु-भारवाले तेल में २० से २५ प्रतिशत तक आक्सिजन या गन्धक के भी यौगिक रहते हैं। सम्भवतः ये अस्फाल्ट होते हैं। हाइड्रोकार्बनों में पेराफिन के अतिरिक्त कुछ चक्रक, सौरभिक और नेफ्थीनीय, भी होते हैं, इनके जलने से अनेक गैसें बनती हैं। ऐसी गैसों में जल-भाप, नाइट्रोजन, कार्बनडाइ-आक्साइड अल्प मात्रा में कार्बन मनोक्साइड, हाइड्रोजन, गैसीय हाइड्रोकार्बन, अल्डीहाइड और अम्ल रहते हैं। कुछ धुओं या कजली के रूप में कार्बन भी रहता है। हाइड्रोजन जलकर भाप बनता और उसी रूप में निकल जाता है। भाप के रूप में निकल जाने से वाष्पायन-ऊष्मा के रूप में कुछ ऊष्मा नष्ट हो जाती है। गन्धक जलकर सलफर डाइ-आक्साइड बनता है। वस्तुतः दहन-कार्य बहुत पेचीदा होता है।

पेट्रोलियम तेल के कुछ अवयवों की दहन-प्रतिक्रिया का सम्पादन कैसे होता है, इसका ठीक-ठीक पता लगाना असम्भव है। उच्च अणुभारवाले हाइड्रोकार्बनों की ज्वाला में शीकर से वे इतने महीन दशा में रहते हैं कि तत्काल ही वे विच्छेदित हो तत्त्वों में परिणत हो जाते हैं। पर, यह परिवर्त्तन एक क्रम में नहीं होता। कई क्रमों के बाद वे तत्त्वों में विच्छेदित होते हैं। तत्त्वों में परिणत होने के पूर्व वे छोटी-छोटी गैसों—जैसे, मिथेन, ईथेन, एथिलीन, प्रोपेन, प्रोपिलीन, ब्यूटाडीन और सम्भवतः हाइड्रोजन—में परिणत होते हैं। इसमें हाइड्रोजन की कमी से कुछ कार्बन भी मुक्त होते हैं। तब ये पदार्थ अलग-अलग आक्सीकृत होते हैं। कार्बन आक्सिजन के साथ मिलकर कार्बन डाइ-आक्साइड और कार्बन मनोक्साइड बनता है। सम्भवतः हाइड्रोकार्बन आक्सिजन के साथ-साथ पेरोक्साइड बनते हैं, जो फिर जल और अल्डीहाइड में परिणत हो जाते हैं। अल्डीहाइड फिर जलकर कार्बन डाइ-आक्साइड और जल-वाष्प बनते हैं। यह निश्चित है कि निम्न ताप पर आक्सिजन की उपस्थिति में भंजन होता है।

बर्नर की ज्वाला पीली और नीली होती है। पीली ज्वाला होने का कारण यह बताया जाता है कि हाइड्रोकार्बन के विच्छेदन से कार्बन मुक्त होता है और वह ताप-दीप्त कार्बन के विकिरण से पीली ज्वाला देता है। नीली ज्वाला में कार्बन मुक्त नहीं होता, इस कारण वह पीली न होकर नीली होती है। यह निश्चित है कि तेल और वायु के पूर्ण मिश्रण और पूर्ण वाष्पायन से और उसके पूर्व-तापन से ज्वाला बनने के पूर्व ही इतना गरम हो जाता है कि आक्सीकरण से नीली ज्वाला बनती है। इसके विपरीत इन तेल और वायु के अपूर्ण मिश्रण और अपूर्ण वाष्पायन से और पूर्व-तापन की कमी से पीली ज्वाला बनती है। निम्न अणुभारवाले हाइड्रोकार्बन से नीली ज्वाला सरलता से प्राप्त होती है, परिस्थिति के बदलने से पीली ज्वाला भी प्राप्त हो सकती है। पर, भारी तेल से नीली ज्वाला प्राप्त करना कठिन होता है; क्योंकि उसमें हाइड्रोजन की मात्रा कम होती है।

तेल-ईंधन से लाभ अनेक हैं। ठोस ईंधन की अपेक्षा द्रव ईंधन में वायु के साथ संस्पर्श अधिक होता है। इस कारण दहन अधिक पूर्णता से होता है। ईंधन पर नियंत्रण अधिक रहता है। इसमें राख प्रायः बनती ही नहीं है। कम तेल से अधिक ऊष्मा बनती है। तेल के रखने के लिए कम स्थान की आवश्यकता पड़ती है।

तेल-ईंधन में दो बातों का स्मरण रखना चाहिए। उसकी श्यानता ऐसी रहनी चाहिए कि वह सरलता से टंकी से बर्नर में पम्प किया जा सके। उसका दमकांक बहुत नीचा न रहना चहिए, नहीं तो विस्फोट होने का भय रहता है। साधारणतया दमकांक १००° से १२०° फ० रहना चाहिए। तेल में पानी या अन्य अदाह्य पदार्थ ·२ प्रतिशत से अधिक नहीं रहना चाहिए। इस प्रकार के तेल कच्चे पेट्रोलियम से प्राप्त हो जाते हैं। कुछ कच्चे पेट्रोलियम में पेट्रोल और किरासन की मात्रा अल्प रहती है और गन्धक तथा अस्फाल्ट अधिक रहने से वह स्नेहक के लिए उपयुक्त नहीं हो सकता।

कुछ कच्चे तेल के आसवन के बाद जो अवशिष्ट भाग बच जाता है, उसमें गन्धक, मोम और अस्फाल्ट की मात्रा अधिक रहने से, वह बहुत श्यान और कुछ कड़ा होता है। उस अंश को भी ईंधन के रूप में उपयुक्त कर सकते हैं।

गैस-तेल भी, जो किरासन के बाद आसवन से प्राप्त होता है, ईंधन के रूप में उपयुक्त हो सकता है।

भंजन से पेट्रोल प्राप्त करने में पात्र में कुछ तारकोल बच जाता है। वह उच्च विशिष्ट भार और निम्न श्यानता का होता है।

परीक्षण—ईंधन-तेल के परीक्षण में दमकांक, बहाव-अंक, मेघांक, कार्बन-अवशेष, जल, तलछट, राख, श्यानता, विशिष्ट भार और गन्धक की मात्रा निर्धारित होती है।

संसार में लगभग ७५०० लाख बैरेल तेल ईंधन के रूप में उपयुक्त होता है। इसमें एक-तृतीयांश आसुत होता है और शेष दो-तृतीयांश कच्चा अवशिष्ट अंश होता है।

बीसवाँ अध्याय

अस्फ़ाल्ट और पेट्रोलियम के अन्य उपयोग

अस्फ़ाल्ट प्रकृति में पाया जाता है। कुछ अस्फ़ाल्ट द्रव दशा में, कुछ अर्ध-ठोस दशा में और कुछ ठोस दशा में पाये जाते हैं। अस्फ़ाल्ट द्रव का विशिष्ट भार १'०; अर्ध-ठोस का विशिष्ट भार १'० से १'१० और कभी-कभी १'२० होता है। ठोस अस्फ़ाल्ट का विशिष्ट भार १'२० से ऊपर होता है। इन तीनों प्रकार के अस्फ़ाल्ट की विलेयता विभिन्न होती है। इनके गलनांक भी विभिन्न होते हैं। इनके रासायनिक संघटन का ज्ञान हमें पूर्ण रूप से नहीं है। इनमें कार्बन ८० से ८७ प्रतिशत तक पाये गये हैं। प्राकृतिक अस्फ़ाल्ट एक-से नहीं होते। उनमें विभिन्न श्रेणी के पदार्थ रहते हैं। उनमें खनिज तेल, मॉल्टीन, रेज़िन, अस्फ़ाल्टीन, कार्बीन और कार्बायड पाये गये हैं। इन पदार्थों का विशिष्ट ज्ञान हमें नहीं हैं।

कुछ लोगों का मत है कि अस्फ़ाल्ट कार्बन और हाइड्रोजन के उच्च अणुभारवाले पदार्थ हैं। उनमें हाइड्रोजन की मात्रा कम रहती है। कुछ लोगों का मत है कि हाइड्रोकार्बन के साथ-साथ अस्फ़ाल्ट में नाइट्रोजन, आक्सिजन और गंधक के भी यौगिक रहते हैं। अस्फ़ाल्ट से एक अम्ल निकाला गया है, जिसे अस्फ़ाल्टोजेनिक अम्ल कहते हैं। यह तारकोल-सा द्रव होता है, जो अलकोहल अथवा क्लोरोफार्म में घुल जाता है। इसका निरूदक भी प्राप्त हुआ है। इससे कुछ उदासीन रेज़िन भी प्राप्त हुए हैं।

पेट्रोलियम अस्फ़ाल्ट

पेट्रोलियम में अस्फ़ाल्ट रहता है। कृत्रिम रीति से भी पेट्रोलियम से यह प्राप्त हो सकता है। इसकी श्यानता विभिन्न होती है और ताप से इसमें एक-सा परिवर्त्तन नहीं होता। अस्फ़ाल्ट से सड़कें बनती हैं। ऐसी सड़कें बड़ी कड़ी नहीं होतीं और कम आवागमन के लिए ठीक होती हैं। ०'३ प्रतिशत साबुन का विलयन छिड़क कर सड़कों पर इसे बिछाते हैं। कभी-कभी पानी के साथ अथवा साबुन के साथ अथवा मिट्टी के साथ मिलाकर पायस बनाकर इसका उपयोग करते हैं। अस्फ़ाल्ट से घरों की छतें भी बनती हैं।

सफ़ेद तेल

पेट्रोलियम से दो प्रकार का सफेद तेल प्राप्त होता है। एक तेल का उपयोग वस्त्र-व्यवसाय, वार्निश बनाने, शृंगार-सामग्रियों के बनाने और कीटाणु-नाशक औषधियों के निर्माण में उपयुक्त होता है। दूसरे प्रकार का तेल औषधियों में रेचन के लिए और खाद्य-यंत्रों के

चिकनाने में उपयुक्त होता है। यह तेल रंग-हीन होता है। रसायनतः निष्क्रिय होता है। इसमें कोई गंध अथवा स्वाद नहीं होता। इसके लिए पेट्रोलियम तेल को सलफ्युरिक अम्ल से परिष्कार की आवश्यकता होती है। अम्ल से परिष्कार के बाद क्षार से धोकर फिर मिथेनोल, इथेनोल या एसिटोन से धोते हैं। मिट्टी या फुलर मिट्टी पर ही बहाकर इसका अन्तिम शोधन करते हैं। रंगमापी में इसका रंग मापा जाता है। श्वेत तेल के गुण इस प्रकार रहते हैं—

विशिष्ट भार	०'८२७ से ०'८९०
श्यानता, सेकंड सेबोल्ट १००° फ०	५० से ३५०
दमकांक °फ०	३१० से ३७५
मेवांक °फ०	३८ से ५२
बहाव-अंक	—३० से + ३५
गन्धक, प्रतिशत	०'०५ से ०'१०
वर्त्तनांक २६° से०	१'४६ से १'४८
आयोडीन-संख्या (हेनस)	०'८ से ९'२

श्वेत तेल, रखने पर कैसा रहता है, इसका परीक्षण १००° से० पर गरम करके किया जाता है। १६ घण्टे के बाद भी इसमें दुर्वासता नहीं आनी चाहिए और सूर्य-प्रकाश में ६ हफ्ते के व्यक्तीकरण से भी इसका रंग नहीं बदलना चाहिए।

पेट्रोलियम का नैफ्था-विलायक अविषाक्त और सस्ता होता है। इसमें घुलाने की क्षमता अच्छी होती है। यह पेण्ट, वार्निश और लाक्षा के घुलाने में, शुष्क-धावन में, अस्फाल्ट के घुलाने में, रबर के पदार्थों के घुलाने और अन्य उद्योग-धन्धों में विलायक के रूप में उपयुक्त होता है। पेण्ट, वार्निश और लाक्षा में पहले तारपीन उपयुक्त होता था। सस्ता होने के कारण तारपीन के स्थान में अब नैफ्था उपयुक्त होता है। दोनों में ज्यादा अन्तर नहीं है। नैफ्था से पेण्ट की श्यानता कुछ कम हो जाती है, पर अधिक नहीं। पेण्ट की वाष्पायन-गति में भी कुछ विभिन्नता हो सकती है, पर यह नैफ्था के क्वथनांक पर निर्भर करता है। इसके लिए १०० से ३००° फ० पर उबलानेवाला अंश अच्छा होता है। किसी-किसी काम के लिए ३०० और ४५०° फ० के बीच उबलनेवाला अंश अच्छा समझा जाता है। नैफ्था का विलायक गुण सौरभिक हाइड्रोकार्बन के अनुपात पर निर्भर करता है। कुछ कृत्रिम रेज़िन नैफ्था में नहीं घुलते। विलायक ऐसा होना चाहिए कि उसमें अरुचिकर गंध अथवा रंग न आवे और न वह आक्सीकृत ही हो। उसमें गन्धक यौगिक भी नहीं रहना चाहिए, नहीं तो धातुओं को आक्रान्त कर क्षति पहुँचा सकता है। इस काम के लिए पेट्रोलियम का २५० से ४००° फ० तक उबलनेवाला अंश अच्छा होता है। कुछ पेण्टों के लिए पैराफिनीय हाइड्रोकार्बन अच्छे होते हैं और कुछ पेण्टों के लिए सौरभिक और नैफ्थीनीय। कभी-कभी पैराफिनीय नैफ्था में अधिक प्रबल विलायक टोलिवन या ब्युटेनोल और ब्युटिल एसिटेट मिला देते हैं। विलायक के लिए उसके वाष्पायन-वेग का ज्ञान महत्त्व का है।

शुष्क-धावन में पर्याप्त मात्रा में पेट्रोलियम-नैफ्था उपयुक्त होता है। इसके लिए नैफ्था में रंग नहीं रहना चाहिए। सेबोल्ट रंगमापी से २१ से अधिक नहीं रहना चाहिए। दमकांक १००° फ० से कम नहीं रहना चाहिए। उससे ताँबे के पत्तर पर २१२° फ० पर

१ घण्टे में कोई संक्षारक क्रिया नहीं होनी चाहिए। उसका ५० प्रतिशत तक ३५०° के ऊपर, ६० प्रतिशत ३७५° फ० के ऊपर और शेष सब ४१०° फ० तक उबल जाना चाहिए। उसमें अम्लता नहीं रहनी चाहिए। डाक्टर-परीक्षण भी नहीं होना चाहिए और ५ प्रतिशत से अधिक सान्द्र सलफ्युरिक अम्ल द्वारा अवशोषित नहीं होना चाहिए। ऐसा नैफ्था न्यून गन्धकवाले पेट्रोलियम के परिष्कार से प्राप्त होता है। इसमें सौरभिक हाइड्रोकार्बनों के रहने से कपड़े का रंग उड़ जाता अथवा उनका तेल निकल जाता है। इस कारण सौरभिक हाइड्रोकार्बन नहीं रहना चाहिए।

अस्फाल्ट-सीमेण्ट के तनु करने में नैफ्था उपयुक्त होता है। अस्फाल्ट-सीमेण्ट कठोर अस्फाल्ट और अस्फाल्ट तेल के योग से बनता है। वाष्पायन के वेग के कारण वह द्रुत, मध्यम और मन्द किस्म का पुकारा जाता है। वह नैफ्था के क्वथनांक पर निर्भर करता है। इसके लिए रंग, गंध और गंधक का कोई विचार नहीं है। अपरिष्कृत तेल इस काम के लिए पर्याप्त है।

रबर को चिपकाने के लिए, रबर-सीमेण्ट के रूप में अथवा रबर के सूतों के बने सामानों और खिलौनों के विभिन्न अंगों को जोड़ने के लिए रबर के विलायकों की आवश्यकता पड़ती है। पहले इस काम के लिए बेंज़ीन उपयुक्त होता था, पर आजकल बेंज़ीन के स्थान में नैफ्था का उपयोग होता है; क्योंकि नैफ्था कम विषाक्त होता है। ऐसे नैफ्था में विलायक गुण अच्छा होना चाहिए, आक्सिजन, जल और सल्फर क्लोराइड के प्रति स्थायीपन या प्रतिरोधकता होनी चाहिए, कोई गंध नहीं रहनी चाहिए, दमकांक ऊँचा और वाष्पायन गति उपयुक्त होनी चाहिए। वह विषाक्त भी नहीं होना चाहिए। १०० से २००° फ० तक उबलनेवाला अंश इसके लिए अच्छा होता है।

काष्ठ-रेज़िन के प्राप्त करने में विलायकों की आवश्यकता होती है। काठ को काटकर नैफ्था से उसका रेज़िन निकालते हैं। इस काम के लिए वाष्प भी उपयुक्त होता है। यदि नैफ्था उपयुक्त हो तो उसमें गन्धक की मात्रा की अल्पता और शुद्धता होनी चाहिए। उसका क्वथनांक २०० और ३००° फ० के बीच रहना चहिए। इसमें १ प्रतिशत नैफ्था नष्ट हो जाता है। नैफ्था निष्कर्ष को मिट्टी के उपचार से उसका रंग हलका कर लेते हैं।

विद्युत्-प्रतिरोध के लिए भी नैफ्था का उपयोग होता है। ऐसा नैफ्था या तो ट्रांसफार्मर और समुद्री तारों में अथवा समुद्री तारों पर जो कागज़ मढ़ा जाता है, उसके ओत-प्रोत करने में उपयुक्त होता है। ट्रांसफार्मर में उपयुक्त होनेवाला अंश बहुत परिष्कृत, कम श्यानता का और उच्च क्वथनांक का होना चाहिए। दूसरे कामों के लिए उपयुक्त होनेवाला अंश उतना परिष्कृत न भी हो सकता है। पर, उसका गाढ़ा होना बहुत आवश्यक है। कभी-कभी उसमें रेज़िन या रेज़िन-सा पदार्थ मिलाकर उपयुक्त करते हैं। ट्रांसफार्मर में उपयुक्त होनेवाला नैफ्था हलके रंग का और उच्च दमकांक २७०° से २८०° फ० और न्यून वाष्प-दबाव का होना चाहिए, ताकि वह शीघ्रता से उड़ न जाय और न आग ही पकड़े। उसकी श्यानता १००° फ० पर ५०° सेकंड सेबोल्ट की होनी चाहिए।

पेट्रोलियम कृमिनाशक

पेट्रोलियम तेल मनुष्यों के लिए बहुत कम विषाक्त होता है, पर कुछ कीड़ों और कीड़ों

के अण्डों और फसलों के रोगों के लिए बहुत विषाक्त होता है। उनमें घुलाकर प्रबल विषों को भी कीड़ों के मरने में उपयुक्त कर सकते हैं।

फल-वृक्षों के कीड़ों को मारने में आजकल पेट्रोलियम का उपयोग बहुत बढ़ गया है। इसके लिए पेट्रोलियम पेड़ों पर छिड़का जाता है। पेट्रोलियम के भारी अंश से अनेक कीड़े, इल्ली (leaf rollers), लाल मकड़ी (red spiders), पेड़-तेला (tree-hoppers), लाही (aphid) आदि मर जाते हैं। इसके लिए किरासन उपयुक्त हो सकता है। किरासन की विषाक्त क्रिया ऊँची होती है, पर पौधों को भी इससे कुछ हानि पहुँचती है। हानि का कारण उसकी वाष्पशीलता समझी जाती है। कम वाष्पशील और अधिक श्यान अंश इस दृष्टि से अच्छे समझे जाते हैं। ऐसा कहा जाता है कि तेल की श्यानता पर उसका प्रवेशन निर्भर करता है। वाष्पशीलता अथवा श्यानता से अधिक महत्त्व-शाली असंतृप्त हाइड्रोकार्बन हैं। कीड़ों और पौधों दोनों के लिए ये अधिक विषाक्त होते हैं। कीड़ों के वसा-ऊतकों पर बहुचक्रिक हाइड्रोकार्बनों की विलायक क्रिया के कारण कीड़ों के लिए यह विषाक्त होता है। पौधों पर प्रवेशन से आक्सीकरण होकर सक्रिय अम्ल अथवा रेजिन के कारण हानि पहुँचती है। यह कीड़ों की श्वास-नली में प्रविष्ट कर श्वास-अवरोध कर उन्हें मार डालता है। इसके लिए कम वाष्पशील और कम परिष्कृत तेल अच्छा होता है। कुछ दशाओं में अधिक परिष्कृत तेल की आवश्यकता पड़ती है। पौधों के बढ़ने के समय परिष्कृत तेल की इस कारण आवश्यकता पड़ती है कि उस समय पत्ते और कलियाँ कोमल होती हैं। इस कारण तेल ऐसा न होना चाहिए कि वह उनको नुकसान पहुँचा सके। अन्य समय में सामान्य स्नेहन-तेल का भी उपयोग हो सकता है। ग्रीष्मकाल में ४० से ८० सेकंड सेबोल्ट श्यानता के तेल की आवश्यकता होती है। शीतकाल में ८० से १२५ सेकंड श्यानता का तेल पर्याप्त है।

पायस-रूप में यदि तेल का उपयोग हो तो उसमें पौधों की क्षति कम होती है और वह सस्ता भी पड़ता है। ऐसे पायस में २ से १२ प्रतिशत (आयतन में) तेल रहता है। यदि पायस ऐसा हो कि उसका पायस-प्रकृति जल्द तोड़ा जा सके तो अच्छा होता है। ऐसे ही पायस कवक-नाशिका (fungicides) के रूप में उपयुक्त होते हैं। यहाँ डिम्भों के नाश करने में रासायनिक क्रिया होती है केवल यांत्रिक नहीं। इसके लिए किरासन अथवा पेट्रोल सर्वोत्तम होता है।

पेट्रोलियम तेल के साथ साबुन और वसा-अम्ल भी मिलाये जाते हैं। यदि उसके साथ पीरेथ्रम, निकोटिन, रोटीनोन और थैलेट मिला दिये जायँ, तो कीड़ों के नाश करने की क्षमता बहुत अधिक बढ़ जाती है। ऐसे ही द्रवों का घरों और पशु-शालाओं में छिड़कने और खेती के कीड़ों को मारने में उपयोग होता है। ऊनी वस्त्रों को कीड़ों से सुरक्षित रखने के लिए भी ऐसे द्रव को सिंकोना अल्कालायड से मिलाकर वस्त्र का शुष्क-धावन करते हैं।

पेट्रोलियम कोक

पेट्रोलियम के भंजक आसवन से आसवन-पात्रों में कोक रह जाता है। ऐसे कोक को पेट्रोलियम-कोक कहते हैं। यह कठोर, सान्द्र और भंगुर होता है। इसका रंग भूरा से काला

तक का होता है। भारी तेल अवशेष को गरम करके पेट्रोल, गैस-तेल, इंधन-तेल और कोक में परिणत कर लेते हैं। ऐसे कोक का संघटन इस प्रकार का होता है—

जल	०·१ से ५·०
वाष्पशील अंश	५·० से १८·०
स्थायी कार्बन	७६·० से ६६·०
राख	०·०५ से १·५
गन्धक	७.० से ४·०
प्रति पाउण्ड ब्रिटिश ऊष्मा-मात्रक	१४,२०० से १६,०००

कोक की प्रकृति तेल और गरम करने के ढंग पर निर्भर करती है। इसमें उच्च अणुभार के हाइड्रोकार्बन बड़ी मात्रा में रहते हैं—ऐसे हाइड्रोकार्बन जिनमें कार्बन की मात्रा अधिक और हाइड्रोजन की मात्रा कम रहती है। कोक-कार्बन बाइ-सल्फाइड में ४० से ८० प्रतिशत घुल जाता है।

ईंधन के लिए कोक इस्तेमाल होता है। बिजली के विद्युद्‌ग्र इसी के बनते हैं; क्योंकि इसमें खनिज लवण और गन्धक नहीं रहते और राख बड़ी अल्प मात्रा में रहती है। प्रज्वलन (ignition) से इसमें वाष्पशील अंश निकल जाता है। २७००° फ० पर प्रज्वलित कोक में कार्बन ६६·२६ प्रतिशत, गन्धक ०·६४ प्रतिशत और राख ०·३५ प्रतिशत रहते हैं। राख में अल्प मात्रा में कोबाल्ट, निकेल, टिन, वेनेडियम और मोलिबडेनम रहते हैं। कुछ कोक में अन्य धातुएँ, लोहा, अल्यूमिनियम, ताँबा, सोना, चाँदी, कैलसियम, सोडियम, सीसा, टाइटेनियम, मैगनीशियम इत्यादि भी पाये गये हैं।

सलफ्युरिक अम्ल अवपंक

पेट्रोलियम के सलफ्युरिक अम्ल द्वारा उपचार से जो अवपंक प्राप्त होता है उसमें तेल का अंश रहता है। कभी-कभी तेल का अंश ३० से ४० प्रतिशत तक रहता है। इसे निकालकर जलाने के काम में लाने की चेष्टाएँ हुई हैं। इससे अस्फाल्ट प्राप्त करने की भी चेष्टाएँ हुई हैं। तेल अच्छी कोटि का नहीं होता और अस्फाल्ट भी निकृष्ट कोटि का ही बनता है।

पेट्रोलियम सल्फोनिक अम्ल

पेट्रोलियम के सलफ्युरिक अम्ल के उपचार से पेट्रोलियम सल्फोनिक अम्ल बनता है। कभी-कभी विशेषतः जब सान्द्र या सधूम सलफ्युरिक अम्ल उपयुक्त होता है, तब पेट्रोलियम सल्फोनिक अम्ल की मात्रा अधिक रहती है। इस पेट्रोलियम सल्फोनिक अम्ल को क्षार से अथवा २० प्रतिशत हाइड्रोक्लोरिक अम्ल से उबालकर जल-विच्छेदित कर सकते हैं। कुछ सल्फोनिक अम्ल जल में विलेय होते हैं और कुछ हाइड्रोकार्बनों में विलेय होते हैं। इन्हें पृथक्करण की चेष्टाएँ हुई हैं। कुछ सल्फोनिक अम्ल नमक के विलयन से अवक्षिप्त हो जाते हैं, और कुछ सोडियम लवण के रूप में अवक्षिप्त होते हैं।

पेट्रोलियम सल्फोनिक अम्ल के अनेक उपयोग हैं। वे अच्छे अपक्षालक होते हैं। वे पायसकारक होते हैं। वस्त्र-व्यवसाय में टर्की-रेड-तेल के स्थान पर उपयुक्त होते हैं। इनसे

वसा का विच्छेदन भी हो सकता है। इनके क्षार-लवण साबुन के गुण के होते और झाग देते हैं। इनके सीस-साबुन ग्रीज़ के रूप में व्यवहृत होते हैं। ये कीटाणुनाशक भी होते हैं। चमड़े और रंगों के निर्माण में ये उपयुक्त हो सकते हैं।

अल्कोहल

पेट्रोलियम के भंजन से कुछ असंतृप्त हाइड्रोकार्बन बनते हैं। इन हाइड्रोकार्बनों को सलफ्युरिक अम्ल की सहायता से अल्कोहल में परिणत कर सकते हैं। एथिलिन से एथिल अल्कोहल, प्रोपिलिन से आइसो-प्रोपिल अल्कोहल, आइसो-ब्युटिलिन से टर्शियरी-ब्युटिल-अल्कोहल प्राप्त हो सकते हैं। इन असंतृप्त हाइड्रोकार्बनों से ग्लाइकोल और ग्लिसरीन भी प्राप्त हुए हैं। हाइड्रोकार्बनों पर क्लोरीन की क्रिया से कुछ क्लोरीन-उत्पाद प्राप्त हुए हैं। क्लोरीन-उत्प्रेरकों से इस क्रिया में सहायता मिलती है। मेथिल क्लोराइड, मेथिलिन क्लोराइड, क्लोरोफॉर्म, कार्बन-टेट्राक्लोराइड, एथिल क्लोराइड, एथिलिन डाइक्लोराइड, एमिल क्लोराइड इत्यादि प्राप्त हुए हैं और भिन्न-भिन्न कामों में उपयुक्त होते हैं।

इन हाइड्रोकार्बनों के आक्सीकरण से अल्डीहाइड और अम्ल भी प्राप्त हुए हैं। मोम के आक्सीकरण से अनेक अम्ल प्राप्त हुए हैं, जो ग्लिसरीन के साथ मिलकर कृत्रिम तेल और घी में परिणत किये जा सकते हैं। इस रीति से युद्ध-काल में जर्मनी में खाने योग्य तेल और चर्बी तैयार हुई थी। आज भी तैयार हो सकती है, पर कीमती होने के कारण इसका निर्माण बड़ी मात्रा में नहीं होता है। इन कृत्रिम तेलों में विटामिन का अभाव रहता है।

इक्कीसवाँ अध्याय

संश्लिष्ट पेट्रोल (संश्लिट्रोल)

पेट्रोलियम राष्ट्र का जीवन-रक्त है। इसकी आवश्यकता युद्धकाल और शान्तिकाल में समान रूप से होती है। प्राकृतिक पेट्रोलियम हर देश में नहीं पाया जाता। कुछ ही देश भाग्यवान् हैं, जहाँ प्राकृतिक पेट्रोलियम पाया जाता है। इस कारण प्रथम विश्वयुद्ध में जब जर्मनी में प्राकृतिक पेट्रोलियम का अभाव पड़ गया, तब वहाँ के वैज्ञानिक कृत्रिम रीति से पेट्रोलियम प्राप्त करने में लगे और इस दिशा में उन्हें पूरी सफलता मिली। पेट्रोलियम की माँग आज दिनों-दिन बढ़ रही है। आज भी माँग इतनी अधिक है कि उसकी पूर्त्ति के लिए उत्पादन का बढ़ाना बहुत आवश्यक हो गया है। उत्पादन की वृद्धि के लिए कृत्रिम रीति से पेट्रोलियम प्राप्त करने की आवश्यकता बहुत अधिक बढ़ गई है।

कृत्रिम रीति से तैयार पेट्रोल का नाम क्या दिया जाय, इस सम्बन्ध में बहुत कुछ सोच-विचार हुआ है। अमेरिका में ऐसे पेट्रोल को सिन्थाइन (symthine) नाम दिया गया है। यह सिन्थाइन सिनथेटिक और गैसोलिन से बना है। सिन्थेटिक का 'सिन्थ' और गैसोलिन का 'इन' लेकर सिन्थाइन बना है। जर्मनी में इसे सिन्थिन कहते हैं। यह 'सिन्थिन' शब्द जर्मनी के सिन्थेटिशे और बेंज़ीन से बना है। फिशर और ट्रौपश ने हाइड्रो-कार्बन और आक्सिजनवाले यौगिकों के मिश्रण का नाम 'सिन्थोल' दिया था। इस कम्पनी ने फिशर और ट्रौपश-रीति से प्राप्त पेट्रोलियम का नाम 'सिन्थोल' रखा है। जर्मनी में कोयले से कृत्रिम गैस प्राप्त होती है और इस गैस से पेट्रोलियम तैयार हुआ है। इस कारण ऐसे पेट्रोलियम का नाम कोगैसिन-कोहले-गैस-बेंज़िन-कोयला-गैस, पेट्रोलियम, दिया है। इस प्रकार से प्राप्त प्रथम अंश को कोगैसिन १, दूसरे अंश को कोगैसिन २, कहते हैं। यह नाम अवश्य ही वहाँ उपयुक्त नहीं हो सकता, जहाँ कोयले से पेट्रोलियम नहीं तैयार होता है। हिन्दी में कृत्रिम रीति से प्राप्त पेट्रोल का नाम क्या हो, इस सम्बन्ध में बहुत विचार कर मैंने 'संश्लिट्रोल' शब्द 'संश्लेषण' और 'पेट्रोल' से बनाया है। कुछ लोग इस 'संश्लिट्रोल' नाम को क्लिष्ट बतावेंगे और इस वर्णसंकर शब्द को—जो संस्कृत से 'संश्लेषण' और अँगरेजी के 'पेट्रोल' से बना है—अच्छा नहीं समझेंगे। यदि इस दृष्टि से यह शब्द ठीक न हो तो मैं 'सिन्थोल' शब्द का उपयोग ही अच्छा समझूँगा

इतिहास

फ्रांसीसी रसायनज्ञ सेवेलिए ने पहले-पहल देखा कि कार्बन मनौक्साइड और हाइड्रोजन से उत्प्रेरकों की उपस्थिति में हाइड्रोकार्बन बनते हैं। जर्मनी की एक कम्पनी बाडिशे-अनीलिन-

उयड-सोडा-फैब्रिक ने प्रकाशित किया कि कार्बन-मनॉक्साइड और हाइड्रोजन के मिश्रण से उच्च दबाव में उच्च हाइड्रोकार्बन और आक्सिजनवाले यौगिक बनते हैं। इसके दस वर्ष बाद फ्रान्ज फिशर और हांस ट्रौपश ने देखा कि इन गैसों के मिश्रण पर क्षार-लौह उत्प्रेरक से ७५० से ८४०° फ० और प्रति वर्गइंच पर १४७०-२२०० पाउण्ड दबाव से हाइड्रोकार्बन बनते हैं। सात वायुमण्डल के दबाव से नीचे दबाव पर ऐसे हाइड्रोकार्बनों की मात्रा और अधिक पाई गई। पीछे अन्य उत्प्रेरक पाये गये, जिनसे हाइड्रोकार्बनों की मात्रा बढ़ती पाई गई। इन उत्प्रेरकों की उपस्थिति में उच्चतर दबाव की भी आवश्यकता धीरे-धीरे कम होती गई और अन्त में सन् १९२५-२६ ई० में ऐसे उत्प्रेरक निकल आये, जिनकी उपस्थिति में वायुमण्डल के दबाव पर ४८२ से ५७२° फ० पर हाइड्रोकार्बन बन सकते हैं।

इस क्रिया में उत्प्रेरकों से दो कार्य होते हैं—उत्प्रेरक हाइड्रोजनीकरण करते और पुरुभाजन करते हैं। इसके अतिरिक्त वे समावयवीकरण और संभवतः भंजन भी करते हैं। कृत्रिट्रोल (संश्लिट्रोल) का निर्माण पहले-पहल जर्मनी में १९३६ ई० में शुरू हुआ। केवल चार वर्ष में १९४० ई० में उत्पादन दस गुना बढ़ गया। फ्रांस, जापान, मंचुकुओ में इसके कारखाने खुले। इंगलैण्ड और अमेरिका में इसका विस्तार से अध्ययन हुआ।

संश्लिट्रोल तैयार करने के आज दो उद्गम हैं—एक उद्गम पेट्रोलियम-कूप से निकली प्राकृतिक गैस से है और दूसरा उद्गम कोयला से। प्राकृतिक गैस वहाँ ही मिलती है, जहाँ पेट्रोलियम के कूप हैं। कोयला अनेक देशों में मिलता है और उसकी मात्रा असीमित है। यूरोपीय देशों में फिशर ट्रौपश-विधि से पेट्रोलियम तैयार करने के अनेक कारखाने खुले और कार्य कर रहे हैं। अमेरिका में प्राकृतिक गैस से संश्लिट्रोल तैयार करने के कारखाने खुले हैं।

गैस का निर्माण

संश्लिट्रोल तैयार करने के लिए हमें ऐसी गैस चाहिए, जिसमें हाइड्रोजन और कार्बन मनॉक्साइड हो। हाइड्रोजन और कार्बन-मनॉक्साइड का अनुपात २ से १ लेकर १ से १ रह सकता है। यदि कोबाल्ट उत्प्रेरक का व्यवहार हो, तो उसमें २ से १ अनुपात आवश्यक है। जिंक आक्साइड, अल्यूमिनियम ट्रायक्साइड और थोरिया उत्प्रेरकों के व्यवहार से १ से १·२ अनुपात से काम चल जाता है। ऐसी गैस कोयले के हाइड्रोजनीकरण से प्राप्त हो सकती है। पर कोयले के हाइड्रोजनीकरण में ऐसा हाइड्रोजन रहना चाहिए, जिसकी शुद्धता कम-से-कम ९२ प्रतिशत हो। अन्य रीतियों में ऐसे हाइड्रोजन से भी काम चल सकता है जिसमें १० से १२ प्रतिशत कार्बन-डायक्साइड और नाइट्रोजन सदृश निष्क्रिय गैसें हों।

ऐसी गैस की प्राप्ति के लिए कोई भी कार्बनवाला पदार्थ इस्तेमाल हो सकता है, पर साधारणतया दो ही पदार्थ, कोयला अथवा प्राकृतिक गैस, उपयुक्त होते हैं। इन्हीं दोनों प्रकार के पदार्थों का उपयोग बड़ी मात्रा में संश्लिट्रोल तैयार करने में हुआ है। जहाँ प्राकृतिक गैस प्राप्य है, वहाँ वह इस्तेमाल हो सकता है और जहाँ प्राकृतिक गैस प्राप्य नहीं है, वहाँ कोयला इस्तेमाल हो सकता है। प्राकृतिक गैस से प्राप्त गैस-मिश्रण सस्ता पड़ता है।

कोयले से गैस-मिश्रण प्राप्त करने में निम्नलिखित रीतियाँ उपयुक्त हो सकती हैं—

१ कोक से जल-गैस तैयार करना।

२. निम्न वाष्पशील कोयले से जल-गैस तैयार करना।

३. कोयले या कोक से भाप में आक्सिजन की सहायता से जल-गैस तैयार करना। विंकलर और लुर्गी-विधियाँ।

४. उत्प्रेरकों की सहायता से अथवा उत्प्रेरकों के अभाव में कोक-चूल्हे-गैस की भाप से गैस-मिश्रण प्राप्त करना।

विभिन्न विधियों से जो गैस-मिश्रण प्राप्त होता है, उसका संगठन एक-सा नहीं होता। उन गैसों में कुछ विभिन्नता रहती है। यह विभिन्नता निम्नलिखित सारणी से स्पष्ट हो जाती है—

संघटन	कोक जल-गैस	निम्न-वाष्पशील कोयला-जल-गैस	कोक-जल-गैस विंकल (आक्सिजन + जलवाष्प)	कोयला-जल-गैस लुर्गी (आक्सिजन + जलवाष्प)	कोयला कोक-चूल्हा
कार्बन डायक्साइड	५	३'८	१३—२०	३०	३'०
कार्बन मनॉक्साइड	४१	३६'७	४७—३६	२०—१५	७'०
हाइड्रोजन	५०	५४'१	३६—४१	३०—३५	५५'०
मिथेन	०'५	०'७	०'६—०'४	१५—२०	२७'०
नाइट्रोजन	३'५	१'५	०'४—०'५	२'०	६'०
असंतृप्त हाइड्रोकार्बन	—	०'२	—	—	२'०

कार्बन पर जब भाप प्रवाहित होता है तब निम्नलिखित समीकरण के अनुसार कार्बन मनॉक्साइड और हाइड्रोजन का मिश्रण प्राप्त होता है। इस समीकरण के अनुसार कार्बन मनॉक्साइड और हाइड्रोजन के समआयतन मिश्रण में रहते हैं।

$$C + H_2O = CO + H_2$$
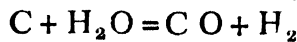
इस मिश्रण को ऐसे गैस-मिश्रण में परिणत करने के लिए, जिससे हाइड्रोकार्बन बन सके, हाइड्रोजन और कार्बन मनॉक्साइड का अनुपात (आयतन में) २ से १ रहना चाहिए। इसके लिए कार्बन मनॉक्साइड पर भाप की प्रतिक्रिया से कार्बनडायक्साइड और हाइड्रोजम बनाया जाता है। यह प्रतिक्रिया किसी उत्प्रेरक की उपस्थिति में होती है।

$$CO + H_2O = CO_2 + H_2$$
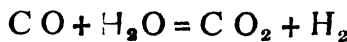
साधारणतया फेरिक आक्साइड उत्प्रेरक के रूप में उपयुक्त होता है। फेरिक आक्साइड के साथ कुछ क्रोमियम आक्साइड, कैलसियम आक्साइड और मैगनीशियम आक्साइड मिला हो, तो लोहे के आक्साइड की सक्रियता बढ़ जाती है। इनके अतिरिक्त अंशतः अवकृत कोबाल्ट आक्साइड और अन्य उत्प्रेरक-जैसे ताँबे के साथ कोबाल्ट, पोटैशियम-आक्साइड के साथ मैगनीशिया और जिंक, आक्साइड, मैगनीशिया के साथ निकेल इत्यादि,

उपयुक्त हुए हैं। यहाँ जो कार्बन डायआक्साइड बनता है, उसे सम्पीडन द्वारा अथवा जल में घुलाकर अथवा अन्य रासायनिक द्रव्यों द्वारा निकाल लेते हैं।

कोक-चूल्हे-गैस में हाइड्रोजन पर्याप्त मात्रा में रहता है, पर कार्बन-मनॉक्साइड की मात्रा अल्प रहती है। इसमें पर्याप्त मात्रा में मिथेन और कुछ एथिलीन रहते हैं। इन हाइड्रोकार्बनों को भाप की प्रतिक्रिया से हाइड्रोजन और कार्बन-मनॉक्साइड में परिणत करते हैं। इस प्रतिक्रिया का सम्पादन उत्प्रेरकों की उपस्थिति अथवा उनके अभाव में भी होता है। इसके लिए जो उत्प्रेरक उपयुक्त हो सकते हैं, जिनका उल्लेख ऊपर में हो चुका है। कोक-चूल्हे-गैस के १०० आयतन से निम्नलिखित संघटन के १७० आयतन गैस-मिश्रण प्राप्त हो सकते हैं।

	प्रतिशत
कार्बन डायक्साइड	४.२
कार्बन मनॉक्साइड	१६'३
हाइड्रोजन	७५'३
मिथेन	१'०
नाइट्रोजन	३'२

इस गैस-मिश्रण में हाइड्रोजन का अनुपात बहुत अधिक है। यदि इस मिश्रण के १७० आयतन में कोक से प्रस्तुत जल-गैस का २५० आयतन मिला दिया जाय, तो इस नये मिश्रण का संघटन इस प्रकार होगा—

	प्रतिशत
कार्बन डायक्साइड	४'६
कार्बन-मनॉक्साइड	३०'४
हाइड्रोजन	६०'९
मिथेन	०'७
नाइट्रोजन	३'४

इस मिश्रण में हाइड्रोजन और कार्बन मनॉक्साइड का अनुपात जैसा चाहिए वैसा ही है।

एक दूसरी रीति से भी उपयुक्त गैस-मिश्रण प्राप्त हो सकता है। इस रीति में प्रति पाउण्ड भाप के साथ १० घनफुट कोक-चूल्हे-गैस को जल-गैस-जनित्र (generator) में ले जाते हैं, जहाँ उपयुक्त गैस-मिश्रण बनता है। कुछ लोगों ने भाप के साथ आक्सिजन के प्रवेश का भी सुझाव रखा है।

जर्मन-रीति

जर्मन रीति में कोयले अथवा कोक से गैस-मिश्रण प्राप्त होता है। जर्मनी के अनेक कारखानों में कोक इस्तेमाल होता है। कोक से जल-गैस प्राप्त होती है। इस जल-गैस में हाइड्रोजन का अनुपात बढ़ाने के लिए जो उत्प्रेरक उपयुक्त होता है, उसमें फेरिक आक्साइड ३८'५ प्रतिशत, कैलसियम-आक्साइड १८'२ प्रतिशत, क्रोमिक आक्साइड ५'४ प्रतिशत, मैगनीशियम-आक्साइड ५'२ प्रतिशत और अन्य कुछ पदार्थ अल्प मात्रा में तथा जल १८'० प्रतिशत पाये गये हैं।

कोक-चूल्हे-गैस के भंजन से भी जर्मनी के कुछ कारखानों में गैस-मिश्रण प्राप्त होता है। जर्मनी के हैम्बर्ग के निकट एक कारखाने में प्रतिदिन ४१,०००,००० घनफुट जल-गैस तैयार होती है। इस गैस के १८ प्रतिशत, प्रायः ७,४००,००० घनफुट, में उत्प्रेरक की उपस्थिति में, हाइड्रोजन की मात्रा को बढ़ाया जाता है। इसके लिए २२००° फ० पर लगभग ३४३,००० घनफुट प्रतिघंटा गैस का भंजन किया जाता है। इस भंजन से हाइड्रोजन और कार्बन मनॉक्साइड का अनुपात २:१ हो जाता है; जो हाइड्रोकार्बन के निर्माण के लिए आवश्यक है।

निम्न-ताप-कोक से भी एक कारखाने में गैस-मिश्रण तैयार होता है। ऐसे गैस-मिश्रण में हाइड्रोजन-कार्बन-मनॉक्साइड का अनुपात १'३५ : १ होता है, जो सामान्य कोक से प्राप्त जल-गैस के हाइड्रोजन के अनुपात से अधिक है। ऐसा मिश्रण विना किसी दूसरे उपचार के उपयुक्त हो सकता है।

निकृष्ट कोटि के कोयले, ब्राउन कोयले, से भी गैस-मिश्रण तैयार हुआ है। ऐसे गैस-मिश्रण में ७६ प्रतिशत हाइड्रोजन और कार्बन-मनॉक्साइड रहता है। एक कारखाने के लिए ४,०००,००० घनफुट गैस प्रति घंटा बननी चाहिए। इतनी गैस से ८२,५०० छोटा टन पेट्रोलियम प्रतिवर्ष तैयार हो सकता है। इतनी गैस तैयार करने के लिए कम-से-कम ४ जनित्र आवश्यक हैं। लगभग ४,३२५००० घनफुट प्रति घंटा उत्पादक गैस गरम करने के लिए आवश्यक है। जनित्र में डालने के लिए ४६,५०० घनफुट प्रति घंटा आक्सिजन चाहिए। इस रीति से १००० घनफुट गैस-मिश्रण की प्राप्ति के लिए लगभग ५० पाउण्ड सूखा ब्राउन कोयला लगता है।

इस काम के लिए अनेक प्रकार के जनित्र बने हैं। कौपर्स (Koppers) जनित्र इसके लिए अच्छा समझा जाता है। ऐसे जनित्र में प्रायः ६८१ टन कोक प्रतिदिन इस्तेमाल हो सकता है। ऐसे कोक में कार्बन और वाष्पशील पदार्थ ८२'६ प्रतिशत, जल ८'२ प्रतिशत और राख ९'२ प्रतिशत रहते हैं। इतने कोयले से प्रतिदिन, १,१४६,०७० घनफुट जल गैस प्राप्त होती है। दूसरे शब्दों में लगभग ५३'५ पाउण्ड कोक से १०० घनफुट जल-गैस प्राप्त होती है।

एक दूसरे प्रकार का जनित्र विंकलर जनित्र है। इसमें कोयले, लिगनाइट, अर्ध-कोक के चौथाई इंच के छोटे-छोटे टुकड़े इस्तेमाल होते हैं। इसमें भाप और आक्सिजन अ वा भाप, वायु और ऑक्सिजन इस प्रकार डाले जाते हैं कि ईंधन प्रक्षुब्ध होता रहे। इस प्रकार से प्राप्त गैस का संघटन ऊपर दिया गया है। १००० घनफुट गैस की प्राप्ति के लिए ४०'१ पाउण्ड कोक, ६८ प्रतिशत आक्सिजन २८४ घनफुट और जल-भाप १६ पाउण्ड लगते हैं। विंकलर-रीति से पेट्रोलियम प्राप्त करने के कारखाने आर्थिक दृष्टि से श्रेष्ठ समझे जाते हैं।

कोयले का गैसीकरण

खानों से कोयला निकालकर उससे गैस तैयार करने में खर्च पड़ता है। इससे संश्लिट्रोल का मूल्य बढ़ जाता है। संश्लिट्रोल का मूल्य कम करने के लिए यदि खानों में ही कोयले को गैस में परिणत कर दें, तो अच्छा होगा। खानों से कोयला निकालने का खर्च बच जायगा।

खानों में ही कोयले को गैस में परिणत करने का सुझाव पहले-पहल साइमन्स ने १८६८ ई० में और मेण्डेल्लीव ने १८८८ ई० में दिया था। इसका पहला पेटेण्ट १९०९ ई० में बेट्स द्वारा लिया गया था। इंगलैण्ड में सर विलियम रैमज़े ने इसे व्यवहार में लाने की कोशिश की, पर उन्हें इसमें सफलता नहीं मिली। रूस में इस संबंध में सन् १९३३ ई० में कुछ प्रारम्भिक प्रयोग हुए। १९३७ ई० में काम शुरू हुआ और १९४० ई० में काम शुरू करने के सब साधन तैयार हो गये। ऐसा समझा जाता है कि ऐसे तीन कारखाने आज रूस में काम कर रहे हैं।

जिन रीतियों से खानों में ही कोयले का गैसीकरण होता है, उनमें निम्नलिखित रीतियाँ उल्लेखनीय हैं—

१. कक्ष-रीति
२. धारा-रीति
३. पारच्याव-रीति
४. विदर-रीति

रूस में इस संबंध में १ से १६ फुट मुटाई, ६५ से २०० फुट गहराई और ०° से ७५° नति के कोयले स्तर पर प्रयोग हुए हैं।

कक्ष-रीति—पहले-पहल इसी रीति से कोयले का गैसीकरण हुआ था। इस रीति में कोयले को ईंट की दीवार देकर अन्य कोयले से अलग कर एक ओर से वायु प्रविष्ट कराते हैं और दूसरी ओर से गैस निकालते हैं। वायु को प्रविष्ट कराने के लिए कोयले के रन्ध्र और प्राकृतिक दरारें काम में लाई गई थीं। पीछे कोयले को तोड़कर वायु-प्रवेश के लिए मार्ग बनाये गये थे। इस रीति से गैसीकरण सरलता से हो जाता है। पर इसमें कमरे इत्यादि बनाने का झंझट रहता है। इस कारण अब इसका उपयोग नहीं होता।

धारा-रीति—इस रीति में कोयले स्तर में एक लम्बा सुरंग बनाते हैं। बाह्य तल से सुरंग-तल तक दो कूपक खोदते हैं। एक ओर से वायु प्रवेश करती है और दूसरी ओर से निकलती है। वायु प्रवेशक-कूपक के आधार पर आग जलाई जाती है। वायु के झोंके के प्रवेश से दूसरे कूपक से गैसें निकलती हैं। आग धीरे-धीरे जलती हुई स्तर के छत की ओर बढ़ती है और राख और बिना जला कोयला गिरकर नीचे इकट्ठा होता है। सुरंग में प्रतिक्रिया के तीन मण्डल होते हैं। इसके एक मण्डल को 'दहन-मण्डल, कहते हैं। यह मण्डल प्रायः ढाई मीटर लम्बा होता है। इसमें जलकर कोयला प्रधानतया कार्बन मनॉक्साइड बनता है। दूसरा मण्डल प्रत्यादान-(recovery)-मण्डल होता है। यह लगभग ३ मीटर लम्बा होता है। इस मण्डल में कार्बन डायक्साइड अवकृत हो कार्बन-मनॉक्साइड बनता है और प्रचुर मात्रा में हाइड्रोजन बनता है। तीसरा मण्डल 'आसवन'-मण्डल होता है। यह करीब २ मीटर लम्बा होता है। इसमें कार्बन डायक्साइड की मात्रा स्थिर हो जाती है।

इन तीनों मण्डलों में कोयले की खपत एक-सी नहीं होती। 'दहन-मण्डल' में सबसे अधिक कोयला जलता है। इस कारण बीच-बीच में वायु की गति बदल देते हैं, ताकि कोयले का जलना सब मण्डल में एक-सा हो।

यदि वायु के साथ भाप नहीं डाली जाय तो गैस-मिश्रण में हाइड्रोजन की मात्रा आवश्यकता से कम रहती है।

इस रीति में यदि भाप और वायु की दिशा २० से ३० मिनट की अवधि में एक ओर से दूसरी विपरीत दिशा की ओर बदलती रहे, तो इससे निम्नलिखित संघटन का गैस-मिश्रण प्राप्त होता है—

	प्रतिशत
कार्बन डायक्साइड	१५
कार्बन मनॉक्साइड	२६
हाइड्रोजन	५३
मिथेन	०·७
आक्सिजन	०·५
नाइट्रोजन	४·८

इस रीति में दोष यह है कि इसमें खान के नीचे काम करने के लिए अनेक आदमी लगते हैं। यह रीति ऐसे कोयले-स्तर के लिए अधिक उपयुक्त है, जिसका स्तर विशेष रूप से नत है। यदि स्तर कम नत हो, तो राख और विना जले कोयले के गिरने से मार्ग अवरुद्ध हो जा सकता है। कहीं-कहीं V—आकार के भी सुरंग बनते हैं। एक मार्ग से वायु प्रवेश करती है और दूसरे मार्ग से गैसें निकल जातीं और दोनों कूपकों के मिलन-स्थान पर आग जलती है।

पारच्याव-रीति—कोयला को गरम करने से सिकुड़न से, उसमें छेद और दरारें पड़ती हैं। इससे गैसें उसमें शीघ्रता से प्रविष्ट हो सकती हैं। यह रीति क्षैतिज स्तरों के लिए अधिक उपयुक्त है और इसमें अन्दर खोदने की आवश्यकता नहीं होती। बड़े पैमाने पर कोयले के स्तर में ऊर्ध्वाधार सूराख २० से ४० गज की दूरी पर खोदे जाते हैं। कूपक के पेंदे में आग लगाई जाती है। मध्य के नल से वायु को प्रविष्ट कराते हैं और जो गैस बनती है, उसे इकट्ठा करते हैं। खान के अन्दर आग के जलने से कोयले में छेद और दरारें बन जाती हैं। जिससे गैसें एक छेद से दूसरे छेद में चली जाती हैं। ज्योंही ऐसी स्थिति हो जाती है, एक वायु-प्रवेश-मार्ग और दूसरे गैस-निकास-मार्ग को बन्द कर देते हैं। अब इससे दोनों मार्गों के बीच के पट्ट का गैसीकरण शुरू होता है। जब गैसीकरण समाप्त हो जाता है तब दूसरे छेद को इसी प्रकार काम में लाते हैं। इस प्रकार एक के बाद दूसरे सब छेदों के बीच गैसीकरण किया जाता है। पारच्याव और धार दोनों रीतियों के उपयोग का सुझाव भी रखा गया है। यह उस कोयले के स्तर के लिए अच्छा समझा जाता है, जहाँ छत के गिर जाने से धारा-रीति का उपयोग नहीं हो सकता। इस रीति में कोयले के स्तर को छोटे-छोटे वर्गों में विभक्त करते हैं। यह विभाजन ऊर्ध्वाधार कूपक के द्वारा होता है, इन कूपकों को नीचे क्षैतिज छिद्रण (bornig) द्वारा जोड़ते हैं। क्षैतिज छिद्रण जब तक गिर कर मार्ग अवरुद्ध न करे, तब तक धारा-रीति का उपयोग करते हैं। जब मार्ग अवरुद्ध हो जाता है, तब पारच्याव-रीति से गैसीकरण करते हैं। ऐसा समझा जाता है कि तब तक कोयले का स्तर पर्याप्त सच्छिद्र हो जाता है।

विदर-रीति—इस रीति में कोयले के स्तर के तल में लगभग २ फुट व्यास के तीन समानान्तर कूपक बनाते हैं। बीच के कूपक से वायु प्रविष्ट कराती और शेष दोनों कूपकों से गैसें निकलती हैं। अब कूपकों को अनेक सूराखों से जोड़ते हैं। ये सूराख पाँच-पाँच गज की दूरी पर और लगभग ४ इंच व्यास के होते हैं और ऐसे बने होते हैं कि वे एक-दूसरे के समानान्तर रहकर कूपकों को समकोण पर काटते हैं।

इस प्रकार के सूराख काटने की अनेक विधियाँ आज उपयुक्त होती हैं। कहीं यह सूराख काटना बिजली द्वारा होता है और कहीं उच्च दबाव पर पानी द्वारा। आक्सिजन द्वारा भी यह सम्पादित होता है। इसके अतिरिक्त छेद करने के अन्य यंत्रों का भी आविष्कार हुआ है।

इन सूराखों के कोयले में आग लगाई जाती है और वायु प्रविष्ट कराई जाती है। विदर का दहन होकर आग मध्य कूपक के दोनों ओर जाती है। अन्य सूराखों को बन्द कर दिया जाता है। एक के बाद दूसरे विदरों को जलाकर गैसों को नियमित रूप से निकाल लिया जाता है।

यह रीति उस कोयले के स्तरों के लिए अधिक उपयुक्त है, जहाँ धारा-रीति और पारच्याव-रीति का उपयोग नहीं हो सकता। इस रीति से स्तर के ८० से ९० प्रतिशत कोयले का गैसीकरण हो जाता है।

खानों के गैसीकरण से कम मूल्य में गैसें प्राप्त होती हैं। जहाँ एक श्रमिक प्रति मास केवल ३० टन कोयला निकाल सकता है, वहाँ गैसीकरण से एक श्रमिक १०० से २०० टन प्रतिमास कोयले का उपयोग कर सकता है। गैसीकरण में मूलधन भी कम लगता है। खानों से बाहर गैसीकरण में जितना खर्च पड़ता है, उसके ६० से ७० प्रतिशत खर्च में ही खानों में गैसीकरण हो जाता है।

अमेरिका में भी खानों में कोयले के गैसीकरण का प्रयत्न हुआ है। कुछ कम्पनियाँ इस काम के लिए बनी हैं और कार्य कर रही हैं।

प्राकृतिक गैस से पेट्रोलियम

पेट्रोलियम-कूपों से निकली गैसों में मिथेन रहता है। कोयले की खानों से निकली गैसों और निम्नताप कार्बनीकरण से भी निकली गैसों में मिथेन रहता है। मिथेन से भी हाइड्रोजन और कार्बन-मनॉक्साइड के मिश्रण प्राप्त हुए हैं। ये मिश्रण निम्नलिखित तीन रीतियों से प्राप्त हो सकते हैं—

१. मिथेन पर भाप की प्रतिक्रिया से—

$$CH_4 + H_2O = CO + 3H_2$$ (–२०१ ब्रिटिश ऊष्मा-मात्रक)
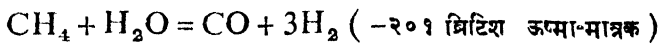
२. मिथेन पर कार्बन डायक्साइड की प्रतिक्रिया से—

$$CH_4 + CO_2 = 2CO + 2H_2$$ (–२३८ ब्रिटिश ऊष्मा-मात्रक)
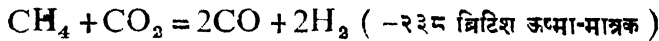
३. मिथेन के नियंत्रित आक्सीकरण से—

यहाँ वायु अथवा आक्सिजन आक्सीकरण के लिए उपयुक्त हो सकता है।

$$2CH_4 + O_2 = 2CO + 4H_2$$ (+ २८·६ ब्रिटिश ऊष्मा-मात्रक)
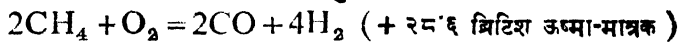
पहली प्रतिक्रिया में कार्बन-मनॉक्साइड की मात्रा कम रहती है। इस प्रतिक्रिया से प्राप्त गैस-मिश्रण में दूसरी प्रतिक्रिया से प्राप्त गैस-मिश्रण के मिलाने से ऐसा गैस-मिश्रण

प्राप्त हो सकता है, जिसमें हाइड्रोजन और कार्बन-मनॉक्साइड का अनुपात ठीक-ठीक हो। ये दोनों प्रतिक्रियाएँ साथ-साथ सम्पन्न की जा सकती हैं। इसके लिए ताप १३५०° फ० और उत्प्रेरक निकेल होना चाहिए। ऐसी दशा में प्रतिक्रिया निम्नलिखित समीकरण के अनुसार सम्पन्न होती है—

$$3CH_4 + 2H_2O + CO_2 = 4\,CO + 8H_2$$
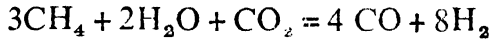
इस संबंध में अनेक अन्वेषकों द्वारा जो अनुसन्धान हुए हैं, उनसे मालूम होता है कि मिथेन पर भाप की प्रतिक्रिया से १५००° फ० से ऊपर यदि भाप का बाहुल्य न हो, तो केवल हाइड्रोजन और कार्बन-मनॉक्साइड प्राप्त होते हैं। पर, यदि भाप का बाहुल्य हो और ताप १२००°फ० हो, तो उससे निम्नलिखित समीकरण के अनुसार कार्बन-डायक्साइड और हाइड्रोजन प्राप्त होते हैं—

$$CH_4 + 2H_2O = CO_2 + 4H_2$$
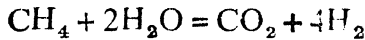
उत्प्रेरकों की अनुपस्थिति में प्रतिक्रिया बड़ी मन्द होती है, पर २३७०°फ० के ऊपर प्रतिक्रिया तीव्रतर हो जाती है। उत्प्रेरकों के अभाव में २७३०°फ० पर ०'२१ से ३'६ सेकंड के संस्पर्श से केवल १ से ३'२ प्रतिशत प्राकृतिक गैस अविच्छेदित रह गई थी। इन प्रयोगों में कार्बन का कुछ निक्षेप भी पाया गया था।

इन प्रतिक्रियाओं के सम्पादन के लिए अनेक उत्प्रेरकों का अध्ययन हुआ है। इनमें निम्नलिखित उत्प्रेरक उल्लेखनीय हैं—

१. १२००°फ० ताप पर सक्रिय कार्बन पर निकेल-अलूमिना-मैगनीशिया;

२. १४७०°फ० ताप पर निकेल-थोरिया मैगनीशिया, और निकेल-लोह;

३. १५४०°-१७००°फ० ताप पर निकेल-मैगनीशिया;

४. १५००-१७००°फ० ताप पर २५ प्रतिशत निकेल, ७४ प्रतिशत मैगनीशिया और १ प्रतिशत बोरिक अम्ल;

५. मिट्टी पर निकेल-अलूमिना; और

६. अलूमिना और मैगनीशिया।

कोबाल्ट उत्प्रेरक निकृष्ट कोटि का पाया गया है। सबसे उत्कृष्ट उत्प्रेरक अलूमिना और मिट्टी पर निक्षिप्त निकेल पाया गया है। इससे प्रायः शत-प्रतिशत परिवर्त्तन के होने की सूचना मिली है।

अर्द्ध-व्यापारिक पैमाने पर जो प्रयोग हुए हैं, उनमें निकेल उत्प्रेरक से १५८०—१६५०°फ० औसत ताप पर १० मिनट परिवर्त्तन-काल में जो गैस प्राप्त हुई थी, उसका संघटन इस प्रकार का था (जो प्राकृतिक गैस उपयुक्त हुई थी, उसमें लगभग ८७'५ प्रतिशत मिथेन था)—

	प्रतिशत
कार्बन-डायक्साइड	६
कार्बन-मनॉक्साइड	२२
हाइड्रोजन	६४
मिथेन	०'८
नाइट्रोजन	४'२

इसके निर्माण में प्राकृतिक गैस का ०·४६ अंश उपयुक्त हुआ था। उसमें ०·३० अंश गैस बनाने में और ०·१६ अंश जलकर ऊष्मा उत्पन्न करने में लगा था।

स्टौर्च और फीलडनर ने जो एक आग्रिम संयन्त्र (plant) में प्रयोग किया था, देखा कि १५६०—१७२०°फ० पर १/४ × १/८ इंच निकेल चूर्ण से जो गैस-मिश्रण प्राप्त किया था, उसमें हाइड्रोजन ७५ प्रतिशत, कार्बन-मनॉक्साइड २१ प्रतिशत, कार्बन-डाइक्साइड १ प्रतिशत और नाइट्रोजन और मिथेन १ प्रतिशत था।

नियंत्रित आक्सीकरण

इस आक्सीकरण में ऊष्मा निकलती है और बाहर से ऊर्जा की आवश्यकता नहीं होती, इस कारण यह काम कम खर्च में हो सकता है। फिशर और पिचलर ने दो भाग मिथेन और एक भाग आक्सिजन से २५५०°फ० पर और लगभग ०·०१ सेकंड्स स्पर्शकाल से जो गैस-मिश्रण प्राप्त किया था, उसमें हाइड्रोजन लगभग ५४ प्रतिशत, कार्बन-मनॉक्साइड २६ प्रतिशत, एसिटिलीन ६·४ प्रतिशत, मिथेन ४·८ प्रतिशत, और कार्बन डायक्साइड ३·० प्रतिशत था। इससे एसिटिलीन और गंधक निकालकर सीधे कृत्रिट्रोल के निर्माण में उपयोग किया जा सकता है। इसमें १८५०°फ० तक निकेल, १५५०° फ० तक निकेल-मैगनीशियम आक्साइड और १६५०°फ० तक थोरिया या सिलिका पर निकेल उत्प्रेरक के रूप में उपयुक्त हो सकता है।

गैस-मिश्रण का शोधन

कृत्रिट्रोल तैयार करने में जो गैस-मिश्रण उपयुक्त होता है उसमें गन्धक और गन्धक के यौगिकों को न रहना चाहिए। १००० घनफुट गैस-मिश्रण में केवल ०·१ ग्रेन गन्धक सह्य है। कुछ लोगों का दावा है कि उन्हें ऐसे उत्प्रेरक मालूम हैं, जिनपर गन्धक और गन्धक के यौगिकों का कोई असर नहीं पड़ता, पर साधारण उत्प्रेरकों की सक्रियता गन्धक और गन्धक के यौगिकों के कारण नष्ट हो जाती है। गैस-मिश्रण से गन्धक निकालने के सम्बन्ध में बहुत लोगों के अनुसन्धान हुए हैं और लोगों ने अनेक रीतियों का पेटेण्ट लिया है।

साधारणतया गैस-मिश्रण से दो क्रमों में गन्धक निकाला जाता है। एक क्रम में हाइड्रोजन सलफाइड निकाला जाता है और दूसरे क्रम में कार्बनिक गन्धक।

जर्मनी के कारखानों में गन्धक निकालने की सुपरिचित रीति लोहे के आक्साइड के द्वारा प्रचलित है। एक दूसरी रीति में 'एल्केजिड' का व्यवहार होता है। एल्केजिड एक क्षारीय कार्बनिक यौगिक है, जो हाइड्रोजन सलफाइड को अवशोषित कर लेता है। एल्केजिड पर भाप के प्रवाह से हाइड्रोजन सलफाइड निकल जाता और एल्केजिड फिर काम में लाया जा सकता है। उत्प्रेरकीय आक्सीकरण से गन्धक के कार्बनिक यौगिक निकलते हैं। इसके लिए ३५०° फ० पर ताजा फेरिक आक्साइड और सोडियम कार्बोनेट का मिश्रण और ५३५° फ० पर पुराना मिश्रण उत्प्रेरक के रूप में उपयुक्त हो सकता है। ताजे मिश्रण में फेरिक आक्साइड ३४·४ प्रतिशत और सोडियम कार्बोनेट २३·८ प्रतिशत रहता है। पुराने उत्प्रेरकीय मिश्रण में ३३ प्रतिशत सोडियम सल्फेट, ०·३ प्रतिशत सोडियम सलफाइट और ४ प्रतिशत सोडियम कार्बोनेट रहते हैं। कार्बोनिक गन्धक के हटाने में अल्प मात्रा में आक्सिजन का रहना आवश्यक होता है।

हाइड्रोजन सलफाइड निकालने का तरीका वही है, जो सिन्दरी के खाद के कारखाने में उपयुक्त होता है। एक मीनार में आयर्न-आक्साइड रखा रहता है। प्रायः ४० इंच की दूरी पर कई थाल रखे रहते हैं। साधारणतया १० से २० थाल रहते हैं। इन थालों में १२ इंच की गहराई में आयर्न-आक्साइड बिछा रहता है। प्रति सेकंड प्रायः ३'२ फुट के वेग से गैस-मिश्रण प्रवाहित होता है, यह उत्प्रेरक लगभग १२ सप्ताह काम देता है। उसके बाद फेंक दिया जाता है। गैस-मिश्रण में कुछ वायु भी प्रविष्ट कराई जाती है, ताकि वह कार्बनिक गन्धक के निकालने में सहायता करे, ऐसे शोधित गैस-मिश्रण में १००० घनफुट गैस में करीब २ ग्रेन गन्धक रहता है। जितना गन्धक सह्य है, उससे यह मात्रा कुछ अधिक है।

गैस-मिश्रण में यदि आक्सिजन ०'०१२ आयतन प्रतिशत हो, तो हाइड्रोजन सल्फाइड कम निकलता है, ०'१७७—०'२०५ आयतन प्रतिशत होने से हाइड्रोजन सलफाइड अधिक निकलता और ०'८०२—०'६०३ प्रतिशत होने से हाइड्रोजन सल्फाइड का निकलना फिर बहुत कम हो जाता है। आक्सिजन के ०'१७७—०'४४३ प्रतिशत रहने से कार्बनिक गन्धक यौगिक सन्तोषजनक रीति से निकल जाते हैं।

गन्धक निकालने की अन्य रीतियाँ भी हैं। एक रीति में गैस-मिश्रण को पहले भींगे लोहे के आक्साइड पर, फिर लोहे और अलकली कार्बोनेट पर ५७०—८४०° फ० पर और फिर अन्त में ३००—५७०° फ० पर लोहे के आक्साइड और अलकली धातुओं के कार्बोनेटों पर प्रवाहित करते हैं।

केवल लोहे के आक्साइड के स्थान पर लोहे के आक्साइड और लकड़ी के बुरादे का उपयोग हुआ है। लकड़ी के बुरादे से आक्साइड सरन्ध्र हो जाता है और तब गैसें सरलता से प्रविष्ट करती हैं। लोहे के आक्साइड को गेंद के रूप में देने से भी गैसें सरलता से प्रविष्ट करती हैं।

यदि गन्धक की मात्रा बहुत अधिक हो, तो पहले अधिकांश गन्धक को अमोनिया-थाइलौक्स-विधि से निकाल लेते हैं और तब लोहे के आक्साइड पर ले जाते हैं। ऐसा देखा गया है कि १००० घनफुट गैस में २५०० ग्रेन गन्धक से गन्धक की मात्रा १००० घनफुट गैस में ८० ग्रेन से नीचे गिर जाती है।

कुछ लोगों ने लोहे के आक्साइड में अन्य पदार्थों के मिलाने से उसकी सक्रियता बहुत बढ़ी हुई पाई है। १० प्रतिशत सोडियम हाइड्राक्साइड अथवा १० प्रतिशत थोरिया के डालने से सक्रियता बहुत बढ़ जाती है। फुलर मिट्टी में लोहे के आक्साइड और ३० प्रतिशत सोडियम हाइड्राक्साइड से गन्धक की मात्रा १००० घनफुट में ०'३५ ग्रेन हो गई है। इसी प्रकार, ताँबे और निकेल के हाइड्राक्साइड के डालने से भी उत्प्रेरक की दक्षता बढ़ी हुई पाई गई है।

कार्बनिक गन्धक-यौगिकों के निकालने के सम्बन्ध में अनेक प्रयोग हुए हैं। चीनी मिट्टी पर निकेल हाइड्राक्साइड के उपयोग से गन्धक-यौगिकों की मात्रा बहुत घटी हुई पाई गई है। अनेक कार्बनिक गन्धक यौगिक अवकरण से हाइड्रोजन-सल्फाइड में परिणत हो जाते हैं।

झाँवे पर निक्षिप्त युरेनियम और सीरियम ४:१ के अनुपात में ६६०° फ० पर प्रति घण्टा ५७०० आयतन वेग से अच्छा उत्प्रेरक प्रमाणित हुआ है। इससे कार्बन-डाइसल्फाइड निकल जाता है, पर थायोफीन नहीं निकलता। कार्बनिक गन्धक यौगिकों को अवकृत कर हाइड्रोजन

सल्फाइड में परिणत करने के लिए अनेक उत्प्रेरकों के उपयोग हुए हैं। ऐसे उत्प्रेरकों में अकार्बनिक भस्मों या अम्ल निरुद्कों के साथ, सीस, वङ्ग और ताँबा इत्यादि धातुएँ, लेड क्रोमेट, कैलसियम प्लम्बेट, क्युप्रिक आक्साइड और लेड एसिटेट और बहुमूल्य धातुएँ रजत तथा स्वर्ण हैं।

प्रतिक्रिया

कार्बन-मनॉक्साइड पर हाइड्रोजन की प्रतिक्रिया से निम्नलिखित समीकरण के अनुसार क्रियाएँ सम्पन्न हो सकती हैं—

$$(१)\ n\,CO + 2nH_2 = CnH_{2n} + nH_2O$$
$$(२)\ n\,CO + (2n + 1)\ H_2 = Cn\ H_{2n} +^2 + nH_2O$$
$$(३)\ 2n\,CO + nH_2 = CnH_{2n} + nCO_2$$
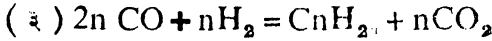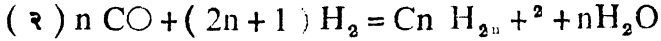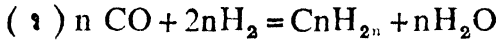
यदि हाइड्रोजन की मात्रा कम हो और उत्प्रेरक की हाइड्रोजनीकरण-क्षमता प्रबल न हो, तो पहली प्रतिक्रिया होती है। यदि हाइड्रोजन की मात्रा अधिक हो और उत्प्रेरक की हाइड्रोजनीकरण-क्षमता प्रबल हो, तो दूसरी प्रतिक्रिया होती है। निकेल अथवा कोबाल्ट के स्थान पर यदि लोहा उत्प्रेरक के रूप में उपयुक्त हो, तो तीसरी प्रतिक्रिया होती है।

हाइड्रोकार्बन के निर्माण की प्रतिक्रियाएँ ऊष्मा-क्षेपक होती हैं और इनमें आयतन की कमी होती है, इस कारण निम्नताप और उच्च दबाव से प्रतिक्रिया का वेग बढ़ता है। यह प्रतिक्रिया निकेल अथवा कोबाल्ट-उत्प्रेरक से ३७५° फ० पर और लोह-उत्प्रेरक से ४६५° फ० पर सम्पन्न होती है। साधारणतया ये प्रयोग शून्य और प्रतिवर्ग इंच पर १५० पाउण्ड दबाव पर होते हैं। गैस-मिश्रण को अनेक कक्षों में ले जाते हैं। वहाँ प्रतिक्रियाएँ सम्पन्न होती हैं और उत्पाद संघनित्र में संघनित होता है और आसवन से उसे विभिन्न अंशों में विभाजित करते हैं।

इस प्रतिक्रिया में उत्प्रेरकों का कार्य क्या होता है, इस सम्बन्ध में बहुत अन्वेषण हुए हैं। अनेक वैज्ञानिकों का मत है कि धातुओं के कारबाइड बनते हैं। ये कारबाइड अस्थायी होते हैं। ये शीघ्र ही विच्छेदित हो जाते हैं। ६६०° फ० से नीचे ताप पर ये कारबाइड हाइड्रोजन से विच्छेदित होकर मिथेन और अल्प मात्रा में ईथेन बनते हैं। ताप के ६६०° फ० से ऊँचा होने पर कारबाइड से कार्बन मुक्त होता है। इस कारण इस प्रतिक्रिया का ताप ६६०° फ० से ऊपर नहीं रहना चाहिए।

फिशर का मत है कि कारबाइड पर हाइड्रोजन की प्रतिक्रिया से मेथिलीन मूलक बनते हैं। इन मूलकों के जोड़ने से विभिन्न लम्बाई और विभिन्न संतृप्ति की शृंखलाएँ बनती हैं। मेथिलीनमूलक के निर्माण का स्पष्टीकरण इस समीकरण से सरलता से हो जाता है—

$CO + 2H_2 = (CH_2) + H_2O$ (+ १७५ ब्रिटिश ऊष्मा-मात्रक) अथवा लोह-उत्प्रेरक से प्रतिक्रिया इस प्रकार होती है—

$2\,CO + H_2 = (CH_2) + CO_2$ (+ १७४ ब्रिटिश ऊष्मा-मात्रक)
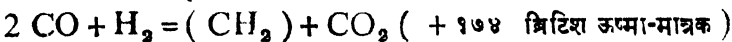
उत्प्रेरकों से केवल मेथिलीन मूलक ही नहीं बनता, बल्कि उससे पुरुभाजन और हाइड्रोजनीकरण भी होता है। शुद्ध निकेल-सदृश कुछ उत्प्रेरक हैं, जिनसे केवल कारबाइड

बनते हैं। उनसे पुरुभाजन नहीं होता। कुछ उत्प्रेरक से कारबाइड बनते और पुरुभाजन और हाइड्रोजनीकरण भी होते हैं। इसी कारण एक उत्प्रेरक के स्थान में उत्प्रेरकों के मिश्रण अच्छे समझे जाते हैं।

स्टौर्च (Storch) का मत है कि हाइड्रोजन पहले धातुओं का हाइड्राइड बनता, जो कारबाइड के बनने में सहायक होता है।

मेथिलीन से या तो बहुत बड़े अणुवाले हाइड्रोकार्बन बनते हैं, जिनके फिर भंजन से अपेक्षया कम अणुवाले हाइड्रोकार्बन बनते हैं, जो कृत्रिम पेट्रोल में पाये जाते हैं अथवा छोटे-छोटे मेथिलीन के पुरुभाजन से बड़े अणुवाले हाइड्रोकार्बन बनते हैं। कुछ लोग पहले मत के समर्थक हैं और कुछ लोग दूसरे मत के।

क्रैक्सफोर्ड (Craxford) का मत है कि मेथिलीन के पुरुभाजन से और हाइड्रोजन-भंजन से हाइड्रोकार्बन बनते हैं। इस मत की पुष्टि में उन्होंने अनेक प्रयोग किये हैं। इनके अन्वेषणों से पता लगता है कि धातुओं के कारबाइड पहले बनते और फिर वे मेथिलीन बनते और मेथिलीन के पुरुभाजन से पेट्रोलियम बनता है। कुछ जापानी रसायनज्ञों का भी यही मत है। उनके विचार से उत्प्रेरक हाइड्रोजन का अधिशोषण करता है और तब कारबाइड पर की क्रिया से मेथिलीन बनता है। यह मेथिलीन फिर पुरुभाजित और अवकृत होकर हाइड्रोकार्बन में परिणत हो जाता है। तीन क्रमों—पुरुभाजन, अवकरण और अ-शोषण—से साथ-साथ चलकर हाइड्रोकार्बन प्राप्त होता है।

कोबाल्ट-उत्प्रेरकों से ३२०° फ० से ऊपर पेट्रोल के हाइड्रोकार्बन बनते हैं; क्योंकि इस ताप के ऊपर ही हाइड्रोजन का अधिशोषण होता है। लोहा-उत्प्रेरकों का काम उच्चतर ताप पर इस कारण होता है कि उच्चतर ताप पर ही लोहा कारबाइड बनता है।

धातु के आक्साइड का आक्सिजन हाइड्रोजन के साथ मिलकर जल बनता है जो उत्प्रेरक द्वारा अवशोषित हो जाता है। कुछ लोगों का मत है कि हाइड्रोकार्बन बनने में आक्सिजनवाले यौगिक सहायक होते हैं।

कुछ लोगों का मत है कि बिना कारबाइड बने भी मेथिलीन बन सकता है। इसके लिए कीटीन का बनना आवश्यक बतलाया जाता है। कीटीन बड़ा सक्रिय कार्बनिक यौगिक है और इससे हाइड्रोकार्बन का बनना सरलता से प्रदर्शित किया जा सकता है।

बाईसवाँ अध्याय

प्रतिक्रिया प्रतिवर्त्ती

संश्लिष्ट पेट्रोलियम के निर्माण में गैस-मिश्रण पर जो प्रतिक्रियाएँ होती हैं, उनपर अनेक बातों का प्रभाव पड़ता है। इनमें निम्नलिखित बातें विशेष उल्लेखनीय हैं—

ताप का प्रभाव—प्रतिक्रिया पर ताप का प्रभाव बहुत अधिक पड़ता है। भिन्न-भिन्न उत्प्रेरकों से प्रतिक्रिया भिन्न-भिन्न ताप पर महत्तम होती है। यदि निकेल अथवा कोबाल्ट-उत्प्रेरक उपयुक्त हो, तो ३५०° फ० से निम्न ताप पर क्रिया बड़ी मन्द होती है। ४४०° फ० से ऊपर ताप पर भी द्रव पेट्रोलियम की मात्रा शीघ्रता से घटती है और उसी अनुपात में मिथेन की मात्रा बढ़ती है। ४४०° फ० से ऊपर ताप पर मिथेन की मात्रा अधिक रहती है और आक्सिजन जल के स्थान में कार्बन-डायक्साइड के रूप में प्राप्त होता है।

लोहे के उत्प्रेरक से लगभग ४६५° फ० पर महत्तम उत्पाद प्राप्त होता है। उत्पाद की प्रकृति बहुत-कुछ ताप और दबाव पर निर्भर करती है। कार्बन-मनॉक्साइड के हाइड्रोजनीकरण से निम्नताप पर ऋजु-श्रृंखला हाइड्रोकार्बन बनते, ५७५—७५०° फ० पर अलकोहल बनते और ७५०°—८८५° फ० पर आइसो-पैराफिन बनते और ८८५—९३०° फ० पर सौरभिक बनते हैं।

दबाव का प्रभाव—बहुत ऊँचे दबाव पर उच्च अणुभार के हाइड्रोकार्बन और आक्सिजन यौगिक बनते हैं। पर, मध्यम दबाव, ७५ से २२० पाउण्ड प्रति वर्गइंच दबाव, अच्छा होता है। फिशर और पिच्लर ने देखा था कि प्रतिवर्ग इंच लगभग ७५ पाउण्ड दबाव तक दबाव की वृद्धि से उत्पाद की क्रमशः वृद्धि होती है। प्रतिवर्ग इंच लगभग २२० पाउण्ड दबाव तक पैराफिन मोम की मात्रा बढ़ती है। मध्यम दबाव से उत्प्रेरक का जीवन दीर्घतम होता है। दबाव से उत्पाद की मात्रा पर क्या प्रभाव पड़ता है, वह निम्नलिखित आँकड़े से स्पष्ट हो जाता है—

१००० घनफुट गैस-मिश्रण से उत्पाद की प्राप्ति पाउण्ड में

प्रतिवर्ग इंच दबाव पाउण्ड में	समस्त ठोस और द्रव	पैराफिन मोम	पेट्रोल ३९०° फ० से नीचे	द्रव ३९०° फ० से ऊपर	एक से ४ कार्बन-वाले हाइड्रोकार्बन गैसें
०	७'२८	०'६२	४'३०	२'३६	२'३७
२२	८'१६	०'९३	४'५५	२'६८	३'१२
७३'५	९'३५	३'७४	२'४३	३'१८	२'०६
२२०	९'०३	४'३६	२'४३	२'२४	२'०६
७३५	८'५९	३'३६	२'९३	२'३०	१'३१
२२००	६'४८	१'६८	२'६८	२'१२	१'९३

ताजे उत्प्रेरकों से उत्पाद की उपलब्धि अधिक होती है और पुराने उत्प्रेरकों से कम हो जाती है। यदि दबाव मध्यम हो तो उससे संयन्त्र के विस्तार में कमी हो जाती है।

गैस-मिश्रण के बहाव के वेग का प्रभाव

किस वेग से गैस-मिश्रण का बहाव होना चाहिए, यह महत्त्व का है। उत्पाद की प्रकृति पर बहाव के वेग का पर्याप्त प्रभाव पड़ता है। फिशर और पिचलर ने इस सम्बन्ध में बहुत काम किया है। उन्होंने प्रति पाउण्ड कोबाल्ट-उत्प्रेरक पर प्रति घण्टा ३.२ घनफुट बहाव से १००० घनफुट गैस-मिश्रण से ११.८ पाउण्ड उत्पाद प्राप्त किया था। ऐसे उत्पाद में ठोस पैराफिन ४८ प्रतिशत, द्रव हाइड्रोकार्बन ४४ प्रतिशत और तीन से चार कार्बनवाला हाइड्रोकार्बन ८ प्रतिशत प्राप्त किया था। जब बहाव का वेग प्रति घण्टा ३२ घनफुट था, तब ६.० पाउण्ड प्राप्त किया था, जिसमें ठोस पैराफिन १४ प्रतिशत, द्रव हाइड्रोकार्बन ७३ प्रतिशत और निम्न हाइड्रोकार्बन १३ प्रतिशत थे।

कोबाल्ट उत्प्रेरक से २२० पाउण्ड प्रतिवर्ग इंच दबाव और ३६०° फ० पर निम्नलिखित मात्रा में उत्पाद प्राप्त हुए थे—

बहाव घनफुट घण्टा प्रति पाउण्ड कोबाल्ट	१८.४	३७.०	५७.६	१६०
समस्त उत्पाद १००० घनफुट गैस से	६.३०	५.३०	३.७४	१.०३

बहाव के वेग की वृद्धि से ओलिफिन की मात्रा की वृद्धि होती है।

हाइड्रोजन और कार्बन-मनॉक्साइड के अनुपात का प्रभाव

गैस-मिश्रण में यदि कार्बन-मनॉक्साइड की मात्रा अधिक हो तो उससे अधिक ओलिफिन और अधिक कार्बन-डायक्साइड बनते हैं। यदि हाइड्रोजन का अनुपात अधिक हो तो संतृप्त हाइड्रोकार्बन और मिथेन की मात्रा अधिक बनती है। महत्तम हाइड्रोकार्बन प्राप्त करने के लिए हाइड्रोजन और कार्बन-मनॉक्साइड का अनुपात आयतन में २:१ होना चाहिए।

तेईसवाँ अध्याय

उत्प्रेरक

कोयले अथवा प्राकृतिक गैस से पेट्रोलियम-प्राप्ति के लिए किसी उत्प्रेरक का होना अत्यावश्यक है। फिशर और ट्रॉपुश ने पहले-पहल लोहे और कोबाल्ट का उपयोग किया था। इनकी सक्रियता बढ़ाने के लिए उन्होंने उसमें ताँबा, क्षार और जिंक-आक्साइड डाला था। निकेल के उपयोग में उन्हें पहले सफलता नहीं मिली। पीछे उन्होंने देखा कि निकेल के साथ अन्य पदार्थों के रहने से निकेल भी उपयुक्त हो सकता है।

केवल निकेल के साथ ही अन्य पदार्थों के डालने की आवश्यकता नहीं है, पर अन्य उत्प्रेरकों के साथ भी दूसरे पदार्थ डाले जा सकते हैं। इन पदार्थों के डालने के निम्नलिखित उद्देश्य होते हैं—

१. ये पदार्थ उत्प्रेरक की सक्रियता को बढ़ा देते हैं;
२. ये पदार्थ उत्प्रेरक में उत्प्रेरण का गुण ला देते हैं;
३. ये उत्प्रेरकों को विषाक्त होने से बचाते हैं;
४. ये उत्प्रेरकों की भौतिक परिस्थिति को उन्नत कर देते हैं; और
५. ये उत्प्रेरकों के लिए आधार बनते हैं।

इनके चुनाव में यह खयाल रखना आवश्यक है कि उसमें ऐसे पदार्थ हों, जिनका विशिष्ट प्रभाव प्रतिक्रिया पर पड़े और जिनमें विभिन्न अवयवों का अनुपात ऐसा हो कि उससे अच्छा फल प्राप्त हो सके।

कार्बन-मनॉक्साइड और हाइड्रोजन के १ : २ अनुपात से १००० घनफुट गैस से प्रायः १३ पाउण्ड हाइड्रोकार्बन बन सकता है, पर गैस-मिश्रण में कार्बन-मनॉक्साइड और हाइड्रोजन के अतिरिक्त, कार्बन-डायक्साइड, नाइट्रोजन, मिथेन-सदृश कुछ निष्क्रिय गैसें भी रहती हैं, इससे साधारणतया १००० घनफुट से ११'२ पाउण्ड से अधिक हाइड्रोकार्बन नहीं बनता। निष्क्रिय गैसों के अधिक रहने से उनका उत्पादन कम करनेवाला प्रभाव पड़ता है। १० प्रतिशत से कम अमोनिया और आक्सिजन से पेट्रोल की मात्रा कम हो जाती, कार्बन-डायक्साइड से भी कम होती और नाइट्रोजन और मिथेन से कुछ ही कम होती है। ताप के परिवर्त्तन से भी उत्पाद की मात्रा पर बहुत प्रभाव पड़ता है। किसी उत्प्रेरक से निम्न ताप पर ही अच्छी मात्रा में और किसी उत्प्रेरक से उच्च ताप पर अच्छी मात्रा में उत्पाद प्राप्त होते हैं।

निकेल-उत्प्रेरक

निकेल के उत्प्रेरक बनाने में किसेलगुर पर निकेल-नाइट्रेट का विलयन डालकर

अल्कली कार्बोनेट के विलयन डालने से किसेलगुर पर निकेल अवक्षिप्त हो जाता है। अब किसेलगुर को छान कर अलग कर धोते, सुखाते और हाइड्रोजन से अवकृत करते हैं। इसी प्रकार, अमोनिया की उपस्थिति में निकेल-मैंगनीज-अलूमिना उत्प्रेरक तैयार करते हैं। ऐसे उत्प्रेरक का अवकरण निम्न ताप पर ही ५७०-६६०°फ० पर हो जाता है।

एक दूसरा उत्प्रेरक १२५ ग्राम किसेलगुर पर १०० भाग निकेल-आक्साइड, २० भाग मैंगनीज-आक्साइड, ४ से ८ भाग थोरिया, अलूमिना, टंगस्टिक आक्साइड अथवा युरेनियम आक्साइड से प्राप्त होता है। ऐसे उत्प्रेरक से ३६५-४१०° फ० ताप पर प्रति घंटा प्रति आयतन उत्प्रेरक पर लगभग १५० आयतन गैस-मिश्रण के वेग से प्रति १००० घनफुट गैस से ०'७५-१'२ गैलन द्रव हाइड्रोकार्बन प्राप्त होता है।

एक दूसरा उत्प्रेरक तैयार हुआ है, जिसका जीवन बड़ा होता है। यह उत्प्रेरक किसेल-गुर पर निकेल-मैंगनीज अलूमिना के अवक्षेप से प्राप्त होता है। थोरियम, अलूमिनियम और सीरियम यौगिकों से उत्प्रेरक की सक्रियता बढ़ जाती है।

कोबाल्ट-उत्प्रेरक

जर्मनी में जो उत्प्रेरक उपयुक्त होता था, वह किसेलगुर पर आधारित कोबाल्ट और थोरियम आक्साइड था। ऐसे उत्प्रेरक से १००० घनफुट गैस-मिश्रण से १०'५ पाउण्ड द्रव हाइड्रोकार्बन प्राप्त हुआ था। १९३५ ई० तक कोबाल्ट-थोरियम-किसेलगुर उत्प्रेरक सर्वश्रेष्ठ समझा जाता था। यदि इसमें २ प्रतिशत ताँबा रहे, तो उत्प्रेरक का अवकरण सरलता से होता है। जापान में भी एक उत्प्रेरक तैयार हुआ है, जिसमें ताँबा ५-१० प्रतिशत, मैंगनीज-आक्साइड ४-१२ प्रतिशत, थोरिया अलूमिना अथवा युरेनियम आक्साइड ४-१२ प्रतिशत था। ऐसे उत्प्रेरक से अच्छी मात्रा में पेट्रोलियम बना था। १८०-२२० भाग किसेलगुर पर १०० भाग कोबाल्ट-आक्साइड, ८'८ भाग थोरियम आक्साइड, ४'४ भाग मैगनीसियम आक्साइड से भी अच्छा उत्प्रेरक प्राप्त होता है।

मैगनीशिया की उपस्थिति से उत्प्रेरक की कठोरता बढ़ जाती है। पर, मैगनीशिया से पैराफिन की मात्रा कम बनती है और थोरिया से अधिक बनती है। थोरिया और मैगनीशिया के अनुपात में ऐसा साम्य होना चाहिए कि उससे उत्प्रेरक बहुत कोमल न हो जाय, और साथ ही पैराफिन के निर्माण में कमी न हो।

किसेलगुर में १ प्रतिशत से अधिक लोहा नहीं रहना चाहिए, नहीं तो उससे मिथेन की मात्रा बहुत बढ़ जाती है। अलूमिनियम ट्रायक्साइड की मात्रा भी ०'४ प्रतिशत या इससे कम ही रहनी चाहिए, नहीं तो उत्प्रेरक 'जेल' में परिणत हो जाता है। किसेलगुर को ११००-१३००°फ० पर जला लेने से इसमें वाष्पशील पदार्थों की मात्रा १ प्रतिशत से अधिक नहीं रहती। अम्ल के उपचार से लोहे की मात्रा कम हो जाती है, पर अम्ल के उपचार से किसेलगुर की भौतिक दशा अच्छी नहीं रहती। इसलिए अम्ल से उपचार ठीक नहीं है।

मिश्र-धातु पंजर-उत्प्रेरक

जिन उत्प्रेरकों का ऊपर वर्णन हुआ है, वे ताप के कुचालक होते हैं, प्रतिक्रिया में जो ऊष्मा उत्पन्न होती, वह शीघ्र ही फैल नहीं जाती। इस कारण, जिनसे प्रतिक्रिया में

उत्पन्न ऊष्मा का वितरण शीघ्र होता रहे, ऐसे उत्प्रेरकों की खोज हुई है। इस दृष्टि से कुछ मिश्र-धातुओं के पंजर बने हैं। ये पंजर बहुत सरंध्र होते हैं। ये पंजर निकेल के अथवा कोबाल्ट के अथवा इन दोनों की मिश्र-धातु के बने होते हैं। ऐसे पंजर निकेल और कोबाल्ट के साथ अल्प अलूमिनियम अथवा सिलिकन के भी बने होते हैं। ऐसे कोबाल्ट-निकेल पंजर में ये धातुएँ सम अनुपात में होती हैं। सिलिकन से बने उत्प्रेरक अलूमिनियम से बने उत्प्रेरक से अधिक सक्रिय होते हैं। इसमें अल्प मात्रा में भी ताँबा अथवा मैंगनीज नहीं रहना चाहिए। केवल निकेल से बने ऐसे उत्प्रेरक के स्थान में निकेल-कोबाल्ट के बने उत्प्रेरक उत्कृष्ट होते हैं। ऐसे उत्प्रेरक से १००० घनफुट गैस-मिश्रण से ४.८ पाउण्ड पेट्रोलियम प्राप्त हो सकता है। इन उत्प्रेरकों की सक्रियता का ह्रास शीघ्रता से होता है। ऐसे उत्प्रेरकों की गोलियाँ भी बनती हैं, जिसका उल्लेख एक अमेरिकी पेटण्ट २,१३६,४०६ में हुआ है।

आलम्बित उत्प्रेरक

कुछ उत्प्रेरक ऐसे बने हैं, जो किसी द्रव में आलम्बित रहते हैं। जब उत्प्रेरक का ताप बढ़ जाता है तब उससे द्रव का उद्वाष्पन होकर वह निकल जाता और उत्प्रेरक अधिक गरम नहीं होता। ऐसा एक उत्प्रेरक लोहा, मैगनीसियम आक्साइड और जिंक-आक्साइड से बना होता है। यह अन्थ्रेसीन तेल में आलम्बित रहता है। इस उत्प्रेरक से ७००° फ० और प्रतिवर्ग इंच ३०० पाउण्ड पर स्नेहन-तेल और मोम अधिक मात्रा में बनता है। निकेल-अलूमिनियम किसेलगुर उत्प्रेरक भारी गन्धक-मुक्त तेल में आलम्बित रहता है। इससे मिथेन की मात्रा अधिक बनती है।

ऐसे उत्प्रेरक ऊर्ध्वाधार नलियों में रखे होते हैं जिन पर पश्चवाही संघनित्र लगा रहता है। द्रव का वाष्प संघनित्र में संघनित होकर लौट आता है।

ऐसे उत्प्रेरकों के उपयोग में दो त्रुटियाँ हैं। इनमें (१) प्रतिक्रिया उत्पाद का निकलना कुछ कठिन होता है और (२) अधिक स्थान की आवश्यकता होती है।

किसेलगुर पर कोबाल्ट नाइट्रेट का विलयन डालकर २१२° फ० पर सोडियम कार्बोनेट डालने से कोबाल्ट अवक्षिप्त हो जाता है। इसे धो और सुखाकर चलनी में चाल लेते हैं। इसका कण ०.०४ से ०.१२ इंच का होना चाहिए। ऐसे चूर्ण के एक लिटर में ३२०-३५० ग्राम रहता है। इसका तब अवकरण करते हैं। अवकरण के लिए ७५ प्रतिशत हाइड्रोजन और २५ प्रतिशत नाइट्रोजन उपयुक्त माना जाता है। इस गैस को ४० से ६० मिनटों तक ८६०° फ० पर गरम कर लेते हैं। इस गैस का वेग ८८०० रहता है। अवकरण-ताप जितना ही कम हो, उतना ही अच्छा होता है, पर कम ताप से समय अधिक लगता है।

यदि उत्प्रेरक में किसेलगुर १०० भाग, कोबाल्ट १०० भाग और थोरिया १८ भाग हो, तो ऐसा उत्प्रेरक उत्कृष्ट कोटि का समझा जाता है, पर थोरिया का क्या कार्य है, यह ज्ञात नहीं है। क्राक्सफोर्ड ने एथिलीन के हाइड्रोजनीकरण से ईथेन में ६८° फ० पर निम्नलिखित उत्प्रेरकों की उपस्थिति में परिणत किया है—

१. केवल कोबाल्ट ;

२. कोबाल्ट और थोरिया १००:१८ ;

३. कोबाल्ट और किसेलगुर १:१ ;

४. कोबाल्ट-थोरिया-किसेलगुर १००:१८:१०० और

५. कोबाल्ट थोरिया-किसेलगुर १००:२१:१०० ।

ये सभी उत्प्रेरक एक-से क्रियाशील पाये गये हैं । इससे वे इस परिणाम पर पहुँचे कि थोरिया और किसेलगुर से कोबाल्ट की सक्रियता में कोई अन्तर नहीं पड़ता । कारबाइड के बनने में देखा गया कि थोरिया और किसेलगुर दोनों ही कोबाल्ट की सक्रियता को बढ़ाते हैं । सबसे अधिक वृद्धि १८ प्रतिशत थोरिया से होती है । २१ प्रतिशत थोरिया से सक्रियता कम हो जाती है ।

क्राक्सफोर्ड इस सिद्धान्त पर पहुँचे हैं कि थोरिया और किसेलगुर केवल उत्प्रेरक के तल की वृद्धि ही नहीं करते, वरन् वे कोबाल्ट-कारबाइड के निर्माण और अवकरण में सहायता करते हैं । अच्छा उत्प्रेरक वही होता है, जिसमें कारबाइड बनने की क्षमता अधिक, पर कारबाइड अवकरण की क्षमता कम हो ।

कोबाल्ट-निकेल-उत्प्रेरक

कोबाल्ट-उत्प्रेरक से मिथेन की मात्रा कम और ओलिफिन की मात्रा अधिक बनती है । निकेल में ठीक इसके प्रतिकूल होता है । अतः यदि उत्प्रेरक में कोबाल्ट और निकेल की मात्रा समभाग में हो, तो इससे एक का दोष दूसरे से दूर हो जाता है । पर किसी प्रवर्त्तक (promotor) से इनकी सक्रियता अच्छी नहीं होती । इस प्रकार की एक उत्कृष्ट कोटि के उत्प्रेरक में किसेलगुर १२० भाग, मैंगनीज-आक्साइड २० भाग, युरेनियम आक्साइड २० भाग और कोबाल्ट-निकेल १०० भाग रहते हैं ।

तरल उत्प्रेरक—अमेरिकी पेटेण्ट २,३४७,६८२ में एक तरल उत्प्रेरक का वर्णन है । इसमें प्रतिक्रिया का ताप २२५-४२५° फ० के बीच स्थायी रखा जा सकता है । यहाँ उत्प्रेरक बहुत महीन कणों में रहता है । कण इतना महीन होता है कि गैस-मिश्रण के प्रवाह में वह आलम्बित रहता है । ऐसे उत्प्रेरक से लाभ यह होता है कि प्रतिक्रिया की ऊष्मा बहती हुई गैसों के कारण पात्रों की दीवारों से निकल जाती है । पात्रों के बाह्य तल पर शीतल द्रव बहता रहता है, जो ऊष्मा को ले लेता है ।

लोहा-उत्प्रेरक—लोहा उत्प्रेरकों पर बहुत अनुसन्धान हुए हैं ; क्योंकि लोहा सस्ता होता है और जल्दी मिल जाता है । लोहा-उत्प्रेरकों से असंतृप्त हाइड्रोकार्बन अधिक मात्रा में बनते हैं, जिससे पेट्रोल की ऑक्टेन-संख्या ऊँची होती है । लोहे के उत्प्रेरक से यह आवश्यक नहीं कि हाइड्रोजन और कार्बन मनॉक्साइड का अनुपात २ : १ हो । इसके साथ जल-गैस भी उपयुक्त हो सकती है और इसके लिए यह अच्छी होती है ।

उत्प्रेरण-गुण इसमें निकेल और कोबाल्ट की अपेक्षा कम होता है, पर इससे ठोस मोम अधिक बनता है । इसमें ताँबा भी मिलाया जा सकता है । इसमें ०.५ प्रतिशत क्षार मिलाने से इसका जीवन बढ़ जाता है । सम्भवतः क्षार मिलाने से लोहा फेरिक आक्साइड (Fe_2O_3) बनता है, जिससे उसकी सक्रियता बढ़ जाती है । यह चुम्बकीय फेरिक आक्साइड (Fe_3O_4) का बनना भी रोकता है, जिसकी सक्रियता कम होती है ।

यह उत्प्रेरक फेरिक लवण पर पोटैसियम कार्बोनेट अथवा हाइड्राक्साइड द्वारा लोहे के अवक्षेप से प्राप्त होता है। यदि लवण में क्लोराइड आयन है तो उत्प्रेरक निष्क्रिय होता और यदि उसमें नाइट्रेट आयन है तो वह सक्रिय होता है। दोनों की सक्रियता में वस्तुतः बहुत भेद है।

लोहा-उत्प्रेरक द्रवरूप में, गोलियों के रूप में और जमे हुए ठोस रूप में भी उपयुक्त हुआ है। जमे हुए उत्प्रेरक से जो हाइड्रोकार्बन प्राप्त हुए हैं, उनमें सशाख शृंखला पैराफिन की मात्रा अधिक पाई गई है।

रूथेनियम उत्प्रेरक

रूथेनियम उत्प्रेरक से ३००-४२०° फ० और प्रतिवर्ग इंच ४५० पाउण्ड दबाव से ऊपर दबाव पर ठोस हाइड्रोकार्बन प्राप्त होने का दावा किया गया है। इस समूह की अन्य धातुओं की अपेक्षा रूथेनियम सबसे अधिक उत्कृष्ट पाया गया है। रूथेनियम उत्प्रेरक दीर्घजीवी भी होता है। ३८०° फ० और प्रतिवर्ग इंच १५०० पाउण्ड दबाव पर १००० घनफुट गैस-मिश्रण से लगभग ६'२ पाउण्ड पैराफिन मोम और ३'१ पाउण्ड द्रव पेट्रोलियम प्राप्त होता है।

इस उत्प्रेरक पर दबाव का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। वायुमण्डल के दबाव पर बहुत कम पेट्रोलियम बनता है। दबाव की वृद्धि से पेट्रोलियम की मात्रा शीघ्रता से बढ़ती जाती है, इसमें ६० प्रतिशत द्रव और २५ प्रतिशत ठोस और गैसीय हाइड्रोकार्बन बनते हैं। रूथेनियम सरलता से प्राप्त नहीं होता। प्रचुर मात्रा में यह प्राप्य नहीं है। कोबाल्ट-उत्प्रेरक से भी निम्नताप पर मोम कम खर्च में प्राप्त हो सकता है।

चौबीसवाँ अध्याय

प्रतिक्रिया-फल

हाइड्रोजन और कार्बन-मनॉक्साइड-मिश्रण के संश्लेषण से विभिन्न उत्प्रेरकों, विभिन्न तापों और विभिन्न दबावों से नाना प्रकार के पदार्थ बनते हैं, जिनमें वसा-हाइड्रोकार्बन, अल्कोहल, अम्ल, कीटोन, एस्टर, ईथर, विभिन्न ऋजु-शृंखला, पार्श्व-शृंखला, अशाख-शृंखला और सौरभिक यौगिक प्रमुख हैं। साधारणतया यह प्रतिक्रिया या तो पेट्रोलियम-निर्माण के लिए या पेट्रोलियम और रासायनिक द्रव्यों के निर्माण के लिए या केवल रासायनिक द्रव्यों के निर्माण के लिए सम्पादित की जाती है। इनमें कुछ ईंधन-तेल, कुछ स्नेहन-तेल और कुछ मोम भी बनते हैं।

प्राथमिक प्रतिक्रिया-फल

सामान्य दबाव पर प्रधानतया ऋजु-शृंखला पैराफिन और एक-ओलिफिनीय हाइड्रोकार्बन प्राप्त होते हैं। बड़ी अल्प मात्रा में नैफ्थीन और सौरभिक प्राप्त होते हैं। परिस्थिति के अनुसार आक्सिजन-यौगिक शून्य से कुछ प्रतिशत तक बनते हैं।

कोबाल्ट-उत्प्रेरक द्वारा मिथेन से लेकर कठोर मोम तक प्राप्त होते हैं। कठोर मोम के अणुभार लगभग २००० तक हो सकते हैं। रुथेनियम से २३०० अणुभार तक के यौगिक प्राप्त हुए हैं।

इस प्रतिक्रिया में १० से १२ प्रतिशत तक मिथेन रहता है। सामान्य दबाव पर १४ या १५ प्रतिशत और मध्यम दबाव पर इससे कम रहता है। प्रारम्भ में यदि हाइड्रोजन की मात्रा कम हो, तो मिथेन की मात्रा और कम हो सकती है। पीछे हाइड्रोजन की मात्रा बढ़ाने से भी मिथेन की मात्रा उतनी नहीं बढ़ती। इस प्रकार मिथेन की मात्रा १० प्रतिशत तक की जा सकती है। ऐसे उत्पादों में अच्छा स्नेहक नहीं पाया जाता।

वायुमण्डल के दबाव पर जो द्रव-पेट्रोलियम प्राप्त होता है, उसकी मात्रा प्रायः १३ प्रतिशत रहती है। ऐसे पेट्रोलियम में पेट्रोल ५२ प्रतिशत, डीजेल-तेल २६ प्रतिशत और मोम ३ प्रतिशत रहते हैं। मध्यम दबाव पर जो पेट्रोलियम प्राप्त होता है, उसकी मात्रा लगभग ७ प्रतिशत, जिसमें पेट्रोल ३८ प्रतिशत, डीजेल-तेल ३० प्रतिशत और मोम २५ प्रतिशत, रहती हैं। मध्यम दबाव—प्रतिवर्ग इंच पर लगभग १५० पाउण्ड—पर मोम की मात्रा अधिक रहती है।

पेट्रोलियम में ओलिफिन की मात्रा बढ़ाने की चेष्टाएँ हुई हैं। इससे दो लाभ होते हैं। एक तो पेट्रोल की ऑक्टेन-संख्या इससे बढ़ जाती है। दूसरे ऐसे ओलिफिन से आक्सिजन यौगिक, अल्कोहल इत्यादि, बना सकते हैं।

लोह-उत्प्रेरक के सहयोग से २० प्रतिशत मिथेन और कुछ ईथेन, २४ प्रतिशत दो से चार कार्बनवाले हाइड्रोकार्बन, ३८·५ प्रतिशत पेट्रोल, ११ प्रतिशत गैस-तेल, १ प्रतिशत मोम और ५·५ प्रतिशत अलकोहल प्राप्त होते हैं। दो से चार कार्बनवाले हाइड्रोकार्बनों में ८ प्रतिशत एथिलीन, ३ प्रतिशत प्रोपेन, ६ प्रतिशत प्रोपिलीन, २ प्रतिशत ब्युटेन और ८ प्रतिशत ब्युटिलीन रहते हैं, चार कार्बनवाले हाइड्रोकार्बनों में ७५ प्रतिशत आइसो-ब्युटेन और आइसो-ब्युटिलीन रहते हैं।

एक क्रम में वायुमण्डल के दबाव पर निम्नलिखित प्रतिक्रिया-फल प्राप्त होते हैं—

प्रतिक्रिया-फल	समस्त भार प्रतिशत	ओलिफिन आयतन प्रतिशत
३ से ४ कार्बन अंश	८	५५
५ कार्बन (३००° फ०), अंश	४६	४५
३००—३६०° फ० अंश	१४	२५
३६०—६००° फ० अंश	२२	१०
तेल में मोम	७	गलनांक १२०° फ०

दो क्रमों में विश्लेषण से प्रतिक्रिया-फल

	क्थनांक °फ०	विशिष्ट भार	भार में प्रतिशत पहला क्रम	भार में प्रतिशत दूसरा क्रम	आयतन में प्रतिशत पहला क्रम	आयतन में प्रतिशत दूसरा क्रम
३ से कार्बन अंश	—	—	५	२	५०	२५-३०
५ कार्बन अंश (३०० °फ०)	८५-३०	०·६६	२६·५	८	३५·४०	२०
३००-५७५°फ० अंश	३००-५७५	०·७४	२६·५	११	१२	१२
मोम	—	०·८५	—	२१	—	—

तीन क्रमों में विश्लेषण से प्रतिक्रियाफल

	भार में प्रतिशत	आयतन में प्रतिशत
३ से ४ कार्बनवाले अंश	१०	४०
५ कार्बन अंश (३४०° फ०)	२५	२४
३४०-५३५° फ० अंश	३०	६
५३५-६४०° फ० अंश	२०	कोमल मोम
कठोर मोम	१५	गलनांक प्रायः १६५°फ०

प्रतिक्रिया-फल का पृथक्करण

प्रतिक्रिया-फल के संघनन से भारी उत्पाद संघनित हो जाते हैं। हल्के उत्पादों को अवशोषण अथवा अधिशोषण द्वारा प्राप्त करते हैं। भारी उत्पाद को उद्भावन-मीनार में जल के संस्पर्श से संघनित कर गैसीय हाइड्रोकार्बनों और हल्के पेट्रोल को सक्रियित कोयले द्वारा अधिशोषित कर लेते हैं। हर कारखाने में ७ ऐसे मीनार रहते हैं। इनमें दो मीनार अधिशोषण के लिए, एक मीनार भाप के लिए, दो मीनार सुखाने के लिए और दो मीनार ठंडा करने के लिए होते हैं। इनमें अधिशोषण-मीनारों में ४० मिनट, भाप मीनार में २० मिनट, शोषण-मीनारों में ४० मिनट और शीतक-मीनारों में ४० मिनट समय लगता है।

मध्यम दबाव प्रतिक्रिया-फल को तेल में अवशोषित कर लेते हैं। इससे छोटे-छोटे हाइड्रोकार्बन पूर्ण रूप से अवशोषित नहीं होते। इससे सक्रियित कार्बन कहीं अच्छा होता है। कार्बन-डायक्साइड को अल्केजिड रीति से क्षारीय कार्बनिक यौगिकों के द्वारा निकाल लेते हैं।

पेट्रोल

सामान्य संश्लेषण से जो पेट्रोल प्राप्त होता है, उसमें ऋजु-श्रृंखला पैराफिन के रहने से उसकी ऑक्टेन-संख्या नीची होती है। फिशर-रीति से सामान्य दबाव पर प्राप्त पेट्रोल की ऑक्टेन-संख्या भी केवल ५५ रहती है। इसमें ०·५ सी० सी० लेड टेट्राएथिल डालने से ऑक्टेन-संख्या ७२ पहुँच जाती है। दो क्रमों से प्राप्त ८५—२८५° फ० क्वथनांकवाले पेट्रोल को ऑक्टेन-संख्या ६२ रहती है। ऐसा पेट्रोल बहुत वाष्पशील होता है। उच्च क्वथनांकवाले अंश को तापीय भंजन से पेट्रोल में परिणत कर सकते हैं। ऐसे पेट्रोल को हल्के पेट्रोल के साथ मिलाकर इस्तेमाल करते हैं। यहाँ एक ऐसा यंत्र का चित्र दिया हुआ है जो भंजन के विभिन्न अंशों के इकट्ठा करने के लिए इस्तेमाल होता है।
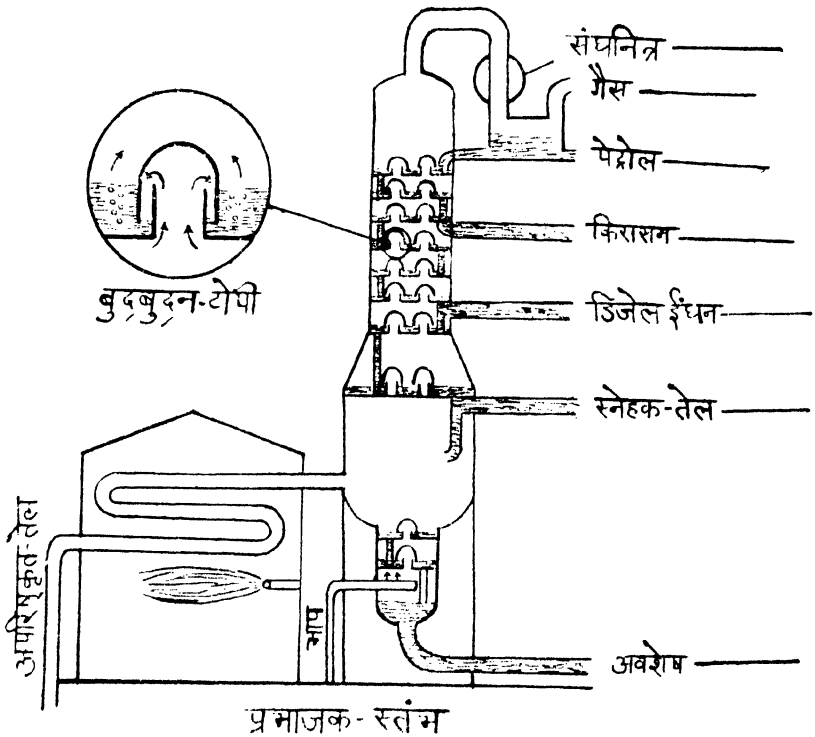
चित्र २५—यहाँ भंजित किये तेल के विभिन्न प्रभाजकों के अलग-अलग करने का प्रभाजक स्तम्भ बना हुआ है। भिन्न-भिन्न अंश कैसे अलग अलग इकट्ठे होते हैं, वह इस चित्र से स्पष्ट हो जाता है।

संश्लिष्ट पेट्रोलियम के ११२° फ० और ७०२° फ० के बीच आसवन से ऐसा पेट्रोल प्राप्त हुआ था, जिसकी ऑक्टेन-संख्या ६६ थी। यहाँ अवशिष्ट अंश और नैफथा का भंजन

और भंजित गैसों का पुरुभाजन भी हुआ था। विना भंजन के भी केवल पेट्रोल के भंजन ताप के नीचे ताप पर, उत्प्रेरक पर प्रवाहित करने से ऑक्टेन-संख्या ८ से २४ तक बढ़ जाती है। ऐसा समझा जाता है कि पुरुभाजन के कारण ऐसा होता है। ओलिफिन में द्विबन्ध का स्थान बदलने, अन्त से बीच में आ जाने से, प्रति-आघात का गुण बढ़ जाता है। जिस पेट्रोल की ऑक्टेन-संख्या ४४ थी और जिसमें ३५ प्रतिशत ओलिफिन था उसकी ऑक्टेन-संख्या इससे बढ़कर ५२ हो गई थी। एक दूसरे नमूने में जिसकी ऑक्टेन-संख्या ४१ थी और जिसमें ५५ प्रतिशत ओलिफिन था, उसकी ऑक्टेन-संख्या ६७ हो गई।

भारी तेल के विद्युत् द्वारा गरम किए हुए प्लैटिनम तार की कुण्डली में निम्न ताप पर ही ले जाने से ५० प्रतिशत से अधिक तेल का भंजन हो जाता है और भंजित उत्पाद में ६० प्रतिशत असंतृप्त हाइड्रोकार्बन प्राप्त होता है। अलूमिनियम क्लोराइड की उपस्थिति में भी ऐसे पेट्रोल का भंजन हुआ है। इसके लिए १० से २० प्रतिशत अलूमिनियम क्लोराइड उपयुक्त हुआ है। १५ प्रतिशत अलूमिनियम क्लोराइड से पेट्रोल की सबसे अधिक मात्रा प्राप्त हुई है। ऐसे पेट्रोल में आइसो-पैराफिन की मात्रा महत्तम होती है और उसकी ऑक्टेन-संख्या ऊँची होती है।

३६०°फ० से ऊपर ताप पर उबलनेवाले अंश के बार-बार भंजन से पेट्रोल की मात्रा लगभग ३८ प्रतिशत और गैस की मात्रा प्रति पाउण्ड ६·४ घनफुट प्राप्त हुई थी। ऐसे पेट्रोल में ८० से ६० प्रतिशत ओलिफिन था और केवल २ प्रतिशत सौरभिक।

यदि केवल ऊष्मा से ही उच्च ताप पर १०४०° से ११७५° फ० पर भंजन किया जाय, तो उससे उत्पाद में ६० प्रतिशत ओलिफिन और ३ प्रतिशत हाइड्रोजन प्राप्त होते हैं। उच्चतर ताप से ओलिफिन की मात्रा बढ़ जाती है। निम्नताप पर ब्युटाडीन की मात्रा कम रहती है, पर ताप की वृद्धि से बढ़ जाती है। पैराफिन गैसों में मिथेन और ईथेन और ओलिफिन गैसों में एथिलीन और प्रोपिलीन और अल्पतर मात्रा में ब्युटिलीन रहते हैं।

यदि भंजन सिलिका-अलूमिना उत्प्रेरक पर ११५०°फ० पर किया जाय, तो गैस की मात्रा बढ़ जाती है और पेट्रोल की प्रकृति में भी परिवर्त्तन होता है। ऐसे पेट्रोल में ओलिफिन की मात्रा कम और सौरभिक और संतृप्त हाइड्रोकार्बनों की मात्रा अधिक रहती है। इससे हाइड्रोजन की मात्रा में भी वृद्धि होती, पैराफिन की मात्रा में कमी होती और ओलिफिन की मात्रा यद्यपि बदलती नहीं, पर प्रकृति बदल जाती है। एथिलीन के स्थान में प्रोपिलीन और ब्युटिलीन की मात्रा बढ़ जाती है।

यदि भंजन अलूमिना-क्रोमियम-कोबाल्ट-आक्साइड अथवा क्रोमियम-कोबाल्ट-आक्साइड उत्प्रेरक के सहयोग से हो, तो उसमें ५० प्रतिशत से अधिक सौरभिक हो जाते, यद्यपि भंजन ५-१० प्रतिशत का ही होता है।

लोह-उत्प्रेरक की उपस्थिति में जो प्रतिक्रिया-फल प्राप्त होता है उसमें ७ प्रतिशत तक अल्कोहल रहता है। ऐसे पेट्रोल की ऑक्टेन-संख्या ६८-७० होती है। यदि इस पेट्रोल को ७५०-८४०°फ० पर अलूमिना पर प्रवाहित करें, जिससे ऑक्सिजन यौगिकों का हाइड्रोजनीकरण हो जाय और उसे फुलर मिट्टी पर ६५५-६६०°फ० पर परिष्कृत करें तो उसकी ऑक्टेन-संख्या ८४ तक बढ़ जाती है। ऐसे पेट्रोल में ७० प्रतिशत ओलिफिन रहता है।

इस पेट्रोल में गन्धक नहीं रहता और डाइओलिफिन भी बहुत अल्पमात्रा में प्रायः शून्य रहता है। ऐसे पेट्रोल से गन्धक निकालने अथवा गोंद बनाने के गुण को कम करने की आवश्यकता नहीं रहती। इसमें केवल क्षार से धोकर कार्बनिक अम्लों के निकालने की आवश्यकता पड़ती है। ऐसे पेट्रोल में गोंद बनने की सम्भावना रहती है, क्योंकि मोनो-ओलिफिन ज्यों-के-त्यों रहते हैं। ऐसे पेट्रोल के १५ मास तक बन्द रखने से ऑक्टेन-संख्या में केवल ३ मात्रक की कमी देखी गई थी। ऐसा कहा जाता है कि अर्थो-क्रिसोल से पैरावसाइड का बनना रुक जाता है। ऐसे पेट्रोल में पैराक्साइड नहीं बनता।

डीज़ेल तेल

संश्लिष्ट पेट्रोलियम से जो डीज़ेल तेल प्राप्त होता है उसकी सीटेन-संख्या ऊँची होती है। कोबाल्ट उत्प्रेरक से ऐसा तेल प्राप्त होता है जिसकी सीटेन-संख्या १०० या १०० से ऊपर होती है। ऐसे आदर्श तेल का क्वथनांक ३६०-६८०° फ०, विशिष्ट भार प्रायः ०·७६६, हाइड्रोजन की मात्रा १५·२ प्रतिशत और दहन-ऊष्मा प्रति पाउण्ड १८,६०० से २०,३०० ब्रिटिश ऊष्मा-मात्रक होती है

गत विश्वयुद्ध के समय में जर्मनी में जो डीज़ेल तेल उपयुक्त हुआ था, उसका क्वथनांक ३१०-४८५° फ०, घनत्व ०·७४३ से ०·७४६, ठोसांक ३६ से० ४२° फ० और ज्वलनांक ८० से १२०° फ० था। ऐसे तेल की सीटेन-संख्या ७५-७८ थी। आज कल ऐसा तेल डीज़ेल इंजन के लिए उपयुक्त नहीं समझा जाता।

संश्लिष्ट पेट्रोलियम से प्राप्त डीज़ेल की सीटेन-संख्या ऊँची होने पर भी डीज़ेल इंजन के लिए वह सन्तोषप्रद नहीं समझा जाता। उसे पेट्रोलियम तेल अथवा कोयला आसवन से प्राप्त तेल के साथ मिलाकर अच्छी कोटि का बनाया जाता है।

इस सम्बन्ध में कुछ प्रयोग निम्नताप पर उबलनेवाले तेल से हुए हैं। ऐसे तेल की सीटेन-संख्या ४० से ६० थी। पैराफिनीय और ऊँची सीटेन-संख्यावाले तेल से काले धुएँ अधिक मात्रा में बने थे। इससे दबाव-वृद्धि का वेग नीचा था और दहन के समय सिलिंडर दबाव कम था। ऐसा समझा जाता है कि पैराफिनीय हाइड्रोकार्बनों के अग्न्यंशन से अधिक कार्बन बनता है, जो धुएँ में निकलकर धुएँ को काला बना देता है।

संश्लिष्ट पेट्रोल को प्राकृतिक पेट्रोल या कोयले आसवन अंश के साथ मिलाकर संमिश्रण बनाने से अच्छा होता है। ऐसे संमिश्रण में गोंद बनानेवाला ऍस्फाल्ट रहने से इंजन में अवरोध हो जाता है। इस कारण गोंद बननेवाले अंश को निकाल डालना बहुत आवश्यक है। यह सल्फर डायक्साइड के द्वारा होता है। इसमें खर्च कम पड़ता है। वही सल्फर डायक्साइड बार-बार इस्तेमाल हो सकता है। इसी प्रकार के कुछ अन्य संमिश्रण भी बने हैं, जिनके उत्कृष्ट कोटि के होने का दावा किया गया है। ऐसा संमिश्रण जल्दी जल उठता, कम कार्बन बनता और पूर्ण रूप से जल जाता है।

मोम

डीज़ेल तेल के निकालने पर जो बच जाता है, उसमें मोम रहता है। ऐसे मोम के अणुभार और गलनांक भिन्न-भिन्न होते हैं। मोम कोमल से लेकर कठोर तक होता है। मोम की मात्रा किस परिस्थिति में और किस उत्प्रेरक के सहयोग से पेट्रोलियम प्राप्त हुआ है,

उसपर निर्भर करती है। अधिक दबाव से मोम की मात्रा अधिक बनती है। रूथेनियम उत्प्रेरक से भी मोम की मात्रा अधिक बनती है।

इस प्रकार से प्राप्त मोम में नार्मल और आइसो-पैराफिन रहते हैं। ऐसे मोम का गलनांक १२०-२४०° फ० रहता है। इनके अणुभार २००० तक होते हैं। भिन्न-भिन्न उत्प्रेरकों के सहयोग से भिन्न-भिन्न मात्रा में और भिन्न-भिन्न गलनांक के मोम प्राप्त होते हैं। किसी विलायक से मोम को निकालकर उसकी मात्रा निर्धारित कर सकते हैं।

मोम के आंशिक आसवन से इन्हें कोमल मोम और कठोर मोम में पृथक् कर सकते हैं। कोमल मोम का गलनांक ८४-६४° फ० और कठोर मोम का लगभग १६४° फ० होता है।

मोम को निकालने के लिए ऐसिटोन और पेट्रोल अच्छे विलायक समझे जाते हैं। कोमल मोम को वसा-अम्लों में भी परिणत कर सकते हैं। इन वसा-अम्लों को फिर साबुन बनाने अथवा खाने के लिए चर्बी में परिणत कर सकते हैं। इनसे स्नेहन-तेल भी बन सकता है। कठोर मोम के वैद्युत-गुण उच्च कोटि के होते हैं। इसके भंजन से पेट्रोल प्राप्त हो सकता है।

स्नेहक

कार्बन-मनॉक्साइड और हाइड्रोजन के सीधे संश्लेषण से स्नेहक नहीं प्राप्त होता। स्नेहक प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित किसी प्रतिक्रिया का सम्पादन आवश्यक है।

(१) निम्नतर ओलिफिन का पुरुभाजन।

(२) बड़ी-बड़ी शृंखलावाले ओलिफिन से सौरभिक का अलकलीकरण।

(३) मोम अथवा भारी तेल का क्लोरीकरण और बाद में संघनन या अलकलीकरण।

(४) भारी तेल का निःशब्द विद्युत्-विसर्जन।

जो उत्पाद ४२७ और ६०७° फ० पर उबलता है अथवा जो मोम ८६° फ० के नीचे पिघलता है, उसके भंजन से अच्छा स्नेहक प्राप्त होने का वर्णन हुआ है। ऐसे उत्पाद को भंजन से पहले छान लेते हैं, ताकि उससे कोबाल्ट उत्प्रेरक पूर्णतया निकल जाय, नहीं तो उसके रहने से अनावश्यक प्रतिक्रियाएँ होकर अनावश्यक पदार्थ बनते हैं। एक अच्छा स्नेहक भाप की उपस्थिति में ६३०° फ० पर भंजन से बना हुआ बताया गया है। ऐसे स्नेहन-तेल का ५५ प्रतिशत प्राप्त हुआ था। उसकी श्यानता लगभग ३२५ सेबोल्ट सेकंड १२२° फ० ताप पर थी। एक दूसरा स्नेहक क्लोरीकरण से प्राप्त हुआ बताया जाता है। मध्य तेल, जिसका क्वथनांक लगभग ४८२-६६२° फ० था, में १७६-२१२° फ० पर क्लोरीन के प्रवाह से २०-२५ प्रतिशत भार में वृद्धि हुई। इसे फिर नैफ्थीन के साथ पाँच से दो आयतन अनुपात में १५८-२१२° फ० पर उपचार से संश्लिष्ट नैफ्था अंश के ८ आयतन की जो उपस्थिति थी और अलूमिनियम धातु या अलूमिनियम क्लोराइड के उत्प्रेरक से जो उत्पाद प्राप्त हुआ था उसके पृथक्करण, निराकरण, निःस्यन्दन और नैफ्था के निकाल लेने पर शून्यक में आसवन से जो अंश पहले प्राप्त हुआ था, वह टरबाइन तेल था और जो रह गया, वह सिलिण्डर तेल था।

फ्रांस में एक कारखाने में प्रतिदिन २५ टन स्नेहक बन रहा है। उसके तैयार करने की रीति इस प्रकार की है।

१. पैराफिन गैस-तेल का पहले क्लोरीकरण होता है।

२. १४८° फ० पर डाइक्लोरो-ईथेन को बेंजीन के साथ अलूमिनियम क्लोराइड की उपस्थिति में मिला देते हैं।

३. २३०° फ० पर क्रिया को समाप्त करते हैं।

चित्र २६—ये बड़े-बड़े परिवर्त्तक हैं, जिनमें कोयले का हाइड्रोजनीकरण होता है। ये बड़े-बड़े पात्र बहुत उच्च दबाव पर कार्य करते हैं। इन्हीं पात्रों में कोयले और हाइड्रोजन के बीच प्रतिक्रिया होकर पेट्रोलियम बनता है। आसवन से पेट्रोलियम को विभिन्न अंशों में अलग-अलग कर इकट्ठा करते हैं।

एक टन स्नेहक की प्राप्ति के लिए ६०० किलोग्राम पैराफिन तेल, ६०० किलोग्राम बेंज़ीन और १०० किलोग्राम डाइक्लोरोईथेन आवश्यक होता है। सारी क्रियाएँ ६ घण्टे में सम्पन्न होती हैं। समस्त भार का १० प्रतिशत अलूमिनियम क्लोराइड लगता है।

अच्छी श्यानता के स्नेहक के लिए ओलिफिन का पुरुभाजन २८४-३८५° फ० पर अलूमिनियम क्लोराइड की उपस्थिति में सम्पन्न किया जाता है। एथिलीन के पुरुभाजन से जर्मनी में स्नेहक तैयार हुआ था। ऐसा एथिलीन उच्च कोटि का शुद्ध होना चाहिए। इसका पुरुभाजन अलूमिनियम की उपस्थिति में लगभग २४०° फ० पर होता है। अलूमिनियम क्लोराइड में ४ प्रतिशत फेरिक क्लोराइड भी मिला रहता है। दबाव ६०-१०० वायुमण्डल रहता है।

इससे ८० प्रतिशत स्नेहक प्राप्त होना बताया जाता है। इसकी श्यानता १२० सेबोल्ट होती है और वह ताप और प्रतिक्रिया-काल पर निर्भर करती है। इस काम के लिए एथिलीन ईथेन के भंजन अथवा एसिटिलीन के हाइड्रोजनीकरण से प्राप्त होता है। इस विधि की सफलता अधिकांश एथिलीन की शुद्धता पर निर्भर करती है।

स्नेहक के हाइड्रोजनीकरण से उच्चतर श्यानता का स्नेहक प्राप्त होता है। मोम से भी स्नेहक प्राप्त होता है। स्नेहक प्राप्त करने के अनेक पेटेण्ट लिये गये हैं।

अन्य प्रतिक्रिया-फल

पेट्रोलियम के संश्लेषण में अनेक रासायनिक द्रव्य भी प्राप्त हो सकते हैं। ऐसे रासायनिक द्रव्यों में निम्नलिखित द्रव्य महत्त्व के हैं—

वसा-अम्ल—पैराफिन मोम के आक्सीकरण से वसा-अम्ल प्राप्त होते हैं। पेट्रोलियम के सामान्य संश्लेषण में भी अल्प मात्रा में वसा-अम्ल बनते हैं। पर मोम के आक्सीकरण से केवल एक-कार्बोक्सिलिक अम्ल की मात्रा बहुत कुछ बढ़ाई जा सकती है। यह क्रिया वसा-अम्लों के मैंगनीज़ लवण की उपस्थिति में सम्पादित होती है। कुछ लोगों ने कोबाल्ट-उत्प्रेरक से भी यह क्रिया सम्पादित की है। जर्मनी में कई कारखाने इसके लिए खुले हैं। एक ऐसे कारखाने में प्रतिवर्ष ४०,००० टन वसा-अम्ल तैयार होता था। मोम के इस प्रकार आक्सीकरण से फौर्मिक अम्ल बनता है जो चारे के संरक्षण में, और जो एसिटिक अम्ल बनता है, वह सेल्युलोस के एस्टरीकरण में, तथा जो प्रोपियोनिक अम्ल बनता है, वह पावरोटी के संरक्षण में उपयुक्त होता है। इससे अलकोहल भी बनते हैं जो थैलिक एहाइड्राइड के साथ मिलकर एल्कीड रेज़िन बनते है। १० से १८ कार्बनवाले अंश साबुन बनाने और खाने की चर्बी बनाने के काम में आते हैं। खाने की चर्बी के लिए ९ से १६ कार्बनवाले अंश अच्छे होते हैं। इन से बहुत हल्के सोडियम हाइड्राक्साइड विलयन द्वारा डाइकार्बोक्सिलिक अम्ल निकाल डाले जाते हैं। १८ से २४ कार्बनवाले अंश का चमड़े मुलायम करने के लिए और प्लास्टिक-ढलाई में स्नेहक के रूप में उपयोग होता है।

खाने की चर्बी—वसा-अम्लों के ग्लीसरिन के सहयोग से जर्मनी में खाने की चर्बी बनती थी। ऐसी चर्बी का कम-से-कम ९० प्रतिशत तक का पाचन हो जाता है। ऐसी चर्बी में सम और विषम कार्बन संख्यावाले दोनों प्रकार के अम्लों के एस्टर रहते हैं। प्राकृतिक चर्बी या घी में केवल विषम संख्यावाले अम्लों के ही एस्टर रहते हैं। एक कारखाने में प्रतिमास १५० टन चर्बी बनती थी, जो गुण में ओलियोमारगैरिन-सी थी।

इसके निर्माण के लिए ८ से २० कार्बनवाले अम्लों में ग्लीसरिन (३ से ४ प्रतिशत आधिक्य में) डालकर ३९२°फ० और २ मिलिमीटर दबाव पर ०·२ प्रतिशत टिन धातु की उपस्थिति में गरम करते हैं, इससे ग्लीसराइड बनता है। उसको अम्ल से धोकर टिन को निकाल लेते हैं, तब उदासीन कर सक्रियित कोयले और विरंजक मिट्टी से उपचारित कर, छान, दबा और भाप से २ मिलिमीटर दबाव पर ३९०° फ० पर गरमकर, २० प्रतिशत जल मिलाकर पायस बनाकर ठंडाकर, और पीसकर विटामिन मिलाकर बेचते हैं।

साबुन—पेट्रोलियम-संश्लेषण से प्राप्त वसा-अम्लों से बड़ी मात्रा में साबुन तैयार हो सकता है। जर्मनी में ऐसा साबुन बड़ी मात्रा में बना था। इस साबुन में कुछ गन्ध रहती है। गन्ध हटाने की चेष्टा निष्फल सिद्ध हुई है। यह गन्ध ब्युटिरिक अम्ल की गन्ध-सी होती है। धोने का साबुन अच्छा होता है। प्रतिक्रिया में बने लम्बे शृंखलावाले अल्कोहल के सल्फोनिक एस्टर अच्छे अपक्षालक (detergent) होते हैं।

स्नेहन-स्नेह—१८ से २४ कार्बनवाले अम्लों से जो सोडियम, लिथियम, कैलसियम, मैगनीसियम और यसद के साबुन बनते हैं, वे स्नेहक के रूप में इस्तेमाल हो सकते हैं।

आक्सिजन यौगिक—सामान्य संश्लेषण में कुछ अल्कोहल बनते हैं। अल्कोहल की मात्रा बहुत कुछ बढ़ाई जा सकती है। इसके लिए ओलिफिन का उपयोग होता है। ओलिफिन के सल्फोनीकरण और पीछे उसके जलीकरण से अल्कोहल बनता है।

अन्य रासायनिक द्रव्य—उपर्युक्त रासायनिक द्रव्यों के अतिरिक्त कुछ और द्रव्यों का भी संश्लेषण हो सकता है। इन द्रव्यों से संश्लिष्ट रबर, प्लास्टिक, मेथिल अल्कोहल, एसिटल्डीहाइड, ऐसिटोन, अन्य कीटोन, एथिल. प्रोपिल. ब्युटिल, एमिल अल्कोहल, ग्लीसरिन, सौरभिक हाइड्रोकार्बन, नैफ्थीन इत्यादि हैं।

पच्चीसवाँ अध्याय

संश्लिष्ट पेट्रोलियम का आर्थिक पहलू

संसार में मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्त्ति के लिए पर्याप्त मात्रा में पेट्रोलियम है। संसार में कितना पेट्रोलियम है और उसकी मात्रा भविष्य में कितनी बढ़ सकती है, वह निम्नलिखित आँकड़ों से स्पष्ट हो जाता है।

स्थान	अनुमानित तेल करोड़ बैरेल में	भविष्य का अनुमान करोड़ बैरेल में
अमेरिका	२१०	५००
कैरिबीयन क्षेत्र	६०	६५०
अवशिष्ट पश्चिमी गोलार्द्ध	५	३००
रूस	६०	१०००
अवशिष्ट यूरोप	८	८०
मध्य पूर्व	२७०	१५००
सुदूर पूर्व	१०	५८०
अवशिष्ट पूर्व गोलार्द्ध	५	२६०
समस्त—	६५८	४६००

यदि पेट्रोलियम को कूपों से निकाल कर विना कर लगाये संसार के सब राष्ट्रों के बीच वितरित किया जाय, तो संश्लिष्ट पेट्रोलियम की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। पर, ऐसा सम्भव नहीं प्रतीत होता। पेट्रोलियम कुछ सीमित देशों में ही पाया गया है। टैंकरों में वह एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाया जाता है। यदि आज युद्ध छिड़ जाय तो टैंकरों का आना-जाना बहुत खतरे में पड़ जायगा और तब सब राष्ट्रों को समान रूप से पेट्रोलियम मिलना बन्द हो जायगा। इस दृष्टि से प्रत्येक राष्ट्र, जिनके पास अपना पेट्रोलियम नहीं है, संश्लेषण रीति से पेट्रोलियम प्राप्त करने की चेष्टा करते हैं। ऐसी चेष्टाओं के फल-स्वरूप ही संश्लिष्ट पेट्रोलियम का आविष्कार हुआ है। जिन राष्ट्रों के पास पेट्रोलियम है, वे भी संश्लिष्ट पेट्रोलियम के प्राप्त करने में लगे हुए हैं।

प्राकृतिक पेट्रोलियम पर्याप्त सस्ता होता है, पर राज्य-कर, उत्पादन-कर और अन्य करों एवं वहन इत्यादि के कारण इसका मूल्य बढ़ जाता है। निम्नलिति दरें पाँच वर्ष पहले की हैं। इधर दरों में बहुत कुछ वृद्धि हुई है।

मध्य पूर्व के पेट्रोलियम की दर

	प्रति बैरेल
उत्पादन-मूल्य	८ आना
राज्य-कर	१ रुपया
वहन-मूल्य	३ रुपया
जहाज पर चढ़ाने का मूल्य	१ आना
मार्ग-शुल्क	८ आना
परिष्कार-खर्च	१ रुपया
समस्त खर्च	६ रु० १ आ०

अमेरिकी पेट्रोलियम की दर

उत्पादन-मूल्य	८ आना
संग्रह-मूल्य	१ आना
पीपे का मूल्य	२ आना
जहाज पर चढ़ाने का मूल्य	१ आना
टैंकर का महसूल	४ रुपया
	४ रु० १२ आ०

कोयले से प्राप्त संश्लिष्ट पेट्रोलियम

सब स्थानों का कोयला एक-सा नहीं होता। खानों से कोयला निकालने का मूल्य भी भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न होता है। कोयला अनेक देशों में प्रचुरता से पाया जाता है। अमेरिका, इंगलैण्ड, जर्मनी, भारत सब देशों में पर्याप्त कोयला है। कोयले का ३० प्रतिशत भाग निकालने में नष्ट हो जाता है। केवल ७० प्रतिशत भाग बच जाता है, जो पेट्रोलियम के निर्माण में उपयुक्त हो सकता है। साधारणतया ०'७ टन बिटुमिन कोयले से जो कोक प्राप्त होता है, उससे एक बैरेल पेट्रोल प्राप्त करने में शक्ति, भाप इत्यादि खर्च होते हैं, इस प्रकार एक टन बिटुमिन कोयले के कोक से लगभग १'४३ बैरेल पेट्रोल प्राप्त होता है। बिटुमिन कोयले के गैसीकरण से प्रति टन कोयले से २'३ बैरेल पेट्रोल प्राप्त होता है।

यदि कोयले से पेट्रोलियम प्राप्त किया जाय तो खान से कोयला निकालने के लिए श्रमिकों की आवश्यकता पड़ेगी। एक मनुष्य प्रायः पाँच टन कोयला प्रतिदिन निकाल सकता है। यह औसत परिमाण है। कुछ खानों में इससे बहुत अधिक कोयला निकल सकता है। एक लाख बैरेल पेट्रोल के दैनिक उत्पादन के लिए ४३५००-७०,००० टन बिटुमिन कोयला लगेगा। इतना कोयला निकालने के लिए ८००० से १४००० मनुष्यों की आवश्यकता पड़ेगी। औसत ११००० मनुष्य रखा जा सकता है। इतने कोयले को गैस में परिणत करने और गैस को १ लाख बैरेल पेट्रोलियम में परिणत करने के लिए और ५००० मनुष्यों की आवश्यकता पड़ेगी। इस प्रकार १ लाख बैरेल पेट्रोलियम के उत्पादन में १६,००० मनुष्यों की आवश्यकता पड़ेगी। सम्भवतः श्रमिकों की यह संख्या बहुत बड़ी है। इससे कम मनुष्यों

से भी काम चल सकता है। यदि हम तैल-कूपों से पेट्रोलियम निकालकर उससे पेट्रोल प्राप्त करने में श्रमिकों की संख्या निकालें, तो पता लगेगा कि एक लाख बैरेल पेट्रोल के उत्पादन के लिए लगभग १८,००० मनुष्यों की आवश्यकता पड़ती है। इससे मालूम होता है कि कोयले से पेट्रोल बनाने में लगभग उतने ही मनुष्यों की आवश्यकता होगी, जितने मनुष्यों की कूपों से पेट्रोलियम प्राप्त करने में और परिष्कार में होती है।
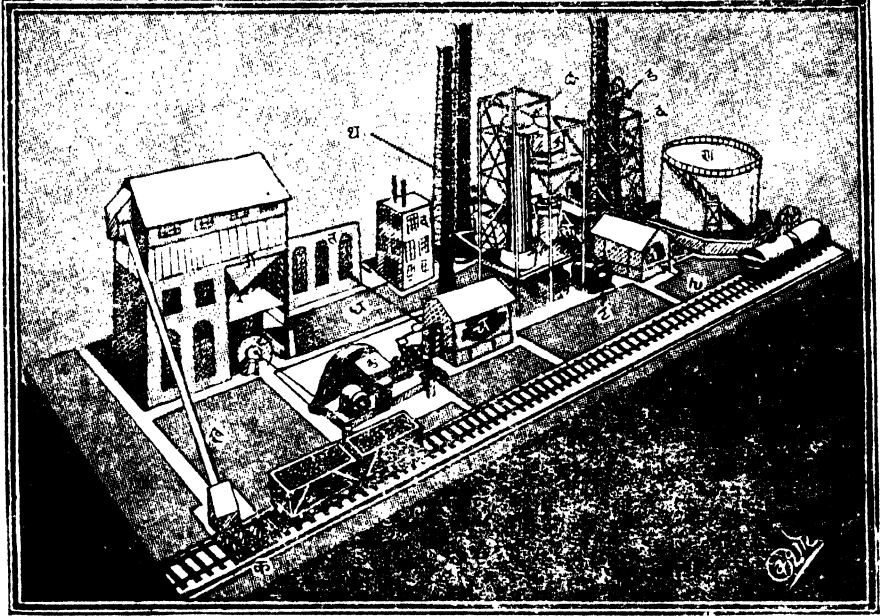
चित्र २७—बहुत थोड़े स्थान में कोयले से पेट्रोलियम तैयार करने के कारखाने के विभिन्न अङ्गों को इस चित्र में दिखलाया गया है। वास्तविक कारखाना बहुत अधिक स्थान में फैला हुआ रहता है। इस चित्र में 'क' वह अधोवाप (hoper) है, जिसमें कोयला डाला जाता है। वह कोयला परिवाहक (conveyer) 'ख' द्वारा कोष्ठ (bunker) 'ग' में जाता है। कोष्ठ से कोयला पेषणी-चक्की 'घ' में पीसा जाता है। पीसा हुआ कोयला भारी तेल के साथ मिलाया जाता है। फिर वह सूच्याविधक (injector) 'ङ' द्वारा परिवर्त्तक निकाय (converter system) में प्रविष्ट करता है। वहाँ 'च' में उसका पूर्व-तापन होता है, 'त' में हाइड्रोजनीकरण होता है। 'छ' में संघनित होता, 'ज' में ठंडा होता और 'झ' में पृथक् होता है। तेल 'झ' के नीचे इकट्ठा होकर 'ट' पम्प द्वारा पम्प होकर आसवन-पात्र में जाता है। वहाँ से 'ड' में प्रभाजित होता है। पेट्रोल 'द' से आसुत हो जाता और 'ण' टंकी में इकट्ठा होता है। भारी अंश कोयले के साथ मिलाने के लिए 'ध' में ले लिया जाता है।

यदि कोयला न निकालकर खानों में ही कोयले का गैसीकरण हो, तो मनुष्यों की संख्या बहुत कुछ कम हो सकती है और उससे पेट्रोल-उत्पादन का मूल्य कम हो सकता है।

रसेल का अनुमान है कि प्रति गैलन पेट्रोल का मूल्य प्रायः एक रुपया होगा। कुछ लोगों का अनुमान है कि प्रति गैलन पेट्रोल का मूल्य १ रुपया ४ आ० और कुछ लोगों का अनुमान है कि १४ आना होगा। स्टैंडर्ड आयल डेवेलोपमेण्ट कम्पनी के मरफ़ी (Murphree)

का मत है कि भविष्य में यह सम्भव है कि कोयले से प्रस्तुत पेट्रोलियम का मूल्य प्रति गैलन ५-६ आना तक गिर सके। उनकी गणना इस प्रकार है—एक संयन्त्र में प्रतिदिन लगभग ६,००० बैरेल पेट्रोल के साथ-साथ १८०० बैरेल गैस-तेल बन सकता है। यदि द्रव-उत्प्रेरक उपयुक्त हो, तो ऐसे संयन्त्र का मूल्य करीब २० करोड़ रुपया होगा। पेट्रोल और गैस-तेल के अतिरिक्त इस संयन्त्र में प्रतिदिन ४ करोड़ घनफुट गैस भी बनेगी, जिसका ब्रिटिश-ऊष्मा-मात्रक १००० के लगभग होगा। यदि इस गैस के १००० घनफुट का मूल्य सवा रुपया रखा जाय और इसके गैस-तेल का मूल्य निकाल दिया जाय, और यदि कोयले के प्रति टन का मूल्य १२ रु० रखा जाय, तो प्रति गैलन पेट्रोल का मूल्य करीब ६ आना होता है। यह प्राकृतिक पेट्रोल के मूल्य से बहुत अधिक नहीं है। केवल यहाँ अधिक मूलधन की आवश्यकता पड़ती है। इस मूलधन पर पेट्रोल के मूल्य का निर्धारण नहीं हुआ है, इस संयन्त्र में कुछ अल्कोहल, कीटोन और अन्य कार्बनिक द्रव्य भी बनते हैं, जिनसे भी कुछ धन प्राप्त हो सकता है।

रसेल (Russell) का अनुमान है कि कोयले से १ लाख बैरेल पेट्रोल तैयार करने के लिए लगभग ३५० करोड़ रुपये का मूलधन आवश्यक है। ऐसे कारखाने के लिए, जिसमें प्रतिदिन १ लाख बैरेल पेट्रोल तैयार होता है, ६ लाख से १२ लाख टन इस्पात की आवश्यकता पड़ेगी। इस्पात की यह मात्रा उतनी ही है, जितनी प्राकृतिक पेट्रोल के प्राप्त करने में लगती है।

प्राकृतिक गैस से पेट्रोल

प्राकृतिक गैस पर्याप्त मात्रा में उत्पन्न होती है। प्रायः सभी तेल-कूपों से यह निकलती है और पेट्रोल के निर्माण में उपयुक्त हो सकती है। कृत्रिम रीति से भी यह गैस प्राप्त हो सकती है। कोयले से प्रायः उसी प्रकार की गैस प्राप्त हो सकती है, जैसी गैस तेल-कूपों से निकलती है। एक टन कोयले से उच्च ब्रिटिश ऊष्मा-मात्रक की २०,००० घन-फुट गैस प्राप्त हो सकती है। ऐसी १००० घन-फुट गैस का मूल्य प्रायः एक रुपया से कुछ कम होगा। इसे इधर-उधर ले जाने में कुछ खर्च पड़ेगा और तब उसका मूल्य सवा रुपया तक पहुँच सकता है।

प्रति ११,००० घनफुट प्राकृतिक गैस से एक बैरेल पेट्रोल प्राप्त हो सकता है। यदि संयन्त्र उत्कृष्ट कोटि का हो, तो उससे कम गैस से भी एक बैरेल पेट्रोल प्राप्त हो सकता है। ऐसे पेट्रोल की प्राप्ति में कार्यकर्त्ताओं की संख्या कम लगेगी। गैस का एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाना खर्चीला होता है। इसे ले जाने के लिए नल आवश्यक है। टैंकर से गैस नहीं ले जाई जा सकती। यह सम्भव है कि गैस के उपयोग से उसका मूल्य बढ़ जाय। गणना से पता लगता है कि साधारणतया प्रति बैरेल ६ से ७ रुपया खर्च पड़ेगा। ऐसे कारखाने खोलने में, जिसमें प्रतिदिन ५,८०० बैरेल पेट्रोल बने, १२०० बैरेल डीज़ल तेल बने और १५०,००० पाउण्ड कच्चा अल्कोहल बने, करीब ७ करोड़ मूलधन की आवश्यकता पड़ेगी। ऐसे कारखाने में प्रतिदिन एक लाख बैरेल पेट्रोल के उत्पादन में २८०,००० से ६५,००० टन इस्पात की आवश्यकता होगी। इससे पता लगता है कि ऐसे कारखाने जल्द नहीं तैयार हो सकते।

अमेरिका में संश्लिष्ट पेट्रोलियम के निर्माण के अनेक कारखाने खुल रहे हैं। एक कारखाना टेक्सास् के ब्राउन्सविले स्थान में 'कारथेज हाइड्रोकोल' के नाम से खुल रहा है। इस कारखाने का मूलधन लगभग साढ़े सात करोड़ होगा। इसमें ८ कम्पनियों ने धन लगाया है और करीब ४५ लाख रुपये का कर्ज भी लिया है। इस कारखाने में प्रतिदिन ५८०० बैरल पेट्रोल बनेगा, जिसकी औक्टेन-संख्या प्रायः ८० होगी। इसमें डीज़ल तेल और अल्कोहल भी प्राप्त होगा। इससे अन्य कुछ आक्सिजन के भी यौगिक बनेंगे। प्रतिदिन इसमें ६४,०००,००० घनफुट प्राकृतिक गैस खर्च होगी।

स्टैण्डर्ड आयल और गैस कम्पनी भी हुगोटोन-क्षेत्र में एक कारखाना खोल रही है, जिसमें १००,०००,००० घनफुट गैस खर्च होगी और उससे प्रतिदिन ६००० बैरेल पेट्रोल प्राप्त होगा।

इनके अतिरिक्त अन्य कई कम्पनियाँ भी संश्लिष्ट पेट्रोलियम तैयार करने के प्रयत्न में लगी हुई हैं। भारत में भी संश्लिष्ट पेट्रोलियम तैयार करने की चेष्टाएँ हो रही हैं। देखें, कबतक यह प्रयास सफल होता है।

परिशिष्ट 'क'

१

डिगबोई की परिष्करणी

सातवें अध्याय, पृष्ठ ४०-४१, में कहा गया है कि डिगबोई में पेट्रोलियम के परिष्कार का एक कारखाना है। इस कारखाने के समीप एक नया नगर बस गया है, जिसमें कारखाने में काम करनेवाले व्यक्तियों, बड़े-बड़े इंजीनियरों, भूविज्ञान-वेत्ताओं से लेकर सामान्य श्रमिकों
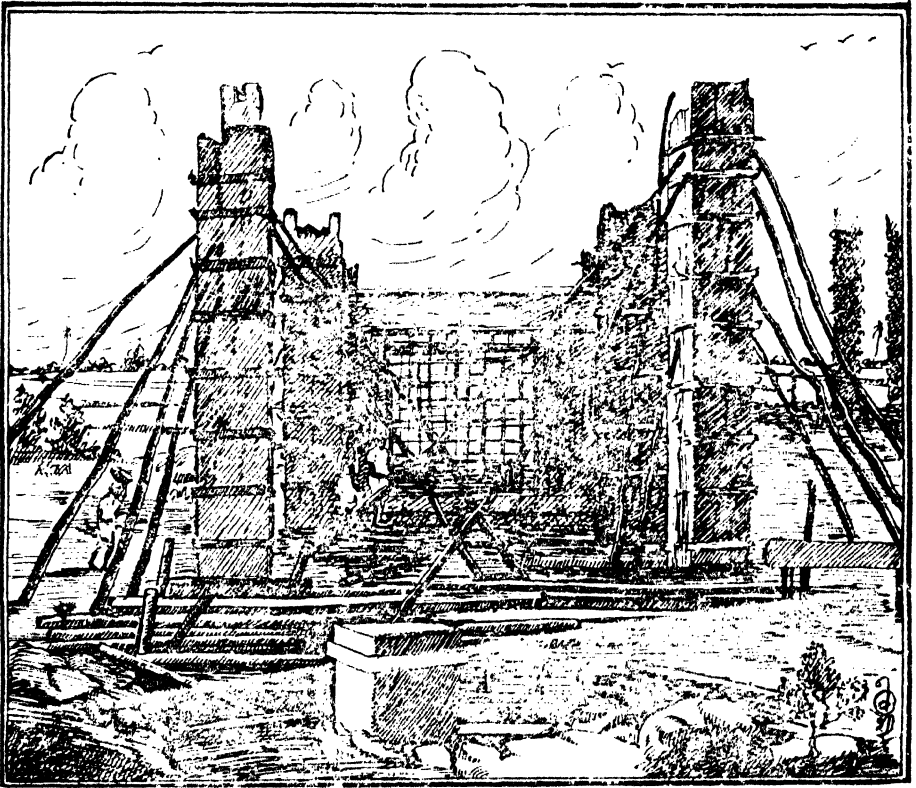
चित्र २८--डिगबोई परिष्करणी का दृश्य

तक के रहने के लिए निवास-स्थान, खेल-कूद के लिए मैदान, रोगियों के लिए अस्पताल, दैनिक आवश्यक वस्तुओं के लिए बाजार, बालकों की शिक्षा के लिए स्कूल और मनोरंजन के

लिए मनोरंजन-स्थान, सिनेमा-घर इत्यादि बने हुए हैं। परिष्करणी के सम्बन्ध में कहा जाता है कि यह आधुनिक यन्त्रों से सुसज्जित एक बड़ा तेल-शोधक कारखाना है, जहाँ कच्चे पेट्रोलियम को कूपों से निकालकर उनको विभिन्न अंशों में पृथक् करके उनकी सफाई होती है और ऐसा साफ अंश विभिन्न कामों में उपयुक्त होने के लिए बाजारों में भेजा जाता है। इस परिष्करणी के बाहर के दृश्य का आभास पृष्ठ २६० पर दिये गये चित्र से मिलता है।

अन्य दो परिष्करणियाँ

एक दूसरी तेल साफ करने की परिष्करणी भी इसी तरफ खुलनेवाली है। भारत-सरकार ने निश्चय किया था कि यह परिष्करणी उत्तर बिहार के बरौनी-नामक स्थान पर खुलेगी। बरौनी मुंगेर जिले में गंगा के उत्तर में उत्तर-पूर्वी रेलवे का एक प्रमुख जंक्शन है। मोकामा-घाट पर गंगा का जो पुल बन रहा है, उस पुल के बन जाने से बरौनी का सीधा सम्बन्ध पूर्वी रेलवे के साथ कलकत्ता, पटना आदि स्थानों से हो जायगा। बरौनी तक ब्रौडगेज लाइन जायगी, जिस लाइन पर पूर्वी रेलवे की गाड़ियाँ आज चल रही हैं। अतः बरौनी से रेलों पर पेट्रोल लादकर भारत के किसी स्थान पर सीधे भेजा जा सकता है। इन सुविधाओं के कारण ही भारत-सरकार ने कारखाने के लिए इस स्थान को चुना था। पर आसामवासी चाहते हैं कि यह कारखाना आसाम में ही खुले। इसके लिए आसामियों ने बड़ा तीव्र आन्दोलन शुरू किया। हड़तालें हुईं। भारत-सरकार के पास डेपुटेशन गया। उसके फलस्वरूप भारत-सरकार ने अभी निश्चय किया है कि दो स्थानों में तेल-सफाई का कारखाना खुलेगा।

भारत-सरकार और बर्मा आयल कम्पनी के बीच कारखाना खोलने के सम्बन्ध में दो वर्षों से अधिक समय से वार्त्ता चल रही थी। सन् १६५७ ई० के दिसम्बर मास में जो घोषणा लोक-सभा में हुई है, उससे पता लगता है कि कारखाना खोलने के सम्बन्ध में दोनों के बीच संविदा हो गई है। आसाम के नाहोरकटिया, हुग्रीजन और मोरान क्षेत्रों से जो कच्चा पेट्रोलियम निकलेगा, उसकी सफाई इन दोनों कारखानों में होगी।

इस संविदा की घोषणा ४ दिसम्बर को इस्पात, खान और ईंधन के मन्त्री द्वारा लोक-सभा में हुई है। जो दो कारखाने तेल की सफाई के खुलेंगे, उनमें एक आसाम के किसी स्थान में रहेगा और दूसरा बिहार-राज्य के बरौनी में। इस घोषणा से आसामवासियों की सन्तुष्टि अवश्य हो जायगी और जो आन्दोलन इस सम्बन्ध में चल रहा है, वह दब जायगा। इन कारखानों के खोलने का काम दो क्रमों में होगा। आशा की जाती है कि आसाम का कारखाना तीन वर्षों में काम करने लगेगा। काम को चलाने के लिए 'रूपी कम्पनी' नाम की एक नई कम्पनी बनेगी। यह कम्पनी नाहोरकटिया, हुग्रीजन और मोरान क्षेत्रों से तेल निकालेगी। इस कम्पनी की पूँजी का एक-तिहाई भाग भारत-सरकार देगी।

भारत-सरकार और आसाम आयल कम्पनी (इसी नाम से बर्मा आयल कम्पनी आसाम में कार्य कर रही है) के बीच जो शर्तें हुई हैं, उनमें निम्न शर्तें प्रमुख हैं —

१. 'रूपी कम्पनी' तेल के उत्पादन का काम अपने हाथ में लेगी। दो क्रमों में कार्य होगा। तेल के परिवहन के लिए पाइप लगाने का काम कम्पनी तुरन्त शुरू करेगी ताकि बरौनी के कारखाने में कच्चा तेल प्राप्त हो सके। इसके लिए अन्य आवश्यक कार्यों को भी कम्पनी अपने हाथ में लेगी।

पहले क्रम में आसाम के किसी स्थान तक, जिस स्थान का निर्णय शीघ्र ही भारत-सरकार करेगी, कच्चे तेल के लाने का प्रबन्ध कम्पनी करेगी। दूसरे क्रम में आसाम के इस मध्य के स्थान से बरौनी तक पाइप लगाने और अन्य आवश्यक सुविधाएँ प्रदान करने का काम हाथ में लेगी। भारत-सरकार निश्चय करेगी कि दोनों क्रमों के कार्य शुरू करने का समय क्या होगा।

२. 'रूपी कम्पनी' जो तेल निकालेगी, वह इन दोनों कारखानों को बेच देगी। ये कारखाने भारत के पब्लिक सेक्टर में रहेंगे। कच्चे तेल की कीमत जो दोनों कारखानों को देनी पड़ेगी, वह सबसे कम कीमत होगी, जो कलकत्ते में बाहर से आये कच्चे तेल की कीमत होती है अथवा कम्पनी द्वारा तेल निकालने में जो खर्च पड़ेगा, उसको विचार कर कुछ लाभ जोड़कर कम्पनी निश्चय करेगी। इसका निश्चय करने में भारत-सरकार का भी हाथ रहेगा अथवा उसकी स्वीकृति प्राप्त करनी पड़ेगी। ऐसे कच्चे तेल की कीमत का निर्धारण छः-छः मास में खर्च को दृष्टिकोण में रखकर भारत-सरकार करेगी।

बर्मा-आयल-कम्पनी ने इस शर्त के अनुसार कम्पनी को पहले क्रम के लिए पाइप आदि मशीनें बाहर से मँगाने के लिए विदेशी मुद्रा में कर्ज देना स्वीकार कर लिया है। तैल-क्षेत्रों से कारखाने तक पाइप लगाने के लिए सर्वेक्षण करने के लिए विशेषज्ञों की नियुक्ति हो गई है। इन विशेषज्ञों की रिपोर्ट मिलने पर ही यह निश्चय होगा कि कारखाना कितना बड़ा होगा, किस स्थान पर कारखाना खुलेगा तथा किस किस्म की मशीनें इन कारखानों के लिए मँगाई जायँगी। आशा की जाती है कि तीन वर्ष के अन्दर ही कारखाना बनकर तैयार हो जायगा और तेल की सफाई होने लगेगी।

थॉम्बे की परिष्करणी

बम्बई के थॉम्बे के तेल-सफाई के कारखाने का भी उल्लेख सातवें अध्याय में हुआ है। यह कारखाना अब बिलकुल तैयार हो गया है और इसमें तेल की सफाई का काम पूर्ण रूप से चल रहा है। यह कारखाना ४५० एकड़ भूमि पर बना है और उसके कर्मचारियों,

श्रमिकों और अन्य कार्यकर्त्ताओं के रहने और आराम का पूरा प्रबन्ध हो गया है। उसमें जो
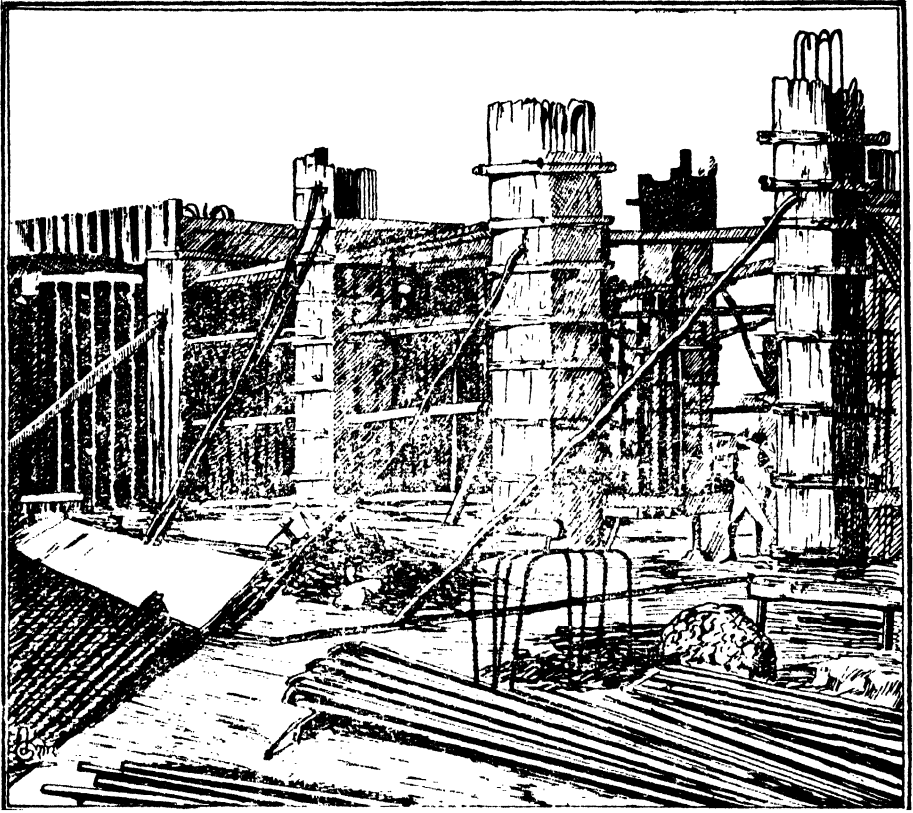
चित्र २६ – थॉम्बे की परिष्करणी का दृश्य

मशीनें बैठाई गई हैं, वे देखने में कैसी लगती हैं, इसका आभास यहाँ दिये चित्र से कुछ होता है।

विशाखापत्तनम परिष्करणी

सातवें अध्याय में विशाखापत्तनम के तैल-शोधन कारखाने का कुछ जिक्र हुआ है। उस कारखाने के सम्बन्ध में अब कुछ अधिक बातें मालूम हुई हैं। तैल-शोधन का यह कारखाना भारत-सरकार की द्वितीय पंचवर्षीय योजना में आता है इस योजना का यह बड़ा महत्त्वपूर्ण कारखाना है। इसमें जो मशीनें बैठाई गई हैं, वे आधुनिकतम मशीनें हैं। यह कारखाना भारत के आन्ध्र-राज्य के विशाखापत्तनम-नामक बन्दरगाह पर खुला है। स्थान की स्थिति बड़ी अच्छी है। अधिक सुविधा से कारखाने का उत्पादन देश के उत्तर और दक्खिन दोनों भागों में वितरित किया जा सकता है, कारखाना भी इतना बड़ा है कि सफाई का खर्च कम-से कम पड़ता है।

जिस स्थल पर यह कारखाना बना है, उसका क्षेत्रफल ४१५ एकड़ है। मार्च सन् १९५३ ई० में भारत-सरकार और कालटेक्स कम्पनी द्वारा कारखाना खोलने की संविदा हुई थी। निर्माण-कार्य सन् १९५५ ई० में शुरू हुआ जब पहले-पहल धरती की खोदाई शुरू हुई। दो वर्षों में कारखाने की सब आवश्यक मशीनें लग गईं। सन् १९५७ के १५ अप्रैल को पहली इकाई काम करने लगी। अन्तिम इकाई सन् १९५७ की जुलाई में काम करने लगी। आज यह कारखाना पूर्ण रूप से सन्तोषजनक ढंग से चल रहा है। इसके उत्पादन का जो लक्ष्य रखा गया था, उसकी पूर्त्ति हो रही है।

इस कारखाने के निर्माण में १६,००० टन सीमेंट और ३०,००० टन इस्पात लगे हैं। पेट्रोलियम के नल १०० मील से अधिक लगे हैं। पेट्रोलियम रखने की टंकियाँ ६८ हैं। साफ करने की इसमें चार प्रमुख इकाइयाँ और पाँच सहायक इकाइयाँ हैं।

इस कारखाने में मोटर के लिए पेट्रोल (गैसोलीन), दो किस्म के किरासन तेल, हाई स्पीड डीजल तेल, हल्के डीजल तेल और ईंधन तेल बनते हैं। कारखाने के निर्माण के समय इसमें लगभग नौ हजार मजदूर लगे थे। इस कारखाने के स्थायी कर्मचारियों की संख्या लगभग पाँच सौ है।

इस कारखाने के लिए कच्चा तेल पश्चिम एशिया और हिन्देशिया से आता है। पहले-पहल इसी कारखाने के लिए हिन्देशिया का कच्चा तेल भारत आया था। इस कारखाने में १३५०० पीपे या ४७३००० गैलन कच्चे तेल की सफाई प्रतिदिन हो सकती है।

इस कारखाने के खुलने से विशाखापत्तनम का बन्दरगाह बढ़ाया गया है। छः-छः सौ फुट के दो नये घाट बनाये गये हैं, जहाँ कच्चे तेल के टैंकर आकर रुकते और साफ किये तेल जहाजों पर लदकर मद्रास और कलकत्ता जाते हैं। यह कारखाना चौबीसो घण्टा चालू रहता है। इससे उच्च कोटि के विभिन्न तेलों की माँग की पूर्त्ति होती है।

यहाँ के कुछ कर्मचारियों को बाहर भेजकर प्रशिक्षण दिया गया था। ये कर्मचारी छः मास के लिए फिलिपाइन्स के बैटनस - कारखाने में प्रशिक्षण के लिए गये थे। इस कारखाने में वे इसलिए भेजे गये थे कि विशाखापत्तनम की मशीनें प्रायः वैसी ही हैं, जैसी मशीनें फिलिपाइन्स के इस कारखाने में उपयुक्त हुई हैं।

कारखाने का पानी विशाखापत्तनम से २६ मील दूर गोष्ठानी नदी के बाँध से आता है। बिजली १२५ मील दूर से मचकुन्द के जल-वैद्युत् कारखाने से आती है। कर्मचारियों और कार्यकर्त्ताओं के रहने के लिए दो बस्तियाँ बसाई गई हैं। खेलने के लिए खेल के मैदान, रोगियों के लिए अस्पताल और बालकों की शिक्षा के लिए स्कूल हैं।

२

पेट्रोलियम का नमूना निकालने के उपकरण

पेट्रोलियम का नमूना निकालना एक महत्त्वपूर्ण कार्य है। इसके निकालने में दक्षता और अनुभव की आवश्यकता पड़ती है। नमूना ऐसा होना चाहिए कि वह समस्त पेट्रोलियम का प्रतिनिधित्व कर सके। पृष्ठ १३६ पर दिया गया है कि 'बोतल-रीति' से नमूना निकाला

जा सकता है। जिस बोतल-उपकरण का व्यवहार द्रव-नमूना के निकालने में होता है, उस 'बोतल' का चित्र यहाँ दिया हुआ है। बोतल में एक काग लगा रहता है। इस काग में एक छेद होता है जिस छेद में काँच-नली लगी रहती है। इस नली के पार्श्व में एक छोटी
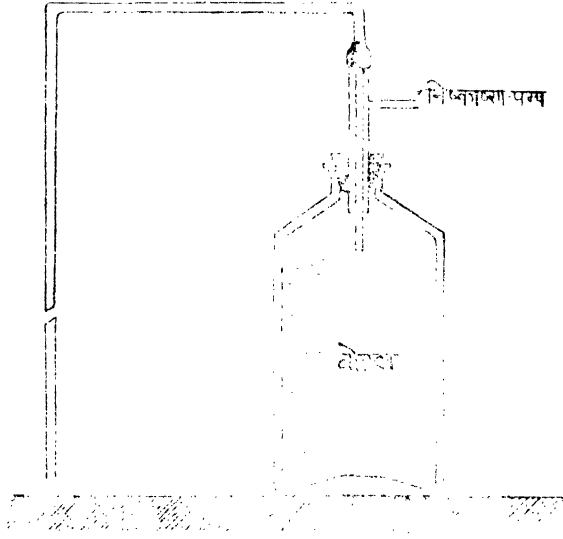
चित्र ३० —बोतल-रीति से नमूना निकालने का उपकरण

नली रहती है, जिसके साथ निष्कासन-पम्प जोड़ा जा सकता है। इस निष्कासन-पम्प से बोतल की हवा निकाल लेने से द्रव स्वयं बोतल में खिंचकर आ जाता है। एक दूसरी लम्बी नली होती है जिसको द्रव पेट्रोलियम में रखकर जिस गहराई का चाहें उस गहराई से नमूना निकाल सकते हैं।

पेट्रोलियम टैंकर से नमूना निकालने के लिए धातु के पात्र का व्यवहार (चित्र ३१) होता है। यह भारी होता है ताकि यह सरलता से पेट्रोलियम में प्रविष्ट कराया जा सके। इसमें ऐसा प्रबन्ध होता है कि बटन दबाने से छेद खुल जाता और तब पेट्रोलियम प्रविष्ट करता है।

२

पेट्रोलियम में जल का निर्धारण

पुस्तक के पृष्ठ १४१ पर पेट्रोलियम के जल की मात्रा निर्धारित करने की कुछ रीतियों का वर्णन दिया गया है। एक विधि में जो उपकरण उपयुक्त होता है वह 'डीन और स्टार्क' का एक उपकरण है। यह उपकरण बड़े महत्त्व का है। इसी का चित्र ३२ यहाँ दिया हुआ है। इस उपकरण में एक फ्लास्क होता है, जिसकी धारिता ५० मिलीलिटर की होती है। इस फ्लास्क में ५० मिलीलिटर अथवा १०० मिलीलिटर पेट्रोलियम रखा जाता है। फ्लास्क में एक संघनित्र जोड़ा रहता है। यह संघनित्र ठंडे जल से ठंडा किया जाता है।

फिर फ्लास्क को गरम करते हैं। पेट्रोलियम का पानी भाप बनकर संघनित्र में जाता है और वहाँ संघनित हो नीचे की नली से निकलकर एक अंशांकित नली में जाकर इकट्ठा होता है।
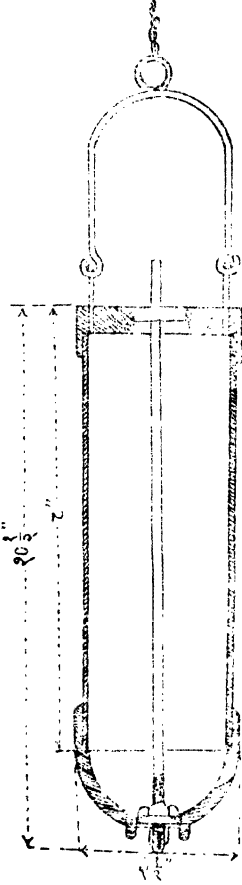
चित्र ३१—पेट्रोलियम-टैंकर से नमूना निकालने का उपकरण
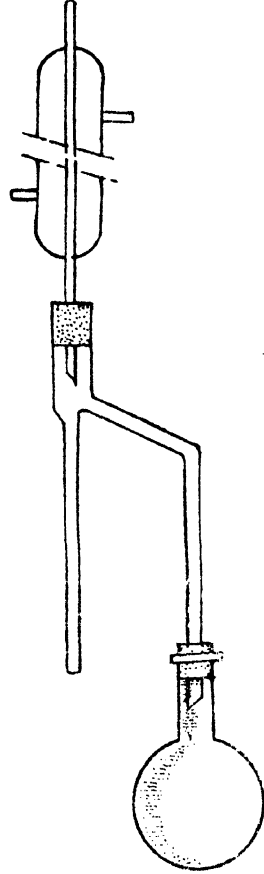
चित्र ३२—आर्द्रता-निर्धारण-उपकरण

संघनित्र से इकट्ठे हुए जल को सीधे मापकर उसका आयतन मालूम कर लेते हैं। फ्लास्क को गैस-बर्नर अथवा बिजली-भट्ठी से गरम करते हैं।

४

मोम का कोमलांक

जिस ताप पर मोम कोमल होता है, उस ताप को मोम का 'कोमलांक' कहते हैं। इस कोमलांक को जानने के लिए जिस उपकरण का उपयोग होता है, उसे रिंग और बॉल (वलय और गेंद) उपकरण कहते हैं। इस उपकरण में एक गेंद 'ख' होता है। यह गेंद पीतल के पट्ट 'क' को छूता रहता है। इसमें बीकर के आकार का एक पात्र 'ग' होता है,

जिसमें पानी ऊपरी सतह से दो इंच नीचे तक भरा रहता है। गेंद को मध्य में रखते हैं और १५ मिनट तक रखकर तब पानी को गरम करते हैं। इस पात्र में एक थर्मामीटर 'घ' लटका रहता है। यह गेंद के निकट रहता है। मोम का कोमल होना किसी निश्चित ताप पर नहीं होता। जैसे-जैसे ताप बढ़ता है, मोम बहुत धीरे-धीरे बदलता है। पहले यह बहुत गाढ़ा रहता है, पर ज्यों-ज्यों ताप बढ़ता है, यह अधिकाधिक कोमल होता और कम श्यान होता जाता है। इस कारण कोमलांक का निर्धारण एक निश्चित परिस्थिति में करना चाहिए ताकि जो परिणाम प्राप्त हो, वह तुलनात्मक हो सके।

चित्र ३३—कोमलांक निकालने का संयत्र

इसमें एक वलय होता है। यह वलय ५/८ इंच ± ०.०१ इंच के आभ्यन्तर व्यास का होता है। इसकी गहराई १/४ इंच और मोटाई ३/३२ इंच ± ०.०१ इंच की होती है। यह वलय एक पीतल के तार से जुटा रहता है।

गेंद इस्पात का, ३/८ इंच व्यास का, होता है और इसकी तौल ३.४५ और ३.५५ ग्राम के बीच होती है।

जिस पात्र में पानी रखा जाता है, वह काँच का होता है। उसका व्यास ८.५ सेंटीमीटर और गहराई १०.५ सेंटीमीटर की होती है। ६०० घनसेंटीमीटर धारिता के बीकर से भी काम चल सकता है।
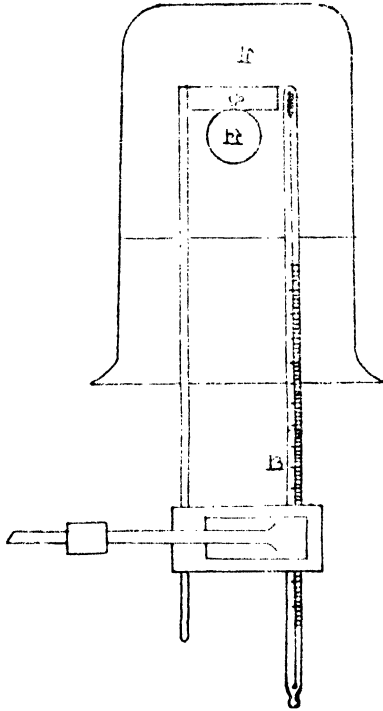
इस प्रयोग में जो थर्मामीटर उपयुक्त होता है, वह प्रामाणिक थर्मामीटर रहना चाहिए। दो प्रयोगों को साथ-साथ करना चाहिए। यदि मोम का कोमलांक ८०° से० से नीचा है तो बीकर में जल का उपयोग होता है और यदि ८०° से० से ऊँचा है, तो ग्लीसरिन का उपयोग होता है।

५

पेट्रोलियम के प्रभागों का वर्त्तनांक

पेट्रोलियम के प्रभागों का वर्त्तनांक एक विशिष्ट गुण है। वर्त्तनांक के ज्ञान से पेट्रोलियम की प्रकृति का बहुत-कुछ पता लगता है। केवल पैराफिनवाले पेट्रोलियम का वर्त्तनांक कम रहता है। नैफ्थलीन से यह बढ़ जाता और सौरभिक से और भी बढ़ जाता है। बहुचक्रीय नैफ्थलीन और बहुसौरभिक के वर्त्तनांक और भी ऊँचे होते हैं। पेट्रोलियम में उपस्थित एक ही किस्म के हाइड्रोकार्बन के रहने से उच्च अणुभार से वर्त्तनांक बढ़ जाता है, जैसाकि निम्नलिखित सारणी से पता लगता है।
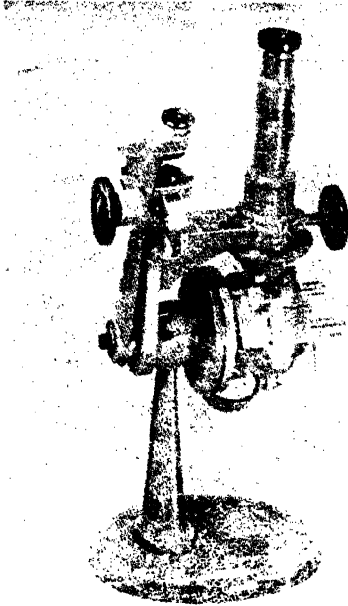
अणुभार	विशिष्ट गुरुत्व	वर्त्तनांक
	६० ६०°फ०	$n_D^{20°}$
८२२	०·८७२४	१·४७११
६४६	०·९३६७	१·५२७६
३५३	०·८४०६	१·४६३७
३००	०·९२५०	१·५१८५

वर्त्तनांक निकालने के लिए जो उपकरण उपयुक्त होता है, उसे 'रिफ्रैक्ट्रोमीटर' या 'वर्त्तनांकमापी' कहते हैं। आजकल जो वर्त्तनांकमापी उपयुक्त होता है, उसे 'आबे का रिफ्रैक्टोमीटर' कहते हैं। एक सामान्य आबे के रिफ्रैक्टोमीटर का चित्र यहाँ दिया हुआ है। आज इस वर्त्तनांकमापी में बहुत सुधार हुए हैं, जिससे वर्त्तनांक अधिक यथार्थता से निकलता है। एक ऐसे सुधारित वर्त्तनांकमापी का भी चित्र यहाँ दिया हुआ है।

चित्र ३४—आबे का वर्त्तनांकमापी
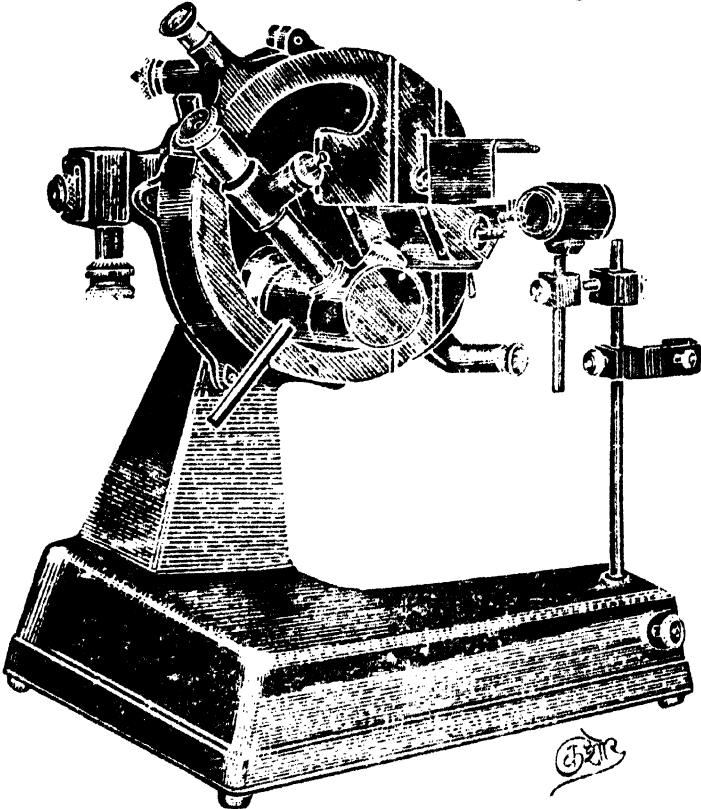
परिशिष्ट 'ख'

भार और माप

एक मीटर = १०० सेंटीमीटर = १'०९ गज = ३९'३७१ इंच = ३'२८१ फुट

एक लिटर = १००० क्यूबिक सेंटीमीटर या घन सेंटीमीटर (सी० सी०) = ०'२२ गैलन
= ३५.२ द्रव औंस = २'२ पाउण्ड

एक घन मीटर = २२० गैलन

एक गैलन = १० पाउण्ड (जल) = ४'५४ लिटर

एक पिण्ट = १$\frac{1}{4}$ पाउण्ड (जल) = ०'५६८ लिटर

एक ग्राम = १०० सेंटीग्राम = १५ ४३ ग्रेन

एक मेट्रिक टन = २२०४'६ पाउण्ड

एक छोटा टन = २००० पाउण्ड

एक बड़ा टन = २२४० पाउण्ड

एक किलोग्राम = २'२ पाउण्ड

१०० किलोग्राम = १ टन = २२०४'६ पाउण्ड

एक घन या क्यूबिक मीटर जल = १ मेट्रिक टन = २२०४'६ पाउण्ड

एक फुट = ०'३०४८ मीटर = ३०'४८ सेंटीमीटर

एक गज = ० ९१४४ मीटर

एक बैरेल (पेट्रोलियम) = ४२ गैलन (अमेरिका में) = ३४'९७ गैलन (इङ्गलैण्ड में)

बुशेल = ३२ पाउण्ड (इङ्गलैण्ड में) = ३३ पाउण्ड (अमेरिका में)

थर्मामीटर के तुलनात्मक अंक

दो किस्म के थर्मामीटर, एक सेंटीग्रेड (से० या श०) और दूसरा फाहरेनहाइट (फ०) पेट्रोलियम ग्रन्थों में उपयुक्त होते हैं। सेंटीग्रेड डिगरी को फहरेनहाइट डिगरी में परिणत करने के लिए सेंटीग्रेड डिगरी को ९ से गुणा कर, ५ से भाग देने पर जो अंक प्राप्त होता है, उसमें ३२ जोड़ देते हैं।

फहरेनहाइट डिगरी को सेंटीग्रेड डिगरी में परिणत करने के लिए फहरेनहाइट डिगरी में ३२ घटाकर जो अंक बच जाता है, उसे पाँच से गुणा कर नौ से भाग देते हैं।

०से० या ०श०	०फ०	०से० या ०श०	०फ०
+५००	+९३२	६६	१५०·८
४००	७५२	६५	१४९
३००	५७२	६४	१४७·२
२००	३९२	६३	१४५·४
१००	२१२	६२	१४३·६
९०	१९४	६१	१४१·८
८९	१९२·२	६०	१४०
८८	१९०·४	५९	१३८·२
८७	१८८·६	५८	१३६·४
८६	१८६·८	५७	१३४·६
८५	१८५	५६	१३२·८
८४	१८३·२	५५	१३१
८३	१८१·४	५४	१२९·२
८२	१७९·६	५३	१२७·४
८१	१७७·८	५२	१२५·६
८०	१७६	५१	१२३·८
७९	१७४·२	५०	१२२
७८	१७२·४	४९	१२०·२
७७	१७०·६	४८	११८·४
७६	१६८·८	४७	११६·६
७५	१६७	४६	११४·८
७४	१६५·२	४५	११३
७३	१६३·४	४४	१११·२
७२	१६१·६	४३	१०९·४
७१	१५९·८	४२	१०७·६
७०	१५८	४१	१०५·८
६९	१५६·२	४०	१०४
६८	१५४·४	३९	१०२·२
६७	१५२·६	३८	१००·४

०से० या ०श०	०फ०	०से० या ०श०	०फ०
३७	९८·६	१२	५३·६
३६	९६·८	११	५१·८
३५	९५	१०	५०
३४	९३.२	९	४८ २
३३	९१·४	८	४६·४
३२	८९·६	७	४४·६
३१	८७·८	६	४२·८
३०	८६	५	४१
२९	८४·२	४	३९·२
२८	८२·४	३	३७·४
२७	८०·६	२	३५ ६
२६	७८·८	१	३३·८
२५	७७	०	३२
२४	७५·२	१	३०·२
२३	७३ ४	२	२८ ४
२२	७१·६	३	२६·६
२१	६९·८	४	२४·८
२०	६८	५	२३
१९	६६·२	६	२१·२
१८	६४·४	७	१९·४
१७	६२·६	८	१७ ६
१६	६०·८	९	१५ ८
१५	५९	१०	१४
१४	५७·२	११	१२ २
१३	५५·४	१२	१० ४

विशिष्ट भार नापने के जो उपकरण उपयुक्त होते हैं, उन्हें हाइड्रोमीटर (द्रवमापी या घनत्वमापी) कहते हैं। हाइड्रोमीटर कई किस्म के होते हैं। ट्वाडल और बौमे महत्त्व के हाइड्रोमीटर हैं, जिनका उपयोग वैज्ञानिक ग्रन्थों में होता है। अमेरिका में ए० पी० आई० डिगरी उपयुक्त होती है।

पानी से भारी द्रवों के लिए बौमेडिगरी और विशिष्टभार का सम्बन्ध निम्नलिखित सारणी से सूचित होता है :—

बौमेडिगरी	विशिष्टभार	बौमेडिगरी	विशिष्टभ
०'७	१'००५	३०'६	१'२७०
१'४	१'०१०	३१'५	१'२८०
२'७	१'०२०	३२'४	१'२९०
४'१	१'०३०	३३'३	१'३००
५'४	१'०४०	३४'२	१'३१०
६'७	१'०५०	३५'०	१'३२०
८'०	१'०६०	३५'८	१'३३०
९'४	१'०७०	३६'६	१'३४०
१०'६	१'०८०	३७'४	१'३५०
११'९	१'०९०	३८'२	१'३६०
१३'०	१'१००	३९'०	१'३७०
१४'२	१'११०	३९'८	१'३८०
१५'४	१'१२०	४०'५	१'३९०
१६'५	१'१३०	४१'२	१'४००
१७'७	१'१४०	४२'०	१'४१०
१८'८	१'१५०	४२'७	१'४२०
१९'८	१'१६०	४३'४	१'४३०
२०'९	१'१७०	४४'१	१'४४०
२२'०	१'१८०	४४'८	१'४५०
२३'०	१'१९०	४५'४	१'४६०
२४'०	१'२००	४६'१	१'४७०
२५'०	१'२१०	४६'८	१'४८०
२६'०	१'२२०	४७'४	१'४९०
२६'९	१'२३०	४८'१	१'५००
२७'९	१'२४०	४८'७	१'५१०
२८'८	१'२५०	४९'४	१'५२०
२९'७	१'२६०	५०'०	१'५३०

पानी से हलके द्रव के लिए बौमेडिगरी और विशिष्ट भार का सम्बन्ध

बौमे डिगरी	विशिष्ट भार	बौमे डिगरी	विशिष्ट भार
१०	१·०००	३५	०·८४९
११	०·९९३	३६	०·८४३
१२	०·९८६	३७	०·८३८
१३	०·९७९	३८	०·८३३
१४	०·९७२	३९	०·८२८
१५	०·९६६	४०	०·८२४
१६	०·९५९	४१	०·८१९
१७	०·९५२	४२	०·८१४
१८	०·९४६	४३	०·८०९
१९	०·९४०	४४	०·८०५
२०	०·९३३	४५	०·८००
२१	०·९२७	४६	०·७९६
२२	०·९२१	४७	०·७९१
२३	०·९१५	४८	०·७८७
२४	०·९०९	४९	०·७८२
२५	०·९०३	५०	०·७७८
२६	०·८९७	५१	०·७७४
२७	०·८९२	५२	०·७६९
२८	०·८८६	५३	०·७६५
२९	०·८८१	५४	०·७६१
३०	०·८७५	५५	०·७५७
३१	०·८७०	५६	०·७५३
३२	०·८६४	५७	०·७५३
३३	०·८५९	५८	०·७४९
३४	०·८५४	५९	०·७४१
		६०	०·७३७

ट्वाडल डिगरी और विशिष्ट भार

ट्वाडल डिगरी को विशिष्ट भार में परिणत करने के लिए इस सूत्र का उपयोग होता है।

$$\text{विशिष्ट भार} = \frac{५ \times \text{संख्या} + १०००}{१०००}$$ जहाँ संख्या ट्वाडल की डिगरी है।

ए० पी० आई० डिगरी (अमेरिकी पेट्रोलियम इंस्टिट्यूट) द्वारा प्रतिपादित और विशिष्ट गुरुत्व, पानी से हल्के द्रव के लिए

ए० पी० आई० डिगरी	विशिष्ट गुरुत्व	ए० पी० आई० डिगरी	विशिष्ट गुरुत्व
१०·००	१·००००	३६·००	०·८४४८
११·००	०·९९३०	३७·००	०·८३९८
१२·००	०·९८६१	३८·००	०·८३४८
१३·००	०·९७९२	३९·००	०·८२९९
१४·००	०·९७२५	४०·००	०·८२५१
१५·००	०·९६५९	४१·००	०·८२०३
१६·००	०·९५९३	४२·००	०·८१५५
१७·००	०·९५२९	४३·००	०·८१०९
१८·००	०·९४६५	४४·००	०·८०६३
१९·००	०·९४०२	४५·००	०·८०१७
२०·००	०·९३४०	४६·००	०·७९७२
२१·००	०·९२७९	४७·००	०·७९२७
२२·००	०·९२१८	४८·००	०·७८८३
२३·००	०·९१५९	४९·००	०·७८३९
२४·००	०·९१००	५०·००	०·७७९६
२५·००	०·९०४२	५१·००	०·७७५३
२६·००	०·८९८४	५२·००	०·७७११
२७·००	०·८९२७	५३·००	०·७६६९
२८·००	०·८८७१	५४·००	०·७६२८
२९·००	०·८८१६	५५·००	०·७५८७
३०·००	०·८७६२	५६·००	०·७५४७
३१·००	०·८७०८	५७·००	०·७५०७
३२·००	०·८६५४	५८·००	०·७४६७
३३·००	०·८६०२	५९·००	०·७४२८
३४·००	०·८५५०	६०·००	०·६३८९
३५·००	०·८४९८		

डीजल-ईंधन तेल का प्रमाप

ब्रिटिश स्टैंडर्ड इन्स्टिट्यूशन ने ईंधन-तेल के तीन किस्म का प्रमाप निश्चित किया है। इन्हें ग्रेड 'ए', ग्रेड 'बी' और ग्रेड 'सी' कहते हैं। ग्रेड 'ए' तेज चाल के इंजन के लिए, ग्रेड 'बी' मध्यचाल के इंजन के लिए और ग्रेड 'सी' मन्द चाल के इंजन के लिए है।

	ग्रेड	'ए'	'बी'	'सी'
दमकांक	अल्पतम	१५०° फ०	१५०° फ०	१५०° फ०
एनिलीनांक	अल्पतम	६०° से०	४५ से०	—
कड़ा एस्फाल्ट	अधिकतम	०·०१%	२·०%	४·०%
कोनराड्सन कार्बन	अधिकतम	०·२%	४·०%	८·०%
राख	अधिकतम	०·०१%	०·०५%	०·१०%
श्यानता, रेडवूड	विस्कोमीटर न० १, १००° फ० पर			
	अधिकतम	४५"	१००"	७५०"
बहाव-ताप	अधिकतम	२० फ०	—	—
गन्धक-मात्रा	अधिकतम	१·०%	२·०%	१·०%
जल-मात्रा	अधिकतम	०·१%	०·५%	१·०%
		से अधिक नहीं	से अधिक नहीं	से अधिक नहीं
आसवन, ३५०° से० तक आयतन				
	अधिकतम	८५%	—	—
कलरीमान	अधिकतम	१९,२५०	१८,७५०	१८,९५०

पेट्रोलियम तेल के उत्पादन में वृद्धि

(अंक टनों में हैं)

	१८६०	१८८०	१९००	१९१६	१९३७
अमेरिका	६५,५००	३,४४३,४८२	६,००२,८८७	३२,३१५,४४०	१७२,९६०,०००
मेक्सिको	—	—	—	—	६,९०३,०००
रूस	—	४००,२३७	३,६३०,६९३	९,२४६,९४३	२७,८२१,०००
वेनेजुएला	—	—	—	—	२७,७१६०००
ईरान	—	—	—	—	१०,४४८,०००
रूमानिया और गैलिशिया	१,१८८	४७,९००	१४४,९५०	२,१७२,५७२	७,१४९,०००

	१८६०	१८८०	१९००	१९१६	१९३७
डच-पूर्वी इण्डिया-	—	—	—	१,५३४,२२३	७,२६३,०००
ब्रिटिश-इण्डिया	—	—	१५,४४६	१,०००,०००	१,२८४,०००
जापान	—	३,९९२	८,०५१	२५०,०००	३५५,०००
जर्मनी	—	१,३०९	१५,२२६	१३०,०००	४५३,०००
अन्य देश	५	२८३	४५२	३,३५०,०००	१६,२८२,०००
कुल	६,६९९३	३,८९७,२०३	९,८१७,६९५	४९,९९९,१७७	२७८,६४५ ०००

अनुक्रमणिका और वैज्ञानिक शब्दावली

अंकन recording १७०
अंकुश hook १४६
अंशकारक fractionating ४६
अंशन fractionation ४३अ, ७४, १२१
अंशांकित graduated १७२
अकलुष stainless २४०
अकार्बनिक inorganic १६, १४२
अकाशितवान optically inactive ५८
अक्रिय inert ७३
अ-क्षारक non-corrosive १०३
अग्नि-अंक fire-point ६२
अग्न्यंशन pyrolysis ११४
अग्नेय igneous १०
अचक्रिय non-cyclic २२
अचर constant १६५
आच्छादन covering, coating १३१
अजल anhydrous १०१
अतितापन overheating १३४
अतिसूक्ष्मदर्शक ultramicroscope ४३ट
अदीप्तज्वाला non-luminous flame १३५
अधिशोषण adsorption ४१ग, ४३फ
अनभिघात non-knocking १८७
अनवरत continous ४७
अनीलिन aniline १८६
अनुक्रमानुपात direct proportion १६७
अन्तःसीमीय तनाव interfacial ५७
अनुपात ratio ५४
अनुमापन titration ८३
अपक्षालक detergent २२४
अपद्रव्य impurity ४२
अपवहन disposal ४३ख
अभंजन non-cracking १२३
अभय प्रबन्ध safety arrangement ३४
अभिघात knocking १८५
अभिनव fresh ६३
अविस्फोटक non-explosive १०३
अभिमुख opposite ७६
अभिलंब बल vertical force १६७
अमिश्र्य non miscible ४६
अमोनिया-थाइलोक्स ammonia-Thylox २३६
अम्लता acidity ८०
अम्ल संख्या acid-number ८७
अलगी algae १७
अल्कोहल alcohol ६
अल्कलीकरण alkylation ४१, ७१, ११०
अवकरण reduction ४१क, ८०
अवक्षेप precipitate ६२
अवक्षेपण precipitation ४३ख
अवतल concave १४५
अवमिश्रण blending २०७
अवपंक sludge २०४
अवरक्त infra-red ५६
अवरोध resistance १६३
अवलोकन observation १२६
अवशिष्ट residual ४३ख
अवशेष residue १८, ११२

अवशोषण absorption ४३
अवशोषण वर्णक्रम absorption spectrum ५८
अवसाद sedimentary १७
अविरत continuous १७१
अ-विस्फोट non-explosive १०३
अयथार्थ inaccurate ८३
अ-शोषण non-desiccation २३८
असंक्षारक non-corrosive २३
असंजन बल coordination force १९८
असंतृप्त unsaturated १८
असंतृप्ति unsaturation ६०
अ-सक्रियित unactivated ७९
असंपीड्य incompressible १०८
असममित unsymmetrical ७८
अस्तर layer, lining ४०, ५३
अस्थायी unstable ४२
अस्थि-काल bone-black ४३ग
अस्फालटीन asphaltene २२०
अस्फाल्टोजनिक asphaltogenic २२०
अ-हाइड्रोकार्बन non-hydro-carbon ८३
आं Angstrom ५८
आक्सीकरण oxidation ४१, ६३
आक्सीकारक oxidant ६५
आग्रिम संयन्त्र pioneer plant २३५
आणविक आसवन molecular distillation ११०
आधार base २३१
आबेल उपकरण Abel's apparatus १९४, १९६
आयात import २
आभ्यन्तर inner, internal १, १४६
आरम्भन starting १८४
आलम्बित suspended २४३
आवरण coating ४३
आविष्ट charged ३१
आवेश charge ३१
आवृत्ति frequency १०६
आसंजन adhesiveness १०७
आसवन distillation १०७
आसवन, आणविक molecular distillation ११०
-प्राथमिक primary distillatton १११
-निर्वात vacuum distillation १०१
-वाष्प steam distillation २०१
आसाम-आयल कम्पनी Assam Oil Company ५०
आस्रुत distillate ४३ख
आस्तर lining ३४
ओम Ohm ९३
ओलिफीन olefine ४१, ६८
ओसांक dew point १०८
ऑक्टेन-संख्या octane-number २१, ४२, ७५
औगर Auger १४१
औषध medicine ५१, १७६
ओस्टर-स्ट्रौम विधि Osterstrom ४६
इपौक्साइड epoxide ६५
इल्ली leaf rollers २२३
इष्टिका briquet १३३
ईंधन fuel २
—, गैसीय gaseous fuel २
—, ठोस solid fuel २
—तेल fuel oil २१७
—, द्रव liquid fuel २
उत्क्वथनांक ebullioscope point ९३
उत्क्रमणीय reversible ४३क
उत्तक tissue २२३
उत्ताप-प्रावार incandescent mantle १७६, २०४
उत्पाद product ४३ख, १२४
उत्पादक producer १

उत्प्रेरक catalyst १७, ७६, २४१
उत्प्रेरण calalysis २४१
उद्वाष्पक evaporator ३१, ४५
उद्वाष्पित evaporated ७१
उथला shallow १४६
उन्नयन elevation ७७, १५६
उत्प्लावन flotation ८४
उत्प्लावित float १५३
उत्स्राव exhaust १८३
उत्स्वेदन sweating २१२
उदासिनीकरण neutralisation ६८
उबड़-खाबड़ uneven ५
उपकरण instrument
उपक्रम operation १२४
उपचार treatment ३१, ५३
उपभोक्ता consumer ३
उपयोग use १
उपयोज adapter १६८
उपलब्धि yield २४०
उपलभीय, उपलभ सो opalscent १६२
उपसंकोच constriction १८४
उपस्नेहक lubricant ७१
उपस्नेहन lubrication ७१
उपादेय desirable १८, ६०
उल्कापात meteor १६
उष्मक bath १४५
उष्मा heat
उष्मीयचालकता thermal conductivity ६१
ऊर्जा energy ७४
ऊष्मक bath १४५
ऊष्म-सह heat-proof १३४
ऊष्मा, दहन heat of combustion ६२
एक चक्रिक monocyclic ७०
एक-चक्रीय monocyclic २२, ५७
एक-सा uniform ४१
ए० पी० आई A. P. I. ५६
एनिलीन बिन्दु aniline point ६३
एल्कील मूलक alkyl radicle १८७
एल्केजिड Alkazid
एस्फाल्ट asphalt ६
एस्बेस्टस asbestos ४०
ऐडलेक सेमाफोर १५५
ऐस्फाल्टीन asphaltene ८६
ऋणात्मक negative १६२
ऋजुशाख straight branch १८७
ऋजु-शृंखला straight chain १८७
कंकाल skeleton ३५
कुंदा block १५८
कज्जल lampblack १८२, १६५
कणीकरण atomising १३६
कपाट valve १८२
कपिल brown ४३ङ
कलछुल ladle १३६
कलरीमापी calorimeter १५६
कला phase ४५
कलारी calorie ६२
कलिल colloidal ४३ख
कलुषित होना to be stained ६२
कवक fungus ८४
कवकनाशिक fungicide २२३
कागज foil २२२
कान्तिवर्द्धक beautifying १७६
कार्बनकाल carbon black ४, ४३ज
कार्बनिक organic १६
कार्बायड carboid २२०
कार्बीन carbene २२०
कारनौबा मोम carnauba wax २१३
काशितवान optically active १७, ५८
काशिता optical activity ५८
किनारा rim १४५
किरासन kerosene १७१
किसेलगुर Kieselguhr २४२

कीचड़ mud ४४
कीटाणुनाशक germicide २२५
कीटीन ketene २३८
कुंडली coil ४३ठ
कुण्डली coil १२३
कुप्पी cup १४२
कुहासा fog १८२
कूपक shaft २३५
क्रैंकघान crankcase १६४
केन्द्रक nucleus १२१
केन्द्रापसरण centrifuging २०२
केन्द्रापसारित्र centrifuge ४३क, २०२
केवाट, केवाड़ १७३
केशिकत्व capillarity १७८
केशिका capillary ४३ट
कोगैसिन kogasin २२६
कोलेस्टेरोल cholesterol ७
कोशा cell २४४
कौर्डाइट cordite ६
कृत्रिट्रोल synthol २२७
कृत्रिम पेट्रोल synthetic petrol ३
कृत्रिम पेट्रोलियम synthetic petroleum २२६
कृत्रिम रबर synthetic rubber ७८
कृमिनाशक insecticide २१२
क्रम order ५७
क्रांतिक critical ४६
क्राइसिन crysene २३३
क्रोमोफोर chromophore १०५
क्लोरीकरण chlorination ४२ड,२०१
क्वथनांक boiling point २२, ६०
क्षति wastage, loss ११
क्षय corrosion, loss ६१, १३२
क्षार alkali, base ४३म, ६२
क्षारक corrosive, caustic ४३ञ १६२
क्षारण corrosion १७८
क्षार-धावन alkali-washing ४३ग
खिप खि yet १४५, १६६
खैतिज horizontal १११
खुदाई digging, boring १
गति dynamic ६२
गतिश्यानता dynamic viscosity १५१
गन्धपुष्प flower of sulphur १६२
गरीतेल coconut oil ८७
गलनांक melting point ५६
गुणक coefficient १६५
„ , गतिज kinematic coefficient १६५
„ , घर्षण fricttional coefficient १८७
„ तापीय , thermal coefficient ४६
„ , स्थिर static coefficient १६५
गुप्त ऊष्मा latent heat ६१
गुरुता, गुरुत्व gravity ४३ठ, ४१
गेंद-पतन विधि ball-drop method ५५
गैस, प्राकृतिक natural gas ४
गैसोलिन gasolin ४, १८०
गोंद gum ६८
गोपुच्छाकार tapering १४५
गौण secondary १०३
ग्राहक receiver १६८
ग्रीज grease ५
ग्रे-विधि Grey process ४५
ग्रैवेय collar ३४, १६६
ग्लीसरिन glycerine ६
घनत्व density ४५
घर्षण friction ५
घर्ष-धावन scrubbing १०२
घातक fatal १००
घातांक index १६५
घिसाई wear and tear २००
घूर्णन revolution

घूर्णक भट्ठी rotary furnace ४४
चंचल mobile २२
चंचलता mobility ३
चक्र cycle ८१
चक्रण पम्प cycling pump ४३ग
चक्री cyclic १०१
चक्रिक cyclic ६६, २००
चक्रीय cyclic २२, ४४
चतुर्निक पट्टिका hexagonal plate २१०
चलश्यानता kinematic viscosity १५१
चाप arc १०५
चाल speed ३
चिकनाना to lubricate ५
चिकित्सक physician ५३
चिपटा flat १३६
चूरी thread १४५
चोर रीति Thief method १३६
छनना filter ४३ठ
छन्ना filter २१२
छिद्रण boring २३२
छिद्रित थाल porous tray ५३
छेदाई drilling १
जनित्र generator ३५, १३५
—, भाप steam generator ३५
जलयोजन hydration ८०
जल-अभेद्य, जलाभेद्य waterproof ८८, २१४
जलांशन hydrolysis १८
जलीयित hydrated ४३ञ
ज्वालक burner १५५
झागदेना to foam ८७
झाँवाँ pumice १३२
झुकाव propensity १८७
टालक talc २०७
ट्रैक्टर-ईंधन tractor fuel ११६, १६४
डाइन dyne ४७
डाइनेमाइट dynamite ६
डाक्टर-विलयन Doctor solution ४३ङ, १६२
,, -परीक्षण Doctor test १६२
,, -रीति Doctor method ४३ङ
डिम्भ larva २२३
डीजल-ईंधन Diesel fuel १६४
डीजल-तेल Diesel oil ४
ढलवाँ लोहा wrought iron १३४
तनु dilute ४३ख
तनुकारक diluent ११०
तनुता dilution ४३फ
तपाना to heat ३१, ५३
तकुँ spindle २०३
तरंगदैर्घ्य wave-length ५८
तरंगाग्र wave-front १६४
तरल फिल्म स्नेहन liquid-film lubrication १६८
तरलमान hydrometer ५६
तल-तनाव surface tension ५७
ताप temperature ४३, ५५
तापक्षेपक exothermic १३१
ताप गुणक temperature coefficient ५८
तापमापक thermometer १४५
तापमापी thermometer १४१
तापशोषक endothermic १३१
तापीय विच्छेदन thermal decomposition १८
तारकोल coaltar ४१, २१६
तुल्यांक equivalent १८०
तेल, अस्थायी volatile oil ८
-, खनिज meneral oil ८
-, जान्तव animal oil ८
—, वानस्पतिक vegetable oil ८
—, वाष्पशील volatile oil ८
—, स्थायी fixed oil ८

त्रितीयक tertiary
त्रिभाज trimer १३३
त्रुटि error ५६
त्वरण acceleration ३, ७६
थाल tray २३६
थोक bulk ४३ग
दक्षता efficiency ६१
दक्ष-भ्रामक dextro-rotatory ५८
दफ्ती cardboard १७१
दबाव-पात pressure-fall १०६
दर rate २५६
दरार fissure २३१
दशमांश नार्मल decinormal १८२
दानेदार granular ४३ठ
दीपविधि lamp method ६१
दीपित illumination २१३
दुर्वासना rancidity २२१
दोलित oscillated १६६
द्रवण fusion २१२
द्रवमापी hydrometer ५६, १६३
द्रवीभूत liquefied ४५
द्रुत rapid २२२
द्रुतगति बहाव rapid flow
द्विबन्ध double bond ६०
द्विभाज dimer १३३
धनात्मक positive १६२
धारारीति stream mothod २३१
धारिता capacity १११
धूलों की आंधी duststorm ३६
न-ओक्टेन n-octane ६६
न-हेक्सेन normal hexane ६६
न-हेप्टेन normal heptane ६६
नल-भभका tube still ३१
नवजात nascent ४५
नाइट्रोकरण nitration १०३
नाइट्रोग्लीसरिन nitro-glycerine ६
नाइट्रोसील क्लोराइड nitrosyl chloride ७१
निकेल उत्प्रेरक nickel catalyst १६
निक्षिप्त होना to be deposited ४३ख
निचोल jacket १५६
नियतांक constant ५५, १५२
नियंत्रण कक्ष control chamber ३४
निर्जल anlydrous ३३ग
निर्जलीकरण dehydration १११
निर्पेक्ष श्यानता absolute viscosity ५४
निर्वात vacuum ४८
निराकरण neutralisation ४३घ
निरुदक anhydride २२०
निरोधक inhibitor ४३च, ६६
निःशब्द silent १०५
निष्कर्ष विधि extraction method २१
निष्क्रिय inactive ५
निष्तप्त ignited ४३ट
न्याधार chassis २०७
पंक निकास mud outlet ३४
पंजर skeleton ४२२
पट्ट plate ६६
पट्टिका ribbon २११
पट्टित plated १६७
पटिया slate २१२
पनाला drain ३, २१३
परिक्रमण revolution १६२
परिरक्षण preservation ८७
परिवर्तक transformer १५२
परिश्रमसाध्य toilsome ४१
परिष्करणी refinery ५०
—, आसाम की Assam Refinery ५०
—, बम्बई की Bombay Refinery ५१
परिष्कर्त्ता refiner २०
परिष्कार refining २०, ३१
परोक्ष indirect १८३

पश्चवाह reflux २४३
पहलू aspect २५५
पाद stand १४०
पाठ्यांक reading १५१
पानी-शोषण water-sorption १६३
पायस emulsion ३१, ४३ग
पायसकारक emulsifier ३१, ८८
पायस वाहक emulsion carrier ३२
पायसीकरण emulsification १०६
पारच्यवन percolation ४३क, ४३ठ
पारच्याव percolation २३२
पारदर्शक transparent १५६
पारदर्शित transparent २१३
पारनीललोहित ultraviolet ५८
पारभासक translucent
पाश trap १८४
पाश्चायन lag १६४
पिकनोमीटर Picnometer १६४
पिच pitch ६
पिरेथ्रम pyrethrum २२३
पीएच pH ५७
पीट peat २
पुताई white-washing ४
पुनश्चक्रण recycling १२३
पुनर्ग्रहण recovery २०८
पुनर्जीवितकरण revivification ४३ञ
पुनरासवन redistillation ११३
पुनर्विन्यास re-arrangement ७४, ८५
पुरभाज polymer ४५, ७८
पुरभाजन polymerisation १८, ७८
पूर्व-प्रज्वलन pre-ignition १८६
पूर्व निर्मित preformed ९९
पेट्रोल petrol ४, १८०
पेट्रोलियम ईथर petroleum ether ४
—, कच्चा crude petroleum २०
— का इतिहास history of petroleum ८
— का निकास extraction of petroleum ३३
— का परिष्कार refining of petroleum ५०
— का परीक्षण testing of petroleum ११७
— का भंजन cracking of petroleum ११४
— का वर्गीकरण Classification of petroleum २०
— का रसायन Chemistry of petroleum ६६
— की उत्पत्ति origin of petrolem १६
— की उपस्थिति occurrence of petroleum ८, ११
— के उपयोग uses of petroleum १, ४
— के भौतिक गुण physical properties of petroleum ५४
— के रासायनिक गुण Chemical properties of petroleum
— कोक petroleum coke २२३
— कृत्रिम synthetic petroleum ३
— नैफ्थनीय naphthenic petroleum २२
— पैराफीनीय paraffinic petroleum २२
— सौरभीय aromatic petroleum २२
पेट्रोलेटम petrolatum २१५
पेड़-तेला tree-hoppers २२
पेंचीदा complex २१८
पेचीला complex १०७
पेय drink ६
पेरोक्सीकरण peroxidation ९६
पृथग्न्यासक insulator ६

पृथगन्यासन insulation १६
पेंस्की-मार्टेन Pensky-Marten १६५,१६८
पैराफिनीय सारणी paraffinic table ६७
पोयाज poise ५४
प्र, प्रांगार, Carbon
प्रक्रम process १०८
प्रकार्य operation १११
प्रक्रिया operation ४३ ग, ७७
प्रक्षिप्त dispersed ३०
प्रक्षुब्ध agitated ४३
प्रक्षेपण dispersion २०७
प्रज्वलन ignition १५६
प्रज्ज्वलन बिन्दु ignition temperature १५८
प्रचण्ड intense १०३
प्रति-आक्सीकारक anti-oxidant ४२, ६६
प्रति-आघात anti-knock ६६
प्रतिकारक reagent ३२, ४२
प्रतिक्रिया reaction ६
प्रतिक्रिया-फल reaction product २४७
प्रतिदीप्ति fluorescence ५८, २१५
प्रतिरोध resistance ५, ६३
प्रतिरोधक resistant ५, ६३
प्रतिलोमानुपात reverse ratio ११०, १८३
प्रतिवर्ती reversible २३६
प्रतिवाह Counter-current ४७
प्रतिस्थापक substituent ७८
प्रतिस्थापन उत्पाद substitution product ७७, १०२
प्रत्याघात anti-knock २८
प्रत्यादान recovery १७२
प्रत्यास्थ elastic १६०
प्रदीप्ति illumination ४२
प्रदीप्ति शक्ति illuminating power ५, १७६
प्रभंजन cracking २१०
प्रभाग fraction २१
प्रभागशः fractional ८७
प्रभागस्तम्भ fractionating column ५३
प्रभाजित fractionating २०३
प्रभासन illumination १४४
प्रमापी gauge १४१, १५५
प्ररचना design १६६
प्रलाक्षारस lacquer १०३
प्रवर्त्तक originator १७
प्रवहण flow १८४
प्रवाह-बिन्दु flow point १६१
प्रवेशन penetration २०७, २२१
प्रवृत्य selective ६६
प्रशासक administrator ५१
प्रशिक्षण training ५३
प्रसंकरण hybridisation २१
प्रसार expansion ५६
प्रसूत derivative ४३
प्रस्फोटन bombing १८५
प्राप्य available ४१क
प्रामाणिक standard ५६
प्रेक्षित dispersed १५५
प्रेरणा-कुंडली indication coil १४२
प्रेरणा-काल induction period १३७
प्रोटो-पेट्रोलियम proto-petroleum १८
प्रौद्योगिक technical ५१
प्लावन-प्रभाव floatation effect १६३
फल vane ३४, १४६
फलवीन fulvene ५६
फिल्म सामर्थ्य film power २००
फीटोस्टेरोल phetosterol १७
बम्बरीति Bomb method १६३

बर्नर Burner २१७
बल्क bark २०६
बहाव flow ४१, १२१
बहाव विन्दु flow point ६२, १६१
बहु-चक्रीय polycyclic २२, ५७
बहु-सौरभिक polyaromatic ५७
बिटुमिन bitumen १८
बिम्बविधि disc method ६१-१६०
बुदबुद् थाल bubble tray ४५
बुलबुलांक bubbling point १८४
बैंजाइन benzine ४
बेलन cylinder ३
बेलनाकार cylindrical १११
ब्रिटिश तापीय एकांक B. Th. U. १५६
भंगुर brittle २१२
भंजन cracking ४२, ५३
भंजित cracked ४३
भंडार-गृह store-room ५२
भभका retort, still ४४, १११
भापशीकर steam atomising २१७
भारमापक barometer १६६
भार bearing १६८
भिन्नक अवक्षेपण defferentiation precipitation
भूगर्भवेत्ता geologist ३५
भ्राष्ट्र furnace ५३
मण्डल zone २३१
मधुकरण विधि sweatening process ४३ घ
मध्यम intermediate २१
मन्दविच्छेदन slow decomposition १६
मल impurity, sewage ४३ ख
महत्तम maximum १२५
मात्रात्मक quantitative ८१
माध्यम intermediate ८४
माध्यमिक intermediate ४१ ङ, ६६
मान value ८३
मापी gauge १६६
मापीयन्त्र gauge ४१
मितव्ययी economical १८२
मीनार tower ५३, १२३
मुर्दासंख litharge २६२
मूलक radicle ६४, ११७
मूलधन capital २३२
मेकर Mecker १५८
मेघविन्दु cloud point ६२
मोबिल तेल mobil oil ५
मोम wax ५, २१४
मोमकागज wax paper ५, २१४
मोमबत्ती candle १, २११
मोमवाहक wax-bearing २१
मोम-मुक्त wax-free २५
मोमरहित wax-free २१
मौल्टीन maltene २२०
मृद्श्म bentonite ४४
यकृत liver २०६
यंत्रसंचालित mechanised १
यांत्रिक शीकर mechanical atomising २१७
युक्ताश्म diatom १७
युक्ति device १८२
युग्म बन्धन double bond ८६
युद्ध-विमान war air-craft १
योगशील addition ४१ घ, ७६
रंगमापी tintometer ५६
रंगमापी रीति tintometric method ४३ ख
रंगमितीय विधि tintometric method ६२
रम्भाकार cylindrical ५३
रक्षी protector १६६
रन्ध्र pore ४३ ट, २३१
रासिका तेल Rosika oil २०७

रॉसिनी Rossini ६६
रिक्त blank १०७, १६१
रुद्ध light १८४
रेखाचित्र diagram १२२
रेखात्मक geometrical ८१
रेड वूड विस्कोमीटर नं० १ ५४, १४४
रेड वूड विस्कोमीटर नं० २ १४४, २५४
रेडियमधर्मी radioactive १८
रेचक laxative ६, २२०
रोधन stopcock ६६६
रोधनी टोंटी plug cock १३६
लाक्षा lacquer २२१
लब्धि yield १२५
लम्प रीति lamp method १६३
लम्ब दूरी vertical distance १४६
लाल मकड़ी red spider २२३
लाही aphid २२३
लेप coating ५
लेश trace ६३
लैक्टोन lactone ६४
लोविबोंड Lovibond १४३
वर्तन विक्षेपण refractive dispersion ५८
वर्तनांक refractive index ५७
वर्तनांकमापी Refractometer ५८
—, आबे Abbe Refractometer ५८
—, पुलफ्रिच Pulfrich Refractometer ५८
वर्धन advance ११२
वलयक washer १४६
वसा fat १८
वहाव बिन्दु flow point ४८
वाम-भ्रामक laevo-rotatory ५८
वाष्प-इंजन steam engine ३
वाष्प-चक्की steam turbine ३
वाष्प-दबाव Vapour pressure ४७, १०८
वाष्पशीलता Volatility २३, ५५, १११
वाष्पायन vaporizing ६१, २१७
वायु कोर Air Corps १६२
वायुदबावमापी Barometer १४१
वायुरुद्ध air-tight १३८
वाहक Carrier ६३
विकिरण radiation १५६
विक्षेपण dispersion ८१
वितान क्षमता tensile strength २१४
विदर रीति Fissure method २१३
विद्युदग्र electrode १४२
विद्युदाविष्ट electrically charged ३१
विन्दुभार विधि point-weight method ५७
विनिमय exchange ५२
विनिमायक exchanger ४६
विन्यास arrangement ७८
विचलन deviation १५१
विभव potential १०५
विरंजन bleaching १०५
विरूपता shear १६६
वर्म shield १६६
विलंबन delay १६४
विलायक solvent ६
विलोडक stirrer ४७, १४१
विशिष्ट ऊष्मा specific heat ६१
विशिष्ट गुरुत्व specific gravity
विशिष्ट घनत्व specfic density २०
विश्लेषक analyst १६७
विस्कोमीटर viscometer ५४
—, ओस्टवल्ड Ostwald viscometer ५४
—, एंगलर Engler viscometer ५४
—, घूर्णक Rotary viscometer ५५
—, मैक माइकेल Mc Michel viscometer ५५

—,रेडवूड Redwood viscometer ५६
—,सेबोल्ट Saybolt viscometer ५४
—,हौपलर Hoppler viscometer ५५
विस्फोटन explosion १८५
विसर्ग discharge १०२
विस्थापन replacement ७३, १०२
विस्फोटक explosive ६
विहाइड्रोजनीकरण delydrogenation ७०
वेनेडियम vanadium १६
वेल्श लम्प Welsch lamp ११५
वेसलीन vaseline ५, २१५
—पोमेड vaseline pomade ५
वैद्युत चालकता electrical conductivity ५३
व्यक्त किरण exposed rays ४३ न, २२१
व्यक्तीकरण exposure १०५
व्याभंग defraction ५८, २००
व्यामिश्रण blending १६०
शंक्वाकार conical ४३ न, १४०
शक्ति-ईंधन power fuel १३६
शलाका मोम Rod wax २०६
शिलापट्ट १७
शीकर spray १८२
शीकरण atomisation १८२
शीतक cooling १००
शीतक ऊष्मक cooling bath १६०
शुष्ककारक drier ८८
शुष्क धावन dry cleaning ४, २२३
शून्यक vacuum २०
शोधक purifying १०
शोधकार्य research ५३
शोधन refining ५३
शोधशाला research laboratory ५३
शोषित्र desiccator १५८
श्यान viscous २२, ४३ग
श्यानता viscosity २३, ५४, १४४
शृंखला chain ६६
—, पार्श्व side chain ७२
शृंगार पदार्थ toilet articles २१४
षट्क ७५
संकलन collection ७७
संक्षारक corrosive ६१
संग्राही receiver १६६
संघटन composition ४३क
संघनक condenser १४८
संघनित वलय condensed ring ५८
संघनित्र condenser १०६
संघनीय condensible ३
संचय accumulation १००
संजात derivative ५८
संपुंजन agglomeration ४३ट
संमिति symetry ५६
संमुद्रित sealed १६३
संभंजन १७१
संयन्त्र plant १०
संयोजकता combination १६६
संरक्षण preservation ७
संवद्धता conjugation ६१
संविदा agreement ५२
संशोधन purification ५७
संशोधन correction ५४, १६३
संहति mass ५५
संस्पर्श contact ४३, २१६
संस्पर्श निस्यन्दन contact filtration
सक्रियण activation ७६
सक्रियित activated ४३फ
सजातीय homologous ८१
सजीव living १७
सधूम fuming ४३
सन्निकट approximate ६४
समंजन adjustment ७६
समंजित adjusted १५५

समस्थल plateau ६१
समानुपात proportion ७०
समावयव isomer ५६
समावयव homogeneous ६३
समावयवी isomeride ६६
समावयवता isomerism ८१
समावयवीकरण isomerisation ७४
समावेशन capacity १५०
समोष्ण temperate १६४
सम्पीडन compression १८६
सल्फोनीकरण sulphonation ४३
सर्वाधिपत्य supremacy २
सशाख branched ६०
सहकारी cooperative १६२
सह्य bearable, permissible ६१
साधित करना to treat ४३ क
साधित्र apparatus १०६
सान्द्र concentrated ४३
सान्द्रण concentration ४३ ग
सान्द्रता concentration ४३
सान्द्रता viscosity ७१
साबुनीकरण संख्या saponification number ६८
साम्य equilibrium १०८
सामूहिक प्रतिक्रिया group reactions ८३
सीमा-स्नेहन १६८
सुरंग tunnel २३१
सूक्ष्म विस्कोमीटर micro-viscometer ४३ द, ४४, ५४
सूक्ष्मता से accurately ६३
सूचक indicator १४२
सूच्याकार needle-shaped १११
सूत्र formula ६१
सेंटीपोयाज centipoise ५४,१५२
सेंटी-स्टोक centi-stoke १५२
सैद्धान्तिक theoretical ६१
सौरभिक aromatic ४२
सौरभीकरण aromatisation १३१
स्रप slide १६६
स्कंधित coagulated ४३ ख
स्टियरीन stearin ५, २१३
स्टोक stoke ५४
स्थायित्व stability ४५, १२१
स्थायीकरण stabilization १११, १३४
स्तम्भ column, stand ५२, १४५
स्थितिज गोंद static gum ६२
स्टैटफोर्ड विधि Statford process ४५
स्निग्ध oily, unctuous १६६, २१५
स्नेहक lubricant ४३ ग, ७१, २०१
स्नेहन lubrication ५४, १६७
स्नेहन तेल lubricating oil ५
स्नेहन-स्नेह lubricating grease २५४
स्निग्धता oiliness, unctousness १६६, २१५
स्फुलिंग spark १८६
स्फुलिंग विसर्जन spark discharge १०५
स्रोत source ३
स्वासक १६६
हरिरोम १७
हाइड्रौक्सिलीकरण hydroxylation ६४
हाइड्रोजनीकरण hydrogenation १८, १०१
हानि loss १६६
हिमांक freezing point ६३
हिमीकरण मिश्रण freexing mixture १६०
हेक्सेन hexane ६६
हैलायड अम्ल haloid acid १०२
हैलोजनीकरण halogenation १०२
ह्रास loss ४३ घ
हेप्टेन heptane ४६

अँगरेजी-हिन्दी शब्दावली

Absolute viscosity	निरपेक्ष श्यानता
Absorption	अवशोषण
Acceleration	त्वरण
Accumulation	संचय
Acidity	अम्लता
Activation	सक्रियण
Adapter	उपयोज
Adjustment	समंजन
Adsorption	अभिशोषण
Advance	वर्धन
Agitation	प्रक्षोभ
Agreement	संविदा
Anti-Knock	प्रति-आघात; प्रत्याघात
Aphid	लाही
Apparatus	साधित्र; उपकरण
Aromatic	सौरभिक
Aromatisation	सौरभीकरण
Arrangement	विन्यास
Atomisation	शीकरकरण
Barometer	भारमापक; वायु-दबावमापी
Bath	उष्मक; ऊष्मक
Bearings	भारू
Bentonite	मृदाश्म
Blank	रिक्त
Bleaching	विरंजन
Blending	अवमिश्रण
Blended oil	अवमिश्रित तेल
Block	कुंदा
Boiling point	क्वथनांक
Bone-black	अस्थि-काल
Briquet	इष्टिका
Calorie	कलारी
Calorimeter	कलॉरीमापी
Capacity	धारिता; समावेशन
Capillarity	केशिकत्व
Catalysis	उत्प्रेरण
Calalyst	उत्प्रेरक
Cell	कोशा
Centrifuge	केन्द्रापसारित्र
Chain	शृंखला
Charge	आवेश
Chassis	न्याधार
Coagulation	स्कंधन
Coefficient	गुणक
Coil	कुण्डली
Collar	ग्रैवेय
Colloidal	कलिल
Column	स्तम्भ
Composition	संघटन
Compression	सम्पीडन
Concave	अवतल
Concentration	सान्द्रण; सान्द्रता
Condensed ring	संघनित वलय
Condenser	संघनित्र; संघनक
Conjugation	संबद्धता
Constant	अचर; स्थिरांक; नियतांक
Constriction	उपसंकोच
Contact filtration	संस्पर्श निस्यन्दन
Converter	परिवर्त्तक
Co-ordination	आसंजन

Correction	संशोधन
Corrosion	संक्षारण; क्षारण; क्षय
Counter Current	प्रतिवाह
Cracking	भंजन; प्रभंजन
Crankcase	कूर्परधान
Critical	क्रांतिक
Cup	कुप्पी
Cycle	चक्र
Cyclic	चक्रीय, चक्रिक, चक्रक
Cylinder	बेलन
Defraction	व्याभंग
Dehydration	विजलीयन
Delay	विलंबन
Density	घनत्व
Deposit	निक्षेप
Derivative	प्रसूत, संजात
Desiccation	शोषण
Desiccator	शोषित्र
Design	प्ररचना
Detergent	अपक्षालक
Deterioration	ह्रास
Deviation	विचलन
Dextro-rotatory	दक्ष-भ्रामक
Diagram	रेखाचित्र
Diatom	युक्ताण्व
Differentiation	भिन्नक
Dilution	तनुता
Dimer	द्विभाज
Discharge	विसर्जन, विसर्ग
Dispersion	विक्षेपण, प्रक्षेपण, प्रेक्षण
Disposal	अपवहन
Distillation	आसवन
Double bond	द्विबन्ध, युग्मबन्धन
Drilling	छेदाई
Dry cleaning	शुष्क धावन
Dynamic	गति; गतिज
Ebulioscope	उत्क्वथनांक
Efficiency	दक्षता
Electrode	विद्युदग्र
Elevation	उन्नयन
Emulsion	पायस
Endothermic	तापशोषक
Energy	ऊर्जा
Equivalent	तुल्यांक
Error	त्रुटि
Evaporator	उद्वाष्पक
Exchange	विनिमय
Exchanger	विनिमायक
Exhaust	उत्स्राव
Exothermic	तापक्षेपक
Explosion	विस्फोटन
Exposure	व्यक्तीकरण
Fat	वसा
Filter	छन्ना; छनना
Fire-proof	अग्नि-सह
Fissure	दरार; विदर
Float	उत्प्लावित
Floatation	उत्प्लावन
Flow	बहाव; प्रवाह; प्रवहण
Fluorescence	प्रतिदीप्ति
Fractionating column,	अंशकारक
Fractionation	अंशन
Freezing point	हिमांक
Freezing mixture	हिमीकरण मिश्रण
Frequency	आवृत्ति
Fresh	अभिनव
Friction	घर्षण
Fungicide	कवकनाशिका
Fungus	कवक
Gauge	मापी; मापी यन्त्र
Generator	जनित्र
Geometrical	रेखात्मक
Germicide	कीटाणुनाशक
Heat	उष्मा; ऊष्मा

Hexagonal षट्कोणीय
Homologous सजातीय
Hook अंकुश
Hybridisation प्रसंकरण
Hydration जलयोजन
Hydrolysis जलांशन
Hydrometer तरलमान; द्रवमापी
Ignition निस्ताप; प्रज्वलन
Illuminate दीपित
Illumination प्रदीप्ति; प्रभासन
Inactive निष्क्रिय
Incandescent mantle उत्ताप प्रवार
Index घातांक
Indicator सूचक
Induction प्रेरणा
Inert अक्रिय
Infra-red अवरक्त
Inhibitor निरोध
Interfacial tension अन्तःसीमीय तनाव
Isomer समावयव
Isomeride समावयवी
Isomerisation समावयवीकरण
Isomerism समावयवता
Jacket निचोल
Jet क्षिप
Kinematic चल; गतिज
Knocking आघात; अभिघात
Lacquer लाक्षि; लाक्षारस
Laevorotatory वाम-भ्रामक
Lag पाश्चायन
Larva डिम्भ
Laxative रेचक
Leaf-roller इल्ली
Litharge मुर्दासंख
Liver यकृत
Loss ह्रास; क्षय
Lubricant स्नेहक; उपस्नेहक
Lubrication स्नेहन; उपस्नेहन
Mass संहति
Melting point गलनांक
Meteor उल्का
Micro सूक्ष्म
Mobility चंचलता
Monomer एक-भाज
Mud पंक; कीचड़
Nascent नवजात
Neutralisation निराकरण, उदासीनीकरण
Nucleus केन्द्रक
Observation अवलोकन
Oiliness स्निग्धता
Opalscent उपलभासी
Operation प्रकार्य; उपक्रम
Optical activity काशिता
Organic कार्बनिक
Oxidant आक्सीकारक
Penetration प्रवेशन
Percolation परिच्यवन; पारच्याव
Petrolatum वेसलिन
Phase कला
Pioneer plant आग्रिम संयन्त्र
Plateau समस्थल
Plug cock रोधनी टोंटी
Polymer पुरुभाज
Polymerisation पुरुभाजन
Potential विभव
Precipitate अवक्षेप
Precipitation अवक्षेपन
Process प्रक्रम
Proportion समानुपात
Protector रक्षी
Pumice झाँवाँ
Purification शोधन,संशोधन

Qualitative गुणात्मक
Quantitative मात्रात्मक
Radiation विकिरण
Radicle मूलक
Rancidity दुर्वासता
Reading पाठ्यांक
Rearrangement पुनर्विन्यास
Receiver संग्राही, ग्राहक
Recording अंकन
Recovery प्रत्यादान, पुनर्ग्रहण
Recycling पुनश्चक्रण
Red spider लाल मकड़ी
Redistillation पुनरासवन
Reduction अवकरण
Refinery परिष्करणी
Refining परिष्कार, शोधन
Reflux पश्चवाही
Residue अवशेष
Resistance अवरोध, प्रतिरोध
Retort भभका
Reversible प्रत्यावर्त्ती, उत्क्रमणीय
Revivification पुनर्जीवितकरण
Revolution घूर्णन; परिक्रमण
Ribbon पट्टिका
Rod-wax शलाका-मोम
Rotary furnace घूर्णक भट्ठी
Safety अभय
Saturation संतृप्ति
Scrubbing घर्षधावन
Seal संमुद्रण, संमुद्रित करना
Sedimentary अवसाद
Shaft कूपक
Shear विरूपता, विरूपण
Shield वर्म
Silent नि:शब्द
Slate पटिया
Slide सूप
Sludge अवपंक
Skeleton पंजर, कंकाल
Solvent विलायक
Sorption शोषण
Spark स्फुलिंग
Spectrum वर्णक्रम
Speed चाल
Spindle तकुं
Spray शीकर
Stabilisation स्थायीकरण
Stability स्थायित्व
Stainless अकलुष
Still भभका
Stop-cock रोधनी
Substituent प्रतिस्थापक
Substitution product प्रतिस्थापन उत्पाद
Suspension आलंबन; निलंबन
Sweating उत्स्वेदन
Sweetening मृदुकरण
Symetry संमिति
Synthetic petroleum कृत्रिट्रोल
Table सारणी
Tapering गोपुच्छाकार
Temperature ताप
Tensile strength वितान-क्षमता
Tertiary त्रितीयक
Test परीक्षण
Thermometer तापमापी; तापमापक
Thread चूरी
Tintometer रंगमापी
Tintometric रंगमितीय
Tissue ऊत्तक
Titration अनुमापन
Translucent पारभासक
Trap पाश
Tray थाल
Treatment उपचार

Trimer	त्रिभाज	Viscosity	श्यानता
Ultra-violet	पारनीललोहित	Volatility	वाष्पशीलता
Unctousness	स्निग्धता	Washer	वलयक
Vacuum	निर्वात; शून्यक	Wave-front	तरंगाग्र
Valve	कपाट	Wave-length	तरंगदैर्घ्य
Vane	फलक	Wax-free	मोम-मुक्त; मोम-रहित
Vaporisation	वाष्पायन	Wax-bearing	मोमयुक्त; मोमवर्त्ती
Vertical	लंब	Yield	लब्धि; उपलब्धि
Vertical force	अभिलंब बल	Zone	मण्डल

शुद्धि-पत्र

प्रूफ-संशोधन की असावधानी से पुस्तक में कुछ अशुद्धियाँ रह गई हैं। कुछ अशुद्धियाँ ऐसी हैं, जिन्हें पाठक स्वयं सुधार सकते हैं। जैसे—पृष्ठ २७, २८ और २९ में विशिष्ट घनत्व के अंकों के आगे 'प्रतिशत' का लिखा रहना। विशिष्ट घनत्व के अंकों में प्रतिशतता नहीं होती। कृपया जहाँ-जहाँ विशिष्ट घनत्व के आगे प्रतिशतता लिखी हुई है, उसे भूल समझें। कुछ अशुद्धियाँ ऐसी हैं, जिनका सुधार आवश्यक है। ऐसी अशुद्धियाँ निम्नलिखित हैं :—

पृष्ठ	अशुद्ध रूप	शुद्ध रूप
४३च	सल्फाइड (दूसरा सल्फाइड)	सल्फेट
४३ञ	जेल	जेली
४८ (चार स्थलों पर)	Co	C_6
५२	पादरें	चादरें
५८	हृदयों का	का हृदय
७१, ७२	सेबोल्ट सान्द्रता	सेबोल्ट-श्यानता
७३	चक्रिय	चक्रिक
७३	निकाक	निकाल
७५	प्र·प्र = प्र + प्र-प्र	प्र-प्र-प्र + प्र-प्र
७६	आल्म	आत्म
७६	विच्छेदित कर	विच्छेदित होकर
८६	गागा	गामा
८६	c	C
१२१	जलयों	बलयों
१६८	उपयोग	उपयोज
१७१	संभंजन	समंजन
२०२	नहीं निकाला	निकाला
२१६	--२	०·२
२३१	मेण्डेम्लीव	मेण्डेलियेफ